॥ श्रीः ॥

चर्य्याचन्द्रोदयः

हिन्दीभाषानुवादसमेतः ।

पाठकज्ञातीयमाथुरश्रीकृष्णलालतनयदत्तरामेण सङ्कलितः
स्वकृतभाषाटीकाविभूषितः संशोधितश्च ।



यत्र

ऋतुचर्या, दिनचर्या, (यत्र सर्वदिनकृत्यं पाकविधानं च) रात्रिचर्या (यत्र रात्रिकृत्यम्) एतत्सविस्तरं सर्वं व्याख्यातम् ।

स च

खेमराज श्रीकृष्णदासश्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) मुद्रणागारे
मुद्रयित्वा प्रकाशितः ।

संवत् १९६१, शके १८२६.

Printed at the "Shri Venkateshwar" Steam Press, Bombay.

॥ श्रीः ॥

अथ चर्य्याचन्द्रोदयकी विषयानुक्रमणिका ।

ऋतुचर्याध्यायः ।

पाकविधान।

मोदक।

इन्द्रियोपक्रमणीयाध्यायः।

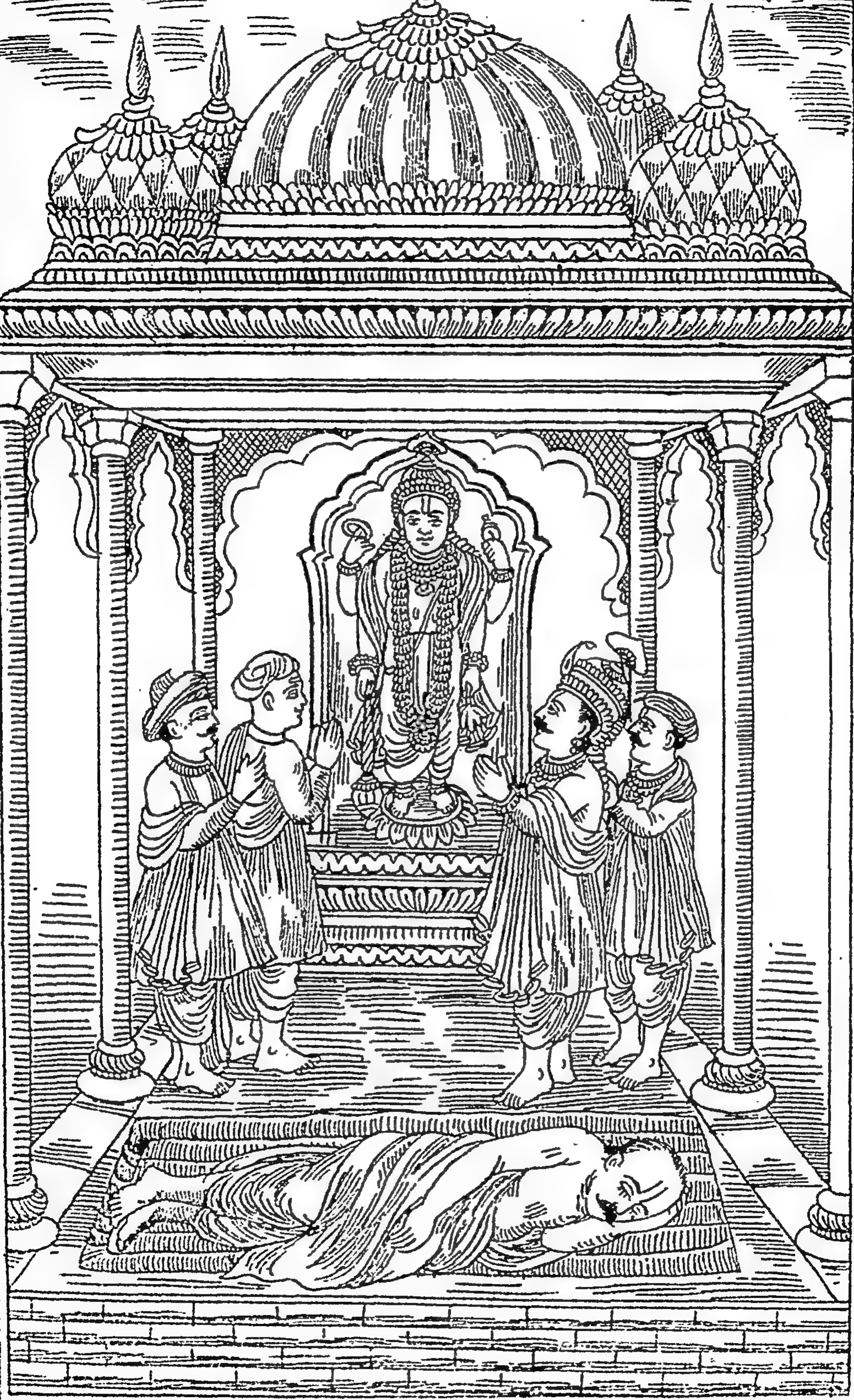
रात्रिचर्या।

इति चर्य्याचन्द्रोदयकी विषयानुक्रमणिका समाप्ता.

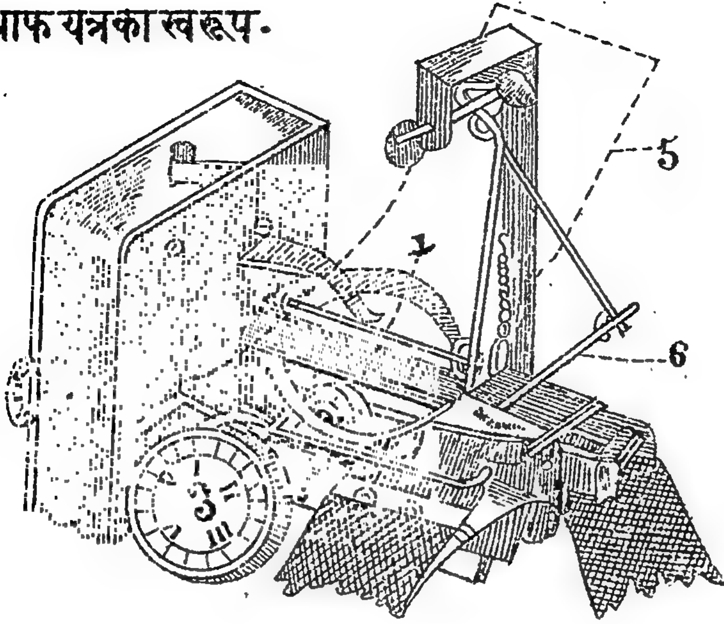


"श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालय-मुंबई.

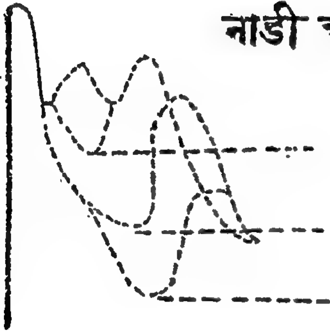



स्वप्नपरीक्षणाकी तसबीर.

स्फिग्मोग्राफ यंत्रका स्वरूप.

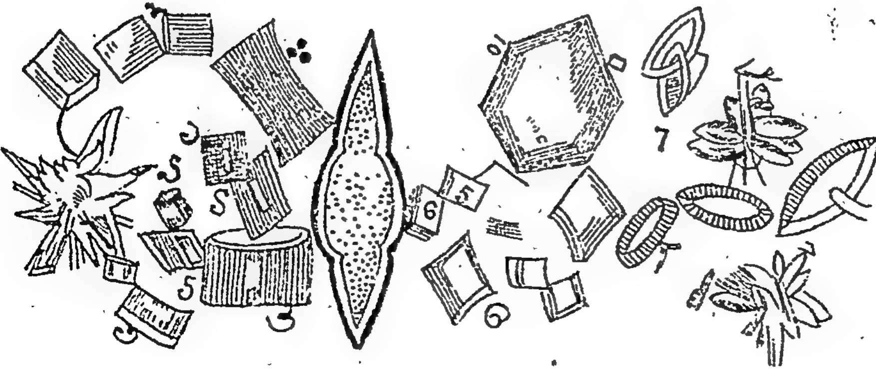


नाडी अक्स पड़नेका स्वरूप.

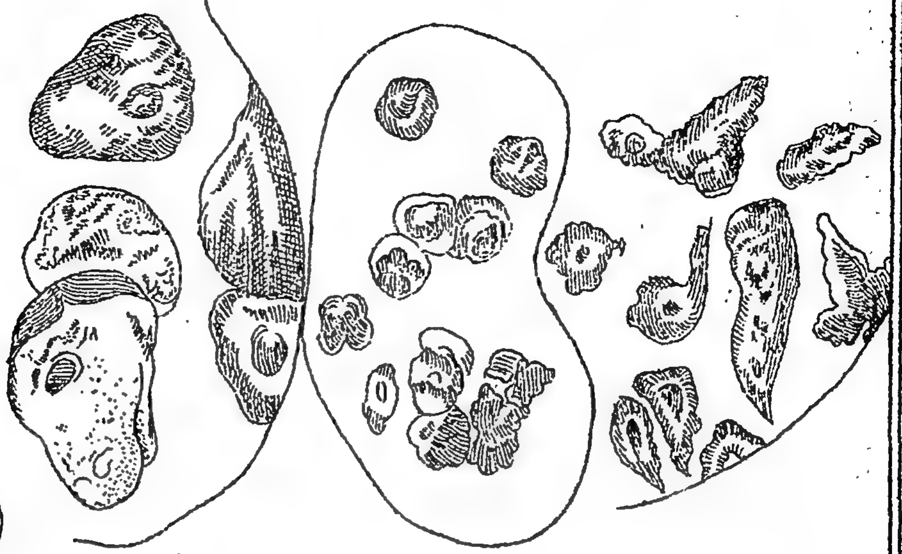


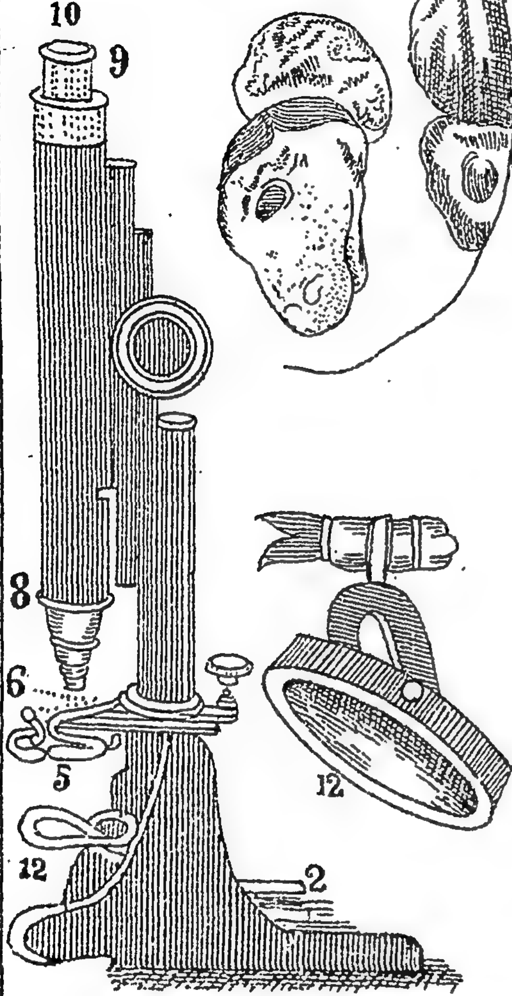


मूत्रजन्य पदार्थ.

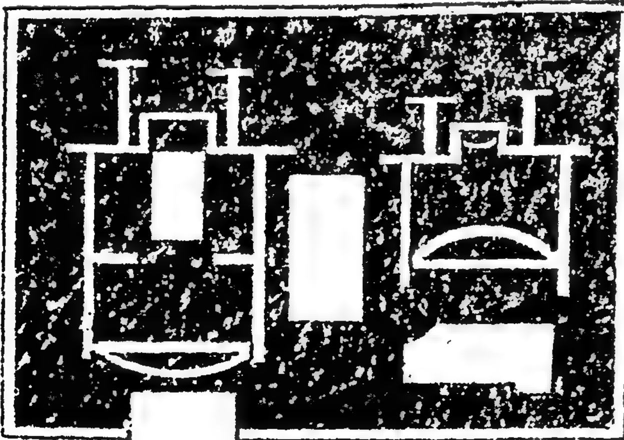


मूत्रजन्य द्वितीय प्रकारके पदार्थ.



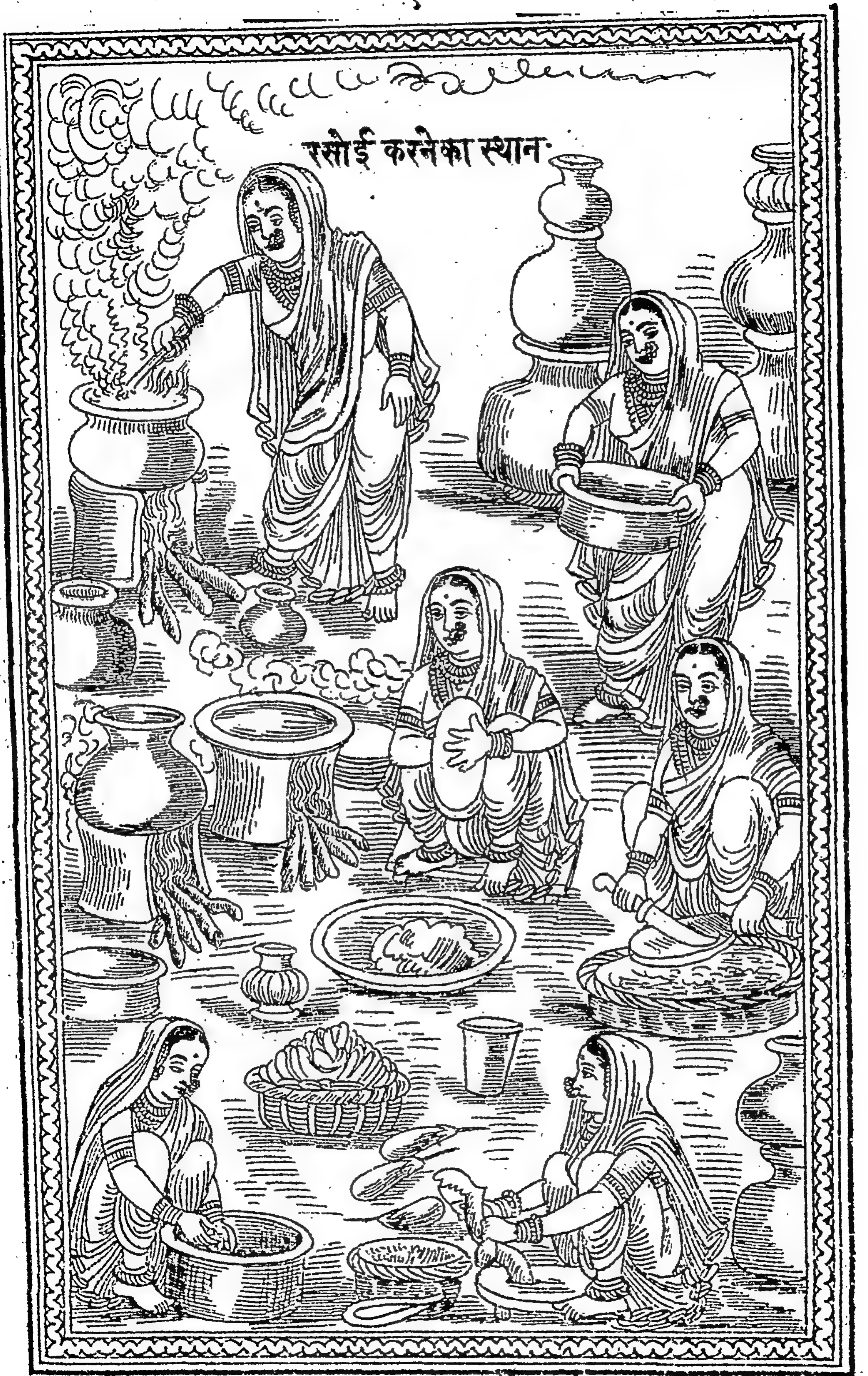


मूत्रदर्शक



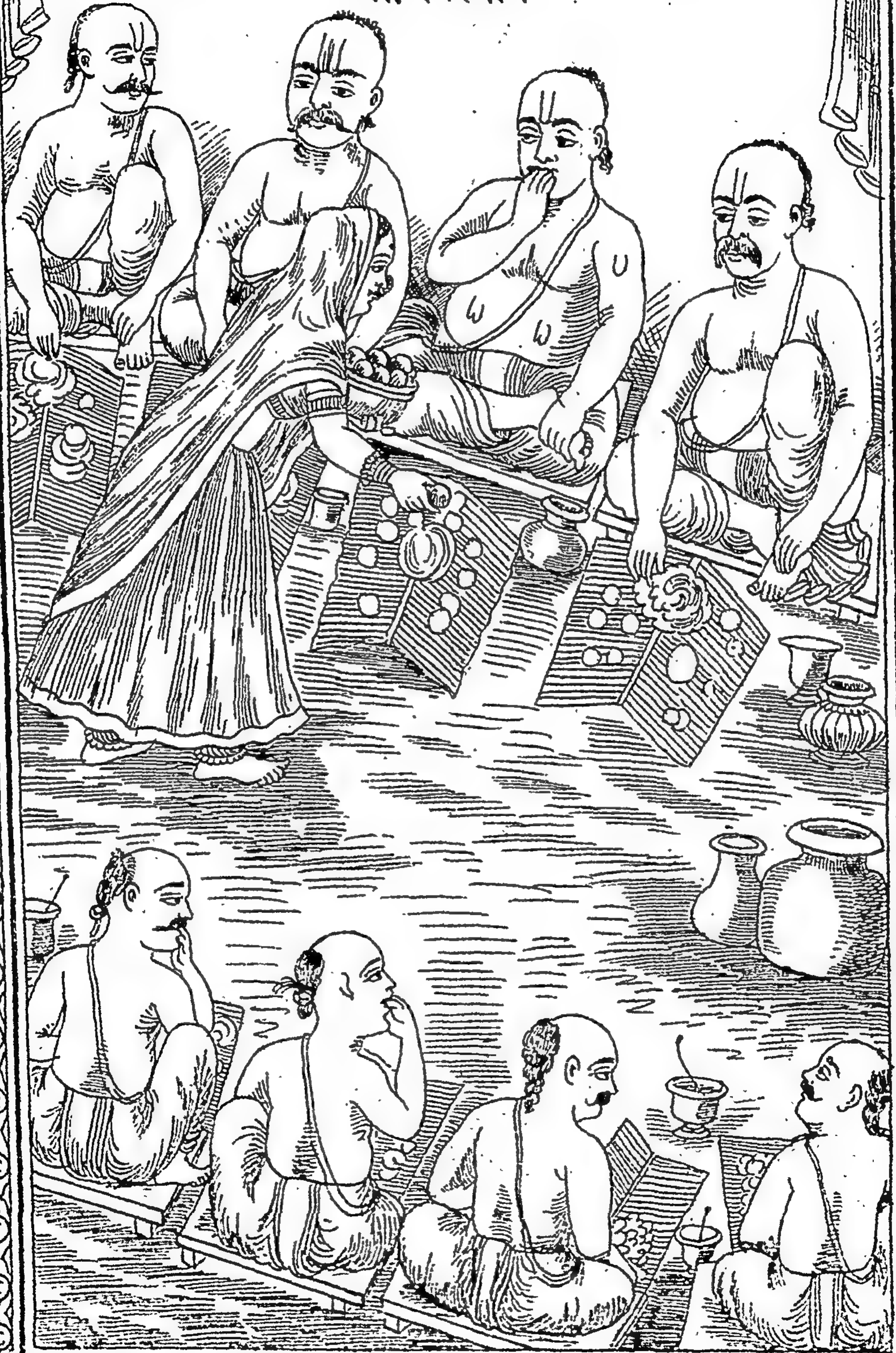
खुर्दबीन.



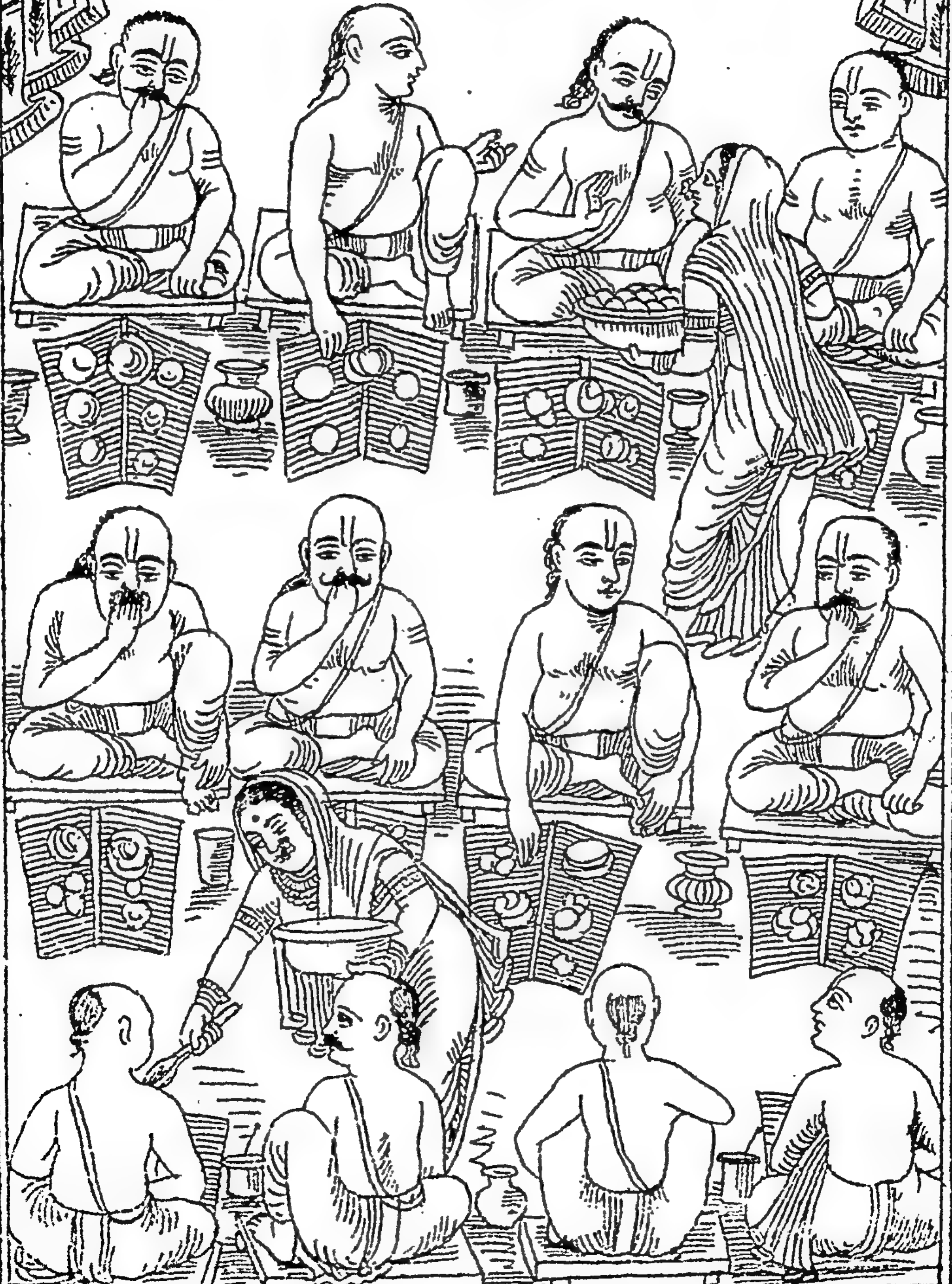

रसोई करनेका स्थान.


पाकस्थान.


सामग्री धरनेका स्थान.


भोजनस्थान.

भोजनस्थान



॥ श्रीः ॥

अथ चर्याचन्द्रोदयः ।

भाषाटीकासमेतः ।



अथातऋतुचर्याध्यायंव्याख्यास्यामः ।

अर्थ–अब ऋतुचर्याध्यायकी व्याख्या करेंगे–ऋतुऋतुका आचरण जिसमें उसको ऋतुचर्या कहतेहैं, कोई आचार्य चरधातुको गति और भक्षण अर्थ होनेसे उसका यह अर्थ करतेहैं कि, ऋतुओंकी चर्या कहिये आहार विहारकी व्याख्या करतेहैं । इसजगे ऋतुचर्याध्याय कहनेसे यहसंबंध है कि, पिछाडी दोषवर्णनीयाध्यायमें यह कहआएहैं कि, इन दोषोंके संचय होनेका कारण आगे कहेंगे, अतएव अब ऋतुचर्याध्यायका वर्णन करतेहैं ।

प्रथम कालकावर्णन ।

कालोहिनामभगवान्स्वयंभूरनादिमध्यनिधनोऽत्ररसव्याप-त्सम्पत्तीजीवितमरणे च मनुष्याणामायत्तेससूक्ष्मामपिक-लांनलीयत इतिकालः संकलयति कालयतिवाभूतानीतिकालः ।

अर्थ–तहां जिसके अंगभूत छहों ऋतु हैं, उसकालको प्रथम स्वगुणकर्म निरुक्ति करके दिखातेहैं । जैसे कि–कालनामसे प्रसिद्ध भगवान् स्वयंभू (स्वयंहोनेवाला) और आदि, मध्य, अंत, करके रहित है । इसप्रकार स्वधर्मकरके कालको कहकर कर्म करके चिकित्सोपयोगता कहतेहैं कि, मधुरादिरसोंका द्रव्योंमें न होना और होना, तथा मनुष्योंका जीवन, मरण इसीकालके आधीन है यह काल अपने सूक्ष्मभागकोभी लीननहीं करता, क्योंकि गतिमान्है अथवा सर्वप्राणीमात्रका संहार कर एक राशी करता है इसीसे इसको काल कहतेहैं । अथवा प्राणियोंको सुखदुःख करके योजना करताहै इसीसे इसको काल कहतेहैं । अथवा संपूर्णप्राणिमात्रको मृत्युके समीप प्राप्तकरे इसी से इसको काल कहते हैं ।

शिष्य–एककालसे जीवन मरण और व्यापत् संपत्ति कैसे होतीहै ? क्योंकि जीवनमरण परस्पर विरुद्ध है एकही अग्निसे शीत और उष्णता नहींहोसकती । अथवा एक दीपकसे प्रकाश और अंधकारभी नहीं बनसकते ।

गुरु-तुम्हारा कहना ठीकहै परंतु कालशब्दकरके इसजगे कालत्वोपाधि शीतादिभेदभिन्नशिशिरादि ऋतु जाननी । उसको उत्तम मिथ्याकरके अन्योन्यविरुद्धकार्य होना संभव होसकताहै, इसीसे जीवितमरण कालके आधीन जो कहा यह निर्दोषहै ।

तस्यसंवत्सरात्मनोभगवानादित्योगातिविशेषेणाक्षिनिमेषकाष्ठाकलामुहूर्त्ताहोरात्रपक्षमासर्त्वयनसंवत्सरयुगप्रविभागं करोति ।

अर्थ-उस संवत्सरस्वरूप कालके भगवान् आदित्य अपनी गतिविशेषकरके अक्षिनिमेष, काष्ठा, कला, मुहूर्त, अहोरात्रि, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर और युगादि प्रतिभाग अर्थात् टुकडे करेहैं । इसजगे सूर्यका तो उपलक्षण मात्रहै किंतु चंद्रमाभी उदयास्तादि होनेसे कालके पृथक् २ विभाग करताहै ।

संवत्सरनिमेषादिकोंको कहतेहैं ।

तत्र लघ्वक्षरोच्चारणमात्रोऽक्षिनिमेषः । पञ्चदशाक्षिनिमेषाःकाष्ठा । त्रिंशत्काष्ठाःकला । विंशतिकलोमुहूर्त्तःकलादशभागश्च । त्रिंशन्मुहूर्त्तमहोरात्रम् । पञ्चदशाहोरात्राणिपक्षः । सचाद्विविधःशुक्लःकृष्णश्च । तौमासः ॥

अर्थ-तहां जितने समयमें लघु अक्षरका उच्चारणहोवे उस समयको अक्षिनिमेष वा निमेष कहतेहैं । १५ अक्षिनिमेषकी १ काष्ठा होती है, [परंतु कोई १८ निमेषकी काष्ठा कहताहै] ३० काष्ठाकी १ कला होतीहै, [१॥ काष्ठाकी १ विपल होतीहै और २० विपलकी १ कला होतीहै] २० कला और कलाके वीसवें भागका अर्थात् २० $\frac{1}{20}$ का मुहूर्त्त होताहै, [३ कलाका १ पल और १० पलोंका १ क्षण होताहै] ३० मुहूर्त्तका १ अहोरात्रि अर्थात् दिनरात्रि होताहै, [६ क्षणकी १ घडी और दोघडीका १ मुहूर्त्त और ३० मुहूर्त्तका एक अहोरात्रि] १५ अहोरात्रका १ पक्ष, सो दोप्रकारका है । एक शुक्ल और दूसरा कृष्णपक्ष [अहोरात्रिका आठवाँ भाग १ प्रहर होताहै और तीस अहोरात्रिका १ मास (महीना) होताहै ।]

---

१ कालोवैभगवान् साक्षात्स्वयंभूर्नवयौवने। आदिमध्यान्तरहितः सचसूक्ष्मो महानपि१ सूक्ष्मः कालो निमेषादिः कल्पादिश्चमहानिति । कथितोमुनिभिः कांते तत्त्वज्ञैः सूक्ष्मबुद्धिभिः २ लघ्वक्षरसमुच्चारं कालंप्राहुर्निमेषकम् । अष्टादशनिमेषैस्तु काष्ठास्यान्नवयौवने३ सार्द्धैकयातयाकांते विपलंपरिकीर्तितम् । कलानिधिमुखि प्रोक्ता कलाविंशतिकैश्वतैः ४ तिसृभिश्चकलाभिश्चपलमेकं भवेत्प्रिये । तथैवमृगशावाक्षि पलानांदशभिः क्षणः ५ क्षणैः षड्भिर्घटीमाहुः प्रियताभ्यां मुहूर्त्तकम् । अहोरात्रंचतैस्त्रिंशन्मितंवुजलोचने ६ अहोरात्राष्टमोभागः प्रहरः परिकीर्त्तितः ।

ऋतुकथन।

तत्र माघादयोद्वादशमासा द्विमासकमृतुंकृत्वाषड्‌ ऋतवोभवन्तितेशिशिरवसन्तग्रीष्मवर्षाशरद्धेमन्ताः।

अर्थ–तहां माघसे आदिले बारहमहीनोंसे दो दो महीनोंकी ऋतुकरके छः ऋतु होतेहैं। वो शिशिर, वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, और हेमंत जानने।

ऋतुओंके पृथक्पृथक् विभाग।

तेषांतपस्तपस्यौशिशिरः-मधुमाधवौवसन्तः-शुचिशुक्रौग्रीष्मः-नभोनभस्यौवर्षा-इषोर्जौशरत्-सहसहस्यौहेमन्त इति।

अर्थ–तिनमें माघ फाल्गुन यह शिशिरऋतुहै, चैत्र वैशाख वसंत, ज्येष्ठ आषाढ ग्रीष्म, श्रावण भाद्रपद ये वर्षा, आश्विन कार्त्तिक शरद्, और मार्गशिर तथा पौष ये दो महीने हेमंतऋतु कहातेहैं। कोई आचार्य कहते हैं कि, यह ऋतुव्यवहार गंगाके उत्तरके देशोंमेंही है। क्योंकि, जैसे चेरापूजी जो आसामके मुलकमें है उसजगे आठ आठ महीने पर्यंत वर्षा होतीहै, और इतनी वर्षा होतीहै कि,ऐसी अन्य किसी मुलकमें न होतीहोगी। उसी प्रकार उत्तरखंडमें बर्फान्देशमें सदैव शरदी पडतीहै, उसी प्रकार आफ्रिकाके मुलकमें तथा हबसके मुलकमें अत्यंत गरमी पडतीहै इसकारण यह ऋतुव्यवहार प्रायः गंगाके उत्तरके देशोंमें अधिक है। परंतु गयदास आचार्यने इस बातका अत्यंत खंडन कियाहै।

तएतेशीतोष्णवर्षलक्षणाश्चन्द्रादित्ययोःकालविभागकरत्वादयनेद्वेभवतोदक्षिणमुत्तरञ्च।

अर्थ–तहां ये ऋतु शरदी, गरमी और वर्षाके लक्षणोंकरके जानीजातीहै, [इनमें वायुकरके शरदी, सूर्यकरके गरमी और चंद्रमाकरके वर्षा होतीहै, कोई शरदी और वर्षा दोनों चंद्रकरके होतीहै ऐसा कहतेहैं] इनउक्तशीतोष्णवर्षालक्षणऋतुओंसे चंद्र और सूर्यके कालविभाग करनेसे दो अयन होतेहैं एक उत्तरायण और दूसरा दक्षिणायन।

तयोर्दक्षिणंवर्षाशरद्धेमन्तास्तेषु भगवानाप्यायतेसोमोऽम्ललवणमधुराश्चरसाबलवन्तोभवन्त्युत्तरोत्तरञ्चसर्वप्राणिनांबलमभिवर्द्धते।

अर्थ–उन दोनों अयनोंमें वर्षा शरद् और हेमन्त इन तीन ऋतुका दक्षिणायन होताहै, इसमें भगवान् चन्द्रमाका बल क्रमसे बढताहै, तथा अम्ल (खट्टा) लव-

और मधुर ये तीनों रस क्रमपूर्वक बली होतेहैं । तथा संपूर्ण प्राणियोंका बल उत्तरोत्तर बढताहै इन तीनों ऋतुओंको विसर्गकाल कहतेहैं । यह चरकमें लिखाहै । इस ऋतुको सौम्यहोनेसे चंद्र बली होताहै, क्योंकि तदाश्रित रात्रियोंको बडी होनेसे और सूर्य क्षीण होताहै, क्योंकि तदाश्रित दिन घटतेहैं, इसकालमें मेघोंकी वर्षा, पवन और शीतलताके प्रभावसे पृथ्वीका ताप शांत होजाताहै । अथवा शीतल कहना तो उपलक्षणमात्र है किंतु यह विसर्गकाल मृदु और स्निग्ध होनेसे पृथ्वी शांत होतीहै ।

उत्तरश्चशिशिरवसन्तग्रीष्मास्तेषुभगवानाप्यायतेऽर्कस्तिक्तकषायकटुकाश्चरसाबलवन्तोभवन्त्युत्तरोत्तरश्चसर्वप्राणिनांबलमपहीयते ।

अर्थ-शिशिर, वसन्त और ग्रीष्म इन तीन ऋतुका उत्तरायण होताहै, इन ऋतुओंमें भगवान् सूर्यका बल क्रमसे बढताहै. तथा तिक्त, कषाय और कटुरस बली होतेहैं । और संपूर्ण प्राणियोंका बल क्रमसे घटताहै । इस उत्तरायणको आदानकाल कहतेहैं और वाग्भट लिखताहै कि, इस आदानकालमें सूर्य उत्तरगोलार्द्धावलंबी होनेसे सूर्य और पवन अत्यंत तीक्ष्ण, उष्ण और रूखे होकर पृथ्वीके सौम्य (शीतल) गुणोंको नाश करतेहैं । इसीसे आदानकाल आग्नेय जानना ।

शीतेऽग्र्यंवृष्टिघर्मेऽल्पंबलंमध्यन्तुशेषयोः ।

अर्थ-हेमंत शिशिर ऋतुमें मनुष्योंमें उत्तम बल होताहै । और वर्षा ग्रीष्मकालमें अल्पबल होताहै बाकी शरद् और वसंत ऋतुमें मध्यमबल रहताहै [उत्तरायणसे दक्षिणायनकाल श्रेष्ठ है, क्योंकि उत्तरायण ऋतु बलनाशक है और दक्षिणायन बलकारी है ।]

शीतांशुःक्लेदयत्युर्वींविवस्वाञ्छोषयत्यपि ।
तावुभावपिसंश्रित्यवायुः पालयतिप्रजाः ।

---

१ उत्तरोत्तरकहनेका यह प्रयोजनहै कि, दक्षिणायनमें चंद्रमाका और मनुष्योंका बल क्रमसे बढताहै जैसे वर्षाऋतुकी अपेक्षा शरदृतुमें और शरदृतुकी अपेक्षा हेमंतऋतुमें बल विशेष बढताहै. तथा वर्षाऋतुमें अम्लरसका, शरदृतुमें लवणरसका और हेमंतऋतुमें मिष्टरसका बल बढताहै. इसीप्रकार उत्तरायणमें सूर्यका क्रमसे बल बढताहै और मनुष्योंका बल क्षीण होताजाताहै जैसे शिशिरकी अपेक्षा वसंतमें और वसंतकी अपेक्षा ग्रीष्मऋतुमें सूर्यका बल बढताहै और मनुष्योंके बलका ह्रास होताहै. क्योंकि जैसे जैसे सूर्यका तेज प्रबल होताजाताहै तैसेही तैसे गरमी अधिक बढतीहै जैसे जैसे गरमी बढे उसी उसी क्रमसे मनुष्य हीनबल होजाते हैं ।

अर्थ–चंद्र पृथ्वीको आर्द्र करताहै । सूर्य उसको सुखाता है । और चंद्रसूर्य दोनों-का आश्रय लेकर पवन प्रजाका पालन करता है । पवन चंद्रके आश्रयसे पुष्टता करे हैं, और सूर्यके आश्रयसे शुष्क करेहै, तदनंतर रसाभिनिवृत्ति होनेसे प्रजाको बढावे है ।

अथखल्वयनेद्वेयुगपत्संवत्सरोभवति तेतुपंचयुगमितिसंज्ञां लभन्ते । स एषनिमेषादियुगपर्यन्तःकालश्चक्रवत्परिवर्त्तमानःकालचक्रमुच्यतइत्येके ।

अर्थ–दोअयनोंका १ संवत्सर (वर्ष) होता है, और ५ वर्षका एक युग होता है । यह युगोंकी पारिभाषिकी संज्ञा है । [अन्यशास्त्रोंके मतसे४३२०००० तेतालीस लाख और बीसहजार वर्षोंका एक युग होता है । ऐसे हजारयुगोंका ब्रह्मदेवका दिवस होता है,] वास्तवसे येही सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग सत्य है, इसी निमेषादियुगपर्यंत कालको चक्रवत्परिवर्त्तमान अर्थात् चक्रके सदृश फिरनेसे कोई आचार्य कालचक्र ऐसा कहते हैं ।

आयुर्वेदशास्त्रके मतसे ऋतुवर्णन ।

इहतुवर्षाशरद्धेमन्तवसन्तग्रीष्मप्रावृषःषड्ऋतवोभवन्तिदोषोपचयप्रकोपोपशमनिमित्तम् ।

अर्थ–इस अध्यायमें दोषोंके संचय प्रकोप और उपशमके निमित्त वर्षा, शरद्, हेमन्त, वसन्त, ग्रीष्म, प्रावृष ये छःऋतु होते हैं ।

छहों ऋतुओंके मासपरत्वनाम ।

तेतुभाद्रपदाद्येनद्विमासिकेनव्याख्याताः । तद्यथा । भाद्रपदाश्वयुजौवर्षा । कार्त्तिकमार्गशीर्षौशरत् । पौषमाघौहेमन्तः । फाल्गुनचैत्रौवसन्तः । वैशाखज्येष्ठौग्रीष्मः । आषाढश्रावणौप्रावृडिति ।

अर्थ–वो छःऋतु भाद्रपदादि दोदो महीनेकरके होते हैं, जैसे भाद्रपद और आश्विनकी वर्षाऋतु, कार्तिकमार्गशिरकी शरद्, पौषमाघकी हेमंत, फाल्गुन चैत्रकी वसंत, वैशाखज्येष्ठकी ग्रीष्म, और आषाढश्रावण महीनेके प्रावृट् ऋतु होते हैं । दोषोंके चय कोप और शमन इन्हीं ऋतुओंके अनुसार होते हैं । अतएव वैद्यको उचित है कि, यदि वमनविरेचन देवे तो इन्हींऋतुओंके अनुसार देवे पूर्वक्रम आयुर्वेदशास्त्रमें मंतव्य नहीं है । इस मतमें प्रावृड्ऋतु कही है और शिशिरऋतुको इन्हींके अन्तर्गत मानी है ।

यथा ।

गंगायादक्षिणेदेशेवृष्टेर्बहुलभावतः । उभौमुनिभिराख्यातौ प्रावृड्वर्षाभिधावृतू । तस्याएवोत्तरेदेशेहिमप्रचुरभावतः । एतावुभौसमाख्यातौहेमन्तशिशिरावृतू ।

अर्थ–गंगाके दक्षिणदेशोंमें अत्यन्तवर्षा होनेसे मुनीश्वर प्रावृट् और वर्षाऋतु कहतेहैं । और गंगाके उत्तरदेशोंमें अत्यन्त शरदी पडनेसे इन्हीं दोनों ऋतुओंको हेमन्त और शिशिरऋतु कहेहै ।

अब पित्तादिदोषोंका संचय और प्रकोपोंका वर्षादि ऋतुओंमें सहेतुक होना दिखाते हैं ।

तत्रवर्षास्वोषधयस्तरुण्योऽल्पवीर्याआपश्चाप्रसन्नाःक्षितिमलप्रायास्ताउपयुज्यमानानभसिमेघावृतेजलप्रक्लिन्नायांभूमौक्लिन्नदेहानांप्राणिनांशीतवातविष्टब्धाग्नीनांविदह्यन्ते विदाहात्पित्तसञ्चयमापादयन्ति ससञ्चयःशरदिप्रविरलमेघेवियत्युपशुष्यति पङ्केऽर्ककिरणप्रविलापितःपैत्तिकान्व्याधीञ्जनयति ।

अर्थ–तहां वर्षाऋतुमें औषधी (गेहूं, जव, चनाआदि) तरुण और हीनवीर्य होतीहै[1] । जल दूषित अर्थात् गदले होतेहैं । पृथ्वी मलप्राय (तृण, पर्ण, रसकषायादि मलवहुल) अर्थात् सर्वत्र पत्ते तिनका कीच कादोसे दूषित होती है । ऐसे दूषित औषध जल और पृथ्वीके सेवन करनेसे तथा आकाशमेघ (वद्दल) करके व्याप्तहों वर्षाके जलसे आर्द्र पृथ्वीमें आर्द्र देहवाले प्राणियोंके शीत करके कुपितवात उसकरके मंदवेग जठराग्नि होतीहै । ऐसी मंदाग्निके प्रभावसे वर्षाऋतुमें भोजन करेहुए अन्नजल विदाहको प्राप्त होतेहैं ।

अर्थात् अम्लपाकहोताहै, उस अम्लपाकहोनेसे पित्त इकठ्ठा होताहै, अथवा स्वस्थानमें वढताहै, संचीयमानभी पित्त शीतलऋतुहोनेके कारण वर्षाहीमें कुपित नहीं होता किंतु वह पित्तका संचय शरदऋतुमें क्वचित् क्वचित् मेघ रहनेसे और आकाश

---

१ शिष्य–वर्षाऋतुमें गेहूँ चना चावल आदि पुराने होते हैं. फिर आप तरुण अर्थात् अभिनव कैसे कहते हो ।

गुरु–तुम्हारा कहना ठीक है परंतु गेहूँ चना चावलआदिके भीतर सूक्ष्मजल प्रवेश होनेसे नम्र हो ऊगनवाले होकर कुछ शक्ती वढकर पुराने होनेपरभी तरुण अर्थात् नये कहलाते हैं और शाकादितो नवीन सेवन करनेमें आतीही हैं, और जलभी नये होनेके कारण दूषित होते है.

शुष्कहोनेसे तथा सूर्यकी किरणोंकरके पृथ्वीकी कीच शुष्कहोनेपर पित्तजनित व्याधियोंको उत्पन्न करेहैं ।

ताएवौषधयःकालपरिणामात्परिणतवीर्याबलवत्योहेमन्तेभवन्त्यापश्च प्रसन्नाः स्निग्धाअत्यर्थंगुर्व्यस्ताउपयुज्यमानामन्दकिरणत्वाद्भानोः सतुषारपवनोपस्तम्भितदेहानांदेहिनामविदग्धाःस्नेहाच्छैत्याद्गौरवादुपलेपाच्चश्लेष्मणः सञ्चयमापादयन्ति ।

अर्थ–वेही पूर्वोक्त गेहूं चना चावल आदि औषधी हेमंतऋतुमें कालके परिपाकहोनेसे परिणतवीर्य (अर्थात् शक्तिसंपन्न) और बलवान्होतीहै. तथा जल स्वच्छ चिकने और भारी होतेहैं (पृथ्वीके मल निवृत्तहोनेसे जल स्वच्छ होतेहैं कोई ऐसाकहतेहैं.) इस हेमंतऋतुमें उक्त औषध और जलके खानेपीनेसे उससमय सूर्यकी मंदकिरण होनेसे तथा तुषार (हिम) सहितपवनकरके स्तंभितदेह जिनकी ऐसे मनुष्योंके अविदग्धअन्न, चिकने, शीतल, भारी और उपलेपी होनेसे कफका संचय करतेहैं परंतु यह कफ इसीहेमंतऋतुमें कुपित नहीं होता ।

स सञ्चयोवसन्तेऽर्करश्मिप्रविलापित ईषत्स्तब्धदेहानां देहिनांश्लैष्मिकान्व्याधीञ्जनयति ।

अर्थ–वह कफका संचय वसंतऋतुमें सूर्यकी किरणोंसे पिगलकर किंचित् स्तब्धदेहवाले प्राणियोंके कफकी व्याधियोंको प्रगट करेहैं ।

ताएवौषधयोनिदाघेनिस्साराखक्षाअतिमात्रंलघ्व्योभवन्त्यापश्चताउपयुज्यमानाःसूर्यप्रतापोपशोषितदेहानांदेहिनांरौक्ष्याल्लघुत्वाद्वैशद्याच्चवायोःसञ्चयमापादयन्ति ।

अर्थ–वोही पूर्वोक्त गेहूं चावल आदि औषधि ग्रीष्मऋतुमें निस्सार (दुर्बलवीर्य) रूक्ष और अत्यंत हलके होतेहैं । तथा जलभी निस्सार रूक्ष और हलके होतेहैं ऐसे औषध और जलके खानेपीनेसे उसकालमें सूर्यप्रताप करके उपशोषित देह जिन्होंकी ऐसे प्राणियोंके रूक्ष, लघु और विशद् गुणप्रावल्य होनेके कारण वायुका संचय होताहै ।

यद्यपि शीतलवायुका उष्ण (ग्रीष्मसमयमें) संचय नहीं होना चाहिये परंतु संपूर्ण वातके गुणोंमें रौक्ष्यगुण प्रधानहै अतएव औषधियोंको अत्यन्त रूक्ष होनेसे रूक्षवायुका ग्रीष्मऋतुमेंभी संचय होताहै ।

स सञ्चयःप्रावृषिचात्यर्थंजलोपक्लिन्नायां भूमौक्लिन्नदेहानांप्राणिनांशीतवातवर्षैरितोवातिकान्व्याधीञ्जनयाति । एवमेषद्दोषाणांसंचयप्रकोपहेतुरुक्तः ।

अर्थ-यह वातका संचय प्रावृषिऋतुमें अत्यन्त जलसे आर्द्र देहवाले पुरुषोंके शीतवात और वर्षाका प्रेरित वातके रोग प्रगट करेहैं ।

इसप्रकार यह दोषोंका संचय और कोपका हेतु कहाहै ।

प्रकोपमें यथाअवसर संशोधनकरना यह कहतेहैं ।

तत्रवर्षाहेमंतग्रीष्मेषुसञ्चितानांदोषाणांशरद्वसन्तप्रावृट्सु चप्रकुपितानांनिर्हरणं कर्त्तव्यम् ।

अर्थ-तहां वर्षा हेमंत और ग्रीष्मऋतुओंमें संचितहुए दोष शरदादि ऋतुओंमें कुपित होतेहैं, अतएव उन्होंका शरद, वसंत और प्रावृट्ऋतुमें वमनाविरेचनद्वारा निर्हरण (शोधन) करना चाहिये ।

तत्रपैत्तिकानांव्याधीनामुपशमोहेमन्ते श्लैष्मिकाणांनिदाघे वातिकानांघनात्यये स्वभावत एव । एते सञ्चयप्रकोपोपशमाव्याख्याताः ॥

अर्थ-पैत्तिकव्याधियोंकी शांति हेमंतऋतुमें । कफजनितरोगोंकी शांति ग्रीष्मऋतुमें । और वातजनितरोगोंकी शांति शरदृऋतुमें स्वयंही होजातीहै । यह संचय प्रकोप और उपशम कहेहैं ।

छहों ऋतुओंका एक दिनमें परिवर्त्तन ।

तत्रपूर्वाह्णेवसन्तस्यलिङ्गं-मध्याह्नेग्रीष्मस्य-अपराह्णेप्रावृषः-प्रदोषेवार्षिकं-शारदमर्द्धरात्रे-प्रत्युषसिहेमन्तमुपलक्षयेत् । एवमहोरात्रमपिवर्षमिवशीतोष्णवर्षलक्षणंदोषोपचयप्रकोपोपशमैर्जानीयात् ॥

अर्थ-अब दिनरात्रिमें छहों ऋतु वर्त्ततेहैं, यह कहते हैं-तहां दिनके पूर्वाह्णमें वसंतके लक्षण होतेहैं, मध्याह्नमें ग्रीष्मऋतुके, अपराह्ण अर्थात् दिनके अंत्यभागमें प्रावृट्ऋतुके, प्रदोषमें वर्षाके, अर्धरात्रिमें शरदृऋतुके और प्रत्यूष (चारघडीके तडके) हेमन्तऋतुके चिह्न होतेहैं, इसप्रकार अहोरात्र (दिनरात्रि) मेंभी वर्षके समान शीत उष्ण वर्षाके लक्षण दोषोंके संचय प्रकोप और शमनकरके जानने चाहिये ।

अव्यापन्नऋतुओंके गुण ।

तत्राऽव्यापन्नेष्वृतुष्वव्यापन्नाओषधयोभवन्त्यापश्चताउपयुज्यमानाःप्राणायुर्बलवीर्यौजस्कर्योभवन्ति । तेषांव्यापदोऽदृष्टकारिता ।

अर्थ–तहां अदूषितऋतुओंमें दोषरहित औषधी (गेहूं चावलआदि) और जल होतेहैं । ऐसे अन्नजलके सेवन करनेसे प्राण, आयु, बल, वीर्य और ओजको वृद्धि कर्त्ता होताहै। उन ऋतुओंका दूषित होना अर्थात् शीत, उष्ण, वायु, वर्षाका विपरीत होना अदृष्टकारितहै । अर्थात् संपूर्ण मनुष्योंके अधर्मसे होताहै ऐसा जानना, कोई अदृष्टकरके ईश्वरका ग्रहण करतेहैं अर्थात् ईश्वरकी इच्छासे होतीहै ।

व्यापन्नऋतुओंके अवगुण ।

शीतवातवर्षाणिखलुविपरीतान्योषधीर्व्यापादयन्त्यापश्च तासामुपयोगाद्विविधरोगप्रादुर्भावोमारकोवाभवेदिति ।

अर्थ–शरदी, गर्मी और वर्षाके विपरीत होनेसे अर्थात् हीन. मिथ्या अति युक्त होनेसे औषधी और जल दूषित होते हैं उन औषधी और जलके सेवन करनेसे अनेक प्रकारके रोग और महामारी आदि उत्पन्न होतेहैं ।

प्रमाणान्तरम् ।

तत्रशीतोष्णवर्षाणांहीनमिथ्याधिकेनच। जलानामोषधादीनांविपरीतोगुणोभवेत् ॥ १ ॥ तस्योपरोधाद्विविधरोगाणांचाशुसम्भवः । तस्माद्वैद्यैर्बुद्धिमद्भिःसम्यगृतुषुसंग्रहम् ॥ २ ॥ अपांवाह्यौषधीनां च कारयेच्चप्रयोजयेत् । अनुत्पत्तौयतंतेयेवैद्यास्तेचमंत्रिणः ॥ ३ ॥ विपाकंकोविजानातिगदानांविपदामपि ।

अर्थ–तहां शीत, उष्ण और वर्षाके हीन मिथ्या और अधिक होनेसे जल आर औषधादिकोंमें विपरीत गुण होतेहैं । अर्थात् जो गुणकारी औषधी होती है वो अवगुणकारी होजातीहै उन औषधादिके सेवनसे अनेक प्रकारके रोगोंकी तत्काल उत्पत्ति होती है । अतएव वैद्यको उचितहै कि, उत्तम ऋतुओंमें जल और बाहरकी औषवियोंका संग्रह करलेना चाहिये । जो रोग और विपत्ति आनेके पूर्वही यत्न करतेहैं वोही वैद्य और मंत्री कहातेहैं क्योंकि, रोग और विपत्ति आनेके समयको कौन जानताहै । अर्थात् वैद्यको तो उचित है कि, जिसवर्षमें उत्तमऋतु होवें उसी समयमें सब

धोंका और जलका संग्रहकर रक्खे और राजाके मंत्रीको उचित है कि, जबतक कोई शत्रु प्रगट नहो उससे पूर्वही सेना आदिका प्रबंध अच्छीरीतिसे करे ।

दूषितऋतुओंकी चिकित्सा ।

तत्राव्यापन्नानामोषधीनामपाञ्चोपयोगः ॥

अर्थ-दूषितऋतुओंमें शुद्धअन्न जलका सेवन करना चाहिये । चकारसे पवनका ग्रहणहै अर्थात् दुष्टऋतुमें शुद्धपवनका अवश्य सेवन करना चाहिये ।

कदाचिदव्यापन्नेष्वप्यृतुषु कृत्याभिशापरक्षःक्रोधाधर्मैरुपध्वस्यन्तेजनपदाः ।

अर्थ-कभी कभी उत्तम ऋतुओंमेंभी कृत्या (मंत्रसे उत्पन्नराक्षसीविशेष) अभिशाप (गुरु, मातापिता, ब्राह्मण सिद्ध आदिके शापसे) राक्षसोंके क्रोध और अधम इन करके लोक पीडित होतेहैं ।

विषौषधीपुष्पगन्धेनवायुनोपनीतेनाक्रम्यतेयोदेशस्तत्रदोषप्रकृत्यविशेषेण कासश्वासवमथुप्रतिश्यायशिरोरुग्ज्वरैरुपतप्यन्ते । ग्रहनक्षत्रचरितैर्वा गृहदारशयनासनयानवाहनमणिरत्नोपकरणगर्हितलक्षणनिमित्तप्रादुर्भावैर्वा ।

अर्थ-जिस देशमें विषैले औषधकी पुष्पगन्धको पवन लेजायकर प्राप्त करती हैं उस जगे दोषप्रकृतिके विनाभी लोक खाँसी, श्वास, वमन, मस्तकपीडा और ज्वरसे तपायमान होतेहैं । कोई आचार्य " कासश्वासप्रतिश्यायगन्धाज्ञानभ्रमाशिरोरुग्ज्वरमसूरिकाभिरुपतप्यंते " ऐसा पाठ लिखकर व्याख्या करते हैं कि, श्वास लेनेसे जो नाकके छिद्रद्वारा विषैली पवन जातीहै उससे खांसी श्वास प्रतिश्याय (सरेकमा) गंधका ज्ञान न होना, भ्रम और मस्तकपीडा आदि रोग होते हैं । और वही विषैली पवन त्वचामें लगनेसे ज्वर, शीतलआदिके रोग होते हैं । तथा शनैश्चरादि दुष्ट ग्रहोंको दुष्टस्थानमें स्थित होनेसे और अश्विन्यादि नक्षत्रोंके उल्कापातादि चरित्रसे जन्मनक्षत्रादि विद्ध होनेसे । तथा घर, स्त्री, शय्या, सिंहासन वा चोकीमूढाआदि यान (रथ वग्घी घोडा हाथी पालकी नालकी पिन्नसआदि) माणि (स्फटिकादि) रत्न (हीरा पन्ना माणिक आदि) उपकरण (कलश, घडा, पीढा, सूप थाली आदि) इन सबके दुष्ट लक्षणरूप कारणकरके उत्पत्ति जिन्होंकी ऐसी व्याधियों करके लोक पीडित होते हैं ।

प्रमाणान्तर।

कालोदेशोजलोवायुश्चैतेदुष्टाविलक्षणाः। कुर्युर्जनपदध्वंस-मेकरूपेणयक्ष्मणा॥ कोर्थः सर्वेषांशीतज्वरादिरूपेणेत्यर्थः। राजाधर्मंपरित्यज्ययदाधर्मंप्रवर्त्तयेत्। अधर्ममनुवर्त्तंते तद्दे-शपुरवासिनः॥ उत्क्रान्तधर्ममर्यादांप्रजांवायद्युपेक्षते। सरा-जंतंजनपदंसंत्यजन्तीहदेवताः। उत्क्रान्तधर्ममर्यादां तां प्र-जांत्यक्तजीविताम्। विध्वंसयंतिविकृताः कालदेशांबुमारुताः॥

अर्थ—काल, देश, जल और वायु, ये विलक्षणतासे दुष्टहो लोकोंको एकरूप यक्ष्माकरके अर्थात् शीतज्वरादिरूपकरके पीडितकरतेहैं। जिससमय राजा धर्मको त्यागके अधर्मको प्रवृत्त करताहै। उससमय उसके देश और पुरवासी प्रजा धर्मम-र्यादाको उल्लंघन करतीहै, जब इसप्रकार राजा और प्रजा दोनों अधर्मी होजातेहैं, तब उस राजा और जनपदोंको देवता त्याग देतेहैं, अर्थात् ग्रामदेव, और कुलदेव त्याग देतेहैं, उस समय उन अधर्मीप्रजाओंको काल, देश, जल और पवन विध्वंस करतेहैं।

कालकी दुष्टि।

ग्रहनक्षत्रसंस्थानप्रमाणजनवैकृतौ। तयोरधर्मात्संप्राप्तेकालो व्यापद्यतेध्रुवम्॥ कालःसंवत्सरः शीतो घर्मवर्षश्चलक्षणम्। सहीनातिविपर्य्यस्तस्वलिंगो दुष्टउच्यते॥ शीतेतिवातता-शीतमथवास्यविपर्ययः। तथाचोष्णेचवर्षेच कालव्याप-दिलक्षणम्॥

अर्थ—अधर्मसे ग्रह, नक्षत्रोंके स्थान प्रमाण और जनोंकी विकृति होनेसे काल दूषित होताहै, वह संवत्सरात्मककाल शरदी, गरमी और वर्षालक्षणात्मक होताहै फिर वह काल अपने लक्षणोंसे हीन, अत्यंत और विपरीत होनेसे दुष्ट कहलाताहै, शीतकालमें अत्यंत पवन वा अत्यंत शीत अथवा शरदीमें गरमीका होना दुष्टता कहा-तीहै इसीप्रकार गरमी और वर्षाऋतुके दुष्टलक्षण जानने।

देशदुष्टके लक्षण।

प्रकृत्याविकृतस्पर्शगंधवर्णरसाश्रयः। तृणोलुपलतागुल्मजा-लव्रतातिसंकुलः॥ मक्षिकादंशमशककृमिकीटाद्युपद्रुतः। शु-

धोंका और जलका संग्रहकर रक्खे और राजाके मंत्रीको उचित है कि, जबतक कोई शत्रु प्रगट नहो उससे पूर्वही सेना आदिका प्रबंध अच्छीरीतिसे करे ।

दूषितऋतुओंकी चिकित्सा ।

तत्राव्यापन्नानामोषधीनामपाञ्चोपयोगः ॥

अर्थ-दूषितऋतुओंमें शुद्धअन्न जलका सेवन करना चाहिये । चकारसे पवनका ग्रहणहै अर्थात् दुष्टऋतुमें शुद्धपवनका अवश्य सेवन करना चाहिये ।

कदाचिदव्यापन्नेष्वप्यृतुषु कृत्याभिशापरक्षःक्रोधाधर्मैरुपध्वस्यन्तेजनपदाः ।

अर्थ-कभी कभी उत्तम ऋतुओंमेंभी कृत्या (मंत्रसे उत्पन्नराक्षसीविशेष) अभिशाप (गुरु, मातापिता, ब्राह्मण सिद्ध आदिके शापसे) राक्षसोंके क्रोध और अधम इन करके लोक पीडित होतेहैं ।

विषौषधीपुष्पगन्धेनवायुनोपनीतेनाक्रम्यतेयोदेशस्तत्रदोषप्रकृत्यविशेषेण कासश्वासवमथुप्रतिश्यायशिरोरुग्ज्वरैरुपतप्यन्ते । ग्रहनक्षत्रचरितैर्वा गृहदारशयनासनयानवाहनमणिरत्नोपकरणगर्हितलक्षणनिमित्तप्रादुर्भावैर्वा ।

अर्थ-जिस देशमें विषैले औषधकी पुष्पगन्धको पवन लेजायकर प्राप्त करती हैं उस जगे दोषप्रकृतिके विनाभी लोक खाँसी, श्वास, वमन, मस्तकपीडा और ज्वरसे तपायमान होतेहैं । कोई आचार्य " कासश्वासप्रतिश्यायगन्धाज्ञानभ्रमाशिरोरुग्ज्वरमसूरिकाभिरुपतप्यंते " ऐसा पाठ लिखकर व्याख्या करते हैं कि, श्वास लेनेसे जो नाकके छिद्रद्वारा विषैली पवन जातीहै उससे खांसी श्वास प्रतिश्याय (सरेकमा) गंधका ज्ञान न होना, भ्रम और मस्तकपीडा आदि रोग होते हैं । और वही विषैली पवन त्वचामें लगनेसे ज्वर, शीतलआदिके रोग होते हैं । तथा शनैश्चरादि दुष्ट ग्रहोंको दुष्टस्थानमें स्थित होनेसे और अश्विन्यादि नक्षत्रोंके उल्कापातादि चरित्रसे जन्मनक्षत्रादि विद्ध होनेसे । तथा घर, स्त्री, शय्या, सिंहासन वा चोकीमूढाआदि यान (रथ बग्घी घोडा हाथी पालकी नालकी पिन्नसआदि) मणि (स्फटिकादि) रत्न (हीरा पन्ना माणिक आदि) उपकरण (कलश, घडा, पीढा, सूप थाली आदि) इन सबके दुष्ट लक्षणरूप कारणकरके उत्पत्ति जिन्होंकी ऐसी व्याधियों करके लोक पीडित होते हैं ।

प्रमाणान्तर।

कालोदेशोजलोवायुश्चैतेदुष्टाविलक्षणाः। कुर्युर्जनपदध्वंस-मेकरूपेणयक्ष्मणा ॥ कोर्थः सर्वेषांशीतज्वरादिरूपेणेत्यर्थः। राजाधर्मपरित्यज्ययदाधर्मंप्रवर्त्तयेत्। अधर्ममनुवर्त्तंते तद्दे-शपुरवासिनः ॥ उत्क्रान्तधर्ममर्यादांप्रजांवायद्युपेक्षते। सरा-जंतंजनपदंसंत्यजन्तीहदेवताः। उत्क्रान्तधर्ममर्यादां तां प्र-जांत्यक्तजीविताम्। विध्वंसयंतिविकृताः कालदेशांबुमारुताः ॥

अर्थ–काल, देश, जल और वायु, ये विलक्षणतासे दुष्टहो लोकोंको एकरूप यक्ष्माकरके अर्थात् शीतज्वरादिरूपकरके पीडितकरतेहैं। जिससमय राजा धर्मको त्यागके अधर्मको प्रवृत्त करताहै। उससमय उसके देश और पुरवासी प्रजा धर्मम-र्यादाको उल्लंघन करतीहै, जब इसप्रकार राजा और प्रजा दोनों अधर्मी होजातेहैं, तब उस राजा और जनपदोंको देवता त्याग देतेहैं, अर्थात् ग्रामदेव, और कुलदेव त्याग देतेहैं, उस समय उन अधर्मीप्रजाओंको काल, देश, जल और पवन विध्वंस करतेहैं।

कालकी दुष्टि।

ग्रहनक्षत्रसंस्थानप्रमाणजनवैकृतौ। तयोरधर्मात्संप्राप्तेकालो व्यापद्यतेध्रुवम् ॥ कालःसंवत्सरः शीतो घर्मवर्षश्चलक्षणम्। सहीनातिविपर्य्यस्तस्वलिंगो दुष्टउच्यते ॥ शीतेतिवातता-शीतमथवास्यविपर्ययः। तथाचोष्णेचवर्षेच कालव्याप-दिलक्षणम् ॥

अर्थ–अधर्मसे ग्रह, नक्षत्रोंके स्थान प्रमाण और जनोंकी विकृति होनेसे काल दूषित होताहै, वह संवत्सरात्मककाल शरदी, गरमी और वर्षालक्षणात्मक होताहै फिर वह काल अपने लक्षणोंसे हीन, अत्यंत और विपरीत होनेसे दुष्ट कहलाताहै, शीतकालमें अत्यंत पवन वा अत्यंत शीत अथवा शरदीमें गरमीका होना दुष्टता कहा-तीहै इसीप्रकार गरमी और वर्षाऋतुके दुष्टलक्षण जानने।

देशदुष्टके लक्षण।

प्रकृत्याविकृतस्पर्शगंधवर्णरसाश्रयः। तृणोलुपलतागुल्मजा-लव्रततिसंकुलः ॥ मक्षिकादंशमशकक्रमिकीटाद्युपद्रुतः। शु-

काखुशलभोलूकश्मशानिकमृगद्विजैः ॥ पीडितोवातनिर्घातकंपोल्काशनिवृष्टिभिः। निःश्रीकपुष्पोपवनोनष्टसस्यौषधीफलः ॥ संशुष्को दीर्घसंक्षुब्धघोरस्वनजलाशयः । नीलिकादिभिराच्छन्नोवाप्यादीनांवचोद्गमः ॥ घोरनादाकृमिर्वायुर्मेघच्छन्ननभस्तलः। अकालपुष्पफलवान्गर्भाददद्भुतदर्शनः ॥ निस्तन्यइवानिःश्रीकस्तपोद्भ्रांतमृगद्विजः । अजस्रसंभ्रमाद्भ्रान्तउत्कृष्टश्वगणोभृशम् ॥ भैरवाद्भुतसंत्रासीरुदितानिष्टनिस्वनः । द्विपादीनांवचोत्पत्तिरश्वादीनांद्विधालकाः ॥ प्रासादीनांप्रपातश्चअकस्माच्चैवजायते। त्रासश्चगोवृषादीनामश्वानांचपलायनम् ॥ भवेद्धर्मार्जवादीनांनाशःसत्यौजसांतथा । उत्पातैस्ताद्विधैश्चान्यैःप्रदुष्टोदेशउच्यते ।

अर्थ-जिससमय गंध वर्ण, रसाश्रयवस्तुओंका प्रकृतिकरके विपरीतस्पर्श हो (अर्थात् सुगंधवस्तुओंमें दुर्गंध और दुर्गंधवालीवस्तुओंमें सुगंधी आवे, उत्तमरंग दुष्ट और दुष्ट रंग उत्तम प्रतीत होवे, इसी प्रकार कटु कषैले रस मिष्ट और मिष्टरस कटु प्रतीत हो) तृण उलूप (लताका भेद) लता, गुल्म (जवासे आदि) जाल, और वेल इनसे जो व्याप्त हो,तथा मक्खी, डास,मच्छर, क्रिमि कीट,आदिसे उपद्रवयुक्त हो, तोता, मूसे, टीडी, घूघू, तथा श्मशानमें रहनेवाले मृग (स्यारिया, बिज्जू, भिढहा, जरखआदि) और पक्षी (गीध, कंक, कुई, वाझ, शिकरा, चील, काकआदि) इनकरके पीडित तथा पवन (आंधी भभूरा आदि) भूचाल, उल्का, अशनि (वज्रपात) और वर्षा इन करके पीडित, तथा शोभारहित पुष्प जिन्होंमें ऐसे उपवन बागवगीचे नष्टसस्य (दूव) औषधी (गेहूं चना चावल आदि) और वृक्ष फलहीन हो, सूखे और अत्यंत क्षुभित तथा घोर शब्द करनेवाले और नीलिका आदि (शिवारआदि) से आच्छादित जलाशय होतेहैं । बावडी, कूआ, आदिका गूंजना घोर शब्दके करनेवाली और कृमिसंयुक्त पवन होवे, आकाश नित्यप्राति बादलोंसे ढका रहे, कुसमय वृक्षोंमें फलफूलोंका प्रकट होना (अर्थात् जो वृक्ष शरदीमें फले फूले वो गरमीमें फलफूलयुक्त होने लगे और जो चातुर्मास्यमें फलने फूलनेवाले हैं वो शर्दीगर्मीमें फलफूल देने लगे) गर्भोंसे अद्भुत बालक प्रगट हो (अर्थात् नेत्र खुले, हँसते हुए, दांतयुक्त, दो मूडके, छः उंगलीके दो जुडे हुए, विना मस्तकके तथा मनुष्यके बकरी, घोडा, सर्पके तुल्य बालक प्रगट हो, घोडेके गधेकासा, गधेके घोडेकासा, वा बकरीकासा

बच्चा होना इत्यादि औरभी जानने) दूधरहित और शोभारहित अत्यंत गर्मीसे पीडित पशु (गौ, भैंस, मृग, ससे, व्याघ्रादि) और पक्षी हो, तथा पक्षी और पशुओंके झुंड निरंतर संभ्रमसे भ्रांत हो, घोर और अद्भुत त्रासयुक्त रुदन करे और अशुभ वाणी बोले हाथीआदि पशुओंका बोलना, और घोडोंआदिको द्विधालक होना अकस्मात् पक्के और दृढ मकानका गिर पडना, गौ बैल आदिको त्रासका होना तथा घोडा हाथी आदि अपने स्थानको त्यागकर भागना तथा धर्म, नम्रता, आदिका और सत्य तथा ओजका नाश होना, उसीप्रकारके अन्य उत्पात होनेसे दुष्ट देश कहताहै । अर्थात् जिस देशमें ऐसे उत्पातहोने लगे तब जान लेवे कि, अब यह देश दुष्ट हो गया ।

दुष्टजलके लक्षण ।

स्वभावविरसस्पर्शगन्धवर्णरसोदितम् । आगंतुभिःकृमिक्लेदपैच्छिल्यैश्चाप्युपद्रुतम्॥परित्यक्तजलचरैरकस्माद्वापिसेवितम्। पातस्ततद्रुमानां च क्षीयमाणं जलाशयम् ॥ अनारोग्यकरं चाम्बुप्राणिनां दुष्टमुच्यते ।

अर्थ-जो जलके रस, स्पर्श, गंध, और वर्ण कहेहैं वे स्वभावसे हीन होवे, (अर्थात् स्वाद खारी हो दुष्टस्पर्श कहिये जिसके शरीरमें स्पर्श होतेही खुजली चल उठे चकत्ते पडजावे, दुर्गंध आतीहो और दीखनेमें बुरा मालुम हो) तथा गिरकर कोई पशुपक्षी मरगया हो, कीडे पडगये हों, पत्ते, तिनकामिट्टी पत्थरसे अट रहा हो, गाढा हो वा ऊपर मलईसी जम रही हो, इत्यादि उपद्रवयुक्त हो, और जिसको जलचर (चकवा, चकवी, सारस, जल मुरगा, बतक और कछुआ, मेडक आदि) त्यागगये हों अथवा जिसमें कोई जलचर नहीं रहताथा उसमें अकस्मात् रहने लगे (मच्छी भरजावे) तटके वृक्ष गिरपडे वा जलाशय शुष्क होगया हो ऐसा मनुष्योंको रोगका करनेवाला दुष्टजल कहाताहै ।

दुष्टपवनके लक्षण ।

वित्रासिकःकुण्डलिकश्चण्डघोरजवस्वनः । अतिशीतोष्णरूक्षोतिपरुषोऽतिबलःखरः । असात्म्यगंधसिकतापांशुधूमरजोवहः । अथर्त्तुविपरीतश्चप्रदुष्टोवायुरुच्यते ।

अर्थ-जो पवन त्रासदायक, भभूरके रूपमें, प्रचंड घोरवेग और शब्दवाला अत्यंत शीतल, अतिउष्ण, अतिरूक्ष, अतिकठोर, अत्यंत बलवान् और खर दुष्टगंध, रेत और धूल, तथा धूआँ आदिको बहनेवाला और ऋतुविपरीत पवन दुष्टकहाताहै ।

ऋतुकालप्रदेशेनवायुर्दुष्यतिवायुना।सलिलंसलिलेनोर्वीतैःस-वैश्वोद्भिदोगणः।कालदेशाम्बुमरुतांदुष्टानांधर्मसंक्षये। एषांदुः-परिहार्यत्वात्पूर्वः पूर्वो भवेद्बली । अकालमृत्युतस्तस्मात्संर-क्षेज्जीवितबुधः । रसवीर्यविहीनानामोषधीनांचवर्ज्जनम् । स-म्यगृतुप्रभूतानांगृहीतानां च सेवनम् । जलानामौषधीनांच व्रतचर्य्याचकारयेत् ।

अर्थ-ऋतुकाल और प्रदेशकरके पवन पवनसे दूषित होताहै, और जल जलसे तथा पवनजलसे पृथ्वी दूषितहोतीहै । और ऋतु, काल, प्रदेश, पवन, जल और पृथ्वीके दूषित होनेसे उद्भिज्जगण (वृक्षौषधादि) दूषितहोतेहैं । इसप्रकार काल, देश, जल और पवन दूषितोंका धर्म क्षीण होनेसे ये दुःख परिहार्य अर्थात् यत्नरहित हो पूर्वपूर्वसे उत्तर उत्तर बली होते हैं अर्थात् कालसे देश प्रबल, देशसे जल, और जलसे अधिक बली रोगकारक पवन होती है । अतएव बुद्धिमान् पुरुषको उचितहै कि, अकालमृत्युसे अपने जीवनकी इसप्रकार रक्षाकरे, कि, रस वीर्य विहीन औषधोंका परित्याग करना और उत्तमऋतुमें होनेवाले और उत्तम ऋतुगृहीत औषध जल आदिका सेवनकरना और व्रतचर्य्याआदिके करनेसे देह रक्षाकरै ।

अब ऋतुव्यापदादिकृत रोगोंकी चिकित्सा ।

तत्रस्थानपरित्यागशांतिकर्मप्रायश्चित्तमङ्गलजपहोमोपहारे-ज्याञ्जलिनमस्कारतपोनियमदयादानदीक्षाभ्युपगमदेवता-ब्राह्मणगुरुपरैर्भवितव्यमेवंसाधुभवति ।

अर्थ-अब दूषित ऋतुकृत रोगोंकी सामान्य रीतिसे चिकित्सा कहते हैं । तहां जिस स्थानमें रोगादि उपद्रव होतेहों उसको त्याग दूसरे स्थानमें चला जाना शांति-कर्म (इन्द्रीन्को जीतना अर्थात् जिससमय महामारी आदि रोग होवे उससमय खर-बूजा तरबूज आदि वस्तु दूषित न खाना बहुत स्त्रीसंग न करना, दुष्टशब्द न सुनना, इंद्रियोंके व्यापारोंको न करे) अथवा वेदोक्तमंत्रोंसे ग्रहशांति आदि करे । प्रायश्चित्त (कर्मविपाककी रीतिसे चांद्रायणादि व्रत करना) अथवा प्रायनाम तपकाहै और चित्त नाम निश्चयको कहतेहैं । इन दोनों तप और निश्चयको एकत्रकरनेको प्रायश्चित्त कहते हैं । मंगल (उत्तम औषधी और मणि आदिका धारण करना) जप (ओंकार और

व्याहृतिपूर्वक गायत्री मंत्रका जप करना वा वेदोक्त मृत्युंजयादि मंत्रोंका जप करना परंतु दुष्ट रचित मद्यमांसभक्षण जिनमें ऐसे तंत्रोंक्त मंत्र कदाचित् न जपने) होम (हवन) उपहार (देव ब्राह्मणादिकोंके अर्थ गौ, घोडा, पाक आदि देना) कोई नास्तिक अधर्मी शूद्र पशुबलिदान कहतेहैं परंतु ऐसी वार्त्ताको मनमेंभी चिंतवन न करना क्योंकि "अहिंसा परमोधर्मः" ऐसी वेदकी आज्ञाहै।

इज्या (यज्ञकरना) अंजली (भक्तिपूर्वक हाथ जोडना) नमस्कार (देवगुरु-ब्राह्मणोंको मनदेहवाणीसे प्रणाम करना) तप प्रसिद्धहै, नियम (शास्त्रोक्तमौनादि) दया (सर्वजीवोंका हित इच्छा करना) दान (यथाशक्ति अनाथोंको देना परंतु हृष्टपुष्ट बकवृत्ति और बिडालवृत्तिवालोंको देना वर्जितहै) दीक्षा (गुरुसे सेवापूर्वक गायत्र्यादिमंत्रोंको ग्रहण करना) अभ्युपगम (गुरु आदिके सत् वाक्योंको अंगीकार करना) तथा देवता ब्राह्मण और गुरु इनकी सेवा करना, इत्यादि सर्वकर्मकरनेसे ऋतुजनित महामारी आदि उपद्रवोंकी शांति होती है।

इसके अनंतर अब वसन्तआदिऋतुओंका वर्णन और उनमें आहार विहार आदि का वर्णन कराजाता है। तहां प्रथम–

हेमन्तऋतुवर्णन।

यत्र तुषारगिरिविनिर्गतजनितजाड्यजनपदसंदीपित हुताशनधूमधूलीधूसरदर्पितखड्गकुञ्जरमाहिषमेषवायसमथ लोध्रप्रियङ्गुपुन्नागपुष्पराजिविराजितदमनकमरुवकरससमुत्थितबहलपरिमलपवनरमणीयोद्यानः स हेमन्त इति जानीयात्।

अर्थ–जिस ऋतुमें हिमालयपर्वतसे प्रगट (हिम) करके जडताको प्राप्त ऐसे जनपदों करके संदीपित हुताशनकी धूम और धूलीकरके धूसर आकाश तथा गैंडा, हाथी, भैंसे, मेंढा, कौआ ये हर्षितहों, तथा लोध, प्रियंगु, पुन्नागपुष्पोंकी पंक्तिसे शोभित और दोनामरुआके रससे प्रगट अत्यंत सुगंधी जिसमें मिली ऐसी पवन उसकर रमणीय उद्यान कहिये बागबगीचे जिसमें हो उसको हेमंत ऋतु जाननी।

---

१ कदाचित् कोई कहे कि वेदमें गोमेध,अश्वमेधादि यज्ञोंमें प्रत्यक्षहिंसाकरना लिखा है उनसे हमारा यही कथनहै कि, वेद ईश्वरकी आज्ञाहै, वह ईश्वर हमारी तुम्हारी तरह अज्ञानी नहीं है कि, कहीं तो चोरी करना उत्तम लिखे और कहीं उसको वर्जित करे, कदाचित् कोई कहे कि, यज्ञकी हिंसा नहीं कहलाती और जो जीव माराजाता है उसको अक्षय स्वर्ग होताहै. तो फिर यज्ञकर्त्ता यह अलब्धपद अपने पिताको वा भाई पुत्रको मारके क्यों नहीं देता. हां, ऐसे पामरोंसे भाषण कदाचित् न करना चाहिये। कहीं कहीं भक्तमालआदि ग्रंथोंमें लिखा है कि,भक्तचोरी अन्याईकरके भी वैष्णव और भगवान्की सेवा करे परंतु यह आज्ञा उन्हीं दुष्टोंकी है. ईश्वर अवश्य ऐसे दुष्टोंको घोरनरकमें गेरेगा इसजगे ग्रंथ बढनेके भयसे हमने इतनाही लिखा है।

गद्यकरके कहे अर्थको पुनः पद्यकरके कहते है ।

वायुर्वात्युत्तरः शीतो रजोधूमाकुलादिशः ।
छिन्नस्तुषारैः सविता हिमानद्धा जलाशयाः ॥
दर्पिता ध्वांक्षखड्गाह्वमहिषोरभ्रकुञ्जराः ।
[विस्तीर्णशालिकेदारनीलधान्योज्वला मही ।]
लोध्रप्रियंगुपुन्नागाः पुष्पिता हिमसाह्वये ।

अर्थ-हेमंतऋतुमें अत्यंतशीतलरोमांचोंको प्रगटकरता उत्तरका पवन चलताहै रज और धूएँसे व्याप्त अर्थात् धूसरी दिशा होतीहै, तुषार (कोहल) से आच्छादित सूर्यमंडल होताहै तथा जलाशय (नदी तालाब आदि) हिम (बर्फ)से ढकेहुए होतेहैं, ध्वांक्ष (कौआ) खड्गाह्व (गेंडा) भैंसा, उरभ्र (मेंढा) और कुंजर (हाथी) ये इस हेमंतऋतुमें हर्षित होतेहैं [तथा शूकर, घोडा, और बकरी येभी हर्षित होतेहैं] खेतोंमें बढेहुए चावल तथा नील धान्यों (गेहूंचनाआदि) से शोभित पृथ्वी होतीहै, लोधप्रियंगु, पुन्नाग, [और लवली] ये वृक्ष पुष्पित कहिये फूलतेहैं ।

हेमंतऋतुकी उत्तमताका वर्णन ।

दीर्घप्रचारसुरता किल यत्र रात्रिः
सुशीतलं वारि विना च यत्नात् ।
यः प्रेयसीकुचयुगं परिरभ्य शेते
स्वर्गोऽपि तस्य हृदये तृणवद्विभाति ॥ १ ॥

अर्थ-जिस हेमंतऋतुमें बहुकालपर्यंत मैथुन योग्यरात्रि, और विनायत्नके शीतल जल रहताहै, ऐसे समयमें अपनी प्रियाके दोनों स्तनोंको आलिंगनकर जो शयन करताहै उस पुरुषको स्वर्गसुखभी तृणके समान प्रतीत होताहै ।

पृथुजघनकुचाभिर्यौवनोन्मादनीभिर्नवमृगमदमिश्रैः कुंकुमैश्चर्चिताभिः । भवतिशिशिरशान्तिः स्त्रीभिरालिंगिताभिर्निशिनिशिपुरुषाणां जन्मसाफल्यभाजाम् ॥

अर्थ-जौबनमदमाती पुष्टहै जंघा और छातीमें नव कस्तूरीमिली केशर जिन्होंने लगायरक्खी ऐसी नववालाको दुसालामें दवकाय जो पुरुष आलिंगनकर शीतके पालाके कसालाको नित्यप्रति रात्रियोंमें दूर करतेहैं उन्हींका जन्म सफलहै ।

---

१ धूमधूम्रा रजोमन्दास्तुषाराविलमंडलाः । दिगादित्या मरुच्छैत्यादुत्तरो रोमहर्षणः । लोध्रप्रियंगुपुन्नागलवल्यः कुसुमोज्वलाः । हृष्टा गजाजमहिषवाजिवायसशूकराः ॥ इति पाठान्तरम् ।

हेमन्तेबहुदोषाढ्येद्वौगुणौसर्वसंमतौ ।
अयत्नशीतलंवारिसुरतंस्वेदवर्जितम् ॥

अर्थ–अनेक दोषयुक्त हेमंतऋतुमें दो गुण सर्व संमतहैं, जैसे कि एक तो विना-यत्नके शीतलजल रहताहै, और पसीनेरहित स्त्रीसंग होताहै ।

हेमन्तेदधिदुग्धसर्पिरशनामाञ्जिष्ठवासोभृतः
काश्मीरद्रवलिप्तचारुवपुषः खिन्नाविचित्रैरतैः ।
वृत्तोरुस्तनकामिनीजनकृताश्लेषागृहाभ्यन्तरे
ताम्बूलीदलपूगपूरितमुखाधन्याःसुखंशेरते ॥

अर्थ–दही, दूध घृतका भोजन और लालरंगके वस्त्र धारण कर, केशरकी की-चसे देहको लिप्तकर चित्रविचित्र रतिकरके थकित और गोलहै स्तन जंघा जिन्होंकी ऐसी कामिनियोंने घरोंके भीतर कीनाहै आलिंगन जिन्होंका तथा पान सुपारीके बीडेसे पूरितहै मुख जिन्होंका ऐसे बडभागी पुरुष इस हेमंतऋतुमें सुखपूर्वक शयन करतेहैं[१] ।

हेमन्तऋतुकी चर्या ।

बलिनः शीतसंरोधाद्धेमन्तेप्रबलोऽनलः । भवत्यल्पेंधनो धातुः सपचेद्वायुनेरितः ॥ अतोहिमेऽस्मिन्सेवेतस्वाद्वम्ललल-वणान्रसान् ।

अर्थ–बलीपुरुषके हेमंतऋतुमें शीतके प्रभावसे संरोधको प्राप्तहो जठराग्नि प्रबल होताहै, यदि इससमयमें इसको भोजनादि इंधन न प्राप्त होवे तो यह वातप्रेरित रस-रक्तादि धातुओंको पचाताहै अतएव इस ऋतुमें स्वादु,अम्ल, (खट्टे) और लवणरसों-का सेवन करना चाहिये ।

प्रमाणांतर ।

उष्मा बहिः प्रतिहतोहिमशीतवातैरंतः शरीरविवरं प्रतिपद्य-मानः । स्वस्थानपीडितवपुर्भवतिप्रचण्डः शीतेऽनिलानल-हरोविधिरिष्यतेतः ॥

---

१ अपि दिनमणिरेष क्लेशितः शीतसंघैरथनिशिनिजभार्यागाढमालिंग्यदोर्भ्याम् । स्वपितिपुनरु-देतुसालसाङ्गस्तु तस्मात्किमु न भवतुदीर्घा हैमिनीयामिनीयम् ॥ १ ॥ तुषारजालैः पिहितानियत्रशष्पा-णिनीराणिमुखानिभानुः । प्रातः प्रसन्नानि करैः करोतिदिशांवधूनामिव खण्डितानाम् ॥ २ ॥ प्रियंगु-पुन्नागकलोध्ररेणुव्रजैर्नभो वातिहिमाद्रिवायुः।आच्छादयन्धूमवितानलीढं विद्याद्दतु तं हिमनामधेयम्॥ ३॥

अर्थ-हिमशीत और वायुकरके बाहर आनेवाली गरमी रुककर शरीरके भीतर छिद्रमें प्राप्तहो अपने स्थानमें पिंडितहो प्रचंड होतीहै, अतएव इस हेमंतऋतुमें पवन और अग्निके हरणकारक विधि कहीहै । अर्थात् बादी दूरहो और प्रबल अग्नि शांतहो ।

दैर्घ्यान्निशानामेतर्हिप्रातरेवबुभुक्षितः ।
अवश्यकार्यंसंभाव्ययथोक्तंशीलयेदनु ॥

अर्थ-इस हेमंतकालमें रात्रियोंको बडीहोनेसे प्रातःकाल क्षुधित मनुष्यको अवश्य-कार्य (मलमूत्रोत्सर्गादि तथा दिनचर्योक्त कामोंसे) निवृत्तहो प्रथम भोजन करना चाहिये, भोजनकरे पश्चात् तैलाभ्यंगादि कर्म करे क्योंकि भूखे मनुष्यको प्रथम भोजन करना फिर अन्यकार्य करने चाहिये, जैसे लिखाहै-

आहारकालेसंप्राप्तेयोनभुंक्तेबुभुक्षितः ।
तस्यसीदतिकायाग्निर्निरिंधनइवानलः ॥

अर्थ-क्षुधावान् पुरुष भोजनके समयमें भोजन न करे तो उसकी जठराग्नि नष्ट होतीहै जैसे विनां इंधनके अग्नि नष्ट होतीहै इसीसे लिखा है "शतं विहाय भोक्त-व्यम्" ।

शिष्य-अन्यकालमेंभी भूखेको भोजन करना कहाहै अतएव उक्तश्लोकमें बुभुक्षित-शब्द न धरना चाहिये ।

गुरु-इसजगे बुभुक्षितशब्द जो धराहै सो ठीकहै क्योंकि और कालमें जठराग्नि अग्निके छायानुकारी होतीहै, अतएव जठराग्निका उपचार अग्निके समान करै । जैसे लिखाहै-

मुहुर्मुहुरजीर्णेपिभोज्यान्यस्योपहारयेत् ।
निरन्धनोन्तरंलब्ध्वायथैनंनाविपादयेत् ॥

अर्थ-वारंवार अजीर्णमेंभी भोजन देवै, क्योंकि जैसे विनाइंधनके अंतरको प्राप्तहो अग्नि नष्ट होजातीहै उसीप्रकार कदाचित् जठराग्नि नष्ट न होजावे ।

वातघ्नतैलैरभ्यङ्गंमूर्ध्नितैलविमर्दनम् ।

अर्थ-वातघ्न (नारायण प्रसारणी विषगर्भादि) तैलोंको देहमें मालिस करना, तदनंतर मस्तकमें तेल लगाना परंतु अभ्यंगकेपश्चात् मस्तकमें तेल लगाना अनुचितहै, क्योंकि मस्तक उत्तमांगहै अतएव प्रथम मस्तकमें तेल डालना चाहिये, यह प्रयो-गपारिजात ग्रंथमें लिखाहै ।

मस्तकाभ्यङ्गशेषेणक्वचिन्नोद्वर्त्तयेत्तनुम् ।
पुण्यहानिरलक्ष्मीःस्यात्तस्मात्तत्परिवर्जयेत् ॥

अर्थ–अर्थात् मस्तक अभ्यंगसे जो तैल बाकी रहै उसको देहमें नहीं लगाना चाहिये, क्योंकि मस्तकशेष तेलको देहमें लगानेसे पुण्यकी हानि और अलक्ष्मी होतीहै इसीसे न लगावे। इस प्रमाणसे यह सिद्ध हुआ कि प्रथम मस्तकमें लगावे परंतु उसके शेषको देहमें न लगावे।

नियुद्धंकुशलैःसार्द्धंपादाघातंचयुक्तितः ।

अर्थ–इस हेमंतऋतुमें कुश्ती लड़नेके दावपेंच जाननेवाले कुशल पुरुषोंके साथ कुश्ती लडे, और दंड, कसरत करे; परंतु अर्धशक्ति पर्यंत करे [अर्धशक्तिके लक्षण आगे दिनचर्य्यामें कहेंगे] दंड, कसरत और कुश्तीका लडना तैल मालिसके पूर्व करना उचितहै। इसमें प्रमाण–

पादाघातस्तैलयुक्तोदीपनोदेहपुष्टिकृत् ।
शुक्रौजस्तेजसांवृद्धिकरःश्रोत्रविशोधनः ॥
दृष्टिकोद्धर्षणंवर्ण्यंकंडूकोष्ठमलापहः ।

अर्थ–तैलकी मालिसयुक्त दंडकसरतका करना दीपनहै, देहको पुष्ट करे, शुक्र ओज और तेजकी वृद्धि तथा कर्णोंको शुद्ध करेहै, नेत्रोंकी ज्योतको वढावे,देहका वर्ण उत्तम करे खुजली और कोष्ठमलको दूर करेहै।

कषायापहृतस्नेहस्ततःस्नातोयथाविधि ।
कुंकुमेनसदर्पेणप्रदिग्धोऽगुरुधूपितः ॥

अर्थ–तेलकी चिकनाईको कषाय (लोधआदिके उवटनों) से दूर कर तदनंतर शास्त्रोक्तविधिसे स्नान करे, फिर कस्तूरी मिली केशरको देहमें लगावे, और अगरकी धूनी लेनी चाहिये।

व्यायामादौतदन्तेचकल्कंवामुद्गमाषजम् ।

अर्थ–दंडकसरतके प्रथम वा अंतमें मूंगका अथवा उरदोंके कल्कका सेवन करना चाहिये।

रसान्स्निग्धान्बलंपुष्टं गौडमच्छसुरांसुराम् ।
गोधूमपिष्टमाषेक्षुक्षीरोत्थविकृतीःशुभाः ॥

अर्थ-स्निग्ध मांसरस तथा पुष्टमांस भक्षण करे, गौड सुरा (जो गुडसे वनतीहै) अच्छसुरा (सुरामंड) और सुरा (मदिरा) इनका सेवन करे, तथा गेहूंके पदार्थ (पूडी, कचौरी, मठरीआदि) पिष्ट (पिट्ठीके पदार्थ पकोडी चीलेआदि) उडद्के पदार्थ (पापड वडीआदि) ईखके पदार्थ (मिश्री लड्डू वतासेआदि) और दूधके (दही मक्खन बर्फी पेडा खडी मलाईआदि) इन सब पदार्थोंका सेवन करना चाहिये ।

प्रमाणांतर ।

औदकानूपमांसानिगोरसंनवमोदनम् । गोधूमतिलमाषेक्षुविकारान्विविधान्रसान् । भुंजीतपश्चात्साधूनिमधूनिचपिवेन्नरः । [नवमन्नं वसां तैलं शौचकार्यैसुखोदकम् ।] तैलाभ्यंगश्चशिरसःसशरीरस्यमर्दनम् ॥

अर्थ-जलके जीवोंका मांस, जलके समीप रहनेवाले पक्षियोंका मांस, गोरस नवीन भात, गेहूं, तिल, उडद, और ईखके विकार एवं अनेक प्रकारके रसोंका भोजन करे, तहां तिलके विकार (गजक, तिलकुटा, तिलवरी आदि) फिर भोजनके पश्चात् उत्तम मद्योंको पीवे, [नवीन अन्न, वसा तैलका सेवन और शौचकर्ममें सुखोदक लेना चाहिये] मस्तकमें तेल लगाना और सब देहमें मालिस करना ।

लघूष्णमम्वरंसेव्यं चन्दनागुरुधूपितम् । तथाच । प्रावाराजिनकौशेयप्रवेणीकौचवास्तृतम् । उष्णस्वभावैर्लघुभिः प्रावृतःशयनंभजेत् ॥

अर्थ-लघु (हलके) और गरम तथा चंदन अगरकी धूनीसे धूपित वस्त्र धारण करने चाहिये । वाग्भट लिखते हैं कि प्रावार (सौडतोसक रिजाई दगला गद्दाआदि) अजिन (मृगचर्म व्याघ्रचर्मआदि) कौशेय (रेसमी कपडा पीतांवर आदि) प्रवेणी (सूचीवाण नामसे प्रसिद्ध) कौचवस्त्र (जो पशुमात्रके रोमसे वने ऐसे साल धुस्सा वनात कंवलआदि) वस्त्रोंका और उष्ण स्वभाववाले और हलके ऐसे पडदोंसे आच्छादित ऐसे मकानमें शयन करे ।

युक्त्यार्ककिरणान्स्वेदं पादत्राणं च सर्वदा ।

अर्थ-युक्तिपूर्वक सूर्यकी किरण, और पसीनेलेवे, अर्थात् अत्यंत धूमखानेसे और पसीने लेनेसे ग्लानी आदि रोगोंको करे है, तथा पैरोंमें जोडीतो सदैव रखनी चाहिये, पादत्राणनाम करके मोजे और खडाऊ आदिकाभी ग्रहण है ।

सेवनंसूर्यरश्मीनांहुताशस्यचमात्रया । यथारुचिस्तुकिरणा-
न्निर्धूमंचहुताशनम् ॥ पृष्ठतोऽर्कंनिषेवेतजठरेणहुताशनम् ।
नात्युष्णशीतसलिलैः शौचंकुर्यात्प्रयत्नतः ॥

अर्थ-सूर्यकी किरण, और अग्निका सेवन करे यथारुचि धूप और धूआँरहित अग्निका सेवन करना चाहिये, सूर्यकी किरणोंको पीठ करके सेवन करे, और अग्निको पेटके आगे धरके तापे, तथा अत्यंत गरम और न अत्यंत शीतल ऐसे जलसे शौचादि विधि करनी चाहिये ।

पीवरोरुस्तनश्रोण्यः समदाःप्रमदाः प्रियाः ।
हरंति शीतमुष्णांग्यो धूपकुंकुमयौवनैः ॥
अंगारतापसंतप्तगर्भभूवेश्मचारिणः ।
शीतपारुष्यजनितोनदोषाजातुजायते ॥

अर्थ-पुष्ट है उरू स्तन और श्रोणीभाग जिन्होंके तथा यौवनमदमाती वा मद्य पीनेसे मदमाती , और अगरआदिकी धूनीसे तथा कुंकुम लेपसे तथा सहज यौवनकी अग्निसे उष्ण है शरीर जिन्होंके ऐसी प्यारी नारी शीतकी लाचारीको दूर करती है । तथा प्रज्वलित अंगीठीके तापसे संतप्त है भीतरकी पृथ्वी और मकान ऐसे मकानमें रहनेवाले पुरुषको कठोर शीतजनित दुःख कदाचित् बाधा नहीं करे । अतएव [ऐसे निर्वात और अगर मृगमद धूपित उष्ण घरमें रहना चाहिये] जैसे लिखा है " अलंनिर्वातशयनं भजेदगरधूपितम् । "

ग्रंथांतरके मतसे हेमंतचर्या ।

शिवः शिवाऽब्धिजाफलंहरीतकीगुडान्विता विभीतमज्जका-
र्द्रकंजयाचविश्वभेषजम् ॥ लवङ्गमाम्रमामम्ब्जलोचनेकपि-
त्थकं कणाशताह्विकाचमेथिकाऽरविन्दबीजकम् ॥ १ ॥
पयोदनादमारिषोमरीचधान्यबाल्हिकं घृतंचपायसंसुराज-
शाशहारिणानिवै । फलानिवार्त्तिराब्दरावतैत्तराणिचाङ्गने
पटोलकंरसोनकोहिताअमीहिमाह्वये ॥ २ ॥

अर्थ-आमरे, हरड, बेलफल, गुडयुक्तहरड, बहेडेकीमिंगी, अदरख, भांग, सोंठ, लौंग, कच्ची अँबिया, कैथ, पीपर, सोंफ, मेथी, कमलगट्टा, चौलाईका और मारिश-

का साग, कालीमिरच, धानियां, हींग, घृत, दूधकी खीर, मद्य, और बकरा, ससा, हरिण, लवा, मोर, तीतर, इनके मांस, तथा परवलका साग, और लहसन, ए पदार्थ हेमंतऋतुमें हितावह होतेहैं ।

सैन्धवमेलाचित्रकशाकं जातिफलं चञ्चूदधितक्रम् ।

शूरणकंद्राक्षामपिकान्ते कुण्डलिकामान्याचाहिमाद्वे ॥ ३ ॥

अर्थ-सैंधानिमक, इलायची, चीतेकी छाल, जायफल, चूकाका साग, दही, छाछ, जमीकंद, दाख और जलेबी, ये पदार्थ हेमंतऋतुमें पथ्यकारकहैं ।

कौशेयास्तरणेशयनं च श्यामास्त्रीसुरतंशुचिगंधम् ।

ताम्बूलं बहुभोजनमिष्टं हेमन्ते हितमाहुरितीदम् ॥

अर्थ-रेशमी वस्त्रोंके बिछैयेपर शयनकरना, सुंदर सोलहवर्षकी स्त्रीसे संभोग, सुगंध, बीडा, इच्छित बहु भोजन, ये हेमंतऋतुमें पथ्यकर हैं ।

पक्वं कलिङ्गं त्रपुसं च पक्वं कोशातकीवास्तुकमुद्गतैलम् ।

क्षुद्राझषाश्छागपयोग्निसेवा हेमंतकेऽमी सुहिताश्चनित्यम् ॥

अर्थ-पकातरबूज, खीरा तोरई, बथुआ, मूंग, तेल, छोटी मछली, बकरीका दूध, और अग्निसे तापना ये सब हेमन्तऋतुमें हितकारक हैं ।

क्वाथलीक्वथितासुक्षुजम्बीरं दाडिमीफलम् ।

जीवनं नैर्झरं दिव्यं वाप्यं कौप्यं च सारसम् ॥

व्यायामं जीर्णगोधूमाः षष्टिकारक्तशालयः ।

हेमन्तेऽमी हिताबाले पीनोत्तुङ्गपयोधरे ॥

अर्थ-मूलीआदि सागकी कथली, जंभीरी, विलायती अनार [अंगूर, सेव अखरोट] झरनेका, वर्षाका, बावडीका, कूएका, तथा तालाबका पानी, कसरत करना, पुरानेगेहूं, और सांठीका तथा लाल चावलोंका भात, ये हेमंतऋतुमें हितकारक हैं ।

प्रातर्भोज्यंनवंचान्नमम्लं घर्मतिलश्रमान् ।

अभ्यंगंच प्रशंसांति हेमंते भिषगुत्तमाः ॥

अर्थ-प्रातःकाल भोजन, नवीन अन्न, खट्टेपदार्थ, सूर्यके किरण, तिल, परिश्रम,

और अंगमें तेल लगाना ये हेमंतमें हितकारक हैं । ऐसे उत्तमवैद्य कहते हैं[1] हेमंत-ऋतुमें सोंठका चूर्ण मिलाकर हरडसेवन करनी चाहिये ।

हेमन्तऋतुमें अपथ्य ।

हेमन्तःशीतलः स्निग्धःस्वादुर्जठरवह्निकृत् ।
अतिशीतास्ततस्त्याज्याः पदार्थानवयौवने ॥

अर्थ—हेमंतऋतु यह, शीतल, स्निग्ध, स्वादु, तथा जठराग्नि प्रदीप्तकरनेवाला है, इसमें अतिशीतल पदार्थ सेवन वर्जित हैं ।

कसेरुंनाडिकाशाकंशृंगाटंकदलीफलम् । आलुकंखाखसं माषा राजकोषातकीप्रिये ॥ नादेयंपाल्वलंनीरंकैदारंमाहि-षंपयः । राजमाषायवामेषस्यामिषं च मकुष्ठकम् ॥ दिवानिद्रापुराणान्नं कुभोजनमभोजनम् । लघुपाकिचशै-त्यान्नं शीतनीरावगाहनम् ॥ प्रवातंनियताहारमुदमंथंहि-मागमे । कषायकटुतिक्तानिरूक्षाणिचलघूनिच ॥ वर्जे-येच्छीतसंस्पर्शाञ्शीतान्युपवनानिच । वह्निसंतप्तहेमाभेहेम-न्तेऽमूनिसंत्यजेत् ॥

अर्थ—कसेरू, नाडीका साग, सिंघाडे, केलाकी फली, आलू, खसखस, उडद, गलका तोरई, नदीका, छोटे तलाव (तलैया) का, तथा खेतोंका पानी, भैंसका दूध, वडे, उडद, जौ, मेंढेका मांस, मटर, दिनकी निद्रा, पुराना अन्न, निंदित भोजन, लंघन, लघुपाकि और शीतल अन्न तथा शीतलजलसे स्नान, पवनका खाना एक समयका भोजन, सत्तुआदि, एवं कषेले, कडुए, तीखे, रूक्ष और हलके पदार्थ, यथा शीतलवस्तुका स्पर्श करना, और शीतल वगीचे अर्थात् जिनबगीचोंमें धूप न आतीहो इत्यादि सर्व वस्तुओंका सेवन हेमंतऋतुमें वर्जित है ।

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे हेमंततौ पथ्यापथ्यवर्णनं समाप्तम् ॥

---

१ हेमंतकालेलवणंरसाम्लंस्निग्धंदधिक्षारकटुष्णभोज्यम् । सर्पिर्युतंभोजनकं समांसं तीक्ष्णाग्निपाना-न्निरसं भजेत॥ १॥हरीतकीशुंठियुताचसेव्यासंलेपनंचागुरुकुंकुमाभ्याम्। स्याद्वह्निसेवा सततं मनोज्ञास्त्री-कामिनीपीनकुचाचसेव्या॥२॥ कठोरपीनस्तनभारनम्रा सुमध्यमाचश्चलखंजनाक्षी । हेमंतकालेरमितान येन बृथागतंतस्यनरस्य जीवनम् ॥ ३ ॥ हेमंतेहिमकरबिंबचारुमुख्या रामायामृदुभुजपंजरेशयानाः । येकालं परमसुखंनयंति तेषां शीतं किं लगतिजगत्प्रकंपकारि ॥ ४ ॥

शिशिरचर्यामाह ।

शिशिरे शीतमधिकं वातवृष्ट्याकुलादिशः ।
शेषं हैमन्तवत्सर्वं विज्ञेयं लक्षणं बुधैः ॥

अर्थ-शिशिरऋतुमें शीत अधिक होता है, और वात तथा वृष्टि (अकालवर्षा) करके दिशा व्याप्त होती है, शेष सर्व लक्षण हेमंतके समान जानने ।

शिशिरके गुण ।

बहुलशिशिरवातात्किञ्चिदुद्धूतसस्या भवतिवसुमतीयंपक्वसस्यैस्तुपीता । कथमपि तुहिनं स्यार्ल्लिंगवैशेषिकं स्यात् पवनकफविकारोजायतेशैशिरेच ॥

अर्थ-अत्यंत शिशिरवातसे, किंचित घास उठरही तथा यह पृथ्वी पकेतृणोंसे पीली होतीहै तथा कुहल (बर्फका भेद) अधिक होताहै, तथा इसऋतुमें वातकफके विकार प्रगट होतेहैं, यह आत्रेयमें लिखाहै ।

ग्रन्थान्तरोंके मतसे वर्णन ।

यत्र शीताद्भयंभवतिचन्द्रचरणनिचयरुचिरतरतुषारसंकुशलसलिलाशयोयः सशिशिर इति विजानीयात् ॥

अर्थ-जिस ऋतुमें शीतसे भयहो तथा उज्ज्वलचन्द्रकिरणोंसे प्रगट तुषारसंकुल जलाशय जिसम उसको शिशिरऋतु जानना ।

सर्वं हिमोक्तं शिशिरेप्रयोज्यंपथ्याकणातुल्यतमाचसेव्या ।
आभुज्यसेवेतजलं सुखोष्णं कान्तायुतोवासगृहेवसेत्तु ॥
वाराहवन्धान्सुकृतान्प्रलेहान्स्यात्सूरणं वैवटकाश्चभक्ष्याः ।
पिष्टान्नमन्नंवरभोजनानिसेवेतसर्वानितिशीतकाले ॥

अर्थ-जो हेमंतऋतुमें वस्तु वर्णन करीहै, वो सब शिशिरऋतुमें देनी चाहिये, और इसऋतुमें पीपलका चूर्ण मिलायकर हरड सेवन करनी, बँधेहुए वाराहके मांस और उत्तमरीतिसे बने ऐसे प्रलेह, तथा जमीकंदका साग वडी [मगौरी पापड पकोडी गुलगुले-चीले आदि] पिष्टान्न (मेदाके पदार्थ) और उत्तमभोजन [वरफी-

१ यत्रामृतद्युतिकरव्रजसंनिकाशैर्व्याप्तादिशश्च विदिशश्च तुषारजालैः । रुद्धंनभश्चसमुदीक्ष्यततोभियेव वह्नेर्दिशंसभजतेशिशिरे विवस्वान् ॥

पेडा, खुरचन, मलाई, मोहनभोग, मोहनथाल, मेवबावाटी, खासापूडी आदि] ये सब पदार्थ शीतकालमें सेवन करने चाहिये ।

क्षेमेन्द्रात् ।

सार्द्रकार्द्रासुसंधानासबाह्लीकासुसैंधवा ।
सस्नेहाकामिनीचेयंकृशराशिशिरेहिता ॥

अर्थ-अदरखके साथ पानीका आचार, (आमका, लिसेडेका, ठेंटीका, छुहारा आचारीआदि) तथा हींग और सेंधानिमक मिले घृतप्लुत पदार्थ,तथा प्रीतिकेसाथ कामिनी और खिचडी ये सब वस्तू शिशिरऋतुमें हितहैं. । खीचडीमेंभी अदरख, हींग आदि मसाले पडेहो तथा ताजा घृत खूब पडाहो और दही पापडभीहो क्योंकि किसीनें कहाहै [इस खिचडीके चारयार, घी पापड और दही अचार] अथवा धनुर्मासमें जो चनाकी दाल, चावल, मेवा, घी, मिश्री और दूध मिलाकर खिचडी बनतीहै वो सेवन करनी चाहिये ।

मत्तेभकुम्भपरिणाहिनिकुङ्कुमार्द्रकान्तापयोधरतटेरतिभारखिन्ने । वक्षोनिधायभुजपञ्जरमध्यवर्त्तीधन्यः क्षपांक्षपयति क्षणवत्सधन्यः ।

अर्थ-मतवारे हाथीके कुंभस्थलको तिरस्कृत करनेवाले केशरसे आर्द्र और रतिभारसे थकित ऐसे कान्ताके स्तनोंको दोनों भुजपंजरोंके मध्यमें ले छातीसे छाती मिलाय जो पुरुष रात्रिको क्षणवत् व्यतीत करतेहैं वो धन्यहैं ।

मन्दं मन्दं दिनान्तेज्वलतिहुतवहः पृष्ठतः पार्श्वतो वा धन्यो लोकस्तरुण्याः स्तनजघनपरीरंभसंभोगसंगी । उच्चैस्तूलीविलासंसुललितशयनंक्वापितैलंसुगन्धंताम्बूलंतत्तभोज्यंतरुणिविरचितंवासरेशैशिरेऽस्मिन् ॥

अर्थ-सायंकालमें मंद मंद अग्नि प्रज्वालित आगे पीछे होरहीहै ऐसे समयमें धन्य पुरुष तरुणीके स्तन जघनका आलिंगनकर संभोग करतेहैं, ऊँचे ऊँचे रुईके गद्दोंपर विलास और सुन्दरशयन तथा कहीं तैलकी मालिस, कहीं अत्तरोंसे तरवतरहोना, बीडेका चबाना और नवीना स्त्रीके बनाए गरमागरम भोजन इस शिशिरऋतुमें हिता-

वह होतेहैं, [तरुणिविरचितं] के कहनेसे यह प्रयोजनहै कि, इसऋतुमें वृद्धास्त्रीके बनाए पदार्थ हितकारक नहीं होतेहैं ।

इति शिशिरऋतुचर्या समाप्ता ।

वसन्तऋतुवर्णनम् ।

यत्रबकुलतिलकनवमल्लिकाकुरबकमुचकुंदसमूहसमुत्थसद्राक्षामोदान्मत्तकोकिलकूजिताण्याकर्ण्यमकरकेतुशरनिकरपुञ्जजर्ज्जरीकृतविरहिणीसंघातोमुहुर्मुहुर्मोहमुपैति । अपिचमलयाचलवातचलितचूतमञ्जरीनिचयनिपतितरेणुरञ्जितशरीरषट्पदकुलकोलाहलाकुलितवनान्तोयः स वसन्त इतिविजानीयात् ॥

अर्थ–जिस ऋतुमें वकुल (मौलसरी) तिलक वृक्ष, चमेली, कुरुवक (लालपुष्पका कोरांटा), मुचकुंद, इनपुष्पोंसे प्रगट तथा दाखकी सुगंधी करके मतवारी कोयलोंका कूजना उसके सुननेसे प्रगट कामदेवके बाणसमूहसे जर्ज्जरीकृत विरहिणीयोंके समूह वारंवार मोहको प्राप्त होतेहैं, तथा मलयाचलकी शीतल मंद सुगंध पवन करके चलायमान आम्रमंजरीके समूहसे पतित रेणु उसकरके रंगेहुए शरीर जिन्होंके ऐसी भ्रमरावलीके कोलाहल तिसकरके आकुलित वनान्त जिसमें उसको वसंत ऋतु जाननी ।

दिशोवसन्तेविमलाः काननैरुपशोभिताः । किंशुकाम्भोजवकुलचूताशोकादिपुष्पितैः ॥ कोकिलाषट्पदगणैरुपगीता मनोहराः । दक्षिणानिलसंवीताः सुमुखाः पल्लवोज्ज्वलाः ॥

---

१ शीतार्त्ता इवसंकुचन्तिदिवसानैवाम्बरं शर्वरी नायंमुञ्चतिकिञ्चिदेव हुतभुक् कोणंगतो भास्करः । स्वश्चानङ्गहुताशभाजिहृदये सीमन्तिनीनांगतो नास्माकं वसनं न चाग्नियुवतीराजन् कयामोवयम् ॥ १ ॥ कस्यचित्कवेर्नरपतिसंमुखे इत्थमुक्तिः । प्रावरणैरङ्गारैर्गर्भगृहे स्तनतटैश्चदयितानाम् । संतर्जितमाढ्यानां निपततिशीतं दरिद्रस्य॥२॥ द्वारंगृहस्यपिहितंशयनस्य पार्श्वेवह्निर्ज्वलत्युपरि तूलपटोगरीयान् । अङ्गानुकूलमनुरागवशंकलत्रमित्थं करोति किमसौ स्वपतस्तुषारः ॥ ३ ॥ पीनोत्तुङ्गपयोधराः परिलसत्संपूर्णचन्द्राननाः कान्तानैवगृहे गृहेनचदृढं जात्यंनकाश्मीरजम् । ताम्बूलं न च तूलिका नचपटी तैलंनगन्धाविलंसद्योगोघृतपाचितानवटकाः शीतंकथं गम्यते ॥ ४ ॥ अद्यशीतं नरीवर्त्ति सरीसर्त्तिसमीरणः । अपत्नीकोमरीमर्त्ति तरीतर्त्तिकुचोष्मवान् ॥ ५ ॥

अर्थ--वसंतऋतुमें दिशा रमणीय और वनोंकरके शोभित होतीहैं, किंशुक (केसूवा-टेसू) कमल, वकुल (मौलसरी) आम, और अशोक आदिपुष्पोंसे पुष्पित होतीहै, कोकिल, और भौंराओंके झुंडोंसे शब्दायमान मनके हरण करनेवाली होतीहै, दक्षिणकी पवनकरके व्याप्त और सुंदर अवकाशवाली तथा नवीन लहलहाती पातियोंसे अर्थात् नए पत्तोंकरके शृंगारवाली ऐसी दिशा होतीहै ।

मल्लीवल्लीसमूहेसमुदितकुसुमामोदमत्तालिमालामूर्च्छाझंकारनादाकुलपथिकजनोव्याकुलप्रोषितास्त्री॥ माकन्दानन्दमाद्यन्मधुरापिककुलालापदर्पोमनोजः प्राप्तः कांतोवसन्तास्त्रिभुवनविजयी प्राणवन्धुः स्मरस्य ॥

अर्थ–मल्ली (चमेली) की वेलोंके समूहोंमें खिलेहुए फूलोंकी गंधसे मतवारी भौरोंकी पंक्ती उनके मूर्छित झंकार शब्दकरके आकुल पथिकजन तथा व्याकुलहैं प्रोषितास्त्री (जिनके पति परदेशमेंहो) और आम्रके फूलनेसे उत्पन्न आनन्द तिसकरके मतवाले और प्यारे ऐसे कोकिलोंके झुंड उनके बोलनेसे दर्पित कामदेव जिसमें और कामदेवका प्राणवन्धु ऐसा त्रिलोकीको जीतनेवाला यह वसंतऋतु प्राप्त हुआहै ।

आत्रेयः ।

मुदितकोकिलकूजितकाननं मदनशोचितकिंशुकशोभितम्॥ कुसुमसौरभराञ्जितभूधरंक्वणितमत्तमधुव्रतलालसम् ॥ मकरकेतनवाससमाकुलंमुदितमेवसमस्तमिदंजगत् ॥ मलयमारुततुर्यगुणान्वितं कफकरोहिवसन्तऋतुर्भवेत् ॥

अर्थ–मुदित कोकिलोंकरके कूजित और मदन शोचित ऐसे पलासके पुष्पोंकरके शोभित वन , पुष्पोंकी वाससे वासितहै पर्वत तथा गुंजार करनेवाले भौराओंसे व्याप्त तथा कामदेवके वासकरके समाकुल और यह संपूर्ण जगत् हर्षित, शीतल मंद, सुगंध और अनुकूल ऐसे चतुर्विध गुणयुक्त मलयाचलकी पवन जिसमें ऐसा कफकर्त्ता वसंतऋतु जानना ।

---

१ वारस्त्रीपवनस्थलीनवनवांशोभांबभारान्वहं पान्थान्पीडयतिस्मतस्करइवक्रूरैः शरैर्मन्मथः । शृङ्गारः सगुणक्षमापतिरिवप्राप्तः प्रतिष्ठांपरां रात्रिः स्वीकुरुतेस्ममुग्धललनालज्जेवकार्श्यंक्रमात् ॥ १ ॥ पान्थानां प्रमदाइव प्रतिदिनैर्दैन्यंहृदिन्योययुर्दृश्यन्तेस्मादिगम्बराइववनेपत्रोज्झिताः पादपाः । निःश्वासाइवदुःसहाविरहिणंवातावबुः सर्वतः पायंपायमिवप्रियाधररसंपाथः प पुः प्राणिनः ॥ २ ॥

कदलीदलनीलकोकिलाभिः कृतकोलाहलकाकलिप्रपंचः ।
मलयानिलमत्तवारणस्थोमदनश्चात्र चकार जैत्रयात्राम् ॥

अर्थ—कदलीदलसदृश नीलकोकिलाओंकरके करा कोलाहल काकलीप्रपंच, तथा मलयाचलकी पवनरूप मतवारे हाथीपर स्थित ऐसा कामदेव आज इस वसंतऋतुके आरंभमें दिग्विजय यात्राको पधारेहै । जैसे राजाकी चढाईमें सेना घोरशब्द करतीहै, ऐसे मदननरेशके पधारनेमें कोकिला शब्द कररहाहै और जैसे राजा मतवाले हाथीपर विराजमान होताहै, ऐसे कामदेव नरपति मलयाचल पवनरूप हस्तीपर बैठाहै । इस श्लोकमें रूपकालंकार दिखायाहै ।

वाग्भटः ।

कफश्चितोहिशिशिरेवसन्तेऽर्कांशुतापितः ।
हत्वाग्निंकुरुतेरोगानतस्तंत्वरयाजयेत् ॥ ११ ॥

अर्थ—शिशिरऋतुमें संचितहुवा कफ वसन्तऋतुमें सूर्यकी किरणोंसे तापित जलके समान पतला हो जठराग्निको नष्टकर अनेक रोगोंको प्रगट करताहै, अतएव इस दुष्ट-कफको शीघ्र जीते ।

कफनाशकयत्न ।

तीक्ष्णैर्वमननस्याद्यैर्लघुरूक्षैश्चभोजनैः । व्यायामोद्वर्त्तनाघातैर्जित्वाश्लेष्माणमुल्वणम् । स्नातोऽनुलिप्तःकर्पूरचन्दनागरुकुंकुमैः । पुराणयवगोधूमक्षौद्रजाङ्गलशूल्यभुक् । सहकाररसोन्मिश्रानास्वाद्यप्रिययार्पितान् । प्रियास्यसङ्गसुरभीन्प्रियानेत्रोत्पलाङ्कितान् । सौमनस्यकृतोहृद्यान्वयस्यैःसहितःपिबेत् । निर्गदानासवारिष्टसीधुमार्द्वीकमाधवान् ॥

अर्थ—प्रबल कफको तीक्ष्ण वमन, नस्य, विरेचनादि करके तथा लघु और रूक्ष भोजन करके एवं व्यायाम उद्वर्तन और कुश्ती लडने करके जीते ।

तदनंतर (कफजीतनेके पश्चात्) स्नानकर कपूर, केसर, अगर, मिले चंदनको लगावे, और पुराने जौ, गेहूं, शहत, जंगली जीवोंका भुना मांसको भक्षण करे तदनंतर जिनमें आमरस मिलाहो और अपनी प्राणप्यारीने कुछ पीकर दीनेहो तथा प्रियाके मुखलगनेसे सुगंधितहो , तथा प्रियाके नेत्रकमलोंकरके शोभित, चित्तको प्रसन्न करता

और हृदयको हितकारी ऐसे आसव अरिष्ट, सीधु, मार्द्वीक और माधवको बराबरके मित्रोंके साथ पीवे । आसव उसको कहतेहैं जो औषधोंके चुआनेसे बनताहै । सीधु ईखके रससे बनताहै, अरिष्ट उसे कहतेहैं कि, जो अधिक मादकद्रव्योंसे तथा मदिरासे बनताहै, मार्द्वीक उसे कहते हैं कि, जो दाख अंगूर आदिसे बनताहै, और माधव उसे कहतेहैं जो शहतके संस्कारसे बनती है ।

शृङ्गवेराम्बुसाराम्बुमध्वम्बुजलदाम्बुवा ।

अर्थ–तथा शुंठीका औंटायाहुआ जल तथा खैरसार चंदन आदि सारको मिलाकर औंटाया जल तथा सहत मिला जल वा नागरमोथा डालकर औंटाया जलको पीवे ।

दक्षिणानिलशीतेषु परितोजलवाहिषु । अदृष्टनष्टसूर्येषु मणिकुट्टिमकान्तिषु ॥ परपुष्टविघुष्टेषुकामकर्मान्तभूमिषु । विचित्रपुष्पवृक्षेषु काननेषुसुगन्धिषु । गोष्ठीकथाभिश्चित्राभिर्मध्याह्नंगमयेत्सुधीः ॥

अर्थ–दक्षिणकी पवन करके शीतल, जिनमें चारोंतरफ जलोंके धरोरा बहरहे, कहीं वृक्षोंकी छायासे सूर्यकी झांई मारे और कहीं अत्यंत वृक्ष संघट्ट होनेसे सर्वथा न दीखताहो तथा हीरा पन्ना आदिके जारी झरोखावाले महलोंकी पृथ्वीसे शोभित और कोयल कूक रहीहो तथा रमण करनेके निमित्त स्थान जिनमें हो और चित्रविचित्र पुष्प खिलरहे हों तथा झुकझुक झूमझूम भूमिको चूम रहे वृक्षोंकरके शोभित और क्रीडा कथा करके चित्रित ऐसे बागबगीचोंमें स्थित हो मध्यान्हको व्यतीतकरे।

तथा च वैद्यसारसंग्रहे ।

रूक्षं कषायंकटुकंचतिक्तंताम्बूलकर्पूरमनोज्ञवेषम् ।
क्षौद्रेणपथ्यासहसेवनीया स्नेहेनातिश्च्वनितासहायः ॥

अर्थ–रूखे, कषेले, तीखे और कडुए रस, एवं पान, कपूर, तथा सहत मिला हरडका चूर्ण सेवन करना चाहिये । उज्ज्वल वेष रखना, और प्रीतसहित स्त्रीके साथ रहना चाहिये ।

गीतान्तरेचाविधिवत्सुरतंनिषेव्यंदोलाविलासशयनेहरिणेक्षणाभिः । संवाहितोरणझणत्करहस्ततालैर्धन्यःस्वहर्म्यसमये विचिनोतिनिद्राम् ॥

अर्थ-प्रथम गान सुने पश्चात् गानके विधिपूर्वक स्त्रीसंग करे, तथा स्त्रीके साथ झूलना और शयनमें चलायमान और शब्दायमान हस्तताल जिसके ऐसी स्त्री करके इस वसंतऋतुमें धन्यपुरुष अपने महलोंमें निद्राको लेते हैं ।

स्निग्धश्चन्दनकुंकुमप्रभृतिभिः कर्पूरसंमिश्रितैः शय्यां
धूपितधौतवस्त्ररचितामास्थायरम्ये गृहे । गाढालिङ्ग-
नचुम्बनादिरचितैः संवर्द्धयन्मन्मथंसेवेत्तांप्रमदांवसन्त-
समयेश्लेष्मक्षयार्थंपुमान् ॥

अर्थ-कपूरमिश्रित चंदन और कुंकुम आदिसे स्निग्ध, अगरकी धूनीसे धूपित और उज्ज्वल दूधके झागसदृश सपेदवस्त्रोंसे रचित शय्या ऐसे रमणीक घरमें स्थित हो तथा गाढ आलिंगन चुम्बनादि व्यवहारोंसे कामोद्दीपन करताहुआ वसंतऋतुमें कफक्षयके अर्थ पुरुष स्त्रीका सेवन करे इस ऋतुमें स्त्रीके साथ जलविहारभी करना चाहिये क्योंकि लिखा है-"व्यायामःपयसः क्रीडा प्रियाभिः परिचेष्टतेति" ।

ग्रंथान्तरेपि।

उद्वर्त्तनं वान्तिविरेकनस्यान्ययेप्रियेचंक्रमणंव्यवायम् ।
व्यायाममेणाक्षिवसन्तकालेवालेहितान्याहुरमूनिवैद्याः ॥

अर्थ-हे बाले ! अंगमें उबटना करना, वमन करना, रेचन, नस्यकर्म । डोलना, फिरना, मैथुन कसरत करना, ये कर्म वसन्तऋतुमें हितकारक हैं।

काश्मीरकृष्णागरुचन्दनैश्चकृतोविलेपोविहितोहिताय ।
अग्र्यानिशावासकमातुलानीकटुत्रयं ग्रंथिकमश्वगंधा ॥
यवानिकाजीरकमार्द्रकञ्च पुनर्नवामूलकपोतिकापि।
कूष्मांडकंरामठमेथिकेच हितायतुम्बीत्रपुसंसुपक्कम् ॥

अर्थ-केशर, कृष्णागरु, और चंदन इनको एकत्र घिसके लेप करना; त्रिफला, हलदी, अडूसा, भांग, त्रिकुटा (सोंठ, मिरच, पीपल) पीपरामूल, असगंध, अजवायन, जीरा, अदरख, पुनर्नवा (सांठ) मूली, पोईका साग, पेठा, हींग, मेथी, तूंबा और पकाहुआ खीरा ये पदार्थ वसंतऋतुमें हितावह हैं ।

---

१ यत्रागस्त्यहारित्प्रवृत्तपवनव्याधूतचूतव्रजारानोद्दामपरागपुञ्जपिहितंव्योमानिशंराजते । छत्रंरेणुच-यैरिवस्मरविभोर्यात्रोद्धतैरिच्छतो जेतुंसर्वजगन्ति सस्मरसखोज्ञेयोवसन्तोदयः ॥ १ ॥

दुग्धिका वास्तुकः कांचनारोद्भवः कुड्मलःस्याद्धितायै-
व नृणां प्रिये । तंडुलीयःपटोलस्तथा सूरणो मारिषःकारवे-
ल्लं च कोशातकी ॥

अर्थ–उसीप्रकार बडी छोटी दुद्धी, वथुआ, कचनारकी कली, चौलाई, परवल, जमीकंद, मरसेका साग, करेले और घीया ये पदार्थ वसन्तऋतुमें हितकारी हैं ।

मागधीक्षौद्रयुक्तातथापूतनाजांगलानां पलंषष्टिकासर्षपाः ।
वाजिमन्थोमकुष्ठोयवोमुद्गकोवतुलश्चाढकीकोद्रवाःस्युर्हिताः ॥

अर्थ–सहतयुक्त पीपल तथा सहतयुक्त हरड, जंगली जीवोंका मांस, सांठीचावल, सरसो, चने, मटर, जौं, मूँग, केलांई, अरहर और कोदों येभी हितकारक हैं ।

तृणधान्यंवरारोहेमसूरिरक्तशालयः । राजिकाजुर्णलीचंचूशि-
ग्रुःपक्वंकालिङ्गकम् ॥ वृन्ताकंशिग्रुपुष्पाणिरसोनंरसिकप्रिये ।
लघुरूक्षंकटूष्णंयद्धितंतत्कुसुमागमे ॥

अर्थ–तृणधान्य कहिये सामखिया, पसाई इत्यादि,मसूर, लाल चावल, राई, ज्वार, चूकाका साग, सहजना, पका तरबूज, बैंगन, सहजनेके फूल, लहसन, और जो लघु रूक्षकटु, और उष्ण पदार्थ हैं वोभी सब हितकारीहैं ।

रसस्तीक्ष्णःकषायश्चक्षारश्चारुष्करंतथा । स्वेदनंधूमपानं
चगंडूषः प्रतिसारणम् ॥ प्रावरणंप्रधमनं हस्त्यश्वैर्गमनंभृ-
शम् । नियुद्धं माक्षिकंमद्यंजीर्णमुष्णंगवांपयः ॥ ताम्बू-
लमञ्जनंलाजाश्चिंताजागरणंश्रमः । वसंतेचगणोगुण्योवासं-
तीसुमकोमले ॥

अर्थ–तीक्ष्ण, कषेले, और क्षार ये रस, मिलाए, स्वेदन कहिये पसीने निकालना, धूम्रपान, (हुक्कापीना) गंडूषविधि (कुरले करना) प्रतिसारणकर्म, आवरण कहिये सोड, रिजाई पडदा आदि, प्रधमन (नस्यविशेष) हाथी, घोडा इनपर सवारी करना, कुश्ती लडना, सहत, पुराना मद, गरमागरम गौका दूध, तांबूल, नेत्रोंमें अंजन करना, खीलोंको खाना; चिंताकरना, रात्रिमें जागना, श्रम करना, ये वसंतऋतुमें हितकारी है ।

पानीयं नैर्झरं वाप्यं कौप्यं हंसोदकंवरम् । गोधूमाश्चेत्सम-श्नीयात्तदावर्षोषितानपि ॥ कफामयहरीख्यातातत्राप्यंगा-रककर्कटी । नटीवानन्ददानाटचेतालान्तेचलकुण्डला ॥

अर्थ-झरनेका वा बावडीका-व-कूएका पानी हंसोदक पुराने गेहूं गेहूंकी अंगाकर वेश्याका नृत्य देखना ये वसंतऋतुमें पथ्य हैं ।

व्योषक्षारयुतंतक्रंक्कथिताक्काथलीतथा । शशाजहरिणंमांसं तैत्तिरंवार्त्तिकंवरम् ॥ गृहचटकस्यचमांसंनीरदरावस्यचामि-षं मत्स्याः । नादेयास्ताडागाश्चौंड्याः श्रेष्ठाश्च मत्स्यकाः क्षुद्राः ॥

अर्थ-त्रिकुटा और जवाखारयुक्त छाछ, कढी, उसीप्रकार सागयुक्त कढी (कथ-लीतिप्रसिद्ध) ससा, हरिण, बकरा, तीतर, लवा, घरकाचिडा, मोर इनके मांस, और नदी, तालाव, इत्यादिकोंमें उत्पन्नहोनेवाले मत्स्य, और छोटी मछली ये वसंतकालमें हितकारकहैं ।

स्नातःकवोष्णनीरैराभूषितोनिजकान्तया ।
सार्द्धंगत्वोपवनेपश्येद्रमेच्चतत्रैवनिर्जनेदेशे ॥

अर्थ-मंदोष्णजलसे स्नानकरके वस्त्रालंकारसे भूषितहो अपनीप्रियाके साथ वगीचेमें जायकर क्रीडाकरे इति ।

वसन्तमें अपथ्य ।

नाडिकापोदिकाराजकोशातकीमाषदध्यालुकानीक्षुशृङ्गा-टकौ । राजमाषांश्चनीवारकुल्माषकान्होलकंमेषमांसंत्य-जेत्कौक्कुटम् ॥

अर्थ-अब वसंतऋतुमें जो अपथ्य वस्तु हैं उनको कहते हैं, जैसे नाडीका साग, पोईका साग, गलका तोरई, उडद, दही, अलू, ईख, सिंघाडे, वडेउरद, समापसाईके चावल, घूंगरा, होला, मेंढा और मुरगेका मांस ये वस्तु वसंतऋतुमें त्याज्य हैं ।

कृशरापृथुकेक्षुविकारमयेमहिषीभवदुग्धमुरोजवने ।
वटकानपिमाषकृतांश्चपलाण्डुमितीह वसन्तरुशंत्यहितम् ॥

अर्थ–कृशरा (तिल और चावलमिली अथवा दालचावलमिली खिचडी) चिरवा ईखके विकार (खांडमिश्री आदि) भैंसका दूध, उडदके बडा, प्याज, ये पदार्थ वसंतऋतुमें आहित हैं ।

अम्लंस्निग्धं दिवास्वापंदुर्जरंभोजनंप्रिये ।
त्याज्यमाहुरये वैद्यावसंततौ हितेप्सुभिः ॥

अर्थ–खट्टे पदार्थ, तथा स्निग्ध पदार्थ, दिनमें निद्रा, दुर्जर भोजन, ये वसंतऋतुमें सेवन न करे कोई शीतल, मीठे पदार्थकोभी त्यागना कहता है । इति ॥

इति वसन्तर्तुचर्या ॥

अथ ग्रीष्मर्तुचर्या ।

तीव्रतरदिनकरसंजातसन्तापसंतापितशरीरपान्थसार्थसंसेवितमार्गपादपच्छायोविपुलपिपासाविधुरमृगयूथमरुस्थलीस्थानपरुषतरविचलितमारुतानिकटतटिनीतटतरुपत्रानिकरकलुषितसलिलाशयोयः सनिदाघइतिविजानीयात् ।

अर्थ–तीव्रतर सूर्यसे प्रगट संतापसे संतापित शरीर ऐसे पथिकोंके समूहों करके संसेवित मार्गके वृक्षोंकी छाया तथा अत्यंतपिपासासे व्याकुल मृगोंके यूथ जिनमें ऐसे मरुस्थली स्थान (मारवाडके देश) अत्यंत कठोर विचलित पवन जिसकरके नदीतटके वृक्ष तिनके समूहकरके कलुषित (दूषित) सलिलाशय जिसमें उसको निदाघ अर्थात् ग्रीष्मऋतु कहते हैं ।

ग्रीष्मेतीक्ष्णांशुरादित्योमारुतोनैर्ऋतोऽसुखः । भूस्तप्तासरितस्तन्व्योदिशःप्रज्वलिताइवं ॥ भ्रान्तचक्राह्वयुगलाःपयःपानाकुलामृगाः ॥ ध्वस्तवीरुत्तृणलताविकीर्णाङ्कित [क्षिति] पादपाः ॥ वहवोमारुतावर्ताःपत्राम्बराविभूषिताः । वसंतस्य वियोगेन तापसाइव शोभिताः ॥

---

१ यत्र प्रचंडतरचंडकरप्रतापः संशोषितद्रुमलतातृणवारिपूरः । उज्जृम्भतेपवनवेगविकीर्णरेणुच्छन्नाभवंति च दिशः सनिदाघकालः ॥ १ ॥

अर्थ–ग्रीष्मऋतुमें सूर्य तीखीकिरणवाला होता है और दुःखदाई पवन नैर्ऋत्यकोणका चलता है, पृथ्वी तप्त और नदी सूखकर प्रवाहरहित होजातीहै। दिशा प्रज्वलितसी होजातीहैं। चकवा चकवी जलाशयके ढूँढनेको पृथक् पृथक् दिशामें विचरने लगते हैं, जल पीनेको व्याकुल मृगमंडली जिसमें तथा वीरुध (गुल्म) तृण और लता सूखकर गिरजाते हैं। और बडे बडे वृक्ष पत्ररहित होजाते हैं, अथवा मारे आँधीके पत्र टूटकर गिरनेसे पृथ्वी पत्रोंसे आच्छादित होजाती है, और बहुतसे वृक्ष आंधी भभूरेके पत्ररूप वस्त्रोंसे व्याप्त हो ऐसी शोभा देतेहैं मानो वसंतऋतुके वियोगसे तपस्वी बनबैठेहैं तथा मारे आँधीके बडेबडे वृक्ष उखडके पृथ्वीमें गिरपडते हैं, और आक तथा जवासे आदि वृक्ष यौवनअवस्थाको प्राप्त होते हैं]

वाग्भटः।

तीक्ष्णांशुरतितीक्ष्णांशुर्ग्रीष्मेसंक्षिपतीवयत्।
प्रत्यहं क्षीयते श्लेष्मा तेन वायुश्च वर्द्धते ॥

अर्थ–ग्रीष्मऋतुमें सूर्य तीक्ष्णकिरणवाला होकर जगत्‌की चिकनाईको दूर करता है, अतएव नित्यप्रति कफक्षीण होता है, और वातकी वृद्धि होती है।

अतोस्मिन्पटुकट्वम्लव्यायामार्ककरांस्त्यजेत्। भजेन्मधुरमेवान्नंलघुस्निग्धंहिमंद्रवम्। सुशीततोयैःसिक्ताङ्गोलिह्यात्सक्तून्सशर्करान्।

अर्थ–इसीसे इस ग्रीष्मऋतुमें नोनके, चरपरे, खट्टे रसोंको और दंडकसरत तथा सूर्यकी धूपका सेवन त्याज्य है, इसऋतुमें मधुर अन्न, लघु, चिकने, शीतल, और पतले पदार्थ सेवन करे, शीतल जलसे स्नान कर मिश्री मिले सत्तुओंको भोजन करे।

कुन्देन्दुधवलंशालिमश्नीयाज्जाङ्गलैःपलैः।
पिबेद्रसं नातिघनं रसालां रागखांडवौ[1] ॥
पानकंपंचसारं वा नवमृद्भाजनेस्थितम्।
मोचचोचदलैर्युक्तं साम्लंमृन्मयशुक्तिभिः ॥

---

१ सितामध्वादिमधुरारागास्तत्राच्छकान्तयः। तेसाम्लाःखांडवालेह्याःपेयाश्चांशुकगालिताः। स्वाद्वम्लपटुकट्वाद्याः प्रलेहास्तत्रखाण्डवाः। गुडदाडिममांसाद्यारागाश्चांशुकगालिताः। हृद्यावृष्यारुचिकराग्राहिणोरागखांडवा इति। तथा। द्राक्षामधुकखर्जूरकाश्मर्यैः सपरूषकाः। तुल्यांशैःकल्पितंपूतंशीतं कर्पूरवासितम्। पानकं पंचसाराख्यं दाहतृष्णानिवर्त्तकम्। अन्यत्रचोक्तम्। यथा। गुडदाडिमादियुक्ताविज्ञेयारागखांडवाः। त्रिजातमरिचाद्यैस्तु संस्कृताः पानकास्तथा ॥ इति ॥

अर्थ–कुन्दपुष्प और चंद्रके समान उज्ज्वल चावलोंका भात जंगली जीवोंके मांसके साथ भक्षण करे, और जो बहुत गाढे न हो ऐसे मांसरस पीवे, रसाला (सिखरन) और रागखांडव (मुरब्बा) पानक (पने) और पंचसारक (जो दाख खजूर आदिसे बनता है) इनको नवीन मट्टीके पात्रमें स्थितकर तथा केला और फनसके पत्रकरके युक्त और कुछ तिंतडीककी खटाईसे मिश्रितोंको मट्टीकी सराई सरावोंसे पीवे (अथवा चीनीके पात्रमें करके पीवे.)

पाटलावासितंचाम्भःसकर्पूरंसुशीतलम् ।
शशांककिरणान्भक्ष्यान्रजन्यांभक्षयन्पिबेत् ॥
ससितंमाहिषंक्षीरं चन्द्रनक्षत्रशीतलम् ।

अर्थ–चन्द्रमाकी चांदनीको सेवन करता हुआ कपूरसंयुक्त शीत गुलाबजलोंको अथवा पाढरपुष्पवासित जलोंको पीवे, तथा रात्रिमें कर्पूरमिश्रित तरावट करनेवाले पदार्थोंको भक्षणकर (व्यारूकरके) मिश्री मिला चंद्र और तारागणोंकरके शीतल अर्थात् रात्रिमें शीतल करनेको धराहुआ ऐसा भैंसका दूध पीवे ।

अभ्रंकषमहाशालतालरुद्धोष्णरश्मिषु । वनेषुमाधवीश्लिष्ट-द्राक्षास्तबकशालिषु ॥ सुगंधहिमपानीयसिच्यमानपटालिके । कायमानेचितेचूतप्रवालफललुम्बिभिः ॥ कदलीदलकह्लारमृणालकमलोत्पलैः । कल्पितेकोमलैस्तल्पेसहसत्कुसुमपल्लवे । मध्यंदिनेऽर्कतापार्त्तः स्वप्याद्धारागृहेऽथवा । पुत्तिस्त्रीस्तनहस्तस्यप्रवृत्तोशीरवारिणि ॥

अर्थ–आकाशको स्पर्श करनेवाले ऐसे बडे २ शाल और ताल वृक्षोंकरके रुकी सूर्यकी गरम किरण जिन्होंमें तथा द्राक्ष (अंगूर) के गुच्छोंमें लिपटरही माधवीकी लता तिनकरके श्लाघा करने योग्य वनोंमें और बांसकी लकडी आदिसे बना छपरखट अर्थात् बंगला जिसके चारोंतरफ सुगंधित और शीतल गुलाबजलसे छिडके हुए वस्त्रोंके पडदोंसे शोभित और आमके नवीन पत्ते और आमके गुच्छे जिसमें चा-

---

१ सुगंधितजलकरणाविधिः । परिपेलवयातुल्यागुग्गुलुर्मुस्तकाः खलु । चूर्णिताःशशिनोपेतानवभाजनधूपनम् । कुष्ठमुस्तकसंयुक्तैः पेलवोशीरवालकैः । मृदितामृत्सुपिष्टैस्तैः खदिराङ्गारपाचिताः । सहकाररसाभ्यक्ताश्चम्पकोत्पलवालकैः । पद्मकुञ्जककुंदैश्चयथालाभाधिवासिताः । श्रेष्ठःसलिलवासोयंस्मृतः सर्वर्तुकोबुधैः ॥ १ ॥

रोंतरफ लटक रहे तथा केलाके पत्ता (केलाका गाभा) कह्लार (सुगंधित कमल) मृणाल (कमलकंद) कमल और उत्पल (कमोदनी) इनके कोमल पत्तोंसे रची शय्या, तथा खिले हुये फूलोंके घमले जिनमें धरे हुए और पुत्तलियोंके स्तन, हाथ, और मुखसे खससुगंधित फुहारे छूट रहे ऐसे धाराघरमें सूर्य तापसे आर्त्त मनुष्यको मध्याह्नमें शयन करना चाहिये ।

निशाकरकराकीर्णे सौधपृष्ठे निशासुच । आसना स्वस्थचित्तस्यचन्दनार्द्रस्य मालिनः ॥ विवृत्तकामतंत्रस्यसुसूक्ष्मतनुवाससः । जलार्द्रास्तालवृन्तानिविस्तृताः पद्मिनीपुटाः ॥ उत्क्षेपाश्चमृदूत्क्षेपाजलवर्षिहिमानिलाः। कर्पूरमल्लिकामालाहाराःसहरिचन्दनाः । मनोहरकलालापाःशिशवःसारिकाः शुकाः । मृणालवलयाःकान्ताः प्रोत्फुल्लकमलोज्ज्वलाः । जंगमा इव पद्मिन्यो हरन्ति दयिताःक्लमम् ॥

अर्थ-चन्द्रमाकी किरणोंसे व्याप्त ऐसे महलोंकी छतपर रात्रिमें निवास करना चाहिये, तथा चंदनसे आर्द्र और माला धारण कर रक्खी, कामतंत्र अर्थात् क्रीडासे निवृत्त बहुत पतले और उज्ज्वल वस्त्र (मलमलआदि) को धारण करनेवाला जलसे आर्द्र ऐसे मोरपंखके बने तालवृंतके जिनका नम्र उत्क्षेप अर्थात् हिलातेही तुरत मुड-जावे जलकी फुहार जिनसे झरे और अतिशीतल पवन निकले ऐसे पंखोंसे पवन करी जावे, कपूरकी माला, चमेलीकी माला, हरिचंदन मिले मोतियोंके हीरा पन्ना आदिके हारोंको धारण करना, मनको चुरानेवाले मीठे शब्द और ध्वनि जिनकी ऐसे वालक, तोता, मैना आदिका बोलना, और कमलके अतिकोमल तंतुओंके भूषण जिनके ऐसी रमणीय और प्रफुल्लित कमलको उज्ज्वलताकरके तिरस्कार करनेवाली तथा जंगम अर्थात् विचरनेवाली मानो कमलिनीहै ऐसी स्त्री, ये सर्व पदार्थ स्वस्थचित्तपुरुषके क्लमको हरण करतेहैं । क्लमके लक्षण शारीरकी चतुर्थाध्यायमें लिख आयेहैं ।

तथा च वैद्यसारसंग्रहे ।

सरांसिवापीसरितोवनानिस्रक्चन्दनं शीतगृहं च सेव्यम् ।
गुडेनपथ्यासहसेवनीयामन्थः प्रयोज्यःकिलघर्मकाले ॥

अर्थ-सरोवर, वावडी, नदी, वन, फूल, माला, चंदन और शीतल घर, (तह-खाने आदि) और गुडकेसाथ हरडका चूर्ण, तथा मंथ ए सव वस्तु ग्रीष्मऋतुमें सेवन करनी चाहिये ।

मन्थ ।

सक्तवःसर्पिषाभ्यक्ताःशीतोदकपरिप्लुताः ।
नातिद्रवानातिसान्द्रामन्थइत्याभिधीयते ॥

अर्थ–घृतमिले और शीतल जलसे परिप्लुत न बहुत द्रव न अत्यंत गाढे सत्तुओंको मंथ ऐसा कहतेहैं ।

स्रोतोनिदाघसमये सितसूक्ष्मवासो हेमाह्वचम्पकनिपीडित-केशपाशः।श्रीखंडतोयमृगनाभिविकुंठिताङ्गोधन्यःक्षपांक्षप-यतिक्षणलब्धनिद्रः ॥ अतिशिशिरपयोभिःक्षालितेसौधपृष्ठे सुरभिकुसुमयुक्तांसम्यगास्थायशय्याम् । शशधरकिरणौ-घैर्मारुतैश्चप्रसक्तैः प्रशमितपरितापोऽग्लानियोग्यंशयीत ॥

अर्थ–देहके छिद्रोंमें जिससमय गरमी प्रवेश करतीहै उससमय सपेद और महीन वस्त्रको धारण करे, सौनजुही और चंपाके फूलसे गुँथा केशपाश जिसका तथा कस्तूरिका चंदनसे लिप्त अंग जिसका ऐसा पुरुष इस ग्रीष्म ऋतुमें क्षणमात्र लब्धनिद्र हो रात्रिको व्यतीत करताहै वह धन्यहै । अतिशीतल जलसे धुलेहुए महलोंकी छत जिनमें ऐसे सपेदीसे पुतेहुए महलोंके ऊपर सुगंधित फूलोंकी सय्या बिछी और चंद्रमाकी चांदनी जिसका स्पर्श करे और जहां किसीप्रकारकी ग्लानि आती न हो ऐसी शय्यापर दुरहुआहै ताप जिसका ऐसे पुरुषको शयन करना चाहिये ।

वर्जयेल्लवणाम्लोष्णं कटुव्यायाममैथुनम् । धारयेदुरसा हारंसूक्ष्मवस्त्रधरोभवेत् ॥ प्राप्तेमध्याह्नसमयेउशीरस्योपवीजनम् । शयीतभूगृहंगच्छेदथवारुचिरंवनम् ॥

अर्थ–इस ग्रीष्मऋतुमें नोनका, खट्टा, गरम और चरपरा पदार्थ भोजन नहीं करनाचाहिये हृदयपर फूलोंके और मोती आदिके हार धारणकरे । मलमलआदि बहुतपतले वस्त्रोंको पहने, मध्याह्न समयमें आर्द्र खसके पंखे ले तहखानोंमें अथवा वनमें जायकर शयन करे ।

मद्यं नपेयं पेयं वा स्वल्पं सुबहुवारि वा ।
अन्यथाशोफशैथिल्यदाहमोहान्करोतितत् ॥

अर्थ–इस ग्रीष्मऋतुमें मद्य नहीं पीना चाहिये यदि बातकफकी प्रकृतिवाला वातक्षयार्थ पिवेभी तो अल्प पीवे और कफपित्तकी प्रकृतिवाला कफनाशनार्थ बहुतसा

जलमिलाय कर पीवें इस विधिके विपरीत पीनेसे सूजन, शिथिलता, दाह, मोह आदिको करताहै ।

ग्रन्थान्तरेच ।

शालयः षष्टिकाग्रीष्मकालेयवाजुर्णलीमुद्गनीवारगोधूमकाः ।
वर्तुलश्चाढकीकोद्रवावल्लकाः खंडिकाःस्युर्हितावैमसूरीप्रिये ॥

अर्थ-शाली चावलोंका और साठीचावलोंका भात, जव, ज्वार, मूंग, नीवार, गोधूम, मटर, अरहर, कोदों, चौरा, मटरकी दाल, और मसूर ये पदार्थ ग्रीष्मकालमें हितकारकहैं ।

कालिङ्गं स्यादपक्वं त्रपुसमपितथाकर्कटीचाप्यपक्वाकूष्मांडंकारवेल्लंघनकुचरुचिरेवास्तुकोमेघनादः। चञ्चूतुम्बीपटोलंदधिमधुरमयेशर्करामिश्रितंवै तद्वत्तक्रंसिताढ्यंनवनलिनकेरग्रीष्मकालेहिताः स्युः ॥

अर्थ-कच्चा तरबूज, कच्ची ककडी, कच्चे खीरे, पेठा, करेले, बथुआ, चौलाई, चूका, घीया, परवल, शर्करा मिला गाढा और मलाईवाला मीठा दही, उसीप्रकार मिश्रीमिली छाछ, ये पदार्थ ग्रीष्मऋतुमें पथ्यहैं ।

प्रिये कोशातकीश्रेष्ठा मारिषश्चाप्युपोदिका ।
ग्रीष्मर्त्तौ सुहितौबाले शृङ्गाटककसेरुकौ ॥

अर्थ-गलका तोरई, मारिषका साग, पोईकासाक सिंघाडे, और कसेरू, ये पदार्थ ग्रीष्मऋतुमें हितकारी हैं ।

पानीयं नैर्झरंवाप्यं कौप्यंश्रेष्ठं निदाघके।
सिताचेक्षुगणोबालेपूजितस्तद्रसोऽपि च ॥

अर्थ-झरनेका, बावडीका, तथा कूएका, जल मिश्री, वा बारीक खांड, ईख, ईखका रस, ये ग्रीष्मऋतुमें हितकारकहैं ।

स्याद्रसालारसालेहिताग्रीष्मके पायसंपूपसंयावकौलप्सिका ।
मोदकाः फेनिकाछागकंहारिणं शाशकंवार्तिरंतैत्तिरंचामिषम् ॥

---

१ ग्रीष्मेगृहन्मयूखैरखिलजलमयं चण्डधामा निकामं नित्यं दाहोपशांत्यै प्रभवतिहिविधिश्रित्तजन्मातिजन्मा । दंपत्योश्चन्दनाद्यैरुपचितवपुषोः शीततुल्ये सुतल्पे कर्पूराम्भःसुसिक्तव्यजनपरिलसद्वायुरायुःस्वरूपः ॥ १ ॥

गृहचटकभवंमांसंमायूरंवैकपोतकस्यापि । घृतपूरोऽतिहितः स्यादयिविधुवदनेनिदाघकेनित्यम् ॥

अर्थ–सिखरन, खीर, मालपुआ, सेमई, लप्सी, लड्डू, फेनी, ये पदार्थ और बकरा, हरिण, ससा, लवा, तित्तिर, घरका चिडा, मोर, कबूतर इनके मांस; और घेवर, ये पदार्थ ग्रीष्मऋतुमें हितकारीहैं ।

क्षुद्रमत्स्यावराग्रीष्मे नादेयाश्चतडागजाः । हितोमांसरसः सक्तुर्मधुरश्चरसः प्रिये ॥ सेविकाः सितयासार्द्धंभक्षिताः सुहितामताः । शृतशीतंपयोनीरंशीतलंपानकंहितम् ॥

अर्थ–छोटी मछली, तथा, नदीकी और तालाबकी मछली, मांसरस, उसी प्रकार सत्तू, तथा मिष्टरस चीनीमिले सेव, औटा और शीतल दूध, तथा शीतल, जल और पने ये पदार्थ ग्रीष्मकालमें हितकारी होतेहैं ।

चन्द्रपादादिवास्वप्नंचन्दनंतरणंजले । लघुस्निग्धंद्रवंपथ्यंकायस्थासगुडाहिता ॥ उशीरैश्छादितंगेहंसिक्तैर्नीरैः सुगन्धिभिः । शीतलंचतरुच्छायाद्राक्षाचोशीरवीजनम् ॥ दुग्धांधश्चप्रसूनानिबालायाअधरामृतम् । हितान्याहुरयेबालेग्रीष्मे वेद्याइमानिहि ॥

अर्थ–चांदनी, दिनमें सोना, चंदन लगाना, जलमें तैरना, लघु स्निग्ध और पतले ऐसे पदार्थोंका सेवन, गुडयुक्त हरडका भक्षण, सुगंधित जलसे छिडके खसके पडदोंसे आच्छादित घरमें रहना, शीतल पदार्थ, वृक्षोंकी छाया, दाख, खसके पंखे, दूध, भात, फल और १६ वर्षकी अवस्थावाली स्त्रीका अधरामृत ये ग्रीष्मऋतुमें हितकारकहैं ।

ग्रीष्मऋतुमें अपथ्य ।

क्षाराम्लकटुघर्माणिमद्यंतीक्ष्णंपटुप्रिये । लघूष्णातिलतैलानित्याज्यान्याहुर्भिषग्वराः॥वृन्ताकंचकलिंगश्चपक्कंशिग्रुश्चगृजनंमाषाः । निष्पावकंगुकुशराभयशुक्तोधाइमेऽहिताग्रीष्मे ॥

अर्थ–क्षार, खट्टा, चरपरा,सूर्यकी धूप, मद्य, तीक्ष्णपदार्थ, नोन, लघु तथा गरम पदार्थ, और तिलोंका तेल, ये पदार्थ ग्रीष्मकालमें त्याज्यहैं बैंगन, पके तरबूज,

सहजना, लहसन, उरद, चौरा,कांगनी, खिचडी, ये पदार्थ और भय शोक तथा क्रोध ये ग्रीष्ममें अहितकारक हैं ।

सर्षपाराजिकामस्तुवटकामाषसंभवाः । क्वथितामेषमांसंच विदग्धान्नं च मैथुनम्॥उपवासोपगमनमायासोदधिपिण्याकमतसिकाकान्ते । कथितंवाइदमहितंबाले अयिगोधापिशितमपीत्थंस्यात् ॥

अर्थ-हे कान्ते!सरसों, राई, दहीका तोर, उडदके वडे, कढी, मेढेका मांस, जरा हुआ अन्न, मैथुन, उपवास, रस्ता चलना, परिश्रम, दही, तिल आदिकी खल, अलसी, और गोहका मांस, ये पदार्थ ग्रीष्मऋतुमें अहितकारक होतेहैं ।

उन्निद्रतामग्निसेवांत्यजेत्तीव्रंसमीरणम् ।
सूर्यतप्तजलस्नानंग्रीष्मकालेघटस्तनि ॥

अर्थ-रात्रिमें जागना, अग्निसे तापना, अत्यंत पवन और सूर्यकिरणसे तप्त जलसे स्नान ये सब वस्तु ग्रीष्मऋतुमें अहितकारक हैं ।

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे ग्रीष्मचर्य्यावर्णनम् ।

अथ वर्षाचर्य्यावर्णनम् ।

अभिनवतमालपल्लवनीलजलधरध्वानितमुदितमयूरसंघट्टविस्तारस्वमुखरितकाननगहनकेतकिकदम्बकुसुमनिचयातिशयसुगंधरमणीयमारुतसंदीपितमदनदावानलदाहवेदनाविधुरितविरहिजननिकरोगगनतलपतितविपुलसलिलपरिपूर्णवहलजलकल्लोलसंघट्टघटितसंवाहिनीसंघातोयः स वर्षाइतिविजानीयात् ॥

अर्थ-अभिनव श्यामतमालके पल्लव (पत्र) वत नीलजलधर (बद्दल) की ध्वनिसे मुदित मोर संघट्ट (समूह) विस्तार करके शब्दायमान कानन गहन तथा केतकी, कदंब, कुसुमों (फूल) के अतिशय समूह सुगंधसे रमणीय मारुत तिस करके संदीपित कामदावानलके दाह वेदनाविधुर विरही जनोंके पुंज तथा गगनतलसे पतित विपुल जलकरके परिपूर्ण अत्यंत जलकल्लोलसंघट्ट घटितसंवाहिनी (नदियोंके) समूह जिसमें उसको वर्षाऋतु जाननी ।

प्रावृष्यम्बरमानद्धं पश्चिमानलकर्षितैः । अम्बुदैर्विद्युदुद्योत-प्रस्तुतैस्तुमुलस्वनैः ॥ कोमलश्यामशष्पाढ्याशक्रगोपो-ज्ज्वलामही । कदम्बनीपकुटजसर्जकेतकिभूषिता ॥

अर्थ–सुश्रुतके मतसे प्रथम प्रावृट्ऋतुका वर्णन करते हैं, प्रावृट्ऋतुमें पश्चिमकी पवन करके कर्षित बिजली जिनमें चमक रही जलको त्यागकर रहे और अत्यंत तुमुल गर्जनाके करनेवाले ऐसे बादलोंकरके आकाश व्याप्त होताहै । तथा कोमल श्याम (हरी) घाससे व्याप्त, और इन्द्रधूटी (बीरबहूटी) करके उज्ज्वल पृथ्वी होती है कदंब नीप (धूलीकदंब) कुडा, रालके वृक्ष, और केतकी इनके पुष्पोंसे भूषित पृथ्वी होती है ।

कुर्वद्भिश्चातकान्हृष्टान्हंसान्मानसगामिनः ॥ भीमसंतमस-प्रायेपथिदुर्गमकर्दमे ॥ जघनोद्वहनक्लान्ताः प्रमृष्टासारमंडलाः । तडित्प्रभाहृतालोकानिमीलनयनोत्पलाः ॥ गर्जितध्वनिना-त्रस्तहृदयाश्चाभिसारिकाः । भेकाकपोतसंकाशैर्मेघैरुच्चाम्बु-भूषणैः ॥ जितहंसावलीकांतिबलाकापंक्तिसारितैः । केकागर्भ-गलोद्ग्रीवनृत्यबर्हिणवीक्षितैः ॥

अर्थ–चातकोंको प्रसन्नकरती और हंसोंको मानससरोवर जानेवाले करती घोर अंधकार प्रायः जगत् तथा मार्ग कीच पानी करके दुर्गम अर्थात् चलने योग्य नहीं और जघनके उद्वहनसे कथित तथा उज्ज्वल आसार (धाराओंका पडना) जिसम तथा बिजलीकी प्रभासे हरण करा देखना जिसमें अतएव निमीलित है नयनोत्पल जिसमें तथा गर्जनकी ध्वनिकरके त्रासित हृदय जिनके ऐसी अभिसारिका स्त्री और मंडूक; कबूतरोंके सदृश चित्रविचित्र रंगके मेघ उच्च और जलकरके भूषित जिसमें तथा बलाका (बगलाओंकी) पंक्तिके आकाशमें उडनेसे जीती है हंसपंक्ति जिसमें तथा मधुरध्वनि और उच्चग्रीव तथा नाचतेहुए मोरोंकरके वीक्षित ऐसी यह प्रावृट् ऋतु है ।

गर्जद्भीमाम्बुवाहः क्षणरुचिरुचिराचुम्बिचंचद्दिगन्तः
कामंकूजत्कलापीनिशितरुशिखरद्योतखद्योतपोतः ।
धारासम्पातजातश्रवणसुखलसद्भेकभेरीनिनादः
प्रावृट्कालागमोऽयंकुसुमशरसुहृद्भृंगसंगीतसंगी ॥

अर्थ—भयंकर बादलोंकी गर्जनक्षणरुचि करके सुंदर, तथा बिजलीकी चमक करके आचुम्बित है दिशाओंके प्रान्त जिसमें, यथेष्ट मोरोंका बोलना और रात्रिमें वृक्षोंके ऊपर प्रकाशित है खद्योत (पटबीजनाओंके) झुंड जिसमें, धाराओंके पडनेसे प्रगट श्रवणसुखवाले दादुर, भेरी शब्द जिसमें और भौंराओंका संगीतसंगी· हे मित्र ! यह कामदेवका परमसुहृद् प्रावृट्कालका आगम है ।

वर्षाऋतुवर्णन ।

तत्रवर्षासुनद्यम्भः पुरोभग्नतटद्रुमाः । वाप्यः प्रोत्फुल्लकुमुद-
नीलोत्पलविराजिताः ॥ भूरव्यक्तस्थलश्वभ्रा बहुसस्योप-
शोभिता । नातिगर्जत्स्रवन्मेघनिरुद्धार्कग्रहंनभः ॥

अर्थ—तहां वर्षाऋतुमें अत्यंत जलके प्रवाहसे उखाडे और बहाए तटके वृक्ष जिन्होंने ऐसी नदी होती है, प्रफुल्लित कमोदनी और नीलकमल जिन्होंमें ऐसी बावडी [तालाब तलैया आदि] होतीहै अदृश्यस्थलगर्भा पृथ्वी होजातीहै। अर्थात् बडे बडे कुवा गड्ढे जलसे गढे जातेहैं और बहुत हरित घाससे हतहो शोभित होतीहै अत्यंत गर्जनारहित ऐसे वर्षनेवाले मेघोंसे आच्छादित सूर्य और तारागणवाला आकाश होताहै ।

सघनवारिदवारिसमाकुलाविमलसत्प्रवरोदकपूजिताः ।
समदवातकराहिदिशोदशप्रमुदिताः कृमिकीटभृतामही ॥
नीलशस्यहरितोज्ज्वलामही स्वल्पका सलिलसंप्लुतामही ।
इन्द्रगोपकविराजराजिता पंचभूषणविभूषितावहु ॥

अर्थ—सघन बादलोंके जल करके समाकुल और विमल प्रवरोदक करके पूजित मदसहित वातकारी दशोंदिशा और कृमी कीटको धारण करनेवाली पृथ्वी होतीहै । तथा हरीदूबसे हरित और उज्ज्वल तथा कहीं कहीं विना जलके संप्लुत पृथ्वी होतीहै एवं इन्द्रगोप (वीरवहूटी) के शोभासे शोभित और पंचभूषणभूषित होती हैं ।

उन्मत्तभूतांकुरभूधरंस्याद्रेजेवनंवामधुरंविकूजत् ।
मृगामयूराजलदस्यघोषाः सर्वेपिजीवाजलमाप्नुवंति ॥

---

१ यत्रव्योमचितं चयैर्जलमुचांभूमिर्नवैः शाद्वलैः कापिकापितु नूतनाम्बुदजलच्छन्नोच्चनिम्नस्थली । भेकैः पक्वपलाण्डुखण्डरुचिभिस्तोयाशयाः सेविता नीपैः सर्वादिशश्च सोऽस्तुजगतो हर्षायवर्षागमः ॥ १ ॥

अर्थ—उन्मत्त भूत और अंकुर जिसमें ऐसा पर्वत तथा मृग, मोर बादलोंकी गर्जना सुनकर मधुर बोलरहे तिनसे वन शोभित होरहा इस वर्षाऋतुमें संपूर्ण जीव जलको प्राप्त होतेहैं ।

केकीकूजतिकानने च सरसीम्लानाम्बुपूर्णातथा
हंसामानसमाव्रजंतिकमलानिम्लानतांयान्ति च ।
गर्ज्जन्मेघमहीध्रकन्दरदरीशस्यावृताश्यामला
भात्येवंपवनस्यकोपनकरीवर्षाऋतुश्रेयसी ॥

अर्थ—वनमें मीठी ध्वनिसे मोर बोलरहाहै सरोवर गदले जलसे परिपूर्ण और हंस मानस सरोवरको गमन करतेहैं कमलकुम्हलाएसे होजातेहैं गर्जित मेघके ध्वनिसे पर्वतकी कंदरा और गुफाओंमें प्रतिध्वनि होरहीहै । पृथ्वी घाससे हरी इसप्रकार वातके कोप करनेवाली कल्याणकारी यह वर्षाऋतु शोभा देती है ।

किंचिद्गर्भोद्भवानिस्युः शस्यानिदृढतांशनैः । शिलीन्ध्रच्छत्रसंयुक्ताभूरव्यक्तजलस्थला ॥ कदंबनीपकुटजसर्जकेतकिभूषिता । एवंगुणसमायुक्ताभातिवर्षाऋतुः शुभा ॥

अर्थ—गर्भसे उद्भव मनुष्य और घास धीरे धीरे दृढताको प्राप्त होते हैं, शिलीन्ध्रछत्र (छतोना जो वर्षाऋतुमें काष्ठके फूलनेसे प्रगट होताहै) तिसकरके संयुक्त और अप्रकटजलस्थला पृथ्वी होती है । कदंब, नीप, (जलकदंब) कुटज, रालके वृक्ष और केतकी इनके पुष्पोंसे भूषित होतेहैं ऐसे गुणयुक्त वर्षाऋतु अतिशुभ नहीं है किंतु मध्यम है क्योंकि वर्षाऋतुमें सर्व कार्य रुकजाते हैं ।

प्रावृषि पथ्यम् ।

गोधूमाः षष्टिकामाषाः कुलित्था रक्तशालयः । राजिकाप्रावृषिश्रेष्ठाऽतसीसिद्धार्थ इत्यपि ॥ कूष्माण्डंत्रपुसंपक्वंतथापक्वं कलिंगकम् । कोशातकीचवृन्ताकंवास्तुकोमारिषोपि च ॥ चञ्चूपटोलौलशुनः पलांडुः ससैन्धवंतक्रमुपोदिकाच। मद्यांसिताशिग्रुरयेरसालाचौंडचंप्रियेसारसमम्बुपथ्यम् ॥

अर्थ—गेहूं, सांठी चावल, उरद, कुलथी, लालचावल, राई, अलसी, सरसों, पकापेठा, और खीरा, तथा पकातरबूज, गलकातोरई, बैंगन, बास्तुक, मारिषका

साग, चूका, परवल, लहसन, प्याज, सैंधानिमक मिली छाँछ, पोईका साग, मद्य, चीनी, सहिंजना, शिखरन, ये पदार्थ तथा चौंडच और सरोवरका जल पीना प्रावृट्ऋतुमें पथ्यहै।

सगुडंदधिचेक्षुगणंकृशराघृतपूरकपायसकंसघृतम्। क्वथिता हरिणाजकपोतपलंशशतित्तिरवार्त्तिरमांसमपि। लप्सिका-फेनिकेपूपसंयावकौमोदकंचामिषंकौक्कुटंकाच्छपम्। क्षुद्रम-त्स्यान्हितान्प्रावृषि प्रेयसिप्राहुरंभोजनेत्रेभिषक्सत्तमाः ॥

अर्थ—गुडमिला दही, ईख, खिचड़ी, घेवर, घृतपपडी, दूधकी खीर, और ह-रिण, बकरा, कबूतर, ससा, तीतर, बटेर, इनके मांस, लापसी, फेनी, माल-पूआ, सेमई, लड्डू, मुरगेका मांस, कछुएका मांस, छोटी मछली, ये प्रावृट् ऋतुमें हितकारी हैं।

अपथ्यानि।

आमांकर्कटिकांतुबीमामंचत्रपुसंयवान्। राजकोशातकींना-डींडिंडिशंकारवेल्लकम्॥ कर्कोटकंचपालक्याशृङ्गाटंचकसे-रुकम्। आलुकंमाहिषंक्षीरं प्रावृट्कालेविवर्जयेत्॥ निष्पावं वर्त्तुलंकंगुंराजमाषंमकुष्टकम्। त्रिपुटांश्चणकान्मुद्गान्मसू-रीमाढकींत्यजेत्॥

अर्थ—कच्चीकाकडी, सपेदघीया, कच्चाखीरा, जौ, घीयातोरई, नाडीका साग, ढडेंस, करेले, बनकरेले, पालक, सिंघाडे, कसेरू, आलू, भैंसका दूध, ये पदार्थ प्रावृट्कालमें त्याज्यहैं। तथा चौरा, वर्त्तुल, कांगनी, राजमाष, मोठ, त्रिपुट (मटर) चना, मूंग, मसूर, और अरहरकीदाल, ये पदार्थ प्रावृट्कालमें सेवन न करे।

वल्लूरंकोद्रवाञ्श्यामेश्यामाकंजुर्णलीमपि। नीवारंलंघनंचैव कुल्माषानपिवर्जयेत्॥ अतिव्यवायमेणाक्षिबलवद्विग्रहंत-था॥ अतिव्यायामकंचैवाध्यशनंपरिवर्जयेत्॥

अर्थ—सूखा मांस, कोदों, सामखिया, ज्वार, पसाई, अर्ध पक्क यव, लंघन, कु-ल्माष, ये पदार्थ और अत्यंत मैथुन, बली पुरुषसे विरोध, अत्यंत व्यायाम और अ-ध्यशन ये प्रावृट्ऋतुमें वर्जितहैं।

प्रधावनंप्रतपनमभिघातंप्रपीडनम् । प्लवनं तरणंरात्रिजागरं विषमाशनम् ॥ भारप्रहरणं वातमूत्रवर्चोनिरोधनम् । क्षवथूद्गारबाष्पाणां निरोधंछर्दिशुक्रयोः ॥ शीतवीर्यकषायं च कटुतिक्तलघूनिच । रूक्षं च शुष्कशाकंच वर्जयेत्प्रावृषिप्रिये ॥ मायूरमामिषंचर्यांगजाश्वरथपत्रकैः । एतानिवर्जयेन्नित्यं प्रावृट्कालेशुभानने ॥

अर्थ—वेगसे दौडना, तापना, ऊँचेसे कुलाँच मारना, जिस कार्यसे धक्कालगे ऐसा करना, देहको पीडाहो ऐसा कार्य करना, जलमें तैरना, उझलना, कूदना, रात्रिमें जागना, अनियमित भोजन करना, बोझालेकर चलना, अधोवायु और मलमूत्र, छींक, डकार, आंसू, वमन और शुक्र, इनके वेगको रोकना, शीतल, कषेले, चरपरा, कडुए हलके, और रूक्ष, तथा सूखे साग इनको तथा मोरका मांस भक्षण, और हाथी, घोडा, और रथ, इनमें सवारी करना ये सर्व वस्तु प्रावृट् ऋतुमें वर्जित कहीहैं ।

वर्षासुगेहं निचितंसुयुक्तंपानेजलं सारसमावृतं वा ।
स्यात्पञ्चकोलंसततं च सेव्यं तैलंतिलानामपियोजनीयम् ॥
स्निग्धंतथाम्लंपिशितं च सेव्यंपथ्याचसेव्यासहसैंधवेन ।
धूपप्रयुक्तंशयनं च कुर्यादुद्वर्तनं कौंकुमकंरजन्या ॥

अर्थ—वर्षाऋतुमें अनेकप्रकारके पदार्थोंसे चित्रविचित्र उत्तम भवनमें रहना चाहिये। और पीनेको जल ढके हुए सरोवर या बावडीका पीना चाहिये । पंचकोल और तिलका तेल सेवन तथा चिकना, खट्टा पदार्थ, मांस, और सैंधानिमकामिला हरडका चूर्ण सेवन करना चाहिये । तथा अगर मृगमदआदिकी धूनी रक्खीहो ऐसे स्थानमें शयनकरना तथा हलदी और केशरकी देहमें मालिस करना उचितहै ।

मानंविधायपरिहृत्यपराङ्मुखीभिः कादम्बिनीसमयगर्जितकातराभिः । आलिङ्गितोऽतिरभसातुरकामिनीभिर्धन्यः स्वहर्म्यसमयेविचिनोतिनिद्राम् ॥

अर्थ—मानकरके विमुख मानिनी अपने प्यारेको परित्यागकरके बैठी फिर मेघमालके उमडघुमड कर गर्जनसे कातर (कायर) ऐसी कामिनियोंने आतुर होकर शीघ्र आलिंगन करा इसप्रकार अपनी प्यारीनको छातीसे छातीको लगाय इस वर्षाऋतुमें अपने महलोंमें निद्रा लेतेहैं वो धन्यहैं ।

जलधरजलधारासीकराणामगम्यं
शिशिरपवनपृथ्वीबाष्पसंसर्गयुक्तम् ॥
धवलनिलयपृष्ठंनित्यमारुह्यतिष्ठे-
दगरुसुरभिवस्त्रप्रावृताङ्गोमनुष्यः ॥

अर्थ-जलधर जलधाराके बोछार (जो कणकासे उडतेहैं) जहां जाने न पावे एवं शीतलपवन, और बाफके संसर्गयुक्त पृथ्वी होतीहै, अतएव उज्ज्वल महलोंके ऊपर रहना चाहिये। तथा मनुष्यको अगरकरके सुगंधित वस्त्रोंसे अंगोंको ढक रखना चाहिये।

आदानग्लानवपुषामग्निःसन्नोपिसीदति । वर्षासुदोषैर्दुष्य-न्तितेम्बुलम्बाम्बुदेऽम्बरे ॥ सतुषारेणमरुतासहसाशीतलेन च। भूबाष्पेणाम्लपाकेनमलिनेनचवारिणा ॥ वह्निनैवचम-न्देनतेष्वित्यन्योऽन्यदूषिषु। भजेत्साधारणं सर्वमूष्मणस्तेज-नंचयत् ॥

अर्थ-आदान कालके परिवर्त्तनसे ग्लानियुक्त देह जिन्होंके ऐसे पुरुषोंका अग्नि मंद होकर शांत होताहै, वर्षाऋतुमें जब मेघ जलके भारसे लंबायमान होतेहैं उस समय दोषदूषित होतेहैं, अतएव अग्नि शांत होतीहै तथा सतुषार पवनका एकसाथही शीतल होनेसे अभ्यंतरबायु दूषित होताहै, तथा पृथ्वीकी गरमीके निकलनेसे और जलोंके अम्लपाक होनेसे पित्त दूषित होताहै, तथा जलोंके गदले होनेसे (अर्थात् लूतादि तंतु मलमूत्रादिके मिलापसे वर्षाका जल दूषित होताहै, और कालके स्वभावसे) मंदाग्नि करके कफ दूषित होता है, इसप्रकार इस वर्षाऋतुमें वातपित्त कफ एकही कालमें पर-स्पर दूषित होतेहैं। इसीसे अन्योन्य दूषितहोनेवाले दोषोंके एकही साथ प्रशमनकर्त्ता सब साधारण वस्तु और जो जठराग्निको प्रबल कर्त्ता पदार्थहैं उनका सेवन करे, इसमेंभी अग्निदीपन करना मुख्यहै।

आस्थापनंशुद्धतनुर्जीर्णधान्यंरसान्कृतान्। जाङ्गलंपिशि-तंयूषान्मध्वरिष्टंचिरंतनम्॥ मस्तुसौवर्चलाढ्यं वा पंचको-लावचूर्णितम् ॥ दिव्यंकौपंशृतंचाम्भोभोजनंत्वातदुर्दिने ॥ व्यक्ताम्ललवणस्नेहं संशुष्कंक्षौद्रवल्लघु ॥

---

१ शान्तेऽग्नौम्रियतेयुक्तेचिरंजीवत्यनामयः। रोगिस्याद्विकृतेमूलमग्निस्तस्मान्निरुच्यते॥इति।

अर्थ–वमन विरेचनादिसे शुद्धदेह जिसका ऐसा पुरुष आस्थापन (निरूहण बस्तीका) सेवन करे तथा पुराने यव गेहूं आदि धान्य, स्नेह शुंठ्यादि युत मांसरसोंका तथा जंगली हरिण ससे आदिके मांसका, यूषोंका, तथा पुराने मधु और अरिष्ट (मद्यके भेद) कालानिमक और पंचकोल (पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, और सोंठका चूर्ण) मिली छाँछ, आकाशसे वर्षा और कूआका ओटाहुआ जल, इतनी वस्तुओंका सेवन वर्षाऋतुमें करे तथा जिसदिन बादलोंसे आकाश घिराहो उसदिन खट्टेनोनके और चिकने ऐसे भोजन प्रधान जिसमें तथा शुष्क और सहतमिले तथा हलके ऐसे पदार्थ सेवन करने चाहिये ।

अपादचारीसुरभिः सततंधूपिताम्बरः ।
हर्म्यपृष्ठेवसेद्बाष्पशीतशीकरवर्जिते ॥

अर्थ–इस वर्षाऋतुमें मनुष्य पैरोंसे न विचरे किंतु सवारीमें बैठकर आवैजाय, सुंदर गंधयुक्त जलसे स्नानशीतलहो, सुगंधित वस्त्रोंको धारण कर्ता, तथा भाप, शीत और शीकर (बोछार) रहित ऐसे महलोंके ऊपरले भागमें रहना चाहिये ।

नदीजलोदमन्थाहःस्वप्नायासातपांस्त्यजेत् ।

अर्थ–नदियोंका जल, जलमें भीगे और घृतमिले सत्तू (किंतु तक्रादिसंयोगसे सत्तूखाने चाहिये) निद्रा परिश्रम और धूपमें डोलना त्यागदे ।

ग्रंथान्तरेतु ।

अयेबालेभजेन्नारींप्रौढांमेघेसुगर्जति । कायस्थांद्राविडींगौरीं रसालांनवयौवने ॥ शिवमुष्णोदकंस्नानंघृतपानंपरूषकम् । चारमज्जादनंद्राक्षांप्रशंसंतिविचक्षणाः ॥

अर्थ–वर्षाऋतुमें जिससमय मेघ गर्जनाकरे उसी समय प्रौढास्त्रीसे रमण करना, हरड, इलायची, हलदी, और शिखरनका सेवन करना, तथा आमला गरमजलसे स्नान, घृतपीना, फालसे चिरोंजी और दाख इनका सेवन हितहै ।

भजेच्छिवांगुडेनसैंधवंवंयथेष्टभोजनम् । पटोलमौद्भिदंजलं कपित्थदाडिमीफले ॥ उपोदिकापलांडुनारिकेलतैलसट्ट-कान् । सितोपलामयेशरत्सरोजलोचनाप्रिये ॥

अर्थ-हे प्रिये! वर्षाऋतुमें गुडयुक्त हरडका सेवन, सैंधा नोन, श्रेष्ठ भोजन परवल, औद्भिद जल, कैथ, अनार, पोईकासाग, काँदे, सट्टक, गिरीका तेल, मिश्री, ये पदार्थ सेवन करने चाहिये ।

शृतंदुग्धंचधान्याकमग्निसेवाचवास्तुकः । पद्मबीजंचखजूरं वीजपूरश्चमारिषः ॥ महाकोशातकीचञ्चूसुपक्वंकरमर्दकम् । तूतमञ्जीरकंपक्वंसुपक्वंबदरीफलम्॥आम्रमामंतथापक्वंनारिके लंगवांपयः । दुग्धमाज्यंजलंदिव्यंपनसः कदलीफलम् ॥ दधिकोशातकीखंडंतक्रगोधूममुद्गकाः । पायसंलप्सिकापूपः षष्टिकारक्तशालयः । कुंडिलीपोलिकाफेनीमोदकास्तैत्ति-रंपलम् । वार्त्तिकंहारिणंशाशंछागंचैवामिषंवरम् ॥ क्षुद्रम-त्स्यास्तथाहर्म्येशयनंललनोत्तमे । मनुष्याणांहितायैतेवर्ष-र्तौस्युरहर्निशम् ॥

अर्थ-गरमकरा दूध, धानियां, अग्निके पास देह सेकना, बथुएका साग, कमल-गट्टा, खजूर, बिजोरा, मारिष साग, गलकातोरई, चूकाका साग, पकेहुए करौंदा, सहतूत, अंजीर, पके बेर, कच्चा आम, वा पकाआम, नारियल, गौका दूध, बकरीका दूध, वर्षाका जल, पनस, गहर, दही, तोरई, खांड, छाँछ, गेहूं, मूँग, दूधकी खीर, लप्सी, पूआ, सांठीचावल, लाल चावल, जलेबी, पूरी, फेनी, लड्डू, तीतरका, बटेरका, हरिण, शशा, बकरी इनका मांस, छोटीमछली, और घरमें शयन करना, ये वर्षाऋतुमें हितकारक जानने ।

वषाऋतुमें अपथ्य ।

गोजिह्वांडिंडिसंचामंमनसांचिर्भटंगुडम् । मकुष्टंकर्कटीं पक्वां भंगांचित्रफलंतथा ॥ वृन्ताकंत्रपुसंपक्वंपक्वंचापिकालिंगकम् । तौषारंपाल्वलंनीरंकैदारंतटिनीभवम् ॥ दिवानिद्रांचमायूरं मांसंपौर्वसमीरणम् । वृष्टिघर्मश्रमान्रूक्षंशीतंचैवाशनंप्रिये । वर्जयेदरविन्दाक्षिवर्षर्तौमनुजोऽनिशम् ॥

अर्थ-गोभी, ढेंढस, कच्चा पनस, चिर्भट (चिरवा) गुड, मोठ, पकी काकडी (फूट) भांग,चित्रफल, (सैंध) बैंगन, पके आयाकी फूट, पका तरबूज, तुषारका

किंवा छोटी तलैयाका पानी, खेतका पानी, नदीका पानी, दिनमें सोना, मोरका मांस, पूर्वकी पवन, वर्षामें खडा रहना, धूपमें खडा रहना, परिश्रम करना, रूखा और शीतल पदार्थका भोजन ये वर्षाऋतुमें वर्जितहैं।

इति श्रीबृहन्निघंटुरत्नाकरे वर्षर्तुवर्णनं समाप्तम्।

अथ शरदृतुवर्णनम्।

उद्यच्चण्डचण्डतरकिरणनिकरपरिशुष्ककर्दमनिचयविगत-धाराधरसंरोधशशधरधामधवलितसकलभुवनतलविरलज-लकल्लोलकंपितकमलकुमुदकह्लारमनोरमतडागभूषिततलो यः स शरदिति विजानीयात्।

अर्थ—उदित चंड सूर्यकी चंडतर किरणसमूहोंकरके शुष्ककर्दम (कीचके) स्थल और दूरहुआहै धाराधर (बादलोंका) संरोध अतएव चंद्रमाकी चांदनीसे धवलित सकल भुवनतल कहीं कहीं जलकल्लोलसे कंपित कमल, कुमुद, कह्लार करके मनोहर तालाव तिनकरके भूषित पृथ्वी जिसमें उसको शरदृऋतु[१] जानना।

बभ्रुरुष्णः शरद्यर्कः श्वेताभ्रविमलंनभः। तथासरांस्यम्बुरुहैर्भान्ति हंसांसघाट्टितैः॥ पङ्कशुष्कद्रुमाकीर्णा निम्नोन्नतसमेषुभूः। बालसप्ताह्वबन्धूककाशासनविराजिताः॥

अर्थ—शरदृऋतुमें सूर्य पीला और उष्ण होताहै, आकाश सपेद, बादलयुक्त और स्वच्छ होताहै, तथा सरोवर हंसोंके स्कंधोंसे चालित कमलोंकरके शोभित होतीहै, निम्नोन्नत अर्थात् उँची नीची पृथ्वी क्रमसे कीच और वृक्षोंसे व्याप्त होतीहै, तथा वृक्षोंमें वमईके करनेवाली छोटी चैंटी (कीडी) है, पीयावासा सतवन, बंधूक (बादली वा मजनिया) कांस और असन (साल) इन वृक्षोंकरके शोभित होता है, अर्थात् इतने वृक्ष शरदृऋतुमें प्रफुल्लित होते हैं।

मेघाः सूर्यशिलासमानरुचयोह्यल्पस्वनाः सारसाहंसालीजलजालिमण्डितजलंपद्माकरंशोभनम्। तीव्रास्तिग्ममयूखइन्दुविमलासानन्दनीकौमुदीचित्राघर्मविपक्वतोयसरसीस्यान्निर्मलं पुष्करम्॥

---

१ यत्रोज्ज्वलानलमुचोलसदिन्दुबिंबतारनभोविकचनीरजकैरवाणि। नीराणिमानससमानिसतांविभांति स्वच्छानिकाशकुसुमानि च सा शरत्स्यात्॥

अर्थ-शरदृऋतुमें मेघ सूर्यमणिके समान उज्ज्वल कांतिवाले होते हैं और अल्पशब्द करनेवाले सारस होते हैं । तथा हंसोंकी पंक्ती और कमलोंकरके सरोवर शोभित होता है, तथा सूर्य तीव्रकिरणवाला होताहै तथा चंद्रमाकी आनंददायक चांदनी होती है, और चित्रा नक्षत्रगत सूर्यकी गरमीकरके पक्व जलवाले सरोवर तथा निर्मल आकाश होताहै ।

दर्शयन्तिशरन्नद्यःपुलिनानिशनैःशनैः ।
नवसङ्गमसव्रीडाजघनानीवयोषितः ॥

अर्थ-शरदृऋतु नदियोंके पुलिनोंको धीरे धीरे दिखातीहै, उसकी उपमा श्रीवाल्मीक महर्षि देतेहैं कि, जैसे नवीन संगममें लज्जायुता स्त्री अपने प्राणप्यारेको धीरे धीरे जंघा दिखलातीहैं ।

संशुष्यत्पङ्कशङ्काखरकिरणरुचाफुल्लराजीवराजीराजत्कह्लारवल्लीकुसुमचयमिलद्वासनावासिताशा। दुग्धांभोधेस्तरङ्गद्युतिरिवविकसत्काशपुष्पप्रकाशा चञ्चच्चन्द्रांशुशोभासकलजनमुदेशारदीरात्रिरेषा ॥

अर्थ-तीव्र किरणोंकरके दूर हुई है कीचकी शंका तथा प्रफुल्लित कमलोंकी पंक्ति तथा कह्लार (सुगंधवान् कमल) और चमेलीके पुष्पसमूहकी सुगंधसे सुगंधित दिशा विदिशा जिसमें तथा क्षीरसमुद्रकी तरंगके सदृश फूलेहुए काशपुष्पोंका प्रकाश जिसमें और चंचल चंद्रमाकी चांदनीकी शोभा जिसमें ऐसी संपूर्ण मनुष्योंको हर्षके देनेवाली यह शरदसंबंधी रात्रि है ।

पित्तेनसान्द्रंरुधिरंशरत्सुवृद्धिंसमागच्छतिसूर्यरश्मिभिः ।
तदाशुरक्तंपरिमोक्षणीयंपानेजलंसारसमुदिशान्ति ॥ १ ॥
भोज्याःसदालोहितशालिमुद्गागव्यंघृतंचंद्रकराश्चसेव्याः ।
इक्षोर्विकारामरिचैश्चभक्ष्याःपथ्यासिताढ्याकिलसेवनीया ॥२॥
स्थितिःप्रवर्तैरजनीषुकार्याघर्मश्च नित्यंपरिवर्जनीयः । छाया च सेव्याहरितद्रुमाणां श्रमं नकुर्यात्प्रयतोमनुष्यः ॥ ३ ॥

अर्थ-पित्तकरके गाढा रुधिर शरदृऋतुमें सूर्यकी किरणोंकरके वृद्धिको प्राप्त होता है, अतएव शीघ्र रुधिरमोक्षण अर्थात् फस्तखोलनी चाहिये, और इसऋतुमें सरोवरका

जल पीना चाहिये । लाल चावल, मूंग, गौका घी, ईखके विकार (गुड मिश्री बूरा बतासे आदि) और मिरचमिले पदार्थ भोजन करना चाहिये । तथा मिश्रीमिला हरडका चूर्ण सेवन करना और चंद्रमाकी चांदनी सेवन करनी चाहिये । मेरी समझमें आता है कि, यही कारण शरद् रात्रिको ठाकुर शरद्में बैठारनेका है । रात्रिमें छएहुए मकानमें स्थिति करना और धूप न खानी चाहिये, तथा हरित वृक्षोंकी छाया सेवन करनी तथा इसऋतुमें परिश्रम करना चाहिये ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

भूयान्नरःशरदिचन्दनलिप्तगात्रः स्त्री शर्कराक्वथितदुग्धयुताचसेव्या । कर्पूरपूगपरिपूर्णमुखींचकान्तामाचुम्ब्यशीतलकुचांपरिरभ्यशेते ॥

अर्थ-शरदृऋतुमें मनुष्यको चंदन लगाय मिश्री मिला औटाया दूध पीकर स्त्री सेवन करना तथा कपूर सुपारीयुक्त बिडा जिसने चबाय रक्खा ऐसा प्यारीके मुखका चुंबन कर और शीतल कुचोंका आलिंगन कर शयन करना चाहिये ।

चन्दनोशीरकर्पूरमुक्तास्रग्वसनोज्ज्वलः ।
सौधेषुसौधधवलांचान्द्रिकांरजनीमुखे ॥
श्यामारामारतंशस्तंसेव्याक्षौद्रहरीतकी ।
स्नानमानावगाहेषुहितंहंसोदकंहितत् ॥

अर्थ-चंदन, खस, कपूर, मोती, फूलोंकी माल और वस्त्र इनकरके उज्ज्वल हो, ऐसे उज्ज्वल घरकी छत्तपर प्रदोषमें चांदनीका सेवन करे (अन्य समय न करे) तथा १६ वर्षकी स्त्रीसे रमण करना तथा सहत और हरडका सेवन करना तथा स्नान और पानमें हंसोदकका सेवन करना हित है ।

हंसोदकके लक्षणगुण ।

तप्तंतप्तांशुकिरणैःशीतंशीतांशुरश्मिभिः । समंतादप्यहोरात्रमगस्त्योदयानिर्विषम् ॥ शुचिहंसोदकंनामनिर्मलंमलजिज्जलम् । नाभिष्यंदिनवारूक्षंपानादिष्वमृतोपमम् ॥

अर्थ-सूर्यकी किरणोंसे सर्वदिन तप्त हुआ हो और चंद्रमाकी किरणोंसे सर्व रात्रि शीतल हुआ हो तथा अगस्त्योदयसे निर्विष हुआ हो और जो पवित्र हो उस निर्मल और मल (वातकफ) को जीतनेवाले जलको हंसोदक कहते हैं, यह अभिष्यन्दि और रूक्ष नहीं है । पीनेमें आदिशब्दसे स्नानादिकमें अमृतके तुल्य है यह विधि वर्षाके जलमें है कुआ बावडी आदिके जलमें नहीं है ।

सितायुक्ताशिवाबाले सितायुक्तःशिवोऽपि च । गुडयुक्ताच कायस्थाधान्याकंसैन्धवंशिवः ॥ गोजिह्वापद्मबीजानिमृणालंगोस्तनीघृतम् ।नालिकेरंहितायस्युःशरत्कालेदिवानिशम् ॥

अर्थ—खांडके साथ हरडका चूर्ण अथवा खांडके साथ आमलोंका चूर्ण, गुडयुक्त हरड, धानिया, सैंधानिमक, आमले, गोभी, कमलगट्टे, भसेंडे, मनुका, घृत, नारियल ये पदार्थ शरदृतुमें हितकारी हैं ।

रसालंतथामंरसालंकपित्थं कलिंगंतथैवामकंतण्डुलीयम् । पटोलंपलाण्डुंसितामाजदुग्धंशरद्याहुरेतानिवैद्या हिताय ॥ वास्तुकोपोदिकानाडिकामारिषाः पायसं पानकं शालयः षष्टिकाः । कुण्डलीफेनिकाजम्बुरम्भाफलं स्युः शरद्यङ्गने-मानवानांमुदे ॥

अर्थ—सिखरन, हरेआम, कैथ, हरातरबूज, चौलाई, परवल, कांदे, खांड, बकरीका दूध, बथुआ, पोईका साग, नाडीका साग, मारिष, दूधकी खीर, पने, शाली और सांठीचावल, जलेबी, फेनी, जामून, केलाकी गहर ये पदार्थ शरदृतुमें हितावहहैं ।

चञ्चुकोशातकीबालेशृङ्गाटंदाडिमीफलम् ।मातुलुंगोप्ययेकान्तेशरद्येतेहितावहाः ॥ कसेरुकंजलंदिव्यंतौषारंसारसंप्रिये । हंसोदकंचगोधूमाःसोमालीहारिणंपलम् ॥ वार्तिरंतैत्तिरंमांसंशाशमाजंचरेचनम् । क्षुद्रमत्स्याःशरत्कालेहितायस्युरहर्निशम् ॥

अर्थ—चूकेका साग, तोरई, सिंघाडे, अनार, विजोरा, कसेरू, वर्षाका जल, बर्फका पानी, सरोवरका पानी, और हंसोदक, गेहूं, सुहारीनामक पक्वान्न, तथा हरिण, लवा, तीतर, ससा, और बकरा इन्होंका मास तथा छोटी मछली ये पदार्थ और जुलाब लेना, शरदृतुमें हितकारी है ।

कषायकंस्वादुरसंचशीतलंपटुप्रिये साब्जसरोऽवगाहनम् । लघुप्रियंभोजनमम्बुजाक्षिकेशरद्ययेजाङ्गलमामिषंहितम् ॥

अर्थ–कसेला, स्वादु, शीतल, नमकीन, ऐसे रस, कमलयुक्त सरोवरमें स्नान, और लघु प्रियकर्ता ऐसे भोजन, तथा जंगली पक्षियोंकी मांसभक्षण ये शरदृतुमें हितकारकहैं ।

विश्रामंसुहृदां गणेषुमधुरावाचः सुमाल्यंप्रियेनादेयंसलिलं तथाबलवतः शस्तांशिरामोक्षणम् । लोलाक्षि प्रमदोत्तमेहितकराण्याहुःसुवैद्यानृणांसन्नामोंऽघ्रिसरोजयोरिवहरेःप्राणप्रिये सन्मते ॥

अर्थ–सुहृदोंमें रहना, मधुर वाक्य, सुंदरफूलोंकी माला, नदीका पानी और बलवान्की फस्त खोलकर रुधिर निकालना, ये शरदृतुमें हितकारकहैं ।

शरदि अहितानि ।

शरदुष्णापित्तकर्त्रीनृणांमध्यबलावहा । तस्मात्पित्तकरंसर्वं त्यजेन्नित्यंप्रयत्नतः ॥ पिप्पलीमरिचंभंगांशतपुष्पांरसोनकम् । चिर्भटंरामठंतक्रंवृन्ताकंकृशरां दधि ॥ क्वथितंसार्षपंतैलंमद्यंचित्रफलंतथा । अम्लंतीक्ष्णंकटूष्णंचातपंव्यायामकं गुडम् ॥ दिवानिद्रातिसुरतंमाषान्नंरात्रिजागरम् । मत्स्यंक्रोधं त्यजेद्यत्नाच्छरद्यम्बुरुहेक्षणे ॥

अर्थ–शरदऋतु, गरम, पित्तकर्त्ता और मध्यम बलदायकहै, अतएव इसमें पित्तकारकवस्तुओंका त्याग करना चाहिये, जैसे–पीपल, मिरच, भाँग, सौंफ, लहसन, चिर्भट, हींग, छाछ, बैंगन खिचडी, दही, कढी, सिरसोंका तेल, मद्य, चित्रफल, खट्टा, चरपरा, कडुआ, गरम, धूपमें डोलना, कसरत करना, गुड, दिनमें सोना, अति मैथुन, उरदके पदार्थ, रात्रिमें जागना, बडी मछली, और क्रोध ये शरदृतुमें यत्नपूर्वक त्याज्यहैं ।

पक्वंकलिङ्गं त्रपुसं च पक्वं त्यजेत्तथाकर्कटिकां च पक्वाम् । मांसंप्रिये मेषमयूरयोश्चशरद्ययेकुंडलशोभितास्ये ॥

अर्थ–पका तरबूज, खीरा, ककडी और मोर, तथा मेंढा इनका मांस शरदृतुमें वर्जितहै ।

इति श्रीबृहन्निघण्टुरत्नाकरे शरदृतुचर्य्या समाप्ता ।

अथ संक्षेपसे ऋतुचर्या ।

शीते वर्षासु चाद्यांस्त्रीन्वसन्तेऽन्त्यान्रसान्भजेत् । स्वादुं निदाघेशरदिस्वादुतिक्तकषायकान् ॥ शरद्वसन्तयोरूक्षंशीतंघर्मंघनान्तयोः । अन्नपानं समासेनविपरीतमतोऽन्यदा । नित्यंसर्वरसाभ्यासः स्वस्वाधिक्यमृतावृतौ ।

अर्थ-हेमंत शिशिर और वर्षामें आद्यरसों [मधुर अम्ल, और लवण] का सेवन करना और वसंत ऋतुमें तिक्त कटु और कषैले रस सेवन करने चाहिये । ग्रीष्मऋतुमें मिष्टरस और शरदृऋतुमें स्वादु तिक्त और कषायरस सेवन करने चाहिये। शरद् वसंत ऋतुमें रूक्ष अन्नपान सेवन करे । इससे विपरीत अर्थात् स्निग्ध पदार्थ हेमंत शिशिर ग्रीष्म और वर्षाऋतुमें सेवन करे । तथा शीतल अन्न पान ग्रीष्म और वर्षाकालमें तथा इस्से विपरीत अर्थात् उष्ण पदार्थ हेमन्त शिशिर वर्षा और वसंत ऋतुमें सेवन करने चाहिये । इस मनुष्यको चाहिये कि, सब रसोंका अभ्यास सदैव रक्खे, परंतु ऋतुऋतुमें जो वस्तु सेवन करना लिखाहै वह उसीउसी ऋतुमें अधिक सेवन करना ऐसा जानना, परंतु यह नियम समधातु और साधारणदेशमें जानना, किंतु जांगल देश अनूपदेश और विषमधातुवाले पुरुषके प्रति यह नियम नहीं है । विषमधातुवाले पुरुषको धातुसाम्यता करनेके अर्थ देश देशके अनुसार अनुक्त ऋतुकेभी आहाराचार कर्तव्यहैं ।

ऋतुसंधिमें कर्त्तव्य ।

ऋत्वोरन्त्यादिसप्ताहावृतुसंधिरिति स्मृतः । तत्र पूर्वोविधिस्त्याज्यः सेवनीयोऽपरः क्रमात् ॥ असात्म्यजाहिरोगाः स्युः सहसात्यागशीलनात् ।

अर्थ-ऋतु (शिशिर, वसंत, और ग्रीष्म वर्षा आदि) के आदि अंतके सात सात दिन जो होते हैं वो ऋतुसंधि कहाती है, इस ऋतुसंधिमें प्रथम ऋतुकी विधि क्रमसे त्याग करे और आगेकीऋतुमें जो विधि लिखीहै उसका क्रमसे सेवन करना चाहिये क्योंकि सहसा विधित्यागकरनेसे असात्म्यजरोग प्रगट होतेहैं ।

ग्रन्थान्तरेच ।

चयप्रकोपोपशमादोषाणांहिद्वयोरपि । सन्धौसाधारणावत्स भविष्यद्वर्त्तमानयोः ॥ ऋतुसंधौतुदोषाणांवहुधापरिकल्प-

ना । एवंप्रकाराव्याख्यातुंविधिंवक्ष्याम्यतः परम् ॥ ह्रासये- दल्पशोऽभ्यस्तंवर्त्तमानर्तुकंविधिम् ॥ भविष्यद्धेतुकश्चापि यतेताभ्यासकारणात् । यावदभ्यासयेत्पूर्वंतावत्तंसभजेत्प- रम् ॥ स्युरोगास्त्यागयोगाभ्यांसहसासात्म्यसेवनात् । त- स्माद्यथोक्तमभ्यस्येदृतुसन्धिविधिंनरः ॥

अर्थ—हे वत्स ! भविष्यत् और वर्त्तमान अर्थात् आनेवाली और वर्तमान दोन ऋतुओंकी संधियोंमें दोषोंके चय प्रकोप और शान्ति साधारण रीतिसे होते हैं । फिर ऋतुसंधिमें दोषोंकी अनेक परिकल्पना होतीहै अब इसके उपरांत अन्यविधि कहते हैं मनुष्यको चाहिये कि जब ऋतुसंधि आवे तबहीसे वर्त्तमान ऋतुकी अभ्यास करीहुई विधिको धीरेधीरे घटावे और आनेवाली ऋतुकी विधिका थोडाथोडा अभ्यासके अर्थ साधन करे । जबतक आगेकी विधिका अभ्यास करे तबतक पिछलीविधिका सेवन करता रहे क्योंकि सहसा असात्म्य सेवनसे त्याग और योग करके रोग प्रगट होतेहैं अतएव मनुष्यको उचितहै कि यथोक्त ऋतुसंधिकी विधिको अभ्यास करना चाहिये ।

स्वगुणैरतियुक्तेषुविपरीतेषुवापुनः । विषमेष्वापिवादोषाः कु- प्यन्त्यृतुषुदेहिनाम् ॥ हरेद्वसन्तेश्लेष्माणं पित्तंशरदिनिर्ह- रेत् । वर्षासुशमयेद्वायुं प्राग्विकारसमुच्छ्रयात् ॥

अर्थ—ऋतुओंके जो जो गुण कहे हैं उन्होंके होनेसे (जैसे हेमंत और शिशिर ऋतुमें अत्यंत शरदी पडना, गरमीयोंमें अत्यंत गरमी और वर्षामें अत्यंत वर्षाका होना इत्यादि) तथा ऋतुके विपरीत गुण होनेसे (जैसे शरदीकी ऋतुमें गरमी और गरमियोंमें शरदी पडना इत्यादि तथा ऋतुओंकी विषमता होनेसे (जैसे वर्षाके लक्षण शरद्में शरद् ऋतुके लक्षण हेमंतऋतुमें इत्यादि) इन अत्यंत विपरीत और विषम ल- क्षण होनेसे मनुष्योंके वात पित्त कफ दोष कुपित होतेहैं तहां ऋतुओंके स्वगुणाति- योगसे छः व्यापत्ति (व्याधि) होतीहै तथा विपरीत होनेसे छः और ऋतुओंके विषम होनेसेभी छः व्यापत्ति होतीहै इसप्रकार ऋतुओंकी १८ व्यापत्ती कहीहैं ।

वसंतऋतुमें कफको शरद्ऋतुमें पित्तको और वर्षाऋतुमें वादीको वमन विरेचना- दिद्वारा शमन कर्त्तव्य है । परंतु यह विधि जबतक कोई ऋतुविकार न उत्पन्न हो उससे पूर्वही करना चाहिये ।

देशपरत्वविकार ।

मत्स्याम्लभोजिनःप्राच्यांनित्यं चानूपसेविनः । श्लीपदा-
गलगण्डाश्चप्रायस्तेषु भवन्तीह ॥ १ ॥ निम्नतोयगता-
न्मत्स्यान्भक्षयन्ति समुद्रजान् । प्रायशः कुष्ठिनस्तेनम-
नुष्यादाक्षिणात्यजाः ॥ २ ॥ तैलाम्लभोजिनो नि-
त्यंगोधूमविदलाशिनः । भूयिष्ठमर्शसास्तेनखञ्जाश्चावन्ति-
जानराः ॥ ३ ॥ मांसकामाःसुराकामाःस्त्रीकामाः साहसे
रताः । मागधास्तेनभूयिष्ठंदृश्यन्तेराजयक्ष्मिणः ॥ ४ ॥ ती-
क्ष्णान्नानिनिषेवन्तेबाह्लीकास्तुविशेषतः । अभिष्यन्दीनि
मांसानितथाधान्योदकानि च ॥ ५ ॥ प्रकृत्याचाप्यभिष्य-
न्दान्सेवन्तेमानुषाःसदा । तेनबाह्लीकदेशेषुप्रायोव्याधिर्व-
लासकः ॥ ६ ॥ नानादेशस्वभावायेनानाहारास्तथैवच ।
नानाचारानैकसत्त्वाधर्मिणोऽधर्मिणस्तथा ॥ ७ ॥ तेषांसा-
त्म्यं च सत्वं च ऋतुकालंचलक्षयेत् । भैषज्यन्तुततःकुर्या-
द्देवंविज्ञायदेहिनाम् ॥ ८ ॥ यस्यदेहस्ययत्सात्म्यं यच्चास्य
चरितंभवेत् । तेनभेषजसंयुक्तंभैषज्यमुपकल्पयेत् ॥ ९ ॥
आरोग्यंतेनवर्णौजोबलंवीर्यं च जायते । वर्जनादृतुसाम्यानां
कृशोनित्यंसुदुर्बलः ॥ १० ॥ नित्यंरोगाभिभूतश्चपुमान्सा-
त्म्यविवर्ज्जनात् । तस्मात्सात्म्यंनिषेवेतअसात्म्यंपरिवर्ज्जे-
येत् ॥ ११ ॥ सात्म्यसेवीजितक्रोधीनित्यंचापिजितेन्द्रियः ।
जीर्णभोजीमितस्वप्नःसुखंजीवत्यनामयः ॥ १२ ॥ ऋतवः
प्राग्विनिर्दिष्टाबलयोगस्वभावतः । तेषुगर्भानिषिक्तास्तुत-
थारूपास्तथायुषः ॥ १३ ॥ तान्विज्ञायततोबुद्ध्याप्रश-
स्तान्निन्दितानपि । ततोऽस्याहारसंयुक्तं भेषजंवाविचारयेत्
॥ १४ ॥ ततोस्यारोगतादेहेबलंवीर्यंचवर्द्धते ।

अर्थ–पूरवके देश (बंगालगडियाआदि) में मनुष्य नित्य अनूपदेशमें रहनेसे और नित्य मछलीको खाते हैं, अतएव उन्होंके प्रायःश्लीपद (पीलपाउ) और गलगंड (घेंघा) का रोग बहुत होता है । दक्षिणदेश (मुंबई मुंदराज आदि प्रान्त) के मनुष्य जलके नीचे रहनेवाले समुद्रके मच्छोंको भक्षण करते हैं अएतव उन्होंके प्रायः कुष्ठका रोग बहुधा होता है । अवन्तीदेश (मालवा मेवाडआदि) में मनुष्य तेल खटाई मिरच गेहूं दाल आदिका अत्यंत सेवन करते हैं अतएव उनके बवासीर और खंज (पैरोंका रोग) बहुधा होता है । मगधदेश (गया पटनाआदि) के मनुष्य मांस, मद्य, स्त्रीका सेवन और साहसी होते हैं अतएव उन्होंके प्रायः खईका रोग बहुत होता है । बाल्हीकदेशके मनुष्य तीक्ष्ण अन्नपानका सेवन करते हैं तथा अभिष्यंदी (दही आदि) मांस, धान्योदक, तथा प्रकृति करके अभिष्यंदी पदार्थोंका सेवन करनेसे उनके बलासक रोग होता है । विविध देशोंमें विविध स्वभावके और अनेकप्रकारके आहार आचार अनेक प्रकार सत्ववाले कोई धर्मशील और कोई अधर्मी होते हैं उन्होंके सात्म्य (आत्माके अनुकूल पदार्थ) सत्व और ऋतुकालको विचार फिर वैद्यको चिकित्सा करनी चाहिये । जिस मनुष्यको अनुकूल पदार्थहो और जैसा उसका चरित्रहो उसको उसीके साथ औषध मिलाकर देवे जैसे पूरवके मनुष्य मछली, भात खाते हैं तो उनको उसीके साथ औषध देवे जो अत्यंत मद्य पीताहै उसको मद्यके साथ भांग पीनेवालेको भांगके साथ, मांस खानेवालेको मांसके साथ अफीमके खानेवालेको अफीमके साथ औषध देनी चाहिये । अर्थात् जो मनुष्य जिस वस्तुका सदैव सेवन करता है उसको वह वस्तु प्रथम देकर फिर औषध देवे या उसीमें मिलाकर देनी चाहिये । इसप्रकार करनेसे आरोग्य, वर्ण, ओज, बल, और वीर्यकी वृद्धि होतीहै । अतएव ऋतुसात्म्य और आत्मसात्म्यके परित्याग करनेसे मनुष्य कृश, दुर्बल, और नित्य रोगग्रस्त रहता है । इसीसे मनुष्यको उचित है कि आत्मसात्म्य और ऋतुसात्म्यका सेवनकरे तथा असात्म्यवस्तुका परित्याग करे । जो मनुष्य सात्म्यवस्तुका सेवन करता, क्रोध जीतनेवाला, नित्य जिह्वा उपस्थआदि इन्द्रियोंका जीतनेवाला, है, जीर्णभोजी अर्थात् पूर्वभुक्त आहार पचनेके उपरांत भोजन करनेवाला और अनुमानकी निद्रालेनेवाला है वह रोगरहित सुखपूर्वक पूर्णआयुको प्राप्त होता है बलयोगस्वभावसे पूर्व कहीहुई ऋतुओंमें जो गर्भस्थापना हुए हैं उन गर्भोंसे उन्हीं ऋतुओंके अनुसार रूप और आयुष्यवाले बालक प्रगट होते हैं। अतएव वैद्यको उचित है कि, उन मनुष्योंका उत्तम और निंदित रूप आयु बलको जानकर उसीके अनुसार आहारके साथ औषधी देनी चाहिये । इसप्रकार आहार विहार सेवन करनेसे इस मनुष्यको नैरोग्यता और देहमें बलवीर्यकी वृद्धिहोतीहै।

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघण्टुरत्नाकरे ऋतुचर्यावर्णनं नाम षड्विंशतितमस्तरंगः॥ २६॥

अथातो दिनचर्याध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अर्थ-ऋतुचर्याध्याय कहनेके अनंतर अब दिनचर्याध्यायको कहतेहैं । दिनादिनमें जा आचरण कराजावे उसको दिनचर्या कहतेहैं ।

मानवोयेनविधिनास्वस्थस्तिष्ठतिसर्वदा । तमेवकारयेद्वैद्यो यतः स्वास्थ्यंसदेप्सितम् ॥ १ ॥ दिनचर्यांनिशाचर्यामृतुचर्यांयथोदिताम् । विहरन्पुरुषःस्वस्थःसदातिष्ठतिनान्यथा ॥ २ ॥

अर्थ-वैद्यको उचितहै, कि मनुष्य जिसरीतिसे सर्वकाल स्वस्थरहै ऐसा उपचार करना चाहिये क्योंकि, निरोगता सर्व प्राणियोंको सदैव वांछितहै । अतएव दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या इनमें जैसा जैसा कर्म कहाहै तैसा तैसा आचरण करनेसे सर्वकाल स्वस्थ रहताहै ।

स्वस्थके लक्षण ।

समदोषः समाग्निश्चसमधातुबलक्रियः ।
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनाः स्वस्थइत्यभिधीयते ॥ ३ ॥

अर्थ-दोष, अग्नि, धातु, बल, और कर्म ये जिसके समान हों तथा इन्द्रि मन देह ये प्रसन्न हों उसको स्वस्थ कहतेहैं । कदाचित कोई शंका करे कि, दोष धातु आदिकी समानता किसप्रकार जाने इसलिये कहतेहैं ।

यत्समत्वंहिदोषाणांभिषग्भिरवधार्यते ।
नतत्स्वास्थ्यंविनावक्तुंशक्यमन्येनहेतुना ॥ ४ ॥

अर्थ-जिसको वैद्य दोषसमत्व कहते हैं, वह शरीरस्वास्थ्यके विना दूसरे कारण करके कहनेमें नहीं आता अतएव निरोगी पुरुषकोही दोषसमत्व कहसकते हैं ।

प्रातःकृत्य ।

ब्राह्मेमुहूर्त्तेबुद्ध्येतस्वस्थोरक्षार्थमायुषः ।
तत्रसर्वाघशान्त्यर्थंस्मरेच्चमधुसूदनम् ॥

अर्थ-प्राणीको उचित है, कि रात्रिकी चार घडी बाकी रहनेपर उठकर आयुके रक्षणार्थ तथा संपूर्ण पातकनाशनार्थ मधुरिपु जो विष्णु तिनका स्मरण करना चाहिये ।

प्रातः स्मरणीयमाह व्यासः ।

महर्षिर्भगवान्व्यासः कृत्वेमांसंहितांपुरा ।
श्लोकैश्चतुर्भिर्धर्मात्मापुत्रमध्यापयच्छुकम् ॥ १ ॥
मातापितृसहस्राणि पुत्रदारशतानि च ।
संसारेष्वनुभूतानियांतियास्यन्तिचापरे ॥ २ ॥
शोकस्थानसहस्राणि भयस्थानशतानि च ।
दिवसेदिवसेमूढमाविशन्तिनपण्डितम् ॥ ३ ॥
ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोतिमे ।
धर्मादर्थश्चकामश्चसकिमर्थंनसेव्यते ॥ ४ ॥
नजातुकामान्नभयान्नलोभाद्धर्मंत्यजेज्जीवितस्यापिहेतोः ।
धर्मोनित्यः सुखदुःखेत्वनित्येजीवोनित्योहेतुरस्यत्वनित्यः॥५॥
इमांभारतसावित्रींप्रातः प्रातः पठेत्तुयः ।
सभारतफलंप्राप्यपरंब्रह्माधिगच्छति ॥ ६ ॥

अर्थ—महर्षि भगवान् व्यास पूर्व इस चतुःश्लोकी संहिताको बनाके धर्मात्मा शुकपुत्रको पढाते हुए । यह बात अनुभव करीहुई कि॥१॥ हजारों मातापिता और सैकडों पुत्र स्त्री इससंसारसे गए और आगे जायँगे अर्थात् पूर्वजन्म और इसजन्मके गए तथा जो शेष है अथवा आगे होनेवाले जन्मके जो मातापिता और स्त्रीपुत्रादि हैं वो जायँगे [यह निश्चय है इससे उचित है कि इनमें मोह नहीं करना] शोकके स्थान हजार और भयके स्थान सैकडों हैं । वो दिनादिनमें मूढ पुरुषको प्राप्त होते हैं पंडितको नहीं होते अर्थात् हजारोंवार्त्ता ऐसी हैं जिनसे यह मनुष्य शोकाकुल होता है और सैकडों वार्ताओंसे भयको प्राप्त होता है परंतु यह मूर्खोंके वास्ते है । पंडितजनोंको न किसीबातका शोक और न किसीसे डरहै । क्योंकि पंडित पुरुष शोक भय होनेके कारणोंको अच्छीरीतिसे मिथ्या जानतेहैं॥२॥३॥श्रीव्यासभगवान् कहतेहैं कि, मैं ऊंचे हाथ उठाकर पुकारता हूं परंतु कोई नहीं सुनता मैं कहताहूं कि आप भाई ! धर्मकरो, धर्मसे धनकी प्राप्ति होवेगी और धनसे संपूर्ण कामना होतीहै। अतएव धर्मको क्यों नहीं सेवन करते हो अर्थात् धनकामनाकी जड धर्महै अतएव उसीका सेवन सर्वप्राणियोंको कर्त्तव्यहै । इस मनुष्यको कामसे भयसे लोभसे और जीवनके लिये धर्मपरित्याग नहीं करना चाहिये क्योंकि धर्म नित्यहै और सुखदुःख अनित्यहैं तथा जीव नित्यहै

और इसके हेतु (अर्थात् जिनसे यह देह बनाहै) सो अनित्यहैं ॥ ४ ॥ ५ ॥ इस भारतसावित्रीको जो मनुष्य नित्य प्रातःकाल उठकर पाठ करताहै वो संपूर्ण भारतके पाठका फल प्राप्त हो देहान्तमें परब्रह्मको प्राप्त होताहै ।

कस्यचित् ।

स्मृतेसकलकल्याणभाजनंयत्रजायते । पुरुषस्तमजंनित्यंव्रजामिशरणंहरिम्॥१॥ पुण्यश्लोकोनलोराजापुण्यश्लोकोयुधिष्ठिरः । पुण्यश्लोकाचवैदेही पुण्यश्लोकोजनार्दनः ॥२॥ अश्वत्थामाबलिर्व्यासोहनूमांश्चविभीषणः । कृपःपरशुरामश्चसप्तैते चिरजीविनः ॥ ३ ॥ सप्तैतान्संस्मरेन्नित्यंमार्कण्डेयमथाष्टमम् । जीवेद्वर्षशतंसोपिसर्वव्याधिविवर्जितः ॥४॥ अहल्या द्रौपदी सीता तारा मन्दोदरी तथा । पञ्चकं ना स्मरेन्नित्यं महापातकनाशनम् ॥ ५ ॥

अथ-इसप्रकार इस मनुष्यको प्रातःकाल उठकर स्मरण कर्त्तव्य है परंतु यदि वेदोक्त मंत्रोंका पाठ करे तो अति उत्तम है ।

जागकर प्रथम देखने योग्यवस्तू ।

दध्याज्यादर्शसिद्धार्थबिल्वगोरोचनस्रजम् । वाजिवारणगोविप्रहरिद्राशतपर्वणाम् ॥ दर्शनंस्पर्शनंकार्यंप्रबुद्धेनशुभावहम् ॥ स्वमाननंघृतेपश्येद्यदीच्छेच्चिरजीवितम् ।

अर्थ-प्राणीको प्रातःकाल उठकर प्रथम दही, घृत, दर्पण, सपेद सरसों, बेल, गोरोचन, फूलमाला, घोडा, हाथी, गौ, ब्राह्मण, हलदी, और बांस, वा दूब, इनका दर्शन और स्पर्श करना शुभ है । इस लिखनेका यह प्रयोजन है कि, दुष्ट अधर्मी स्त्रीपुरुषको और कुत्ता, बिल्ली आदिको न देखे यदि इनमेंसे कोई वस्तु समीप न होवे तो अपने प्रियका दर्शन करे या अपने हाथोंका दर्शन करे । तथा जिसको बहुत जीनेकी इच्छा होवे उसको अपना मुख घृतमें देखना चाहिये । तदनंतर पृथ्वीसे (समुद्रवसने देवि०) इसप्रकार प्रार्थना कर शय्यासे उठना चाहिये ।

ईक्षेतततउत्थायवह्निंगांश्रोत्रियंशुभम् ।
हित्वाचान्धं च पापिष्ठं नग्नमुत्कृत्तनासिकम् ॥

अर्थ-तदनंतर प्रातःकाल उठकर अग्नि, देव, गौ, वेदपाठीब्राह्मण और मंगलीक पदार्थोंका दर्शनकरे तथा अंधा अधर्मी नंगा नकटा इत्यादि अमंगलीकोंको न देखे ।

आयुष्यमुषसिप्रोक्तंमलादीनांविसर्जनम् ।
तदंत्रकूजनाध्मानोदरगौरववारणम् ॥

अर्थ-प्रातःकाल उठकर मलमूत्र आदिका त्याग करनेसे आयुष्य बढे और आंतडोंमें वायुका शब्द, पेटका फूलना, तथा पेटका भारीपना, इनका नाश होताहै ।

मलबाधा रोकनेके अवगुण ।

आटोपशूलौपरिकर्तिकाचसङ्गःपुरीषस्यततोर्ध्ववातः ।
पुरीषमार्गादथवानिरेतिपुरीषवेगेऽभिहतेनरस्य ॥

अर्थ-पेटमें गुडगुडाहटशब्द, शूल, तथा गुदामें कतरनेकेसी पीडा, मलरोध बहुत डकारोंका आना, अथवा मुखमार्गसे मलका निकलना ये लक्षण मलकी बाधा रोकनेवाले मनुष्यको होतेहैं ।

वातमूत्रपुरीषाणांसङ्गोऽध्मानंक्लमोरुजा ।
जठरेवातजाश्चान्येरोगाःस्युर्वातनिग्रहात् ॥

अर्थ-अधोवायु, मल मूत्रका न उतरना, अफरा, क्लम, पेटमें पीडा तथा पेटमें अनेकप्रकारके वातजन्यरोग ये अधोवायुका वेग रोकनेसे होतेहैं ।

मूत्रवेगधारणके उपद्रव ।

बस्तिमेहनयोःशूलंमूत्रकृच्छ्रंशिरोरुजा ।
विनामोवंक्षणानाहःस्याल्लिङ्गंमूत्रनिग्रहे ॥

अर्थ-मूत्रवेगके रोकनेसे बस्ति तथा मूत्रमार्ग इनमें शूल, मूत्रकृच्छ्र, मस्तकशूल, शरीरका नवजाना, बद होनेकी जगह खींचनेकीसी पीडा ये लक्षण होतेहैं ।

नवेगितोऽन्यकार्यः स्यान्नवेगानीरयेद्बलात् ।
कामशोकभयक्रोधान्मनोवेगान्विधारयेत् ॥

अर्थ-मलमूत्रके वेगमें दूसरा और कार्य न करे किंतु प्रथम मलमूत्रको त्यागकरे और यदि मलमूत्रआदि वेगोंके त्यागनेकी इच्छा न हो तो उनको जबरदस्ती न निकाले । कदाचित् कोई शंका करे कि, काम क्रोधादिके वेगभी न रोकने चाहिये इस वास्ते कहतेहैं कि-काम, शोक, भय, क्रोध और मन इनके वेगोंको यत्नपूर्वक धारणही करे, क्योंकि इनके रोकनेसे अनेक गुणहैं ।

शौचादिके गुण ।

गुदादिमलमार्गाणांशौचंकान्तिबलप्रदम् ।
पावित्र्यकरमायुष्यमलक्ष्मीकलिपापहृत् ॥

अर्थ-गुदादि मलमार्गोंकी जलमृत्तिकासे शुद्धि करना । कांति और बलकरे तथा पवित्रकरे आयुष्य बढे और अलक्ष्मी कलि और पातक इनका नाश करताहै ।

शौचप्रयोगः ।

पूर्वोक्तब्राह्ममुहूर्त्तेउत्थायाचम्येष्टदेवतानमस्कृत्य प्रातःस्मरणं विधायरविंगुरूंन्नमस्कृत्यग्रामाद्बहिर्नैर्ऋत्यामिषुक्षेपात्ययेशुद्धमृत्तिकांससिकतांजलपात्रंचादाय कीटादिरहितस्थलं गत्वा मृज्जलपात्रे निधायाऽयज्ञियैरनार्द्रैस्तृणैर्भूमिमाच्छाद्य प्रावृतशिराः पृष्ठतः कण्ठलम्बितयज्ञोपवीत एकवस्त्रश्चेद्दक्षिणकर्णेनिहितयज्ञोपवीतोमौनीघ्राणाऽऽस्येपिधायादिवोदङ्मुखोरात्रौ दक्षिणामुखोमूत्रपुरीषेउत्सृज्यलोष्ठादिनागुदंपरिमृज्यगृही तशिश्नउत्थाय पूर्वगृहीतमृज्जलपात्रेगृहीत्वार्द्रामलकमात्रमृज्जलैर्द्विवारंलिङ्गशौचं कृत्वार्धप्रसृतितदर्धार्धमृज्जलैस्त्रिवारमपानंसंशोध्यपुनर्जलैरेवलिङ्गगुदेप्रक्षाल्यशुद्धमृत्तिकयैकवारंहस्तंप्रक्षाल्यशुद्धभूमिमागत्यान्यमृज्जलैर्दशवारंवामकरंप्रक्षाल्यततः करद्वयंसप्तवारंतावद्भिरेवमृज्जलैःप्रक्षाल्यवामदक्षिणपादौप्रत्येकंत्रिः प्रक्षाल्यान्यजलेनद्वादशगण्डूषान्वामभागे कृत्वाजलपात्रं त्रिःपर्युक्ष्यजलबिन्दूञ्जलेनिक्षिप्योपवीतीद्विराचामेत् ।

अर्थ-पूर्वोक्त ब्राह्ममुहूर्त्तमें उठ आचमन और इष्टदेवको प्रणामकर प्रातः स्मरण करके सूर्य और गुरु देवको नमस्कार कर [अपने मातापिता आदि वृद्धोंको नमस्कार कर] यदि ग्राममें रहताहो तो ग्रामसे जितनी दूरमें वीरके हाथका छोडा हुआ बाण गिरताहै इतनी दूर जावे और शुद्धमट्टीका पात्र मट्टीका डेला और जलका पात्र साथ लेजावे जहां चैंटी मकोडा आदि जीव न हो उसजगे मट्टी और जलपात्र धरकै अयज्ञिय अर्थात् जिनको यज्ञमें नहीं लेते ऐसे सूखे घास फूस पत्तेसे पृथ्वीको

ढककर मस्तकको बांध पीठकी तरफसे कंठलंबित यज्ञोपवीत करके यदि एक वस्त्रही समीप होवे तो दहने कानपर यज्ञोपवीत चढाय मौनहो नासिकाको और मुखको बंद-कर दिनमें उत्तरकी तरफ और रात्रिमें दक्षिणकी तरफ मुख करके मलमूत्र परित्याग करने चाहिये। पश्चात् मट्टीके ढेलेसे गुदाको शुद्धकर लिंगपकड उसजगेसे खडा हो मट्टीजलके पात्रको ले गिली आमलेके प्रमाण मट्टीजलसे २ बार लिंग धोवे और अर्द्धप्रसृति (आधापस्सा) उससे आधे मट्टीजलसे तीनवार गुदाको शुद्धकर फिर केवल जलसेही गुदालिंगको धोयकर शुद्ध मट्टीसे १ वार हाथको धोय शुद्ध पृथ्वीमें दूसरे जलमट्टीसे १० वार बायाँहाथ धोवे तदनंतर दोनों हाथोंको साथ २ वार मट्टी जलसे शुद्ध करे। और वामदक्षिणपैरमें तीन तीन बार मिट्टी लगाकर धोवे। फिर अन्य शुद्ध जलसे बाँईतर्फ १२ कुल्लेकर जलपात्रको ३ वार प्रोक्षणकर अँगो-छेको कंधेपर रखकर जलकी विंदू जलमें डालकर २ वार आचमन करे।

यदि केवल मूत्रमात्रकरे तो एकवार लिंगको धोय बाँएहाथको तीनवार धोवे फिर दोनों हाथोंको दोवार धोवे एक २ वार पैरोंमें मट्टी लगाकर धोवे चार कुल्लेकर आचमन करे।

दिवायद्विहितंशौचंतदर्धंनिशिकीर्त्तितम् । तदर्धमातुरेप्रोक्त-मातुरस्यार्धमध्वनि॥स्त्रीशूद्रादेरशक्तानांगंधलेपक्षयोभवेत्। तथाशौचंप्रकर्त्तव्यंचुलुकेननधारया ॥ परस्यशोणितस्पर्शे रेतोविण्मूत्रजेतथा । चतुर्णामपिवर्णानांद्वात्रिंशन्मृत्तिकाः स्मृताः ॥

अर्थ—जितना शौच दिनमें करना कहाहै उससे आधा रात्रिमें करे और रात्रिसे आधा रोगीको करना और आधा मार्गमें चलनेवाले (पाथिक वा वटोही) मनुष्योंको कर्त्तव्य और स्त्रीशूद्रादि अशक्तोंको जितनेमें दुर्गंध चली जावे इतना शौच करे गुदा प्रक्षालन चुल्लू भरके करे जलकी धारसे न करे यदि किसी अन्यपुरुषका रुधिर अथवा वीर्य देहमें लगगया हो तो उसजगे चारोंवर्णोंको ३२ वार मृत्तिका लगाकर जलसे धोना चाहिये।

हस्तपादप्रक्षालन ।

प्रक्षालनंमृदापाण्योःपादयोःशुद्धिकारकम् ।
मलश्रमहरंवृष्यंचक्षुष्यंराजसापहम् ॥

अर्थ—हाथ पैरोंको मट्टीलगाकर धोनेसे शुद्धी होतीहै। और मल श्रम और रजो गुण इनको नाश करे। तथा वृष्य और नेत्रोंको हितकारकहै।

शरीरशुद्धिंनिर्वर्त्यकृतशौचविधिर्न्नरः । केशपाशेप्रकुर्वीत प्रसाधन्यादिशोधनम् ॥ ततोहिदन्तनिर्ल्लेखंप्रकुर्याद्विधिना स्मृतम् ।

अर्थ-शरीरकी शुद्धिसे निवृत्तहो और शौचविधिके पश्चात् कंघीसे बालोंको सम्हारना चाहिये । (यह विधि कायस्थादि वर्णोंके वास्ते है क्योंकि ब्राह्मणको बालोंका राखना निषेध है) तदनंनर विधिपूर्वक दंतधावन करना ।

दाँतन करनेकी विधि ।

भक्षयेद्दन्तपवनंद्वादशांगुलमायतम् । कनिष्ठिकाग्रवत्स्थूलमृज्वग्रन्थितथाव्रणम् ॥ एकैकंघर्षयेद्दन्तंमृदुनाकूर्चकेनच । दन्तशोधनचूर्णैनदन्तमांसान्यबाधयन् ॥ क्षौद्रत्रिकटुकाक्तेन तैलसिंधुभवेनवा । चूर्णैनतेजोवत्याश्चदन्तान्नित्यंविशोधयेत् ॥

अर्थ-दाँतन १२ अंगुल लंबी और कनिष्ठिका उंगलीके प्रमाण मोटी, नरम जिसमें गांठ न हों और छिद्र न हों,उसको चबायकर आगेसे कूंचीके सदृशकर उस्से धीरे धीरे एक एक दाँतोंको घिसे तथा दाँतके मांसको बचाकर दंतशोधन चूर्णसे दाँतोंको शुद्ध करे दंतशोधन चूर्ण सहत सोंठ मिरच पीपल तैल सैंधानिमक इनकरके तथा तेजवल्कलके चूर्णसे नित्य दाँतोंको रगडे ।

मधूकोमधुरश्रेष्ठःकरञ्जःकटुकेतथा । निम्बःस्यात्तिक्तकेश्रेष्ठः कषायेखदिरस्तथा ॥ समयं च तथालोक्य दोषं च प्रकृतिं तथा । यथोचितैरसैर्वीर्यैर्युक्तंद्रव्यंप्रयोजयेत् ॥

अर्थ-मधुर वृक्षोंमें महुआ, तीखी द्रव्योंमें कंजा, कडुए रसोंमें नीम, और कषेली द्रव्योंमें खैर, श्रेष्ठ जानना, इनमें समय, दोष, प्रकृति, इनको देख यथोचित रसवीर्ययुक्त द्रव्यकी दाँतन करनी चाहिये ।

दाँतन करनके गुण ।

तेनास्यमुखवैरस्यगंधाजिह्वास्यजा गदाः । रुचिवैशद्यलघुता नभवन्ति भवन्ति च ॥

---

१ दंतकाष्टस्यसुगंधीकरणं-सप्ताहंगोमूत्रेहरीतकीचूर्णसंयुते॥क्षिप्त्वा.गंधोदकेचभूयोविनिक्षिपेद्दन्तकाष्टानि॥गंधोदकलक्षणम्-एकात्वक्पत्राञ्जनमधुमारिचैर्नागकुष्ठश्च। गंधाम्भः कर्तव्यंकिंचित्कालं स्थितान्यस्मिन् ॥ जातीफलपत्रैलाकर्पूरैः कृतयमैकशिखिभागैः । अवचूर्णितानिभानोर्मरीचिभिः शोषणीयानि ॥

अर्थ–इसप्रकार दाँतनके करनेसे इस प्राणीके मुखकी विरसता मुखकी दुर्गंध तथा मुखके रोग नहीं होते और रुचि, विशदता (स्वच्छता) और हलकापन ए गुण होतेहैं ।

दाँतन करनेके काष्ठके पृथक् पृथक् गुण ।

अर्केवीर्यंवटेदीप्तिः करंजेविजयोभवेत् । प्लक्षेचैवार्थसंपत्ति-र्बदर्यांमधुरोध्वनिः॥खदिरेमुखसौगन्ध्यंबिल्वेतुविपुलंधनम् । उदुम्बरेतुवाक्सिद्धिराम्रेत्वारोग्यमेवच ॥ कदम्बेतु धृतिर्मे-धाचम्पके तुदृढामतिः । शिरीषे कीर्त्तिसौभाग्यमायुरारोग्य-मेव च ॥ अपामार्गे धृतिर्मेधा प्रज्ञाशक्तिस्तथा ध्वनिः । दाडिम्यांसुंदराकारःककुभेकुटजेतथा ॥ जातीतगरमन्दारै-र्दुःस्वप्नंचविनश्यति ।

अर्थ–आककी दाँतन करनेसे वीर्य प्राप्तहो, वडकी दीप्तिकर, कंजेकी जय देनेवाली, पाखर (पीपरी) की अर्थ और संपत्ति देवे, वेरकी मधुरध्वनि करे,खैरकी मुखसुगंधी करे, बेलकी विपुलधन देवे, गूलरकी वाक्सिद्धि करे आमकी निरोग करे कदंबकी धैर्य और बुद्धि करे चम्पाकी दृढमति करे, सिरसकी दाँतन कीर्ति सौभाग्य आरोग्य और आयुष्यको देयहै ओंगाकी दाँतन धैर्य, बुद्धि, पाठशक्ति तथा उत्तम ध्वनि करे। अनार, धौं और कूडाकी दाँतन शरीरको सुंदर करे तथा जाही, तगर, और मंदार-की दाँतन करनेसे दुःस्वप्ननाश होताहै ।

निषिद्ध दाँतन

गुवाकस्तालहिंतालौ केतकश्चबृहत्तृणः । खर्जूरंनारिकेरं च सप्तैतेतृणराजकाः ॥ तृणराजसमुत्पन्नंयःकुर्याद्दन्तधावनम् । नरश्चाण्डालयोनिःस्याद्यावद्गङ्गांनपश्यति ॥

अर्थ–सुपारी, ताल, हिंताल, केतक, बृहत्तृण (बांस) खजूर और नारियल ये सात वृक्ष तृणराज कहतेहैं । जो मनुष्य तृणराजकी दांतन करताहै वह चांडालयोनि को प्राप्त होताहै जबतक गंगा न देखे अर्थात् स्नान न करे ।

दाँतमकरना निषेध ।

नखादेद्गलताल्वोष्ठजिह्वादन्तगदेषुतत् । मुखस्यपाकेशोथे

१ सुगंधित दाँतन करनेकेगुण । वर्णप्रसादं वदनस्य कांतिवैशद्यमास्यस्य सुगंधितां च । संसेवितुः श्रोत्रमुखं च वान्तं कुर्वन्ति काष्ठान्यसकृद्भवानाम् ।

चश्वासकासवमीषुच ॥ दुर्बलोऽजीर्णभुक्तश्चहिक्कामूर्च्छामदान्वितः । शिरोरुजार्त्तस्तृषितःश्रान्तोयातःक्लमान्वितः ॥ अर्दितःकर्णशूलीच नेत्ररोगीनवज्वरी । वर्जयेद्दन्तकाष्ठन्तुहृदामययुतोपि च ॥

अर्थ-गल, तालु, होठ, जीभ, दांतरोगी, मुखपाक, सूजन, खांसी, श्वास, वमन, तथा दुर्बल, अजीर्णरोगी, भोजनकरा हुआ, हिचकी, मूर्च्छा, मद,मस्तकशूल, तृषित, श्रमकर चुकाहो, रास्तामें चलताहुआ, ग्लानयुक्त, अर्दितवायुवाला, कर्णशूली, नेत्ररोगी, नवीन ज्वरवाला और हृदयरोगी इनको दाँवन करना निषेधहै ।

दाँतन ग्रहणमें जपनीय श्लोक ।

आयुर्बलंयशोवर्च्चःप्रजाःपशुवसूनिच । ब्रह्मप्रज्ञांचमेधांचत्वन्नोदेहि वनस्पते॥इत्यादिस्तुतिवाक्येनयेगृह्णन्तिवनस्पतिम्॥ तत्प्रयच्छंतिसंस्कर्तुरायुर्धीश्रीयशःस्थितीः ।

अर्थ-हे वनस्पते ! मेरे अर्थ आयु, बल, यश, तेज, संतति, पशु, ब्रह्म,प्रज्ञा और मेधाको तू दे । इत्यादि स्तुतिवाक्योंसे जो वनस्पतिको ग्रहण करते हैं उनको आयु, धी, श्री और यशकी प्राप्ति होती है ।

जातिपरत्व दाँतन ।

द्वादशांगुलंविप्राणां क्षत्रियाणांदशांगुलम् । अष्टांगुलंतुवैश्यानां शूद्राणांतुषडंगुलम् ॥ दन्तकाष्ठन्तुगृह्णीयात्स्त्रीणांतच्चतुरंगुलम् ।

अर्थ-ब्राह्मणको बारह अंगुलकी, क्षत्रीको दशअंगुल, वैश्यको आठ, शूद्रको छःअंगुल और स्त्रीको चारअंगुलकी दाँतन करनी चाहिये यह टोडरानन्द लिखताहै ।

जिभीकरनेको धातुपट्टी ।

जिह्वानिर्लेखनंहैमंराजतन्ताम्रजंतथा ।
पाटितंमृदुतत्काष्ठंमृदुपत्रमयन्तथा ॥

अर्थ-जीभी अर्थात् जीभसे मैल उतारनेकी पट्टी सोना, चांदि, तांमेकी बनावे,अथवा चिरीहुई नम्र दाँतनसे अथवा नम्र पत्रसे जीभका मैल उतरना चाहिये ।

दशांगुलंमृदुस्निग्धंतेनजिह्वांलिखेत्सुखम् ।
तज्जिह्वामलवैरस्यदुर्गन्धजडताहरम् ॥

अर्थ-दशअंगुललंबी नरम और स्वच्छ जिभीसे जीभका मैल उतारना चाहिये । जिभी करनेसे जीभका मैल, मुखकी विरसता, दुर्गंध, और जडता दूर हो ।

जिह्वानिर्लेखनंकुर्यात्प्राङ्मुखोवाउदङ्मुखः । अभावेदन्तकाष्ठस्यनिषिद्धादिवसेषुच । अपांद्वादशगण्डूषैर्मुखशुद्धिर्विधीयते ॥

अर्थ-जिह्वानिर्लेखन अर्थात् जिभी पूर्वमुख अथवा उत्तरमुख होकर करना यदि दांतन न मिले तथा कोई पर्वदिन होवे तो उसदिन दाँतनके प्रतिनिधि बारह कुल्ले करनेसे मुखकी शुद्धि होतीहै ।

गण्डूषविधि ।

गण्डूषमथकुर्वीतशीतेनपयसामुहुः ।
कफतृष्णामलहरंमुखान्तःशुद्धिकारकम् ॥

अर्थ-दांत घिसनेके और जिंभीकरनेके उपरांत शीतल जलके वारंवार कुल्ले करे, कुल्ले करनेसे कफ, तृष्णा, मल ये नष्ट होवे, मुखकी भीतरसे शुद्धि होवे ।

कुर्याद्वादशगण्डूषान्पुरीषोत्सर्जनेततः ।
मूत्रोत्सर्गेतुचतुरोभोजनान्तेतुषोडश ॥

अर्थ-मलपरित्यागके पश्चात् इस मनुष्यको १२ कुल्ले करने और केवल मूत्रके त्यागमें ४ कुल्ले एवं भोजन करके १६ कुल्ले करने चाहिये ।

गरमजलके कुल्ले ।

सुखोष्णोदकगण्डूषः कफारुचिमलापहः ।
दन्तजाड्यहरश्चापि मुखलाघवकारकः ॥

अर्थ-सुखोष्णोदक अर्थात् कुछ गरम जलके कुल्ले करनेसे कफ [वात] अरुचि, मुखका मैल, दांतोंका जिकडना तथा मुखको हलका करनेवालाहै [चिकना करेहै और मुखके समस्त दोष दूर करे] बहुत गरम जलके कुल्ले करना निषेधहै ।

कुल्लाकरना निषेध ।

विषमूर्च्छामदार्त्तानांशोषिणांरक्तपित्तिनाम् ।
कुपिताक्षिमलक्षीणरूक्षाणांसनशस्यते ॥

अर्थ-विष, मूर्च्छा, मद्यसे पीडित, शोषी, रक्तपित्ती, नेत्ररोगी, मलक्षीण तथा रूक्ष रोगी इनको कुल्ला नहीं करना चाहिये । परंतु भावमिश्रके मतसे यह निषेध गरमजलकाहै ।

मुखप्रक्षालन ।

मुखप्रक्षालनंशीतपयसारक्तपित्तजित् । मुखस्यपीडिकाशोषनीलकाव्यङ्गनाशनम् ॥ कुर्याद्वापिकदुष्णेनपयसास्य विशोधनम् । कफवातहरं स्निग्धंमुखशोथविनाशनम् ॥

अर्थ-शीतल जलसे मुखका धोना रक्तपित्त, मुहांसे, मुखशोष, नीलिका रोग, और झांई इनको नाशकरे तथा गरम जलसे मुखप्रक्षालन करना कफवातको हरण करे, मुखकी सूजन नाश करे और स्निग्धहै ।

नस्यविधि तथा गुण ।

कटुतैलादिनस्यार्थेनित्याभ्यासेनयोजयेत् । प्रातः श्लेष्मणि मध्याह्नेपित्तेसायंसमीरणे ॥ सुगन्धिवदनाः स्निग्धनिःस्वना विमलेन्द्रियाः । निर्वलीपलितव्यङ्गा भवेयुर्नस्यशीलिनः ॥

अर्थ-नस्यके अर्थ कडुआ तेल आदिकी नस्यका सदैव अभ्यास रक्खे वह कफके रोगमें प्रातःकाल, और पित्तकी व्याधिमें मध्याह्नसमय, वातके रोगमें सायंकालको नस्य देनी चाहिये, इसप्रकार नस्य लेनेसे मुखमें सुगंधी आवे । सुंदर सुस्वर भाषण, और इन्द्रियोंकी स्वच्छताहो, तथा उस मनुष्यको वली (गुजलट) और पलित (सपेदबाल) और व्यंगरोग कदाचित् नहीं होते ।

अञ्जन ।

सौवीरमंजनंनित्यंहितमक्ष्णोस्ततोभजेत् ।
लोचने भवतस्तेन मनोज्ञे सूक्ष्मदर्शने ॥

अर्थ-सौवीराञ्जन अर्थात् सपेदसुरमा नेत्रोंको सदैव हितहै, अतएव नित्य लगाना चाहिये सपेद सुरमाके लगानेसे नेत्र सुंदर और सूक्ष्मवस्तुदर्शक होतेहैं ।

स्रोतोञ्जन ।

स्रोतोञ्जनंमतंश्रेष्ठंविशुद्धंसिन्धुसम्भवम् । दृष्टेः कण्डूमलहरं दाहक्लेदरुजापहम् ॥ अक्ष्णोरूपावहंचैवसहतेमारुतातपौ । नेत्ररोगानजायन्तेतस्मादञ्जनमाचरेत् ॥

अर्थ-सिंधुदेशमें उत्पन्न हुआ जो शुद्ध काला सुरमा वह नेत्रकी खुजली मल, दाह, और क्लेद आदि पीडाको दूर करे, नेत्रोंको शोभित करे, तथा इसके लगानेसे नेत्र पवन और धूपको सहनशील होतेहैं तथा इसके लगानेसे कोई नेत्ररोग नहीं होते अतएव अंजन अवश्य लगाना चाहिये । यह विना शोधेभी लगावे तोभी कुछ अवगुण नहीं करे । कोई कोई औषधोंका बना कज्जल लगातेहैं ।

सुरमालगानानिषेध ।

रात्रौजागरितः श्रान्तश्छर्दितोभुक्तवाँस्तथा ।
ज्वरातुरः शिरःस्नातो नाक्ष्णोरञ्जनमाचरेत् ॥

अर्थ–रात्रिमें जगाहुआ, थका, वमन होनेके उपरांत, भोजनानंतर, ज्वरी, मस्तकसे स्नान कराहो, ऐसे मनुष्योंको सुरमा नहीं लगाना चाहिये ।

औषधंचात्रसेवेतसद्वैद्यप्रतिपादितम् ।
जातरोगनिवृत्त्यर्थमाग्नेयंबलवर्द्धनम् ॥

अर्थ–तदनंतर उत्तम वैद्यकी बनाई अथवा बताई हुई रसायन आदि औषधउत्पन्न रोगकी निवृत्तीके अर्थ और जठराग्निके बल बढानेको सेवन करनी चाहिये । यदि रोग न होवे तोभी सेवन करे कि कदाचित् दोष दुष्ट होकर कोई रोग प्रगट न होवे ।

ताम्बूलभक्षण ।

ताम्बूलंभक्षयेत्पश्चाद्द्विजशोभंतुशोभनम् ।
तीक्ष्णोष्णंकफवातघ्नंमुखवैशद्यकारकम् ॥

अर्थ–इसप्रकार हाथ, मुख धोयके पश्चात् तांबूल भक्षण करे अर्थात् बीडी खाय, यह दांतोंको सुन्दर करे तीक्ष्णहै । उष्णहै । कफवातको हरण करे तथा मुखको स्वच्छकरेहै । विशेषविधि भोजनके प्रकरणमें कहेंगे ।

ततोऽधिकारिणः सर्वैस्वाधिकारेषु योजयेत् ।

अर्थ–तदनंतर जिसका जो अधिकारहै उसको उसी उसी कार्यपर नियुक्त करे अर्थात् जिसको झाडूका अधिकारहै उसको झाडूपर, जिसको जलपर हो उसको जलपर जिसको रसोईका हो उसको रसोईपर जिसको हिसाव किताबका हो उसको हिसाव किताबपर सावधान करने चाहिये ।

क्षौरकृत्य ।

पंचरात्रान्नखश्मश्रुकेशरोमाणिकर्त्तयेत् । केशश्मश्रुनखादीनांकर्त्तनंसम्प्रसाधनम् ॥ पौष्टिकंधनमायुष्यंशौचकान्तिकरंपरम् ।

---

१ क्षौरकरानेकामुहूर्त्त । दन्तक्षौरनखक्रियात्रविहिताचौलोदितेवारभेपातंग्याररवीन्विहायनवमंघस्रं चसंध्यांतथा । रिक्तांपर्वनिशांनिराशनवनग्रामप्रयाणोद्यतस्नाताभ्यक्तकृताशनैर्नहिपुनःकार्याहितप्रेप्सुभिः ॥ राजकार्यनियुक्तानांनटानांरूपजीविनाम् । श्मश्रुरोमनखच्छेदेनास्तिकालविशोधनम् ।

अर्थ-पांच पांच दिनके अनंतर नख, मूंछ, डाढी और मस्तकके बाल कटाने चाहियें, अर्थात् हजामत बनवानी चाहियें, केश, डाढी, मूंछ और नखोंका कटाना शोभाकारकहै, पुष्टिकर, धन, आयुष्य, शौच और कांतिकारकहै ।

नासिकाके बाल उखाडनेका निषेध ।

उत्पाटयेन्नलोमानिनासायांतुकदाचन ।
तदुत्पाटनतोदृष्टेर्दौर्बल्यंत्वरयाभवेत् ॥

अर्थ-नासिकाके बाल कदाचित् न उखाडे क्योंकि नासिकाके बाल उखाडनेसे दृष्टि शीघ्र मारी जातीहै ।

केशपाशेप्रकुर्वीतप्रसाधन्याप्रसाधनम् ।
केशप्रसाधनं केश्यं रजोजन्तुमलापहम् ॥

अर्थ-कंगेसे वा (कंघी) से बालोंको सुधारने चाहियें, केशोंका प्रसाधन बालोंका उत्तम करे तथा रज (धूल) जंतू (जूंआ-लीक) और मलको दूर करेहै ।

दर्पण देखना ।

आदर्शालोकनंप्रोक्तंमाङ्गल्यंकान्तिकारकम् ।
पौष्टिकं बल्यमायुष्यंपापालक्ष्मीविनाशनम् ॥

अर्थ-प्रातःकाल दर्पण (आईना) देखना मंगल और कांतिकारकहै; पुष्टि, बल और आयुकरहै । तथा पाप और अशोभाका नाशकहै ।

व्यायाम (दंडकसरत) के गुण ।

लाघवंकर्मसामर्थ्यंविभक्तघनगात्रता । दोषक्षयोऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते ॥ व्यायामदृढगात्रस्यव्याधिर्नास्तिकदाचन । विरुद्धं वाविदग्धं वा भुक्तंशीघ्रं विपच्यते ॥ भवंति शीघ्रं नैतस्यदेहेशिथिलतादयः । नचैनंसहसाक्रम्यजरासमधिरोहति । न चास्तिसदृशंतेनकिञ्चित्स्थौल्यापकर्षकम् । ससदागुणमाधत्तेबलिनांस्निग्धभोजिनाम् ॥ वसन्ते शीतसमये सुतरांसहितोमतः । अन्यदापिचकर्त्तव्योबलार्द्धेनयथाबलम् ॥

अर्थ–प्रातःकाल दंडकसरत और कुश्ती लडनेसे देहमें लघुता, कर्म करनेकी सामर्थ्य, देहका सौष्ठव और दृढता तथा शैथिल्य निवारण होताहै । दोष (वातपित्तकफ) क्षय, और जठराग्निकी प्रबलता होती है व्यायाम करके दृढगात्र जिसके ऐसे पुरुषको रोग कदाचित् नहीं होते और विरुद्धआहार तथा विदग्धाजीर्णमें भोजन कराहुआ भी शीघ्र पाचन होवे, नियमितरूप व्यायाम करनेसे शीघ्र देहमें शैथिल्य तथा सहसा जरा (बुढापा) अवस्था नहीं प्राप्त होवे व्यायामके समान स्थौल्य (मोटापन) नाशक दूसरा अन्य उपाय नहीं है । अर्थात् यही स्थूलताको दूर करताहै बलवान् तथा स्निग्ध भोजन करनेवाले इनको सदैव गुणकारीहै । व्यायाम वसंतऋतुमें तथा शीतकालके दिनोंमें विशेष उपकारी होताहै । अन्य (ग्रीष्मादि) ऋतुमेंभी व्यायाम करे परंतु जिसमें जितना बल होवे उसका बलार्ध अर्थात् अर्द्धशक्ति करनी चाहिये । गरमकी ऋतुमें संपूर्ण बलयुक्तव्यायाम करनेसे बलक्षयादि अनेक प्रकारके रोग प्रगट होतेहैं ।

बलार्द्धके लक्षण ।

हृदयस्थोयदावायुर्मुखंशीघ्रंप्रपद्यते । मुखं च शोषंलभेतद्ब-
लार्द्धस्यलक्षणम् ॥ किंवाललाटेनासायांगात्रसंधिषुकक्षयोः ।
यदासंजायतेस्वेदोबलार्द्धंतुतदादिशेत् ॥

अर्थ–हृदयकी वायु जिस समय मुखमें प्राप्त हो अर्थात् जल्दी जल्दी श्वास चलने लगे और मुख सूखने लगे तो बलार्द्धके लक्षण जानने । अथवा ललाट, नासिका, देह और संधि, अथवा, गात्रसंधि और काख इनमें पसीने आयजावें उसको बलार्द्ध कहते हैं ।

व्यायामवर्जित मनुष्य ।

भुक्तवान्कृतसम्भोगःकासीश्वासीकृशः क्षयी ।
रक्तपित्तीक्षती शोषीनतं कुर्यात्कदाचन ॥

अर्थ–भोजन करेहुएको, स्त्रीसंगके पश्चात, खांसी, श्वासी, कृश, क्षयी, रक्तपित्ती, क्षत, (व्रण) और शोष (धातुशोषी) इतने रोगियोंको व्यायाम करना निषेधहै ।

अतिव्यामकरनेसे उपद्रव ।

अतिव्यायामतःकासोज्वरश्छर्दिःश्रमःक्लमः ।
तृष्णाक्षयः प्रतमकोरक्तपित्तश्च जायते ॥

अर्थ-अत्यंत दंडकसरत कुश्ती लडनेसे खांसी, ज्वर, वमन, परिश्रम, प्यास, क्षय, प्रतमक, श्वास, और रक्तपित्त इत्यादि संपूर्ण रोग उपस्थित होते हैं ।

अभ्यंगविधि ।

अभ्यङ्गङ्कारयेन्नित्यं सर्वेष्वङ्गेषुपुष्टिदम् ।
शिरःश्रवणपादेषुतंविशेषेणशीलयेत् ॥

अर्थ-नित्य संपूर्ण देहमें तेलका मालिश करे, उसमेंभी मस्तक, कान और पैरोंमें अच्छी रीतिसे मर्दन करे । तेल मालिश करनेसे संपूर्ण अंग पुष्ट होते हैं ।

पिष्टाद्दशगुणंमांसंमांसाद्दशगुणंपयः ।
पयसोष्टगुणंतैलंखादयेन्नतु मर्दयेत् ॥

अर्थ-पिष्टपदार्थसे दशगुना बल मांसमें है मांससे दशगुणा दूधमें, दूधसे आठ गुणाबल तेलमें है इसीसे तैलको खाय नहीं किंतु मालिश करे ।

तैलाभ्यंगमें श्रीमतिका प्रमाण ।

रविस्तापंकान्तिवितरतिशशीभूमितनयोमृतिंलक्ष्मीं सौम्यः सुरपतिगुरुर्वित्तहरणम् । विपत्तिंदैत्यानांगुरुरखिलभोगानुगमनं नृणांतैलाभ्यङ्गात्सपदिकुरुतेसूर्यतनयः ॥

अर्थ-रविवारको तेल लगानेसे ज्वर, चंद्रको कांति, मंगलको मृत्यु, बुधवारको लक्ष्मीप्राप्ति, बृहस्पतिवारको धननाश, शुक्रको विपत्ति और शनिवारको तेल लगानेसे मनुष्योंको अखिल भोगोंकी प्राप्ति होतीहै ।

वर्जित वारका परिहार ।

सार्षपं गन्धतैलञ्चयत्तैलंपुष्पवासितम् ।
अन्यद्रव्ययुतंतैलं नदुष्यतिकदाचन ॥

अर्थ-सरसोंका तेल पुष्पवासित (फुलेल आदि) और गंधतेल (अगर, हिना, अंबर मुष्क संदल आदिके अतर) अथवा पुष्पवासित (गुलाव, केवडा, आदिका अतर) तथा अन्यद्रव्य मिला हुआ तेल, अर्थात (नारायण तेल, प्रसारणी तेल और चंदनादि तेल) ए तेल दूषित नहींहैं इनको वर्जित वारमेंभी लगावे तो दोष नहीं है परंतु देहमें तेल या फुलेलही लगाना हितकारी कहाहै ।

---

१ मंजिष्ठयाव्याघ्रनखेनशुक्त्यात्वचासकुष्ठेनरसेनचूर्णः । तैलेन युक्तोर्कमयूखतप्तः करोतिसंश्चंपकगन्धतैलम् ॥ इति सुगंधितैलम् ।

तैलमालिसके गुण ।

अभ्यङ्गोवातकफहृच्छ्रमंशांतिंबलंसुखम् ।
निद्रावर्णमृदुत्वायुः कुरुतेदृढपुष्टिकृत् ॥

अर्थ–अभ्यंग करना वात कफको हरण करे परिश्रम दूर होवे शांति, बल, सुख, निद्रा लाताहै । और वर्णको उज्ज्वल करे । देहको नम्र करे । और आयु दृढ तथा पुष्टिहोतीहै ।

मस्तकमें तेल डालनेके गुण ।

अभ्यङ्गः शीलितोमूर्ध्निसकलेन्द्रियतर्पणः । दृष्टिपुष्टिकरोहन्तिशिरोभूमिगतान्गदान् ॥ केशानांबहुतांदाढर्यंमृदुतांदीर्घतांतथा । कृष्णतांकुरुतेकुर्य्याच्छिरसःपूर्णतामपि ॥

अर्थ–मस्तकमें तेल डालकर मालिश करनेसे समस्त इन्द्रियोंकी तृप्ति होवे, दृष्टिको अर्थात् देखनेकी शक्तिको पुष्ट करे, शिरोभूमिगत रोगोंका ध्वंस, बालोंकी बाहुल्यता, दृढता, नम्रता, लंबे, तथा कालेहों । और मस्तकमें पूर्णता इत्यादि गुण होते हैं ।

कानोंमें तेल डालनेके गुण ।

नकर्णरोगोनमलोनचमन्याहनुग्रहः । नोच्चैःश्रुतिर्नबाधिर्य्यं स्यान्नित्यंकर्णपूरणात् ॥ रसाद्यैःपूरणंकर्णेभोजनात्प्राक्प्रशस्यते । तैलाद्यैः पूरणंकर्णे भास्करेऽस्तमुपागते ॥

अर्थ–कानोंमें नित्यप्रति तेल डालनेसे कभी कानके रोग नहींहों, तथा कानमें मैल, मन्यानाडीका जिकडना ठोडीका जिकडना, ऊंचा सुनना, तथा बेहरापना, ए रोग कदाचित् नहीं होते हैं । यदि कानमें रसादि डालने हों तो प्रातःकाल भोजनके पूर्व डाले और तेल रात्रिमें डालना कहाहै ।

पादाभ्यंग ।

पादाभ्यङ्गस्तुतत्स्थैर्यंनिद्रादृष्टिप्रसादकृत् । पादसुप्तिश्रमस्तम्भसंकोचस्फुटनप्रणुत् ॥ व्यायामक्षुण्णवपुषंपद्भ्यांसंमर्दितंतथा।व्याधयोनोपसर्पंतिवैनतेयमिवोरगाः॥ रोमकूपशिराजालधमनीभिःकलेवरम् । तर्पितंबलमाधत्तेस्नेहयुक्ताऽवगाहने ॥ अद्भिःसंसिक्तमूलानांतरूणांपल्लवादयः । वर्धंते च तथानॄणांस्नेहसंसिक्तधातवः ॥

अर्थ-पैरोंमें तेलकी मालिश करनेसे पैर स्थिर होतेहैं, निद्रा और दृष्टिकी प्रसन्नता करेहैं, तथा पैरोंका सोना, श्रम, स्तंभ, संकोच और फटना दूरहो । व्यायाम, (दंड-कसरत) करके श्रमित और पैरोंमें तेलका मालिश करनेवाले मनुष्यके पास रोग इसप्रकार नहीं आते जैसे-गरुडके पास सर्प नहीं आते । अनुवासनप्रयुक्त तेल रोमकूप शिराजाल और धमनीकरके संपूर्ण देहके भीतर प्रवेशहोकर देहकी तृप्ति और बलवृद्धिकरे हैं । अतएव स्नानके समय देहमें तेल लगाना उचित है । जैसे जडमें जल सींचनेसे वृक्षके डाली, पत्ते आदि बढते हैं उसीप्रकार अनुवासनवस्तिद्वारा मनुष्यके धातु (अंग) बढते हैं ।

तरुणज्वरीह्यजीर्णीचनाभ्यक्तव्यः कदाचन । तथाविरक्तोवान्तावानिरूढोयश्चमानवः ॥ पूर्वयोःकृच्छ्रताव्याधेरसाध्यत्वमथापिवा । शेषाणां तदिहप्रोक्तावह्निसादादयोगदाः ।

अर्थ-तरुणज्वरमें अजीर्णमें तथा वमनविरेचन और निरूहणक्रिया करनेके पश्चात् स्नेहाभ्यंग अर्थात् तेलकी मालिश करना निषेध है नवज्वरमें तथा अजीर्णमें अभ्यंग करनेसे कृच्छ्रसाध्य वा असाध्य पीडा प्रगट होती है उसीप्रकार शेषोक्त अर्थात् वमन-विरेचन और निरूहणक्रियावालोंको तेल लगानेसे अग्निमांद्य आदि रोग होते हैं ।

उवटना करनेके गुण ।

उद्वर्त्तनङ्कफहरंमेदोघ्नंशुक्रदम्परम् ।
बल्यंशोणितकृत्कान्तित्वक्प्रसादमृदुत्वकृत् ॥

अर्थ-तेल लगानेके पश्चात् उद्वर्त्तन (उवटना) करना कफ और मेदको हरण करे है और शुक्रकी वृद्धि बलोत्पत्ति रक्तवृद्धि तथा त्वचाको उज्ज्वल और नम्र करे है [आटा हलदीका चूर्ण चिरोंजी आदिको एक कर जलमिलाय प्रथम लेपकर पीछे छुडाय डालते हैं उसको उवटना कहते हैं] इसीप्रकार औरभी जानो ।

मुखलेपाद्दृढंचक्षुःपीनोगण्डस्तथाननम् ।
कान्तमव्यङ्गपिडकंभवेत्कमलसन्निभम् ॥

अर्थ-मुखलेप (तेल लगाय फिर उवटना करने) से नेत्र दृढ हों गाल पुष्ट हों तथा मुख कान्तियुक्त झांई और मुहांसे रहित कमलके समान सुंदर होवे ।

स्नान ।

दीपनंवृष्यमायुष्यंस्नानमोजोबलप्रदम् ।
कण्डूमलश्रमस्वेदतन्द्रातृड्दाहपापनुत् ॥

१ चूर्णं कुङ्कुमुरानागकेशराणां घृतान्वितम् । मधुपीतं करोत्यंगं सौरभं सततं नृणाम् ॥

अर्थ–स्वस्थ और बलवान् पुरुषको नित्यप्रति स्नान करना चाहिये, स्नान करनेसे अग्नि दीप्त हो, तेजकी वृद्धि, आयुप्रतिपालन, बलोत्पत्ति और वृष्य है। तथा खुजली, मैल, परिश्रम, पसीने, तन्द्रा, प्यास, दाह और पाप [दुष्टता] इनको दूर करे हैं।

स्नानसे जठराग्नि कैसे दीप्त होती इसलिये कहतेहैं।

बाह्यैश्चसेकैः शीताद्यैरुष्णान्तर्यातिपीडितः ।
नरस्यस्नातमात्रस्यदीप्येततेनपावकः ॥

अर्थ–शीतल जलादि करके देहके बहिर्भाग सिक्त होनेसे देहकी गरमी प्रतिहत (अर्थात् बाहर निकलनेसे रुककर) देहके भीतर प्रवेश कर जठराग्निको प्रबल करे इसीसे स्नानानंतर क्षुधा लगतीहै।

शीतल और उष्ण जलस्नान।

शीतेनपयसास्नानंरक्तपित्तप्रशान्तिकृत ।
तदेवोष्णेनतोयेनबल्यंवातकफापहम् ॥

अर्थ–शीतल जलसे स्नान रक्तपित्तको शांति करेहै। वही स्नान गरम जलसे करे तो बल करे और वातकफको दूर करेहै। परंतु आति शीतल देश (काश्मीर काबुल आदिमें) शीतल जलसे स्नान सर्वथा त्याज्यहै और गरम जलसे कभी कभी करना चाहिये। परंतु अति शीतल और अत्यंत गरम जलसे स्नान करना सर्वत्र वर्जितहै।

उष्ण जलके गुणागुण।

शिरः स्नानमचक्षुष्यमत्युष्णेनाम्बुनासदा ।
वातश्लेष्मप्रकोपेतुहितंतच्चप्रकीर्तितम् ॥

अर्थ–आति गरम जलसे मस्तकस्नानकरना नेत्रोंको और बालोंको [illegible] "अत्युष्णेनोत्तमाङ्गस्य बलहृत्केशचक्षुषाम्" परंतु वातकफके [illegible] मस्तकपर डालना हित कहाहै।

चार वस्तु मनुष्यको सदैव पथ्य हैं।

अशीतेनाम्भसास्नानंपयःपानंनवाः [illegible] ।
एतद्वोमानवाः पथ्यंस्निग्धमल्पं च [illegible] ॥

---

१ सूक्ष्मैलाकस्तूराकुष्ठत्वक्पत्रचंदनैः सुदन्त् । [illegible]

अर्थ-हे मानवहो ! गरम जलसे स्नान, दुग्धपान, तरुण स्त्रीसे रमण, तथा स्निग्ध और अल्प भोजन ये चार वस्तु सदैव हितहैं ।

हरिश्चन्द्रः ।

यः सदामलकैः स्नानं करोति सविनिश्चितम् ।
वलीपलितनिर्मुक्तोजीवेद्वर्षशतंनरः ॥

अर्थ-जो नित्य आमलेके कल्कको देहमें लगाकर स्नान करताहै वह वलीपालितसे निर्मुक्तहो सौवर्ष जीवे ।

स्नाननिषेध ।

स्नानंज्वरेतिसारेचनेत्रकर्णानिलार्त्तिषु ।
आध्मानपीनसाजीर्णभुक्तवत्सुचगर्हितम् ॥

अर्थ-ज्वर, अतिसार, नेत्ररोग, कर्णरोग, बादीका रोग, अफरा, अजीर्ण और भोजनके उपरांत स्नान करना वर्जितहै ।

अङ्गमार्जन ।

स्नानस्यानन्तरंसम्यग्वस्त्रेणतनुमार्ज्जनम् ।
कान्तिप्रदंशरीरस्यकंडूत्वग्दोषनाशनम् ॥

अर्थ-स्नान करके अंगोछेसे अच्छी तरह देह पूछना शरीरमें कांति करै और खुजली तथा त्वचाके दोष नाश करे ।

सितंमांजिष्ठपीतंचनीलंब्राह्मणतः क्रमात् । अष्टहस्तंनवंश्वेतं
सदशंनान्यधारितम् । अहतंतद्विजानीयात्सर्वकर्मसुपावनम् ॥

अर्थ-सफेद लाल पीला और नीला वस्त्र क्रमसे ब्राह्मणादिकोंको धारण करना चाहिये अर्थात् ब्राह्मण सफेद क्षत्रिय लाल वैश्य पीला और शूद्रको नीले रंगका वस्त्र धारण करना चाहिये तथा आठ हाथका नवीन सफेद विना फटा और किसी दूसरेने धारण न कराहो उसको अहतवस्त्र कहतेहैं, यह पवित्रवस्त्र सर्व कर्ममें धारणकरना चाहिये ।

ऋतुमें वस्त्रधारण ।

शीतकालेतुकौशेयंकषायंधर्मवासरे ।
वर्षासुश्वेतवस्त्रंस्यादेवंवस्त्राणिधारयेत् ॥

अर्थ-शीतकालमें रेशमी वस्त्र, गरमीमें गेरुआ वस्त्र, और वर्षामें सपेद वस्त्र धारण करना चाहिये ।

---

१ त्वक्कुष्ठरेणुनलिकास्पृक्कारसतगरवालुकैस्तुल्यैः । केशरपत्रविमिश्रैर्नरपतियोग्यंशिरः स्नानम् ॥

रेशमी वस्त्र।

कौशेयं[1]चित्रवस्त्रञ्चरक्तवस्त्रंतथैवच ।
वातश्लेष्महरंतत्तुशीतकालेविधारयेत् ।

अर्थ–कौशेय (रेसमी पीताम्बर, सनिया टसर आदि) रंगीन वस्त्र वा चित्रविचित्र रंगका वस्त्र अथवा लाल वस्त्र ये वातकफनाशकहैं अतएव शीत कालमें धारण करने चाहिये, कोई चित्रवस्त्रके स्थानमें ऊनीवस्त्र बनात, लोई, धुसा, शाल, कंबल आदिका ग्रहण करतेहैं ।

कषायवस्त्र ।

मेध्यंसुशीतंपित्तघ्नंकषायंवस्त्रमुच्यते ।
तद्धारयेदुष्णकालेतत्रापिलघुशस्यते ॥

अर्थ–पवित्र, शीतल और पित्तनाशक कषायवस्त्र (कोकई वा गेरुआ रंगका) होताहै उसको गरमियोंमें धारण करे परंतु कोकई वा गेरुआ वस्त्रभी बहुत पतला होना चाहिये ।

सपेदवस्त्र ।

शुक्लंतुशुभदंवस्त्रंशीतातपनिवारणम् ।
नचोष्णंनचवाशीतंतत्तुवर्षासुधारयेत् ॥

अर्थ–शुभ्र (सपेद) वस्त्र शीत, गरमीको निवारण करताहै, और यह न गरमहै न शीतलहै अतएव उसको वर्षाऋतुमें धारण करना चाहिये । हमारी समझमें तो यह आताहै कि, सदैव सपेद वस्त्र धारण करना चाहिये ।

नवीन और उज्ज्वल वस्त्रकी प्रशंसा।

यशस्यंकाम्यमायुष्यं श्रीमदानन्दवर्द्धनम् ।
त्वच्यंवशीकरं रुच्यंनवानिर्मलमम्बरम् ॥

अर्थ–नवीन वस्त्र यशकर्त्ता, कामोद्दीपक, आयुष्यकर्त्ता, लक्ष्मी और आनंदका बढानेवाला, त्वचाको हितावह, वशीकरणकर्त्ता और रुचि प्रगट करे ये नए वस्त्र और ऊजले वस्त्रके गुणहैं । इसीसे सब मनुष्योंको ओढना बिछौना और पहननेमें उज्ज्वलवस्त्र रखना हितकारीहै[2] ।

---

१ पट्टवस्त्रंत्रिदोषघ्नं त्वच्यंचानन्दकीर्तिदम् । वशीकरं पवित्रं च शुक्रपुष्टिबलप्रदम् ।

२ स्त्रीधृतं वसनंशौर्यहानिदौर्भाग्यदायकम् । संधितंत्रुटितं चैव दग्धं चान्यधृतं तथा । दारिद्र्यकारकं प्रोक्तंरोगकृच्चनतंबुधैः ॥

मलिनवस्त्रकी निन्दा ।

कदापिनजनैः सद्भिर्धार्यमलिनमम्बरम् ।
तत्तुकण्डूकृमिकरंग्लान्यलक्ष्मीकरंपरम् ॥

अर्थ-बुद्धिमान् पुरुषोंको मलिन (मैला) कपडा कभी नहीं धारण करना चाहिये, क्योंकि मैलावस्त्र खुजली, कृमि, ग्लानि और अलक्ष्मी (दरिद्र वा अशोभा) को करता है, अर्थात् मैलसे खुजली होवे जुँए पडजावे जिसके पास जावे या बैठे उसको ग्लानि हो इसीसे धनकी अप्राप्ति होनेसे दरिद्री होवे है ।

कदाचित् कोई शंका करे कि, जिसके पास नवीन वस्त्र धारण करनेकी शक्ति न होवे वह क्या करे ? इसका यह उत्तर है कि, यदि जो गरीब है उसको पुराने वस्त्रही उज्वल रखने चाहिये धुलानेकी शक्ति न होवे तो आपही धोलिया करे ।

सुगन्धलेपन ।

कुंकुमंचन्दनंचापिकृष्णागरुविमिश्रितम् ।
उष्णंवातकफध्वंसिशीतकालेतदिष्यते ॥

अर्थ-केशर चंदन अथवा काली अगर मिला हुआ चंदन उष्ण और वात कफ नाशक है, अतएव इसको शीतकालमें लगाना चाहिये ।

चंदनंघनसारेणवालकेनचमिश्रितम् ॥
सुगंधिपरमंशीतमुष्णकालेप्रशस्यते ॥

अर्थ-कपूर और नेत्रवाला मिला चंदन सुगंधकारक परम शीतल है, अतएव इसको गरमीमें लगाना चाहिये ।

चन्दनंघुसृणोपेतंमृगनाभिसमायुतम् । नचोष्णंनचवाशीतंवर्षाकालेतदिष्यते ॥ गंधेनोद्वर्त्तनंचादौततोलेपंप्रकारयेत् ॥

अर्थ-केशर कस्तूरीमिला चंदन न गरम है न शीतल अर्थात् मध्यम है, इसीकारण इसको वर्षाकालमें लगाना शुभ है । इसप्रकार गंध लगाकर फिर लेप करे ।

चंदन लगानेके गुणागुण ।

अनुलेपस्तृषामूर्च्छादुर्गंधश्रमदाहजित् । सौभाग्यतेजस्त्वग्वर्णप्रीत्योजोबलवर्द्धनः ॥ स्नानानर्हमनुष्याणामनुलेपोऽपिनोहितः ॥

अर्थ—सुगंधानुलेपन तृषा, मूर्च्छा, दुर्गंध, श्रम, दाह, इनको नाश करे । और सौभाग्य (सुंदरता) तेज, त्वचाका रंग, प्रीति, ओज और बलको बढाताहै । जिन मनुष्योंको स्नान करना निषेधहै उनको चंदनादि अनुलेपन करनाभी निषेध है ।

संध्यावन्दनम् ।

कुलाचारंतुकुर्वीतसन्ध्योपासनमादृतः ।
सूर्योपास्तिंततःकुर्यादिष्टदेवस्यचार्चनम् ॥

अर्थ—स्नान करने और गंधधारणके अनंतर अपने कुलाम्नायके अनुसार संध्योपासनकर्म करना तदनंतर सूर्योपस्थान करे । इसप्रकार संध्या आदि पंचकर्मसे निवृत्त हो अपने इष्टदेवका आराधन करना चाहिये ।

इस जगे इतना हमको लिखना आवश्यकहै कि, कुलाचार वोही गिनाजायगा जो वेदविहित श्रौतस्मार्त कर्महो मद्य मांसभक्षी मातृगामी कौलधर्मको कुलाचार नहीं कहसक्ते क्योंकि यह तो कपोलकल्पित तांत्रिकोंने प्रजाको वर्णसंकर करनेके अर्थ और अपने सुखके लिये बनाय लियाहै हा खेद ! कि अपने स्वार्थको कैसे अधर्मके श्लोक रचकर शिवका नाम बदनाम इन दुष्टोंने कराहै । वेदमें लिखाहै कि "अहिंसापरमोधर्मः" परंतु ये दुष्ट इसवाक्यको काहेको मानेंगे हाय! ईश्वरने अन्न केवल मनुष्योंहीके भक्षणके लिये निर्माण कराहै, परंतु ये पामर शीघ्र कहदेतेहैं कि मांस मद्य सेवन करना वेदमें लिखाहै और झटपट कृत्रिम श्रुतिको बकने लगते हैं परंतु ऐसी श्रुति हमको आनादरणीयहै क्योंकि बुरीवस्तु सबकोही बुरीहै जैसे देखो मांस मद्य सेवन शास्त्रप्रमाणोंसे और युक्तिसे दुष्टही कहलातेहैं परंतु इन्होंने वे वस्तु शुभ मान रक्खीहै ।

कदाचित् कोई प्रश्न करे कि, तुम इनकी कहीहुई श्रुतियोंको अप्रमाण बतलातेहो इसका क्या प्रमाणहै ? तो उनको हम प्रत्यक्ष युक्ति प्रमाण यही देते हैं कि सर्व प्राणिमात्रसे पूछो कि असत्य, बोलना, चोरी करना, अन्याय करना, ये वस्तुउत्तमहै ? या बुरी है ? इसमें क्या हिन्दु क्या मुसलमान क्या ईसाई क्या बौद्ध क्या आर्य सब यही कहेंगे कि ये वस्तु पापरूप है, परंतु किसी झूठे अन्याई चोरने इन्ही वस्तुओंकी श्रुतिबनाकर कहीं तो आप उसको प्रमाण मानेंगे या अप्रमाण? इसीतरह शास्त्रसे और युक्तियोंसे मद्य मांस प्रत्यक्ष पापरूप सिद्धि होताहै, परंतु इन कौलरूप चोर मांसाहारी औरमातृगामियोंने जो जो श्रुति कपोलकल्पित बनाई है वो प्रमाण किसप्रकार हो सकती है; कदाचित् तुम कहोगे कि, फिर तुम्हारे पुरखे

क्यों मानते चले आते हैं तो हम यही कहेंगे कि, हमारे पुरखे उनको दुष्टही मानते आए हैं।जो चोरी करना उत्तम समझे वो चौर कर्ममें प्रवृत्त हुए और हम तथा औरभी सत्पुरुष उस चोरकर्मको महान् पापरूप समझते हैं अतएव हम सर्व सत्पुरुषोंसे प्रार्थना करतेहैं कि, अपने मूलरूप श्रौत स्मार्तकर्मसे विमुख मत हो [किमधिकं विद्वद्वरेषु]

ब्राह्मणादि पूजन ।

दत्वादानंचविप्रेभ्योगृह्णीयात्तेभ्यआशिषम् । देवगोविप्रवृद्धानांगुरूणांचैवपूजनम् ॥ आयुष्यंवृद्धिदंपुण्यमलक्ष्मीकलिनाशनम् ।

अर्थ-संध्यावंदनके अनंतर ब्राह्मणोंको यथाशक्ति दान देकर उन्होंसे आशीर्वाद ग्रहण करना चाहिये । देव, गो, ब्राह्मण, वृद्ध और गुरु (माता पिता तथा गायत्रीका उपदेश दाता आदि) इनका पूजन आयुको बढावे पुण्यकर और अलक्ष्मी तथा कलहका नाश करताहै ।

पुष्पधारण ।

सुपुष्पाणिसुगन्धीनिनित्यशीर्षेप्रधारयेत् । सुगंधिपुष्पपत्राणांधारणंकांतिकारकम् ॥ क्लेदायाससमुद्भूतस्वेददुर्गन्धनाशनम् । चक्षुष्यंदाहशमनंसौमनस्यंचजायते ॥

अर्थ-सुन्दर गुलाब आदिके सुगंधित पुष्पोंको नित्य मस्तकपर धारण करे तथा सुगंधित पुष्पपत्रोंका धारण कांतिकारक क्लेद परिश्रमसे प्रगट स्वेद और दुर्गंधिका नाशक है । नेत्रोंको हितकारी, दाहनाशक तथा पुष्पोंके धारणसे मन प्रसन्न होताहै । इसजगे पुष्पोंके कहनेसे पुष्पोंकी माला, हार, आदि जानने इनको यथायोग्य अंगमें धारण करे अर्थात् माला, वनमाला, हार आदिको कंठमें धारण करे गजरेको हाथोंमे, पुष्पोंके मुकट किरीट आदिको मस्तकपर धारण करे बहुतसे देशमें स्त्री फूलोंके कलीसे मस्तक गूथतीहै ।

पृथक् पुष्पोंके धारणमें योग ।

तीक्ष्णाग्रलुप्तंकेतक्याः कोमलंधारयेद्दलम् ।

अर्थ-तीखे अग्रभाग तोडकर कोमल केतकीका पत्र धारणकरे ।

जातीपुष्पंतथोवलाजाम्भजंकुटजंतथा । पाटलंचबृहत्पुष्पंवकुलंचंपकंतथा ॥ श्रीखंडंचैवगौलालंकस्तूर्य्यासहधारयेत् ।

अर्थ–चमेली, बेला, नारंगी, कुडा, गुलाव, कूजा, मौलसिरी, चंपा, चंदन, गुल्लाला इन पुष्पोंको कस्तूरीके साथ धारण करे । अर्थात् कस्तूर्याचंदन लगायकर इन पुष्पोंके हार आदि धारण करे इसीप्रकार सर्वत्र जानना ।

मन्दारमरुवंचैवनीलोत्पलकुमुद्वतम् ।
रक्तोत्पलंयूथिकां च कर्पूरैः सहधारयेत् ॥

अर्थ–मंदार, मरुआ, नीलकमल, कमोदनी, लालकमल और जुही इनपुष्पोंको कपूरके साथ धारण करे।

किसकालमें कौनसा पुष्प धारण करे ।

अस्नातैर्मल्लिकाधार्यासुस्नातैर्जातिविल्वजम् ।
अभ्यङ्गेकेतकीधार्या धार्यंचोत्पलकंसदा ॥

अर्थ–स्नानके पूर्व चमेलीका पुष्प धारण करे । और स्नान करके जुही तथा विल्वका पुष्प धारण करे । तैलादिकके अभ्यंगमें केतकीका पुष्प तथा कमलको सर्वकालमें धारण करना चाहिये ।

ग्रीष्मऋतुमें धारणीय पुष्प।

जातीकुन्दंचनैपालंश्रीखण्डंबिल्वमल्लिकम् । मकरन्देनसंयुक्तं शिरसाधारयेन्नरः ॥ सर्वाण्येतानितुल्यानिरसतोवीर्य्यतस्त-था । त्रिदोषशमनायैवसर्वकालेप्रधारयेत् ॥

अर्थ–पीली चमेली, कुंद, वासंती (नेवारी) चंदन, बेल, चमेली इन पुष्पोंको परागसहित मस्तकपर धारण करना चाहिये। ये संपूर्ण पुष्प रससे और वीर्यसे समान गुणवाले हैं । त्रिदोषनाशक हैं अतएव सर्वदा धारण करने चाहिये परंतु ग्रीष्मऋतुमें विशेषकरके धारण करे ।

शीतकालमें धारणीय पुष्प ।

केतकंबकुलंपुष्पंश्रीखंडंशतपत्रकम् । गौल्लालकंचंपकं च वातश्लेष्महरंपरम्॥उष्णवीर्यंचतत्प्रोक्तंशीतकाले प्रधार्यते ।

अर्थ–केतकी, मौलसिरी, चंदन, कमल, गुल्लाला और चंपा ये पुष्प वात कफका हरण करतेहैं और उष्णवीर्यहैं अतएव शीतकालमें धारण करने चाहिये ।

वर्षाकालमें धारणीय पुष्प।

श्रीवर्कंमरुवंचैवनीलोत्पलसवत्सकौ । कुब्जकंपाटलंचैवश्री-

खंडंचतथैवच ॥ नात्युष्णंनचवाशीतंसर्वदोषनिबर्हणम् । निर्मलंनेत्रदोषघ्नंवर्षाकालेप्रधारयेत् ॥

अर्थ–वेल, बक, मरुआ, नीलकमल, कुडा, कुब्जक, गुलाब वा (पाढर) और चंदन इनके पुष्प न बहुत शीतल और न बहुत गरमहैं. तथा सर्वदोषनाशक, निर्मल, नेत्रदोषनाशकहैं, इसीसे, वर्षाकालमें धारण करने चाहिये ।

प्रत्येकपुष्पधारणकी अवधि ।

षड्यामंजातिकुसुमंनैवारंद्विमुहूर्त्तकम् । त्रिरात्रमुत्पलंचैव पंचरात्रन्तुकेतकी ॥ द्विरात्रंशतपत्रञ्चअर्द्धरात्रंतुमाल्लिका । अहोरात्रंचंपकंतुयूथिकाद्विमुहूर्त्तकम् ॥ श्रीखंडमेकरात्रन्तु वकुलंमाधवींतथा । श्रीपर्णयावदाहारंतावत्कालंतुधारयेत् ॥ मन्दारमरुवंचैवदामनं च सुपाटलम् । यावत्कालंभजेद्गन्धं तावत्कालंप्रधारयेत् ॥

अर्थ–जाईका फूल ६ प्रहर, नीवारका ४ घडी, तीन रात्रि उत्पल (कमल) दो रात्रि शतपत्र (गुलाब) अर्द्धरात्र चमेली, एकदिनरात्र चंपा, ४ घडी जुही, एक रात्र चंदनका पुष्प, मौलसिरी माधवी (वसंती) और श्रीपर्ण इतने पुष्प जबतक सुहाय तबतक धारण करे। मंदार, मरुआ, दोना और पाढर इतने पुष्प जबतक सुगंध रहे तबतक धारण करे ।

पुष्पोंके पृथक् पृथक् गुण ।

त्रिदोषशमनीजातीमहादाघविनाशनी । सुगंधंदोषशमनंगौल्लालंपुष्पमुच्यते ॥ पित्तह्वद्विशदंचैवचक्षुष्यंचोत्पलंस्मृतम् । श्लेष्मवातप्रशमनमुष्णवीर्यंचनिर्मलम् ॥ पुष्पाणांप्रवरंचैवकेतकीपुष्पमुच्यते । ईषदुष्णंसुगन्धंचसुशीतंदृष्टिदायकम् ॥ शिरोभ्रमविनाशार्हंशतपत्रंसुशोभनम् । अधार्यंमल्लिकापुष्पंदृष्टिहानिकरंपरम् ॥ चंपकंवातशमनंचक्षुष्यंविशदं शुभम् । पाटलंचमहाशीतंश्लेष्मवातप्रवर्द्धनम् ॥ मंदाग्निपित्तदोषघ्नंकर्णव्याधिविनाशनम् । पाटलंधारयेद्यस्तुसम्पद्यासमन्वितम् ॥ ज्वरमूर्च्छापिपासघ्नमायुष्यंदाहनाशनम् ।

अर्थ—जाईका पुष्प त्रिदोष और घोर दाहनाशक है । गुल्लालेका पुष्प सुगंधवान् और दोषोंको शांति करे है । पित्तहरणकर्त्ता, सपेद और नेत्रोंको हित कफ वातका नाशक उष्णवीर्य और निर्मल ऐसा कमल जानना । सब पुष्पोंमें केतकीका पुष्प उत्तम है । कुछ उष्ण, सुगंधित, शीतल और दृष्टिको बढानेवाला है । मस्तकभ्रमको नाशक शतपत्र जानना चमेलीका पुष्प दृष्टिको हानि करे इसीसे उसे धारण न करे ॥ चंपाका फूल, वातनाशक, नेत्रोंको हितावह और शुभ है । पाटलका पुष्प अति शीतलहै । कफवातको बढानेवाला है तथा मंदाग्नि, पित्तके दोष और कानकी पीडाको दूर करेहै जो मनुष्य पाटलके पुष्पको धारण करताहै वह द्रव्यवान् होता है ज्वर, दाह, प्यास, मूर्च्छाको दूर करे और आयुको बढावेहै । पाटल नाम गुलाबकाभी है ।

ऋतुपरत्व पुष्पधारण ।

हेमन्तेशिशिरेचैवशतपत्रंतुशोभनम् । वसंतेकेतकीधार्याघर्मे नैपालमालती ॥ प्रावृट्सुपाटलंधार्यंचम्पकंशरदिस्मृतम् ।

अर्थ—हेमंत और शिशिरऋतुमें कमल धारण करे । वसंतऋतुमें केतकीका पुष्प, गरमियोंमें नेवारक पुष्प और मालतीका, चातुर्मास्यमें पाटलका पुष्प और शरदृतुमें चंपाका पुष्प धारण करना चाहिये ।

भूषणधारण ।

भूषणैर्भूषयेदङ्गंयथाविभवसारतः ।
शुचिसौभाग्यसंतोषदायकंकांचनंस्मृतम् ॥

अर्थ—यथाविभवके अनुसार भूषणोंसे अपने अंग भूषित करे तहां सुवर्णके भूषण (कटक कुंडल मुद्रिकादि) का धारण पवित्र, सुभगताकारक और संतोषदायक जानना ।

रत्नाभरण ।

ग्रहदृष्टिहरंपुष्टिकरंदुःस्वप्ननाशनम् ।
पापदौर्भाग्यशमनंरत्नाभरणधारणम् ॥

अर्थ—सूर्यादि नवग्रहोंकी क्रूरदृष्टिनाशक, पुष्टिप्रकाशक, दुःस्वप्नहरणकर्त्ता, पाप दुर्भाग्य शमनकर्त्ता ऐसा रत्नोंका भूषण (अर्थात् हीरा पन्ना मोती आदि रत्नजटित गहना जानना)

मोतीके हारोंके नाम ।

सुरभूषणंलतानांसहस्रमष्टोत्तरंचतुर्हस्तम् । इन्द्रच्छन्दोना-

भाविजयच्छन्दस्तदर्धेन ॥ १ ॥ शतमष्टयुतंहारोदेवच्छन्दोह्यशीतिरेकयुता।अष्टाष्टकोऽर्धपारो रश्मिकलापश्चनवषट्कः ॥ २ ॥ द्वात्रिंशतातुगुच्छोविंशत्याकीर्तितोऽर्धगुच्छाख्यः । षोडशभिर्माणवकोद्वादशभिश्चार्धमाणवकः ॥ ३ ॥ मन्दरसंज्ञोऽष्टाभिः पंचलताहारफलकमित्युक्तम् । सप्तविंशतिमुक्ताहस्तोनक्षत्रमालेति ॥ ४ ॥ अंतरमणिसंयुक्तामणिसोपानंसुवर्णगुलिकैर्वा ॥ तरलकमणिमध्यंतद्विज्ञेयंचाटुकारमिति ॥५॥ एकावलीनामयथेष्टसंख्याहस्तप्रमाणामणिविप्रयुक्ता । संयोजिता या मणिना तुमध्येयष्टीतिसा भूषणविद्भिरुक्ता ॥ ६ ॥

अर्थ-एक हजार एकसौ आठ ११०८ लडका और चार हाथ लंबा मोतियोंका हार देवताओंके लिये बनाते हैं । उस हारको इन्द्रछन्द कहतेहैं । इससे आधे लडका अर्थात्५०४लडके हारको विजयछन्द कहते हैं। १०८लडका और२ हाथ लंबा अथवा ८१ लडका और २ हाथ लंबे हारको देवछन्द कहतेहैं । ६४ लडका हार अर्धसंज्ञकहै ५४ लडका हार रश्मिकलापसंज्ञक जानना । ३२ लडका हार गुच्छसंज्ञक २० लडका हार अर्द्धगुच्छक १६ लडका हार माणवकसंज्ञक ८ लडका हार मंदरसंज्ञक ५ लडका हार फलकसंज्ञक २७ मोतियोंका और १ हाथ लंबे हारको नक्षत्रमालासंज्ञक कहतेहैं । उसी नक्षत्रमालाके बीचबीचमें रत्नहो या सुवर्णके दाने हो तो उसे मणिसोपानसंज्ञक कहतेहैं । और इसीके बीचमें मणि (धुकधुकी) होवे तो उसीको चाटुकार कहते हैं । जिससे अपनी इच्छानुसार मोतियोंसे एक हाथीकी बनाई हो उस मालाको एकावलीनामक कहतेहैं । यदि इसीमें हीरापन्नाआदि मणि पडेहोवे तो उसको भूषणके जाननेवालोंने यष्टीसंज्ञक कहाहै । इसीप्रकार किरीट, मुकट, कडे, बाजुबंद, चौकी, वेढा, मूँदरी, पहुची, कोंधनी (तागडी) जंजीर, तथा स्त्रियोंके भूषण बनानेकी विधि और उनके धारणके शुभाशुभ फल स्वर्णकारोंको और रत्नपरीक्षक (जोहरी) योंके वास्ते जो ऋषियोंने ग्रंथ बनाए उनमें विस्तारपूर्वक लिखेथे परंतु कालके परिवर्त्तन होनेसे ६४ कलाओंके सब ग्रंथ नष्ट होगए हैं । केवल पेट भरनेके ग्रंथ ज्योतिष वैद्यक और पुराणआदि ब्राह्मणोंको याद हैं । चौसठ कलाओंके नाम भागवत दशमस्कंध पूर्वार्धमें ४५ अध्यायकी टीकामें और शुक्रनीतिमें लिखेहैं सो देखलेवे ।

नवग्रहोंके रत्न ।

माणिक्यंतरणेः सुजात्यममलंमुक्ताफलंशीतगोर्माहेयस्यच विद्रुमोनिगदितः सौम्यस्यगारुत्मतम् । देवेज्यस्य च पुष्परागमसुराचार्य्यस्यवज्रंशनेर्नीलंनिर्मलमन्ययोश्चगदितंगोमेदवैदूर्य्यके ॥ १ ॥

अर्थ–माणिक माणि सूर्यकी, मोती चंद्रमाका, मूंगा मंगलका, पन्ना बुधका, बृहस्पतिका पुखराज, शुक्रका हीरा, शनिकी नील, राहूकी गोमेद और केतुकी वैदूर्य मणि कहीहै । इसप्रकार रत्नधारणसे उसी उसी ग्रहकी शुभ दृष्टि होतीहै ।

नवग्रहोंके प्रसन्नार्थ नवमूलधारण ।

मूलंधार्यंत्रिशूल्याः सवितारिविगुणेक्षीरिकामूलमिन्दौजिह्वादेभूमिपुत्रेरजनिकरसुतेवृद्धदारोश्चमूलम् । भार्ङ्गीजीवेथशुक्रे भवतिशुभकरीसिंहपुच्छस्यमूलंविच्छोलंचार्कपुत्रेतमसिमलयजंकेतुदोषेऽश्वगन्धा ॥

अर्थ–सूर्यकी प्रसन्नार्थ बेलकी जड धारण करनी, चंद्रमाके लिये खिरनीकी जड, मंगलके लिये नागजिह्वाकी जड, बुधके प्रसन्नार्थ विधायरेकी जड, गुरुके अर्थ भारंगीकी जड, शुक्रके अर्थ अंडकी जड, शनिकी प्रसन्नतार्थ विच्छोल (विछुवा) की जड, राहुके चंदनकी जड और केतुदोष दूरकरनेको असगंधकी जड धारण करनी चाहिये । ये परिहार उनके लियेहैं जो सर्वथा निर्धनहै ।

वासःस्त्रग्गंधरत्नानांधारणंप्रीतिवर्द्धनम् ।
रक्षोघ्नमर्थ्यमायुष्यंसौभाग्यकरमुत्तमम् ॥

अर्थ–सुंदरवस्त्र, फूलमाला, चंदन, अतर आदि गंध और हीरा, पन्ना, माणिक आदि रत्नोंका धारण करना प्रीति प्रकट करे तथा राक्षसादि दुष्टोंका नाशक, आयु और सौभाग्यकर जानना ।

मङ्गलधारण ।

सततंसिद्धमन्त्रस्यमहौषध्यास्तथैवच । रोचनासर्षपादीना माङ्गल्यानां च धारणम् ॥ आयुर्लक्ष्मीकरंरक्षोहरंमङ्गलदंशुभम् । हिंस्रादिभयविध्वंसिवशीकरणकारकम् ॥

अर्थ–निरंतर सिद्धमंत्रका (अथर्वणवेदके मंत्रोंका न कि तांत्रिक मंत्र) महौषधी (ऐन्द्री, ब्राह्मी, शतवीर्या, अमोघा आदि) और गोरोचन सपेदसरसोंआदिका धारण

करना आयुको बढावे, लक्ष्मीकी प्राप्ति होवे, तथा राक्षसोंका भय, हिंसक प्राणियोंका भय इनको नाशक तथा उनको वशीकरण करताहै मंगलदाता शुभहै ।

मंगलपदार्थदर्शन ।

ततोभोजनवेलायांकुर्य्यान्मङ्गलदर्शनम् ।
तस्यप्रदक्षिणंनित्यमायुर्धर्मविवर्धनम् ॥

अर्थ-तदनंतर भोजनके समय मंगलीवस्तुओंका दर्शन करना चाहिये । और इनकी प्रदक्षिणा करे तो आयु और धर्म बढे ।

मांगलिकवस्तु ।

लोकेस्मिन्मङ्गलान्यष्टौ ब्राह्मणोगौर्हुताशनः ।
हिरण्यंसर्पिरादित्यआपोराजातथाष्टमः ॥

अर्थ-इस लोकमें आठवस्तू मंगलीहैं, उनको कहतेहैं कि, ब्राह्मण, गौ, अग्नि, सुवर्ण, घृत, सूर्य, जल और अष्टम राजा इन सबका दर्शन और प्रदक्षिण कर्त्तव्यहै ।

पादुकारोहण ।

पादुकारोहणंकुर्यात्पूर्वंभोजनतः परम् ।
पादरोगहरंवृष्यंचक्षुष्यंचायुषेहितम् ॥

अर्थ-भोजनके पूर्व अथवा भोजनोत्तर पादुका (खडाऊँ) पहरनी चाहिये, खडाऊँ पहरनेसे पैरके रोग नष्ट हो । वृष्य है, नेत्रोंको गुणकारक और आयुष्यको बढावे है ।

चतुर्विध इच्छा ।

शरीरेजायतेनित्यंवांछानॄणांचतुर्विधा ।
बुभुक्षा च पिपासा च सुषुप्तिःसुरतस्पृहा ॥

अर्थ-स्वतः स्वभावसे इस देहमें मनुष्योंको चार वस्तुकी इच्छा होती है जैसे भोजनकी इच्छा, पीनेकी इच्छा, निद्राभिलाष और मैथुनेच्छा ।

भोजनेच्छारोधके अवगुण ।

भोजनेच्छाविघातात्स्यादङ्गमर्दोऽरुचिःश्रमः ।
तन्द्रालोचनदौर्बल्यंधातुदाहोबलक्षयः ॥

अर्थ-भोजनके समय भोजन न मिलनेसे अंगोंका टूटना, अरुचि, श्रम, तन्द्रा-नेत्रोंमें दुर्बलता, धातु (रुधिर मांसादि धातु) ओंका दाह और बलक्षय होताहै ।

तृषारोकनेके अवगुण ।

विघातेनपिपासायाःशोषःकण्ठास्ययोर्भवेत् ।
श्रवणस्यावरोधश्चरक्तशोषोहृदिव्यथा ॥

अर्थ-प्यासरोकनेसे कंठसूखे, मुखसूखे, श्रवणशक्तिका घटना, रुधिरका शोष और हृदयमें व्यथा हो ।

निद्रारोकनेके अवगुण ।

निद्राविघाततोजृम्भाशिरोलोचनगौरवम् ।
अंगमर्दस्तथा तन्द्रास्यादन्नापाकएव च ॥

अर्थ-निद्रारोकनेसे जंभाई, मस्तक और नेत्रोंका भारी होना, अंगोंका टूटना, तन्द्रा और अन्नका न पचना ये अवगुण होतेहैं ।

कामवेग रोकनेके अवगुण ।

अव्यवायान्मेहमेदोवृद्धिःशिथिलतातनोः ।

अर्थ-एकसाथ मैथुनेच्छारोकनेसे प्रमेह, मेदोवृद्धि और देहमें शिथिलता होतीहै ।

बुभुक्षितोनयोश्नाति तस्याहारेन्धनक्षयात् । मन्दीभवति कायाग्निर्यथाचाग्निर्निरिन्धनः ॥ आहारंपचतिशिखीदोषानाहारवर्जितःपचति । दोषक्षयेचधातून्पचतिचधातुक्षये प्राणान् ॥

अर्थ-जो मनुष्य क्षुधा लगनेपर भोजन नहीं करता उसके आहाररूप ईंधन क्षीण होनेसे जठराग्नि मन्द होतीहै । जैसे विना ईंधनके बाहरकी अग्नि शीतल होतीहै । आहार मिलनेसे जठराग्नि प्रथम आहारको पचातीहै । जब आहार पचानेको नहीं रहता तब वही जठराग्नि वात कफ दोषोंको पचातीहै । जब दोषभी पचजातेहैं तब रस रुधिर मांसादि धातुओंको पचातीहै । और धातुपचनेके अनंतर प्राणोंको नष्ट करेहै ।

भोजनकाल ।

याममध्येनभोक्तव्यंयामयुग्मंनलंघयेत् । याममध्येरसोत्पत्तिर्यामयुग्माद्बलक्षयः ॥ क्षुत्संभवतिपक्वेषुरसदोषमलेषुच । कालेवायदिवाकालेसोऽन्नकालउदाहृतः ॥

अर्थ-एक प्रहरमें दोवार भोजन न करे । और दो प्रहरतक भूखा न रहे क्योंकि प्रथमप्रहरमें भोजन करनेसे उत्तम रसकी उत्पत्ति होतीहै । और दोप्रहरतक भोजन

करनेसे बलक्षय होताहै । तथा रसदोष मल इनके पक्व होनेसे इस प्राणीको भूख लगतीहै । वह क्षुधा किसी समय लगे जिस समय क्षुधा लगे वही भोजनका समयहै [किसीका यह मतहै कि, प्रथम प्रहरमें भोजन न करे और दिनके दोप्रहर व्यतीत न होनेदेवे । कारण यहहै कि, प्रथम प्रहरमें रसकी उत्पत्ति होतीहै इसी कारण प्रहरके भीतर कराहुआ भोजन अच्छीरीतिसे परिपक्व नहीं होता । और दो प्रहर उपरांत भोजन करनेसे बलक्षय होताहै]

भोजनविधान ।

यथोक्तगुणसंपन्नमुपसेवेतभोजनम् । विचार्यदोषकालादीन्कालयोरुभयोरपि ॥ सायंप्रातर्मनुष्याणामशनंश्रुतिनोदितम् । नान्तराभोजनंकुर्य्यादग्निहोत्रसमोविधिः ॥

अर्थ—मनुष्यको प्रातःकाल तथा सायंकालमें दोष व काल इनका विचार करके जो शास्त्रमें गुण कहेहैं उनको देख भोजन करना चाहिये । सायंकाल तथा प्रातःकाल दोनों समय भोजन करना वेदोंकी आज्ञाहै इन दोनों समयके विना बीचमें भोजन नहीं करना इसकी विधि अग्निहोत्रके सदृशहै, अर्थात् जैसे यथोक्तकालमेंही अग्निहोत्र करतेहैं उसीप्रकार भोजनके समयही भोजन करना चाहिये ।

आहारके गुण ।

आहारोबलतृप्तिकान्तिसुखदोदेहस्यसंधारकोधैर्योत्साहविवर्धनःस्मृतिकरःस्वर्योरसालस्वरे । यत्कान्तेऽस्तिजगत्त्रयेकिमपितच्चाहारकेसंस्थितंतस्मादस्यविधिगुणाश्चनियतंज्ञातव्यमित्थंबुधैः ।

अर्थ—आहार बल, तृप्ति, कांति और सुख इनको देनेवालाहै तथा देहका संरक्षक और धैर्य तथा उत्साह, इनको बढानेवाला और स्मृति (स्मरणशक्ति) तथा सुंदरस्वर इनका देनेवालाहै । जो कुछ इस जगत्में है वो संपूर्ण आहारसे प्राप्त होनेवाला ऐसा जानना, अतएव इस आहारकी विधि और गुण वैद्योंको निश्चय जानने चाहिये ।

रसादीनां पाकज्ञानमाह ।

उद्गारशुद्धिरुत्साहोवेगोत्सर्गोयथोचितः ।
लघुताक्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्यलक्षणम् ॥

अर्थ–उत्तम डकारका आना, उत्साह, मलमूत्रादि वेगोंका यथोचित समयपर अच्छेप्रकार त्याग होना, देह हलका हो और भूख प्यास प्रगट हो ये जीर्णआहारके लक्षणहैं ।

भोजनस्थान ।

आहारंविजनेकुर्यान्निर्हारमपिसर्वदा ।
उभाभ्यांलक्ष्म्युपेतःस्यात्प्रकाशेहीयतेश्रिया ॥

अर्थ–मनुष्यको आहार (भोजन) तथा निर्हार (मलमूत्रका त्यागकरना) ये एकांतमें करने चाहिये इससे धनी होता है तथा इनको सर्व जनोंके आगे करनेसे लक्ष्मीरहित होताहै ।

तथाच ।

आहरनिर्हारविहारयोगाःसदैवसद्भिर्विजनेविधेयाः ।

अर्थ–भोजन, मलमूत्रपरित्याग और स्त्रीसंभोग ये विद्वानोंको सदैव एकांतमें करने चाहिये ।

स्थानका वर्णन ।

स्वच्छंव्यवकरंलिप्तंगोमयाद्यैर्मनोहरम् । सुधाधवलितंसम्यक्प्रतिमाद्यैर्विचित्रितम् ॥ गीतैःकलपदैर्जुष्टंपुष्पवृक्षैःसुशोभितम् । दुष्टशब्दादिरहितंतच्छस्तंभोजनालयम् ॥

अर्थ–अब भोजनका स्थान कैसा होना चाहिये, उसको कहतेहैं । प्रथम झारा बुहारा गोवर मिट्टीसे लिपा रंगवल्ली जिसमें कढरही, सर्वत्र ऊपर नीचे सपेदीसे पुतरहा चित्र विचित्र देवता मनुष्योंके तथा प्रिय पक्षी पशु आदिके चित्र जिसमें कढरहेहों, आदिशब्दसे झाड, फनूस, बडे बडे, दर्पण जिसमें लगरहे, सुंदर नीलकंठसे मीठे शब्द करके गान होरहा हो चारोंतरफ पुष्पितवृक्षोंके गमले धरेहों (तथा अपने प्रिय मित्र पुत्र कलत्रादि युक्त) और जहां खोटे पुरुष स्त्रियोंकी दृष्टि और व्यथाजनक दुष्टशब्द रहित आदिशब्दसे सुगंधित और सर्व इन्द्रियोंको तथा मनको आनंददायक ऐसा भोजन करनेका स्थान होना चाहिये ।

अथ पाकविधान ।

शिष्य–अब कुछ रसोई बनानेकी विधि कहिये ।

गुरु–रसोई बनानेकी विधि हमारे सूपशास्त्र ग्रंथोंमें विस्तारपूर्वक लिखीहै

करनेसे बलक्षय होताहै । तथा रसदोष मल इनके पक्क होनेसे इस प्राणीको भूख लगतीहै । वह क्षुधा किसी समय लगे जिस समय क्षुधा लगे वही भोजनका समयहै [किसीका यह मतहै कि, प्रथम प्रहरमें भोजन न करे और दिनके दोप्रहर व्यतीत न होनेदेवे । कारण यहहै कि, प्रथम प्रहरमें रसकी उत्पत्ति होतीहै इसी कारण प्रहरके भीतर कराहुआ भोजन अच्छीरीतिसे परिपक्क नहीं होता । और दो प्रहर उपरांत भोजन करनेसे बलक्षय होताहै]

भोजनविधान ।

यथोक्तगुणसंपन्नमुपसेवेतभोजनम् । विचार्यदोषकालादीन्कालयोरुभयोरपि ॥ सायंप्रातर्मनुष्याणामशनंश्रुतिनोदितम् । नान्तराभोजनंकुर्य्यादग्निहोत्रसमोविधिः ॥

अर्थ–मनुष्यको प्रातःकाल तथा सायंकालमें दोष व काल इनका विचार करके जो शास्त्रमें गुण कहेहैं उनको देख भोजन करना चाहिये । सायंकाल तथा प्रातःकाल दोनों समय भोजन करना वेदोंकी आज्ञाहै इन दोनों समयके विना बीचमें भोजन नहीं करना इसकी विधि अग्निहोत्रके सदृशहै, अर्थात् जैसे यथोक्तकालमेंही अग्निहोत्र करतेहैं उसीप्रकार भोजनके समयही भोजन करना चाहिये ।

आहारके गुण ।

आहारोबलतृप्तिकान्तिसुखदोदेहस्यसंधारकोधैर्योत्साहविवर्धनःस्मृतिकरःस्वर्यौरसालस्वरे । यत्कान्तेऽस्तिजगत्त्रयेकिमपितच्चाहारकेसंस्थितंतस्मादस्यविधिगुणाश्चनियतंज्ञातव्यमित्थंबुधैः ।

अर्थ–आहार बल, तृप्ति, कांति और सुख इनको देनेवालाहै तथा देहका संरक्षक और धैर्य तथा उत्साह, इनको बढानेवाला और स्मृति (स्मरणशक्ति) तथा सुंदरस्वर इनका देनेवालाहै । जो कुछ इस जगत्‌में है वो संपूर्ण आहारसे प्राप्त होनेवाला ऐसा जानना, अतएव इस आहारकी विधि और गुण वैद्योंको निश्चय जानने चाहिये ।

रसादीनां पाकज्ञानमाह ।

उद्गारशुद्धिरुत्साहोवेगोत्सर्गोयथोचितः ।
लघुताक्षुत्पिपासा च जीर्णाहारस्यलक्षणम् ॥

अर्थ–उत्तम डकारका आना, उत्साह, मलमूत्रादि वेगोंका यथोचित समयपर अच्छेप्रकार त्याग होना, देह हलका हो और भूख प्यास प्रगट हो ये जीर्णआहारके लक्षणहैं ।

भोजनस्थान ।

आहारंविजनेकुर्यान्निहारमपिसर्वदा ।
उभाभ्यांलक्ष्म्युपेतःस्यात्प्रकाशेहीयतेश्रिया ॥

अर्थ–मनुष्यको आहार (भोजन) तथा निहार (मलमूत्रका त्यागकरना) ये एकांतमें करने चाहिये इससे धनी होता है तथा इनको सर्व जनोंके आगे करनेसे लक्ष्मीरहित होताहै ।

तथाच ।

आहरनिहारविहारयोगाःसदैवसद्भिर्विजनेविधेयाः ।

अर्थ–भोजन, मलमूत्रपरित्याग और स्त्रीसंभोग ये विद्वानोंको सदैव एकांतमें करने चाहिये ।

स्थानका वर्णन ।

स्वच्छंव्यवकरंलिप्तंगोमयाद्यैर्मनोहरम् । सुधाधवलितंसम्यक्प्रतिमाद्यैर्विचित्रितम् ॥ गीतैःकलपदैर्जुष्टंपुष्पवृक्षैःसुशोभितम् । दुष्टशब्दादिरहितंतच्छस्तंभोजनालयम् ॥

अर्थ–अब भोजनका स्थान कैसा होना चाहिये, उसको कहतेहैं । प्रथम झारा बुहारा गोबर मिट्टीसे लिपा रंगवल्ली जिसमें कढरही, सर्वत्र ऊपर नीचे सपेदीसे पुतरहा चित्र विचित्र देवता मनुष्योंके तथा प्रिय पक्षी पशु आदिके चित्र जिसमें कढरहेहों, आदिशब्दसे झाड, फनूस, बडे बडे, दर्पण जिसमें लगरहे, सुंदर नीलकंठसे मीठे शब्द करके गान होरहा हो चारोंतरफ पुष्पितवृक्षोंके गमले धरेहों (तथा अपने प्रिय मित्र पुत्र कलत्रादि युक्त) और जहां खोटे पुरुष स्त्रियोंकी दृष्टि और व्यथाजनक दुष्टशब्द रहित आदिशब्दसे सुगंधित और सर्व इन्द्रियोंको तथा मनको आनंददायक ऐसा भोजन करनेका स्थान होना चाहिये ।

अथ पाकविधान ।

शिष्य–अब कुछ रसोई बनानेकी विधि कहिये ।

गुरु–रसोई बनानेकी विधि हमारे सूपशास्त्र ग्रंथोंमें विस्तारपूर्वक लिखीहै

परंतु इसजगेमें तुम्हारे आगे संक्षेपसे जो इस मध्यदेशमें बहुधा प्रचलितहै इसको कहताहूं ।

शिष्य-प्राचीन पाक बनानेके कौन कौनसे ग्रंथहैं और पाक कितने प्रकारके हैं ।

गुरु-प्राचीन कालसे इस भारतवर्षमें जैसे ज्योतिष, वैद्यक, न्याय, सांख्य, वैशेषिक और व्याकरण आदि ग्रंथोंकी उन्नतीथी इसीप्रकार इस पाकशास्त्रकीभी अत्यंत उन्नती थी और इसके अनेक ग्रंथ थे जैसे प्राचीन ग्रंथोंमें नलपाक, भीमपाक, सीतापाक, कृष्णापाक और अर्वाचीन ग्रंथोंमें भोजपाक, वीरपाक, पाकसुधाकर, रुचिवधूरत्नमाला, पाकशेखर तथा क्षेमकुतूहल इत्यादि ।

और तुमने जो प्रश्न करा कि, पाक कितनेप्रकारकेहैं सो हे प्रियपुत्र ! इनकी संख्या मैं नहीं कहसकता क्योंकि पाक देशदेशमें भिन्न भिन्न और उनके बनानेकी विधिभी पृथक् पृथक्हैं, जैसे वल्लभकुली गोकुलस्थी गुसाइयोंके छप्पन भोगमें एकही अन्नके ५६ छप्पन प्रकारके पदार्थ बनातेहैं और उनके नामभी पृथक् पृथक् हैं फिर बंगाली, गुजराथी, कर्नाटक, पंजाबी, आदिके पाकोंकी संख्या तो लिखना दूरहै अतएव पाक अनंतहैं ।

परंतु इसजगेमें संक्षेपसे थोडेसे पाक लिखते हैं । विशेष देखनेकी इच्छा होवे तो उक्त प्राचीन ग्रंथोंको देखो ।

शिष्य-प्रथम रसोईका काल और रसोईके बनानेका स्थान, सूपकारके लक्षण और रसोईके उपस्कर अर्थात् रसोई करनेमें किस किस वस्तुको रसोईया अपने पास रक्खे यह सब यथाक्रमसे कहो ।

गुरु-सुनो-प्रियवर ! रसोई करनेके दो समयहैं, प्रथम प्रातःकालमें और दूसरा सायंकाल । प्रातःकालमें जो पदार्थ करतेहैं उसको रसोई कहतेहैं और सायंकालमें जो करते हैं उसको व्यालू कहतेहैं ।

प्रातःकालकी रसोई प्रहर दिन चढेसे दो प्रहर दिन चढेतक करनी उचित है जैसें लिखाहै कि "याममध्ये न भोक्तव्यं यामयुग्मं न लंघयेत्" और इसीप्रकार सायंकालमें चार बजेसे लेकर रात्रिके नौ बजेतक व्याल करनेका समयहै । इससे उपरांत भोजनका निषेधहै ।

रसोईकरनेका स्थान ।

आग्नेय्यांदिशि कर्तव्यमावासस्यमहानसम् । गवाक्षजालमार्गाढ्यमर्द्धभित्त्युपलेपितम् । अग्नेःस्थानंयतस्तत्रभोक्तुरन्नन्तुवर्द्धते । चुल्हिस्तत्र प्रकर्त्तव्या पूर्वपश्चिममायता ।

अर्थ—वैद्यको उचितहै कि राजभवनमें जहां रसोईका स्थान हो उसस्थानमें अग्नि-कोणमें चूल्हा बनावे और रसोईका स्थान परमोत्तम होना चाहिये । जिसमें जाली झरोखा गोखौं मोखा तथा आले अलमारी युक्त तथा गोबर मिट्टी आदिसे आधी आधी भींत लीपी पोती हुई हो उसजगे अग्निस्थानमें भोजन करनेसे भोजन करनेवालेका अन्न शीघ्र पचेहै । और उस रसोईमें पूर्वपश्चिममें विस्तृत भट्टी बनानी चाहिये ।

मृन्मयादीनिभाण्डानिक्षालितानि च वारिणा । तेषुयत्पच्य-
तेद्रव्यंगुणवत्सर्वसंमतम् ।

अर्थ—उस रसोईमें मिट्टी (चीनी आदि) के पात्र जलसे शुद्धकरके रखने चाहियें और पित्तल तामे आदिके पात्रोंको मिट्टी और खटाईसे माँज जलसे धोयकर रखने चाहिये । ऐसे शुद्ध पात्रोंमें बनाहुआ अन्न सर्वगुणसंपन्न और सर्वसंमतहै ।

सूपकारके लक्षण ।

पितृपैतामहोदक्षः शास्त्रीयो मिष्टवाचकः ।
शौचवानतिभक्तश्च सूपकारःसउच्यते ॥

अर्थ—जिसके कुलमें परंपरासे रसोई करनेका व्यवहार चला आयाहो, और चतुरहो, (अर्थात् जो वस्तु एकवार देखी या सुनीहो उसको करलेवे) तथा सूपशास्त्रके ग्रन्थपढाहो [मूर्ख नहो] मीठे वाक्यका बोलनेवाला अथवा " मिष्ट पाचक " अर्थात् रुचिकारी पदार्थको करे [ऐसा न करे कि किसीमें नोन अधिक और किसीमें मिरच किसीमें खटाई] तथा स्नान वस्त्रादिसे पवित्र रहताहो और अपने स्वामीका भक्तहो ऐसा सूपकार (रसोइया) उत्तम कहाहै ।

तथाच ।

भवेयुर्धार्मिकाःस्निग्धाःसूपकाराःक्रमागताः । धृतोष्णीषाश्च
शुचयस्तथावैद्यवशेस्थिताः । नृपामित्रद्विषोदक्षाललिष्टाः
कुलसम्भवाः । सर्वपाकेषुनिष्णातादयावन्तोविचक्षणाः ।
अन्येपितत्रयेकेचिच्चरन्तिपरिचारकाः । तेपिचैवंविधायोज्या-
स्तदध्यक्षोपितादृशः । सूपकारपतिस्तत्रप्रायोवैद्यगुणान्वि-
तः । क्षणंनाविश्वसेत्तांस्तुतत्त्वज्ञस्तत्प्रशासनः । जीवनंजी-
विनामन्नमृतूक्तंविधिपाचितम् । तदेवाविधिनाभुक्तंपरिणामे
विषोपमम् । ऋतूनांलक्षणंज्ञात्वाततस्तद्विधिमाचरेत् ।

अर्थ-धर्मनिष्ठ, प्रीतिवाले, क्रमागत रसोईकी विद्या, पगडीके धारण करनेवाले, पवित्र वैद्यके वशीभूत राजाके शत्रुओंसे द्वेष करनेवाले, चतुर, बलिष्ठ, उत्तम कुलमें जन्म जिन्होंका, सर्व प्रकारके पाकोंको बनायचुकेहो, दयावान् और विचक्षण एतादृश लक्षणवान् सूपकार होना चाहिये [हमारी समझमें तो नवीना स्त्री जो चतुर हो और अपनेसे परम प्रीति रखतीहो उसके हांथकी रसोई इस पृथ्वीमें अमृतके तुल्य है] तथा अन्य पुरुष जो पाकधरमें रहनेवाले नौकर हो वोभी सूपकारके समान लक्षणवाले होने चाहिये और उनका अध्यक्ष (अफ्सर) भी तादृश होना चाहिये । परंतु जो रसोइयोंके ऊपर अफ्सर हो वह वैद्यके गुणवाला हो और उन पाककारोंका क्षणमात्रभी विश्वास न करे तत्त्वज्ञहो प्रत्यक समय उन रसोइयोंको शिक्षा देता रहे। जो जो पदार्थ प्रत्येक ऋतुमें सेवन करने कहे हैं वो यथाविधि पक्क करा हुआ अन्न जीवोंका जीवन है यादि वोही अन्न अविधिसे कराजावे और अविधिसे भोजन करा हुआ परिणाममें विषतुल्य होताहै । अतएव वैद्यको उचित है कि, ऋतुओंके लक्षण विचारकर तदनंतर भोजनपानकी विधि करनी चाहिये । ऋतुओंके लक्षण प्रथमही ऋतुचर्य्याध्यायमें कहआएहैं ।

विषदूषितान्नपरीक्षार्थंसद्वैद्यस्थापनम् ।

राजाराजगृहासन्नेप्राणाचार्यंनिवेशयेत् । सर्वदासभवत्येव सर्वत्रप्रतिजागृतिः । अन्नपानं विषाद्रक्षेद्विशेषेण महीपतेः । योगक्षेमौयदायत्तौधर्माद्यायन्निबंधनाः । तस्माद्वैद्येनसततंवि-षाद्रक्ष्योनराधिपः ॥

अर्थ-राजा राजगृहके समीप वैद्यको स्थापित करे वह सदैव और चारोंतर्फसे सावधान रहै और विशेष करके विष मिले अन्नपानसे नरपतिकी रक्षा करे क्योंकि योग (अप्राप्त वस्तुकी प्राप्ति) और क्षेम (प्राप्तवस्तुका रक्षण) राजाके आधीनहै तथा उन योगक्षेमके वशीभूत धर्मादिक हैं अतएव वैद्य राजाकी विषसे सदैव रक्षा करै । वैद्यके लक्षण आगे कहेंगे ।

महानसयोग्योपकरण।

वस्तूनिभोजनार्हाणिविविधानिपुनःपुनः ।
सर्वाणिगुणयुक्तानिस्थापितानिमहानसे ॥

अर्थ-भोजनके योग्य अनेक प्रकारकी सामग्री संपूर्ण गुणयुक्त रसोईके समय चुल्हेके समीप रक्खे ।

उपस्कर ।

दास्यःसंमार्जनीवाटापूतहंडीसुकूर्चिका । घर्षणीवैणवंपात्रं जलपूर्णमलिञ्जरः । वह्निसंजननग्रावा कुद्दालःसकुठारकः । दारुखण्डानिशुष्काणिहस्तमात्राणिचेन्धनम् । अजीर्णान्यगुरूणीह कीटवर्ज्यानिसंचितः । तितउश्चल्लनीपीठंमुसलंचाप्युलूखलम् । शिलाशिलासुतःशूर्पं चतुरस्रा च पट्टिका । संदंशके च दर्व्यश्चवस्त्रखंडचतुष्टयम् । नलिकाछुरिकाचैव शूलानिचकटाहकम् । वह्निसंचालनार्थायदीर्घीदीर्घासुलोहजा । इत्यादिवस्तुजातैःस्याद्गुणाढ्यंतुमहानसम् ॥

अर्थ–दासी [दास] संमार्जनी (झाडू) बांट तराजू पवित्र हांडी सुकूर्चिका [मूंजकी कूंची] घर्षणी [जिससे मांजनेके समय पात्रोंको रगडते हैं] बांसकी पिटारी जलका भरा पूर्णपात्र, [माठ या तमिया] चमकपत्थर, कुदारी, कुठारी, [ईंधन तोडनेको] एकएक हाथकी हलकी और सूखी लकडी, पुराने हलके कीडेरहित ऊपले, चलनी, चलना, पटा या आसन, मूसल, ओखली, सिल, लोढा, सूप, चौकोन पट्टी-सडासी (चीमटा) कलछी, चार कपडेके टूक, फकनी, छुरी, चक्कू, कांटा (वा, कौंचा) अग्निके चलानेको बडे बडे चीमटे, इत्यादि वस्तुओंसे गुणयुक्त महानस (चूलहा) होताहै ।

आदि शब्दसे इतनी वस्तु औरभी रखनी चाहिये । दियासलाई, अंगीठी, सिगडी, तवा, कढैया, कढाव, डोही, कलसा, लोटा, घंटी गिलास, प्याले, थाली, रकेबी, परात, तमंगा, तामडी, तपेला, तपेली, वटला, देग, देगची, चकला, वेलन, उदला, झाल, टोकरा, डालिया, कटोरा, कटोरी, झंझरी, पौना, घीयाकस, कूडी, कूलहडे, सकोरे, सराई, तोला, कमोरी, पत्तल, दोना, केलाके पत्ते, सादे पत्ते इत्यादि ।

मैदा, चून, दाल, चावल, नोन, तेल, घी, मसाला, दूध, दही, बूरा, मिश्री, बेसन, इत्यादि सर्व वस्तू रसोई करनेवालेको अपनेपास धर लेनी चाहिये । और दो चार जवान और चतुर मनुष्यभी अवश्य रसोइयेको अपनेपास रखने चाहिये ।

पात्रोंके पृथक् पृथक् गुण ।

मृद्भावपचेल्लोहे चक्षुरर्शोविकारनुत् । कांस्यजेपाचितंयद्धितद्धितंमतिदंशुचि । यत्तुताम्रमयेसिद्धमरुच्यमम्लपित्तकृ-

त् । सौवर्णेराजतेपाच्यमाढ्येभूमिभृतांगृहे । मृत्पात्रंसर्वदो-षघ्नंधिषणोत्सवदंसदा । संकीर्णेपात्रसंभारेमार्गेवाग्रामवर्जिते ।

अर्थ–वैद्यको उचितहै कि, रसोईके लिये मृत्तिकाके पात्र लेने चाहिये, यदि मिट्टीके पात्र न मिले तो लोहके पात्रमें रसोई करे लोहके पात्रमें पक्करा अन्न नेत्ररोग और बवासीर आदि रोगोंको दूर करताहै । काँसेके पात्रमें सिद्ध करा अन्न बुद्धिदायक पवित्र और हितकारीहै । एवं तामेके पात्रमें सिद्ध करा अन्न अरुचि और अम्लपित्तको करैहै । यदि तामेकेही पात्रमें रसोई करनी होवे तो उसमें कलई कराय लेवे और कोई कोई पीतलके पात्रमेंभी कलई कराना कहतेहैं तथा राजा महाराजा और धनाढ्योंके घरमें सुवर्ण और चांदीके पात्रमें रसोई करनी चाहिये । परंतु सर्व दोष नाशक और बुद्धिको प्रफुल्लित करनेवाला ऐसा सदैव मृत्तिकाका पात्र कहाहै । जहां पात्र नहो अथवा ग्रामरहित मार्गहो तहां मट्टीके पात्रमेंही रसोई करनी चाहिये ।

पाकविधि ।

स्थापयेद्गुरुवत्सूदःसिद्धान्नंपात्रकान्तरे । भक्तंस्वपात्रकेस्थाप्यंक्कथितापात्रकान्तरे । घृतंकाष्ठायसेस्थाप्यंमांसंमांसरसौपुनः । स्थापयेद्राजतेहैमपात्रेलोहेऽथकाष्ठजे । पत्रादि षड्विधंशाकंस्थाप्यंकाष्ठाश्मलोहजे । पक्कान्नपिष्टजंभक्ष्यंस्थाप्यंकांस्येथदारुजे । शृतंक्षीरंस्थापनीयंपात्रेकाष्ठस्यवामृदः । पानीयं पायसंतक्रंमृण्मयेष्ववेवधारयेत् कांचनेस्फाटिकेवाथवैदूर्यादिविचित्रिते ।धारयेत्सर्वदापात्रेरागखांडवसक्तुकान्। एतेषुस्थापितंद्रव्यंपात्रेषुगुणदंभवेत् । सर्वदासुखदंत्वन्यथादोषकारकम् ॥

अर्थ–सिद्धअन्नको चतुर रसोइया अन्य पात्रमें स्थापन करे । भातको जिस पात्रमें कराहो उसीमें रहने देवे, और कढीको दूसरे पात्रमें, घृतको काष्ठके पात्रमें या लोहके पात्रमें रक्खे, मांस और मांसरसको सोने चांदी लोहा अथवा लकडीके पात्रमें रक्खे पत्रके छः प्रकारके शाकको लकडी पत्थर अथवा लोहके पात्रमें धरे, पक्कान्न (लड्डू गूँझा, सौंहनथाल, आदि) और पिष्टज पदार्थ (पूडी, कचोडी, पापड, सुहार, मट्ठे, आदि) को कांसके पात्रमें या लकडीके पात्रमें धरने चाहिये । औटा शीतल दूधको काष्ठके अथवा मट्टीके पात्रमें धरना [परंतु औटाहुआ दूधको कांसीके उत्तम

कटोरेसे पीना चाहिये] जल, खीर, छाछ ये पदार्थ मट्टीके पात्रमेंही रखने चाहिये । और मुरब्बा (पने, चटनी, सिखरन, अमरस, आदि) एवं सत्तू इनको सुवर्णके पात्रमें अथवा स्फटिकमणि तथा वैदूर्यमणि आदि जडे हुए पात्रमें धरने चाहिये । इन पात्रोंमें उक्त क्रमपूर्वक पदार्थ धरनेसे गुणदायी होतेहैं और सदैव सुखदायक एवं चित्तको प्रिय होतेहैं । अन्यथा अर्थात् विपरीत क्रमसे धरे तो विकारकारी होतेहैं ।

" मधुरेणसमारभ्य मधुरेणसमापयेत् " अर्थात् भोजनको मिष्ट पदार्थसे आरंभ कर मिष्ट पदार्थसेही समाप्ति करे इस वाक्यके अनुसार प्रथम मिष्ट पदार्थोंको कहते हैं परंतु मिष्ट पदार्थ चासनीकी विशेष अपेक्षा रखते हैं । अत एव आदिमें प्रथम चासनीकी विधिसे आरम्भ करते हैं ।

चासनी ।

उत्तम सहांजहांपुरी चिंनी कढाईमें चढाय उसमें तृतीयांश अर्थात् तीनसेरमें १ सेर जल मिलाय अत्यंत तेज आंच देओ जब उसका गाद उठने लगे तब उसमें मंद आंच देओ और उस रसके चारोंतर्फ दूधमें जल मिलाकर वारंवार गेरते जाओ और धीरेधीरे झरनेसे उसका गाद निकालते जाओ जब जानोकि, संपूर्ण मैल ऊपर आगया तब एक पात्र लो उसपर दो लकडी धर एक डलिया धरो और उस डलियामें स्वच्छ वस्त्र धुलाहुआ बिछाय उससे उस रसको डोहीसे भरभरके डालो तो उस चीनीका रस उस डलियामेंसे चुचाकर नीचेके पात्रमें गिरेगा इस रसको वक्खर कहते हैं । फिर इस रसको दूसरे पात्रमें भर अग्निपर चढाओ और धीमी आंच दो जब कलछुलेसे लगकर एक धार गिरे उसको इकतारी चासनी कहते हैं । और इस्सेभी अधिक गाढा हो, दो तार गिरे उसको दुतारी चासनी इसी प्रकार इससे कुछ अधिक गाढा होकर रस सपेद वर्ण होगा उसको उंगलीसे घिसकर देखो यदि रवा बंधे तो उसको तितारी चासनी कहते हैं । इस्से कुछ गाढा हो तो साढेतीन तारी चासनी जाननी । इसप्रकार जिस पाकमें जैसी चासनी लेनी लिखी है उसी तरहकी लेवे ।

अथ मोदकानाह ।

तत्रतावद्दहित्रमोदकाः ।

प्रस्थमानंविशालाक्षिगोधूमजंचेत्सुपिष्टंघृतंतार्हिमुष्टिद्वयंच । मिश्रयित्वाचनीरेणतावत्प्रियेमुष्टिवद्धंचलोलाक्षियावद्भवेत् । मुष्टिवद्धानिपिंडानिभित्त्वाततःपाचयेत्कुंकुमाभांश्छनैःसद्घृते । तानिसंकुट्यकृत्वातुचूर्णंपुनःशर्कराज्यंपृथक्प्रस्थमानंनवम् । द्राविडीवल्लिजंकोलमानंपृथक्चारवादामवीजंपलंखंडितम् । सर्व-

मेकत्रकृत्वाचसंमिश्रयेद्बद्धयेन्मोदकांश्चाम्रमानांस्ततः । तेद-हित्राभिधमोदकाःशीतला वातपित्तापहाश्चाग्निमांद्यप्रदाः । श्लेष्मलाःशुक्रलाबल्यवृष्याहिताः सारकाश्चापिस्निग्धागरिष्ठाःप्रियाः ॥

अर्थ—अब लड्डू बनानेकी विधि कहतेहैं उसमें प्रथम दहित्रमोदक अर्थात् मुठियाके लड्डू बनानेकी विधि और उसके गुणदोष कहतेहैं । गेहूंकी चून १ सेर लेकर उसमें ८ तोले घीका मोहन डाले, जब मुठ्ठी बँधने योग्य होजावे तब पानीसे, उसने फिर उसमेंसे मुठ्ठीभर भरके तोडकर घीमें डाले, और धीमी आंचसे सेके, जब केसरके समान लाल रंग होजावे तब निकासले,फिर उनको कूटकर चूर करे फिर उसमें १ सेर सपेदबूरा कुछ कंद तथा १ सेर घी और इलायचीके दाने आधेतोले मिरच आधेतोले वदाम ४तोले खसखस ४ तोले इनका चूरा डाल अच्छीरीतिसे मिलाय फिर लड्डू बांधे इसको दहित्रमोदक वा मुठियाके लड्डू कहतेहैं ये लड्डू शीतल, वातपित्त नाशक, अग्निमांद्यकरता, कफकारी , वीर्य बढानेवाले, वलकर, वृष्य, सारक, स्निग्ध, तथा भारीहैं ।

अथविंदुमोदकाः ।

प्रस्थैकंवेसनंपिष्टंतंडुलानांपलंप्रिये । द्विपलंचघृतंसम्यग्घस्ताभ्यांपरिमर्दयेत् । लोडयित्वाततश्चाद्भिर्गाढंमाक्षीकसन्निभम्।ततश्चुल्ल्यांसुप्रज्वाल्यवह्नौन्यस्यकटाहकम्।ततोदंडंकटाहस्यसघृतस्योपरिन्यसेत् । सूक्ष्मछिद्रान्वितंतस्योपरिसन्यस्यझर्झरम् । तत्क्षणायांचसन्यस्यशनैः संहत्यपातयेत् । बिंदूंस्तेकुंकुमाकारायदास्युश्चतदाद्रुतम् । तानन्येनच निष्कास्यझर्झरेणाविचक्षणे । विस्तीर्णामत्रकेन्यस्यततः कुर्यादमुंविधिम् । त्रिप्रस्थायाः सितायाश्चपाकंकृत्वात्रितारकम्। कर्पूरैलादिसंयुक्तंतस्मिंस्तान्विन्दुकान्क्षिपेत् । दर्व्यासंचाल्य बहुशः सत्युष्णेचविबंधयेत् । मोदकान्बिल्वतुल्यांस्तुतेवृष्या धातुवर्द्धकाः । शीतलालघवोरूक्षामधुरास्तृप्तिकारकाः । त्रिदोषघ्नाः स्मृताः पूर्वैराचार्यैर्विंदुमोदकाः ।

अर्थ–अथ बिंदुमोदक अर्थात् बूंदीके लड्डू बनानेकी विधि तथागुण दोष कहते हैं । बहुत बारीक बेसन १ सेर उसमें चावलकी चून ४ तोले घीं ८ तोले मिलावे फिर उसमें इतना पानी डाले कि, वह सन जावे, फिर उसको हाथोंसे खूब मथे तद नंतर कढाईमें घीभर भट्टीपर चढावे जब वो गरम होजावे तब उस कढाईपर एक लकडी आडी धरे और उसपर बारीक छिद्रकी झँझरी धरे उसमें मथाहुआ बेसन भरके उसको धीरे धीरे उस लकडी पर ठोकैं तो उस झँझरीमेंसे मोतीके समान बेसनकी बूंद निकलकर घीमें पडे उनको सिकनेपर निकालले फिर १ सेर कंदकी तीन तारी चासनीकर उसमें उन बूँदियोंको डाल देवे और उसमें कपूर, इलायची, आदि सुगंधिद्रव्य मिलाय बहुत देरतक पौनासे उलटता पलटता रहे फिर इसके चार चार तोले या अधिक बडे लड्डू बनावे । ये बूँदीके लड्डू वृष्य, धातुवर्धक, शीतल, हलके रूक्ष, मधुर, तृप्तिकारी और त्रिदोषनाशक हैं । ये कुछ गरम रहनेपरही बांधे शीतल होनेपर नहीं बँधते ।

अथ मुक्तामोदकाः (मोतीचूरके लड्डू) ।

मुद्गपिष्टंससर्पिष्कंमंथयित्वांबुनाततः । कुर्यादन्यंचसकलं बिंदुमोदकवद्विधिम् । स्यान्मुक्तामोदकःस्वादुर्लघुर्ग्राहीत्रिदोषनुत् । चक्षुष्योज्वरहृद्बल्यः शीतस्तृप्तिरुचिप्रदः ॥

अर्थ–मूंगके चूनमें घृतका मोयन देके और पानी डालके मथे फिर बूंदीके लड्डूकी विधिसे बनाय लेवे इसको मुक्तामोदक अर्थात् मोतीचूरके लड्डू कहतेहैं । ये हलके, मलग्राही, त्रिदोषनाशक, नेत्रोंको हितकारी, ज्वरनाशक, बलदायक, शीतल और तृप्ति तथा रुचि इनको देतेहैं ।

अथ रत्नमोदकाः ।

मुक्तामोदकवत्कृत्वामाषजानपिमोदकान् ।
ईषत्समगुणामाषैः प्रोक्तास्तेरत्नमोदकाः ॥

अर्थ–उडदके चूनके जो लड्डू बनते हैं उनको रत्नमोदक कहतेहैं इनको मोतीचूर लड्डुओंके समान बनावे इनके गुण उडदोंकेसे हैं ।

सेविकामोदकाः (सेवके लड्डू) ।

घृताक्तांसमितांमर्द्यकृत्वातंतूञ्जलेनच । शनैस्तान्भर्जयेदाज्येसितापंकेविमिश्रयेत् । ततस्तान्मोदकान्कृत्वातेगुणैर्मंठकाइव । सेविकामोदकानाम्नाकीर्तिताः शास्त्रवेदिभिः ॥

अर्थ-मैदामें मोयनदेके पानीसे मलकर उसके सेव बनाने फिर उन सेवोंको घीमें तलके मिश्रिकी चासनीमें मिलाय लड्डू बनावे, इनको सेवके लड्डू कहते हैं। इनके गुण मठरीके समान हैं।

अथ समितामोदकाः ।

समिताप्रस्थमेकांतेघृतांक्षिस्वाशरावकम् । वर्णव्यत्ययतायावत्तावद्भृज्यार्थशर्कराम् । प्रस्थैकांचविनिःक्षिप्यततश्चोत्तार्यशीतले । एलालवंगमरिचंपृथक्कोलंविनिःक्षिपेत् । मोदकान्रचयेत्तस्यारुच्यामारविवर्द्धनाः । समितामोदकानामपित्तघ्नाः प्रीतिकारकाः ।

अर्थ-मैदा १ सेर उसमें ४ तोले घी डालके भूने, जब मैदाका रंग कुछ लालहो तब उतार लेवे उसमें १ सेर सपेद बूरा और इलायची, लौंग, काली मिरच इनका चूरा आधे आधे तोला मिलाय लड्डू बाँधे ये लड्डू रुचिकारी, कामवर्द्धक, पित्तनाशक तथा प्रीतिकारक हैं। इसको समितामोदक अर्थात् मगदके लड्डू कहतेहैं।

अथद्रावकमोदकाः ।

समितादुग्धकिट्टं च सर्पिःप्रस्थमितंपृथक् । हस्ताभ्यांमर्दयित्वातच्चैकीभूतंविभर्जयेत् । अर्द्धपक्वेपुनःसर्पिःप्रस्थैकंक्षिप्यभर्जयेत् । सम्यक्पक्वेचद्विप्रस्थां सितांतत्रविमिश्रयेत् । शीतस्थानेततोधृत्वाशीतीभूतेचकल्पयेत् । मोदकाद्रावकाख्यास्तेलवंगैलादिसंभृताः ॥ वृष्याबल्याश्चपित्तघ्नारुच्याः कामविवर्द्धनाः । श्लेष्मलास्तर्पणाहृद्यावातघ्नागुरवः स्मृताः॥

अर्थ-मैदा १ सेर, खोहा १ सेर, और घी १ सेर इन तीनोंको मिलाय हाथासे मलके एकजीव करे फिर इसको भूने जब अर्द्धपक्क होजावे फिर इसमें १ सेर घी मिलावे और भूने जब अच्छी रीतिसे पक्क होजावे उसमें २ सेर सपेद बूरा मिलाय उतारलेवे फिरइसमें लौंग इलायची आदि मिलाय कलछीसे चलायदेवे और इसको शीतलस्थानमें धरदेवे जब शीतल होजावे तब लड्डू बँधावे इसको द्रावकमोदक कहतेहैं यह द्रावकमोदक वृष्य, बलकारी, पित्तघ्न, रुचिकारी, कामवर्धक, कफकारक, तृप्तिकारी, हृदयशोधक, वातघ्न और भारी हैं।

अथ चूरमोदकाः । (चूरमाके लड्डू)

घृताक्तंमर्दयेदीषदंवुनातिघनंप्रिये । पिष्टंगोधूमजंतस्यकुर्या- दंगारकर्कटीः ॥ चूर्णयित्वातुतास्तत्रशर्करांचघृतंसमम् । संक्षिप्यैलादिकंकुर्यान्मोदकान्मठवद्गुणैः ॥

अर्थ–गेहूंके चूनमें घीका मोयन देके पानीसे करडा उसने, फिर उसकी अंगाकर दो अंगुलमोटी करे उनको अंगारोंमें सेके जब सिकजावे तब उसका चूर्ण करे फिर उसमें बराबरका घी और बूरा तथा इलायची आदि मिलायके लड्डू बाँधे इसके गुण मठरीके समानहैं ।

अथ मुद्गादिमोदकाः ।

मुद्गचूर्णंप्रियेप्रस्थंप्रस्थेसर्पिषिभर्जयेत् । ततश्चोत्तारयेत्पात्रं वह्नेर्भूमौनिधापयेत् ॥ पाकार्थेऽत्रसिताग्राह्याद्विप्रस्थामलव- र्जिता । ततः कृत्वाचतत्पाकंचतुस्तारंमनोरमम् ॥तस्मिन्सं- मिश्रयेच्चेदंवक्ष्यमाणंगणंक्षिपेत् । लवंगमेलामरिचंबादामंच निकोटकम् ॥ इदंकृत्वापृथक्छाणंखंडशोऽतीवशोभनम् । मो- दकानस्यलोलाक्षिकल्पयेदाम्रमानकान् । इत्येवंमाषपिष्टस्य कल्पयेल्लड्डुकानपि । बेसनस्याप्यतोवक्ष्येपृथक्कृत्वागुणा- नहम् ॥ लघवोवातपित्तघ्नाः शीतवीर्याहिमुद्गजाः। सेवितास्त- रुणैरेते वातघ्नास्तृप्तिकारकाः ॥ चाणकावातलारूक्षाः शीता विष्टंभिनोमताः । रोचकालघवोबालेपित्तरक्तकफापहाः ॥

अर्थ–मूंगकी बारीक चून ६४ तोलेको घी ६४ तोलेमें भूने फिर २ प्रस्थ खाँड की चौतारी चासनीकर उसमें वो भुनाहुआ मूंगका चून और लोंग इलायचीके बीज काली मिरच, बादाम और पिस्ता, इनके टुकडे करके मिलावे और चार चार पांच पांच तोलेके अनुमान लड्डू बांधे, इसीप्रकार उडदके चूनके और चनेके चूनके बेसनी लड्डू करे । अब इनके पृथक् पृथक् गुण कहते हैं । मूंगके- मुक्तामोदक हलके, वातपित्तनाशक और शीतवीर्य हैं । माषमोदक कहिये उडदके लड्डू गरम, वृष्य, भारी, स्निग्ध, बलकारी, तरुण पुरुषके सेवन करनेसे वातघ्न तथा तृप्तिकरहैं । बेसनी लड्डू वातकारक, रूक्ष तथा शीतल, मलस्तम्भकारक, रुचिकारी तथा हलके होनेसे पित्तरक्त और कफसंबंधी रोगोंको नाश करता जानने ।

अथ होलकमोदकाः ।

होलकंचणकादीनांशोषयेदातपेततः । स्थूलंपिष्ट्वातुप्रस्थैके घृतंप्रस्थं विनिःक्षिपेत् ॥ द्विप्रस्थांशर्करामेव बादामादीन्यथा-रुचि । वंधयेन्मोदकांस्तस्यमिश्रयित्वाऽश्रमानकान् ॥ दुर्ज-रागुरवः शीतावातमेदःकफप्रदाः । श्रमघ्नाग्राहिणोरूक्षाइमे होलकमोदकाः ॥

अर्थ–चनोके बूंट आदि फलीके धान्योंको धूपमें सुखाय चाकीसे मोटा पीस एक सेरमें घी एकसेर डालके भूने फिर २ सेर बूरा और बादामकी मिंगी आदि मसाला डालकर लड्डू बनावे ये लड्डू दुर्जर, भारी तथा शीतल एवं वात, मेद तथा कफ इनको करेहैं । और श्रमनाशक, मलग्राही और रूक्षहैं ।

एवमुंब्याश्च कर्तव्या मोदका गुरवो हि ते ।
वृष्याः श्लेष्मप्रदाः प्रोक्ताबल्याः पित्तानिलापहाः ॥

अर्थ–बूंटके लड्डूके सदृश अन्य कच्चे अन्नके लड्डू करने चाहिये ये भारी, वृष्य, कफकारी, बलकारक और वात तथा पित्तरोगनाशक हैं ।

अथ बीजमोदकः ।

कूष्मांडकादिबीजानि निस्तुषीकृत्यभर्जयेत् । घृतेचापिसि-तापंकेक्षिप्त्वाकुर्याच्चमोदकान् ॥ तेबीजमोदकावृष्याःशी-तलागुरवोमताः । शुक्रलामधुराबल्याःस्थौल्यवर्णकफप्रदाः॥ रक्तदोषंतथावातंपित्तंसन्नाशयंत्यये । बालेभुक्त्वापिनारीणां तोषकोनाभवेद्ध्रुवम् ।

अर्थ–अब बीजमोदक अर्थात् बीजोंके लड्डू बनानेकी विधि और गुणदोष कहते हैं । पेठा, तरबूज, घीया इत्यादिके बीजोंको छील घीमें भूने फिर खांडकी चासनीमें डाल लड्डू बनाय लेवे ये लड्डू वृष्य, शीतल, भारी, वीर्यवर्द्धक, मधुर और बलकारी एवं स्थूलता, कांति तथा कफ इनको करे और रक्तदोष, वायु और पित्त इनको नाश करेहैं ।

अथ शालूकमोदकाः ।

शालूकंनिस्त्वचं कृत्वापाचयेदंबुनाशनैः । संपेष्यवटका-न्कृत्वापाचयेत्तान्घृतेप्रिये । ततःसंचूर्णयित्वातुसितापाकेवि-

मिश्र्यच । बंधयेन्मोदकांस्तस्याविष्णवेतान्समर्पयेत् ॥ किं वासंपाच्यसंपेष्यकृत्वातंतून्घृतेपचेत् । संक्षिप्यशर्करापाके मोदकान्नचयेत्प्रिये ॥ शालूकमोदकारूक्षादुर्जराःकफनाशनाः । किंचित्कषायाःपित्तघ्नाःशूलाध्मानकरामताः । विष्टंभकरणाःख्याताःशीतसंनाशनास्तथा । एवंशृंगाटकादीनां मोदकान्नचयेत्प्रिये ॥ गुणाःकंदानुमानेनकल्पयेच्चानिघंटुतः । ग्रंथभूयस्त्वभीतोहंनब्रवीमिविधिंपृथक् ॥

अर्थ–अब शालूक (कमलकंद) के लड्डूओंकी विधि कहतेहैं कमलकंदके ऊपरके छिलकेको चाकूसे दूरकर उनको सिजावे जब सीज जावे तब उनको पीसके बडे करे उनको घीमें सेके फिर उनको कूटकर चासनीमें मिलाय लड्डू बनाय लेवे । अथवा कमलकंदको सिजाय और पीसकर सेव करे उस सेवोंको चासनीमें तलके लड्डू बनावे । ये लड्डू रूक्ष, दुर्जर, कफनाशक, कषेले, पित्तनाशक, शूल करता, अफराकारक, मलस्तंभकारी और शीतनाशकहैं । इसीप्रकार कसेरू, सिंघाडे, आदिके लड्डू करने चाहिये उनके गुण उसी उसी कंदके समान जानने जिनको इनके गुण देखने की इच्छा होय वो इस ग्रंथके निघंटुभागमें जो पीछे छपेगा उसमें देखलेना इसजगे ग्रंथविस्तारके भयसे नहीं लिखे ।

अथ क्षीरशाकाकृतिगुणाः ।

दुग्धंवादधिवातक्रेसमभागेनमेलयेत् । ततोयावद्भवेत्पिडंतावदेवंविपाचयेत् ॥ शर्करापूरणेनैव तस्यकार्याचचक्रिका । घृतेसंपाचितासातुक्षीरशाकेतिकथ्यते ॥ कफदापुष्टिदागुर्वीवृष्याहृद्याप्रकीर्तिता । वाताग्निनाशनीचोक्तादीप्ताग्नीनांहितामता । व्यवायिनामनिद्राणांसुहितेपरिकीर्तिता ॥

अर्थ–दूध अथवा दहीको छाछमें समान भाग मिलाय अग्निपर पचावे जब औटते औटते गोला होजावे तब उसमें बूरा मिलाय टिकिया करे और उनको घीमें तले इसको क्षीरशाका कहतेहैं । यह क्षीरशाका कफ और पुष्टिको करे, भारी, वृष्य हृदयको चल देनेवाली और वायु तथा जठराग्नि इनको नाश करे उसीप्रकार जिनकी जठराग्नि तीव्रहो उनको और जो निरंतर मैथुन करनेवालाहैं उनको और जिनको निद्रा नहीं आतीहो उनको हितकारीहै ।

अथ निष्पंदः।

दधिदुग्धेसमेकृत्वापचेदर्द्धावशेषकम् । तस्मिंस्तिलांस्तंदुलांश्चचारकंपनसास्थिच ॥ मातुलुंगस्यखंडानितस्मिन्दुग्धसमं घृतम् । सितांनिक्षिप्यविपचेत्तस्मिन्व्योषंसचंद्रकम्॥ निक्षिप्योत्तार्यनिष्पंदोधातुवृद्धिकरोगुरुः । हृद्यश्चवातपित्तघ्नोमुनिभिःपरिकीर्तितः ॥

अर्थ-दही और दूध समभाग एकत्र कर अर्धशेष रहनेतक औटावे फिर उसमें तिली, चावल, चिरोंजी, पनसकी गुंठली, बिजोरेके टुकडे तथा दूधके समान घी और बूरा डालकर जबतक नरम खोहा न होय तबतक औटावे औटते समय उसमें सोंठ, मिरच, पीपल और कपूर डालके उतार लेवे इसको निष्पंद कहतेहैं । यह निष्पंद धातुवर्द्धक, भारी, हृदयको बलकर एवं वातपित्त संबंधी रोगोंको दूर करे ।

अथ पललम् ।

पललंतुसमाख्यातमैक्षवंतिलपिष्टकम्।पललंमलकृद्वृष्यंवातघ्नंकफपित्तकृत् । बृंहणंपौष्टिकंस्निग्धं गुरुमूत्रानिवर्त्तकम्॥

अर्थ-तिल और गुड इन दोनोंको एकत्र कर कूटे फिर उसके लड्डू बाँधे इनको संस्कृतमें पलल और भाषामें तिलकुट या तिलभुग्गा कहते हैं । यह मलवर्द्धक, वृष्य, वातनाशक, कफपित्तकारक, धातुवर्द्धक, पुष्टिकारी, स्निग्ध तथा भारी एवं मूत्रनाशक है ।

अथ तिलमोदकाः।

वितुषान्सुतिलान्भर्ज्यगुडपाकेनमोदकान् ।
कृत्वातेचसमीरघ्ना वीर्यपुष्टिबलप्रदाः ॥

अर्थ-तिलका छिलका दूर कर भूने और उसमें गुडकी चासनी मिलाय लड्डू बाँधले ये तिलके लड्डू वातनाशक और वीर्य, पुष्टि और बलको देते हैं ।

अथ मुद्गदलमोदकाः (मूगदलके लड्डू)

समाज्यशर्कराःकांतेमुद्गसक्तुविनिर्मिताः । एलादिचूर्णसंयुक्ता घर्मर्त्तौहितकारकाः।प्रियेमुद्गदलाख्यास्तेमोदकाः परिकीर्त्तिताः॥

अर्थ-अब मुद्गदल मोदककी विधि कहते हैं, भूनेहुए मूंगके चूनमें बराबरका घी और बूरा तथा इलायचीके दाने आदि मसाला मिलाय लड्डू बाँधे, इसको मुद्गदलके लड्डू कहते हैं । ये मूंगदलके लड्डू उष्णकाल अर्थात् गरमियोंमें हितकारी हैं ।

अथ पायसमाह ।

दुग्धेषोडशप्रस्थेसुतंडुलानांप्रस्थैकंकांते । अथवाप्रस्थद्वितयं मंदवह्निनाविपाचयेच्छनकैः ॥ नातिद्रवंघनकुचेनातिघनंभो यदामधुसमंस्यात् । उत्तारयेत्कदुष्णोसिताऽष्टमांशाप्रक्षेप्या- पयसः ॥ घृतंसितार्धंबहुलारजः पलैकंमृद्वीकाष्टपला । बादा- मस्यशरावंक्षिपेत्पायसेहिखंडशः कृत्वा ॥ तत्पायसंनितंवि- निधातुवर्द्धकंचदुर्जरंबल्यम् । विष्टंभ्यरुचिकफकरंमेदोवृद्धिप्र- दंचगुरुकांते ॥ कुरुतेचअग्निमांद्यंलोहितापित्तप्रणाशनंख्या- तम् । हरतेपित्तंवातंहरयेसततंनिवेदयेच्चततः ॥

अर्थ-अब चावलकी खीरके बनानेकी विधि कहते हैं, दूध १६ शेरमें १ शेर अथवा २ शेर चावल डालकर उसको मंदमंद अग्निसे पक्क करे, पक्क करते समय कौंचासे बारबार चलाताजाय तदनंतर सहतके समान गाढी हो जावे तब उतारकर उसमें २ शेर बूरा, १ शेर घी, चार तोले इलाइचीका चूर्ण, आठ पल किसमिस, बदामके टुकडे ८ पल डालके कौंचासे चलाय देवे इसको पायस कहते हैं। यह पायस धातुवर्द्धक, दुर्जर, भारी, बलदायक तथा विष्टंभी, एवं अरुचि, कफ, मेद और अग्निमांद्य इनको करे है । उसीप्रकार रक्तपित्त तथा वादीको दूर करे ।

अथ नालिकेरपायसगुणाः ।

दुग्धेचनालिकेरंसूक्ष्मंकृत्वाविपाचयेच्छनकैः । नातिद्रवंघ- नंवासिताज्यबहुलागोस्तानिकादियुतम् ॥ तत्स्निग्धंचशीतलं गुर्वतिमधुरंसुपौष्टिकंवृष्यम् । वातंचरक्तपित्तंतथाम्लपित्तंवि- शेषतोजयति ॥

अर्थ-जब नारियलकी खीर बनानेकी विधि कहते हैं, नारियलकी गिरीको बारी- क कतर अथवा उसको घीयाकसमें कसके पूर्वोक्त विधिके समान दूध आदि लेकर खीर करे यह खीर स्निग्ध, शीतल, भारी, अत्यंत मधुर, पौष्टिक तथा वृष्य होकर वात, रक्तपित्त और अम्लपित्त इनको नाश करे ।

अथ लप्सिका (सीरा)

प्रस्थैकासमिताकांतेतत्समंसर्पिरंगने । भर्जयित्वायदापश्ये-

त्कणशश्चघृतंपृथक् ॥ भर्जितेतिविजानीयात्तदेयंसमिताप्रिये । ततःकृत्यंप्रवक्ष्यामित्वंशृणुष्वसमाहिता ॥ प्रस्थैकासार्द्धप्रस्थावाद्विप्रस्थावासुशर्करा । त्रिप्रस्थेक्षीरकेनीरेवाविपाच्या प्रयत्नतः ॥ मलमुत्तार्यतन्नीरंतत्कटाहेविनिक्षिपेत् । यत्र साशमितापक्वाज्वलच्चुल्युपरिस्थिता ॥ ततःसंचालयेद्दर्व्या यावदाज्यंनदृश्यते । मरिचश्रीसुमैलानांततश्चूर्णंविमिश्रयेत्॥ ततः संचालयित्वातुसमुत्तार्यनिधापयेत् । प्रोक्तासालप्सिका गुर्वीवृष्यास्निग्धाबलप्रदा । धातुश्लेष्मकराचापिमधुरारसपाकतः । वातपित्तप्रशमनीकमनीयगुणालये ॥

अर्थ-इसको कोई सीरा और कोई देशके मनुष्य इसको मोहनभोग कहते हैं गेहूंका चून १ शेर ले उसको शेरभर घीमें भूने जब भूनते भूनते उस चूनके किनका पृथक् पृथक् और कुछ लाल हो जावे तथा उनमेंसे घी बाहर निकालने लगे तब जानेकी चून भुनगया, पीछे उसी प्रकार एक अथवा डेढ किंवा दोशेर बूरा तीनशेर दूध अथवा पानीमें भिगोकर औटावे जब ऊपर उसके मैलकी मलाई आवे उसको निकालडाले इसप्रकार दूध प्रथम तयार कर उस भुने हुए चूनमें मिलावे । और कौंचासे चलाता-जाय जब चलाते चलाते कुछ घी पृथक् दीखने लगे तब उसमें काली मिरच, लोंग, छोटी इलायची इनका चूर्ण करके डाले सबको मिलाय कढैयाको उतार लेवे । यह मोहनभोग भारी, वृष्य, स्निग्ध, बलदायक, धातु तथा कफवर्धक, रसकालमें तथा पाककालमें मधुर और वातपित्तनाशकहै ।

अथ भैमीलप्सिका ।

प्रियेभैमीलप्सिकायाविधिरन्यस्तुपूर्ववत् । समानाशर्करा पिष्टादंबुजाक्ष्यपरंशृणु ॥ नालिकेरस्यमज्जानंसूक्ष्मंखर्जूरमंगने । द्राक्षामेलांत्वचांविश्वंमरिचंकृत्यखंडशः ॥ निःक्षिप्य चालयेद्दर्व्यासमुत्तार्यनिधापयेत् । इयंगुणैर्लप्सिकेवशीतकाले हितावहा ॥

अर्थ-इस भैमीलप्सिकाकी विधि मोहनभोगके समानहै, परंतु इसमें बूरा चूनके समान लेना चाहिये तथा बारीक कतरी हुई गिरी, छुहारे, दाख, इलायची, दालची-

नी, सोंठ काली मिरच, इनके टुकडे कर डाले तो भैमी लप्सिका बने इसके गुण लप्सिकाके समानहैं । परंतु यह शीतकालमें विशेष सुखदायक है ।

अथ चंद्रहासा लप्सिका।

चंद्रहासालप्सिकायाःपाकंकुर्याद्धिपूर्ववत् । घृतंपिष्टसमंक्षीरं द्वयोस्तुल्यंसितापिच।कर्पूरमेलांमरिचंक्षिप्त्वासंचालयेत्ततः । समुत्तार्यभजेदेषावृष्याबल्याकफप्रदा । धातुसंवर्द्धिनीगुर्वी वातपित्तहरामता ॥

अर्थ–चंद्रहासा लप्सिकाकी विधि पूर्वोक्त प्रमाणहै, विशेषता इतनीहै कि, इसमें घी सूजीके समान और दूध दोनोंके समान तथा बूरा दूधके समान डालना चाहिये, जैसे-सूजी १ भाग, घी १ भाग, दूध २ भाग, और बूरा २ भाग उसीप्रकार भीम-सेनी कपूर, इलायची, काली मिरच इनका चूर्ण करके डाले यह चंद्रहासा लप्सिका वृष्य, बलदायक, कफकरता, धातुवर्धक तथा भारीहै । और वातपित्तनाशकहै ।

अथ फेनिका ।

समितामरविंदाक्षिकिंचिदाज्यविमिश्रिताम् । मर्दयेदंबुनागाढां कारयेद्वर्त्तिकास्ततः ॥ सन्निधायसजूःसर्वाःकाष्ठदंडेतुवेष्ट-येत् । ताश्चच्छुरिकयाखंडचपुनःस्थाप्यसुपट्टके ॥ घृतनीर-युतेनैवशालिचूर्णेनलेपयेत् । पुनःसंवृत्यचैतासांलोब्नींसम्य-क्प्रकल्पयेत् ॥ वेल्लयेत्तांततःस्थूलामंगुलोत्सेधकांपचेत् । घृतेपक्कांसमुद्धृत्यसितापाकेनवेष्टयेत् ॥ साज्यैषाफेनिकागुर्वी बृंहिणीबलपुष्टिदा । मधुरादीपनीरुच्यावातपित्तहरास्मृता ॥

अर्थ–मैदामें घीका मोयन देकर उसको गाढा उसने फिर घृत लगाकर अच्छी रीतिसे जबतक नरम न होवे तावत्कालपर्यंत उसका मर्दन करे फिर उसकी सैमईके समान वत्ती करे उन सबको एक लकडीसे लपेट देवे पश्चात् छुरीसे कतर टुकडे कर फिर उन टुकडोंको पटेपर धरके उनमें चावलोंकी चून घी और पानी समान भाग मिलाकर लेपकरे और गोलाकर एक अंगुल मोटा वेले फिर घृतमें सेके जब पक्क होजावे तब उनको निकाल एकतारी चासनीमें पाग लेवे इसको फेनी ऐसे कहतेहैं । यह फेनी भारी, धातुवर्धक, बलकर, पुष्टिकारक, मधुर, दीपन, रुचिकारी तथा वातापित्तहरहै ।

अन्यः प्रकारः ।

समितांपूर्ववन्मर्द्यंकारयेद्वर्तिकाश्चताः । घृताक्ताःसंहताःसर्वाःपीठस्योपरिधारयेत्॥वेल्लयेद्वेल्लनेनैतायथैकापर्पटीभवेत् । शकटंलेपयेत्तस्यांततःशस्त्रेणखंडयेत् ॥ एकीकृत्यततोलोम्नींकल्पयेद्वेल्लयेत्ततः।एवंवारत्रयंकृत्वावेल्लयेदंगुलोच्छ्रिताम्॥ ततस्तांपाचयेदाज्येफेनिकांपूर्ववद्गुणाम् । सुगंधयाशर्करयातदुद्धूलनमाचरेत् ॥

अर्थ-फेनीकी दूसरी विधि कहते हैं । मैदाको पूर्वोक्त रीतिसे उसनकर उसकी वत्तीकर उसमें घी लगाय एकसे एक मिलाय मैदाके ऊपर धर देवे और चकलोवेलनसे वेल उनकी एक पापडीकरे फिर उसके ऊपर सकट (सांठा) लगाय छुरीसे टुकडे करे उन टुकडोंको एकके ऊपर दूसरा धरे फिर उनको वेले इसप्रकार तीन बार करे तथा एक अंगुलभर मोटी वेलकर घीमें सेके फिर इसके ऊपर खांडकी नीसाचचढावे इसके गुण पूर्वोक्त फेनीके समान जानने ।

शकट ।

शकटंवदकंजाक्षशृणुकंजविलोचने ।
शालिचूर्णघृतंनीरंमथितंशकटंभवेत् ॥

अर्थ-हे प्राणप्रिय! आप शकट कहो हे कंजविलोचने ! चावलोंका चून, घी और पानी इन तीनों पदार्थोंको समान लेकर मिलनेको शकट कहतेहैं ।

अथ पत्रफेनिका ।

धौततंदुलजंपिष्टंमर्दितंपयसाद्रवम्।निशिपर्युषितंप्रातःपुनर्नीरेणमर्दयेत् । वटादिपत्रकेतच्चपत्रवत्परिलेपयेत् । किंचित्तोयान्वितेभांडेतृणगर्भेविपाचयेत् । लघ्वीवृष्याकषायेयं वातघ्नीपत्रफेनिका ॥

अर्थ-धुले हुए चावलोंके चूनको रात्रिमें पानीमें भिगोकर धरदेवे तथा प्रातःकाल थोडा पानी डालके मथे फिर वडके पत्तेपर अथवा दूसरे पत्तेपर उसका पतला लेप करे फिर एक पात्रमें थोडा पानी भरके उस वर्तनको आधा तिनकोंसे भरदेवे उन तिनकोंके ऊपर पूर्वोक्त लेप करेहुए पत्तोंको धरके अग्निसे पक्क करे जब उस पत्तेपर वह चावलका चून पक्क होजावे तब उस पत्तेपरसे उचेल घृतमें पक्क करे इसको पत्रफेनी कहतेहैं वह पत्र फेनी हलकी, वृष्य, कषेली और वातनाशक है ।

गोधूमसंभवालध्वीछर्दिघ्नीपत्रफेनिका । रुच्याबल्याऽम्लपित्तघ्नीदाहघ्नीचप्रकीर्त्तिता । माषजाबृंहणीगुर्वीस्निग्धाबल्या चशुक्रला । स्त्रीषुहर्षप्रदाकांतेकीर्तितापत्रफेनिका ॥

अर्थ–गेहूंकी पत्रफेनी हलकी, वांतिनाशक, बलकारी, रुचिकारी, एवं अम्लपित्त और दाह इनको नाश करे उडदकी पत्रफेनी, भारी, धातुवर्द्धक, स्निग्ध, बलकारी, वीर्यवर्द्धक और वृष्य है।

अथ तंतुफेनिका।

ईषत्सैंधवसंयुक्तांसमितामलिकुंतले । घनंसंमर्द्यसंकुटचकृत्वामृदुतरांततः । सेविकारचयेत्तस्यास्ताभिःकंजविलोचने । विचित्रंरचयेद्गुच्छमुष्णीषाकारमेवच । तस्योपरिघृतं लिंपेन्मथितंनवनीतवत्॥पुनःसंवेष्टयेत्ताभिःकिंचिदाकर्ष्यवर्द्धयेत्।घृतेसंपाचयेत्तस्यांपचंत्यांसंविचालयेत् । सूक्ष्माभिश्चशलाकाभिःसुपक्कांतुसमुद्धरेत् । अन्यपात्रेतुसंस्थाप्यसितामुपरिनिःक्षिपेत् । बृंहणीग्राहिणीवृष्याशुक्रलाचत्रिदोषहा। लध्वीचमधुरापाकेतन्वंगिरुचिकारिका । बालेबलवतिप्रोक्ताबल्यैषातंतुफेनिका ॥

अर्थ–मैदामें थोडासा सैंधानमक मिलाय फिर पानीसे उसने और मुक्की देकर उसको नम्र करे पीछे उसके सेवसे बनाय पगडीके समान लपेटा देकर गोल करे फिर उसके ऊपर पानीमें घी मथकर जब मक्खनके समान होजावे तब लगावे फिर उसको मालाके समान लंबी करे और फिर उसीप्रकार छोटीसी घडी करे उसको घृतमें तले और तलतेसमय बारीक काँटेसे चलाताजाय जब परिपक्क होजावे तब उतारकर बक्खरमें डाल खांड चढायकर निकाल लेवे यह तंतुफेनी अर्थात् तारफेनी सप्तधातुवर्द्धक, मलको बाँधनेवाली, वृष्य, वीर्यवर्द्धक, त्रिदोषनाशक, हलकी, पाकके समय मधुर, रुचिकारी और बलदायक है।

अथ गुलोरिका (शक्करपूरी)।

समितातोऽष्टमंभागंघृतंसम्यग्विमिश्रयेत् । घनंनीरेणसंमर्द्य कुर्याच्चैवातिकोमलाम् । ततःपिचुमितांनीत्वाकृत्वालोप्त्रींमठाकृतिम् । शर्करांपूरयेत्तस्यांमुद्रयेत्तन्मुखंदृढम् । ततस्तां

वेल्लयेद्वालेवतुलांपूलिकाकृतिम् । मंदाग्नौपाचयेदाज्येसाच ख्यातागुलोरिका । गुर्वीयंललनेवृष्याधातुसंवर्धिनी मता । वातपित्तप्रशमनीकारयेच्चगुडेनवा ॥

अर्थ-गेहूंकी मैदामें आठवाँ हिस्सा घी डालके गाढी उसने फिर कुछ जलके छींटे देकर और मुक्की देदे कर नम्रकरे फिर उसमेंसे अनुमान १ तोलेकी लोई तोड मूंसके समान कर उसमें मिश्रीका महीन चूरा भर और मुख बंदकर उसको चकला बेलनसे चंद्रमाके समान गोल वेलकर तत्ते घीमें छोडदेवे जब सिकजावे तब निकासले इसको गुलोरीया अर्थात् शक्कर भरी पूरी कहतेहैं । यह गुलोरिका भारी वृष्य सप्तधातुको बढानेवाली और वातपित्तनाशकहै इस गुलोरिकाको गुडकीभी करतेहैं इसीप्रकार मेवाकीधूडी बनातेहैं ।

अथ दुग्धकूपिका (गुलाब जामुन) ।

दुग्धमम्लेनसंभेद्यपाचयेन्मंदवह्निना । गाढीभूतेप्रियेतस्मिन्पिष्टंतंदुलजंसमम् । मिश्रयित्वा च रचयेत्कूपिकांजंबुसन्निभाम् । अतीवरमणीयांचपाचयेद्वाघृतेततः । घनंसम्यक्छृतंदुग्धंतस्यामेवप्रपूरयेत् । पश्चात्तेनैवपिष्टेनमुखंतस्याविमुद्रयेत् । पुनस्तस्यामुखंयुक्त्यापाचयेद्वैघृतेततः । चतुस्तारे सितापाकेप्लावयित्वासमुद्धरेत् । अथवाजंबुसदृशंकृत्वापिंडंविपाचयेत् । तस्यमध्यंतुशस्त्रेणयत्नान्निष्कास्यपूर्ववत् । दुग्धेनपूरयेद्वक्त्रंमुद्रयेत्पिष्टकेनच । पाचयेद्द्रष्टयेत्तद्वात्सितापाकेनशोभनम् । सादुग्धकूपिकाख्यातागुर्वीबल्याचशीतला । वातपित्तहराख्याताशुक्रलातृप्तिपुष्टिदा ॥

अर्थ-प्रथम दूधमें इमली आदि खटाईका रस डालकर कुछ गरम करे जब फटजावे तब फिर खूब अग्निदेवे जब जाने कि अब थोडी देरमें खोहा होनेवालाहै उससमय बराबरका चांवलका चून मिलावे फिर उसमेंसे थोडा चून लेकर उसकी जामुनके समान पोली कुप्पीसी बनाय तत्ते घीमें छोडदेवे जब वो सिकजावे तब निकाल उनके भीतर गाढा गाढा दूध भर और उनका मुख उसी चूनसे बंद करदेवे फिर उनके केवल मुखमात्रको घीमें सेक निकाललेवे, फिर खांडकी चौतारी चासनीमें उनको भिगोकर निकाल लेवे, अथवा उस पूर्वोक्त खोहेकी जामुनके समान गोली बनाय घीमें सेकलेवे फिर

निकाल छुरीसे चीरके उनके भीतरसे खुरचके पोली करे और उनमें गाढा गाढा दूध भर मुख, बंद कर घीमें तलके निकालले उनपर चासनी चढावे इसको दुग्ध-कूपिका कहतेहैं और भाषामें उनको गुलाबजामुन, कहते हैं ए गुलाब जामुन भारी बलकारी, शीतल, वातपित्तनाशक, वीर्यवर्द्धक तृप्तिकर और पुष्टिकारकहैं ।

अथ शालिपूपकृतिगुणाः (अँदरसे)

धौततंदुलजंपिष्टंघृतमिश्रंगुडांबुना । संमर्द्यापूपकंकृत्वातस्यै-कांगेचखाखसम्।लग्नंकृत्वाततश्चाज्येपाचयेच्छालिपूपकम् । शालिपूपोरुचिकरोवृष्यःस्निग्धश्चशीतलः । अतीसारप्रशम नोमतःशुक्काभिसारिके ॥

अर्थ–धुलेहुए चावलके चूनमें थोडा घी मिलायकर फिर गुडके पानीसे उसने फिर उसकी लोई तोडकर पूडीके समान बेले और उसके एक ओर खसखसके दाने लगा-यके घीमें सेकै इसको शालिपूप कहतेहैं । कोई अँदरसे कहतेहैं ये शालिपूप रुचिकारी, वृष्य, स्निग्ध तथा शीतल हैं । एवं अतिसाररोगका नाशक हैं ।

अथाऽपूपकृतिगुणाः (पूआ) ।

समितामभितानंदेमर्दयित्वागुडांबुना । घृताक्तांचततोनी त्वाविल्वंविल्वपयोधरे । वेल्लनेनतुसंवेल्यचंद्रमंडलसन्निभम् । वर्त्तुलंपाचयेदाज्येसिद्धंज्ञात्वासमुद्धरेत् । अपूपोयंविलो-लाक्षिपुष्टिदोऽतिगुरुस्तथा । वातपित्तहरोवल्योहृद्योवृष्यो रुचिप्रदः ॥

अर्थ–मैदाको गुडके पानीसे उसनकर उसमेंसे चार तोले लेकर पूडीके समान बेलकर घीमें सेके इसको अपूप (पूआ) कहतेहैं । ये अपूप पुष्टिकारी, भारी, वात-पित्तनाशक, बलकारी, हृदयको बलदेनेवाले, वृष्य और रुचिदायकहैं । इसीप्रकार खांडके पूआ बनतेहैं । और कोई मैदाकी प्रतिनिधी गेहूंका चून डालतेहैं ।

अथ दधिपूपकृतिगुणाः ।

घनदध्नाघनंमर्द्यशालिपिष्टंघनस्तनि । कारयेद्वटकाकाराना ज्येसंपाचयेत्ततः । चतुस्तारेसितापाकेमज्जयित्वासमुद्धरेत् । दधिपूपाइमेवृष्यारुच्याधातुप्रवर्द्धनाः । अग्निमांद्यप्रदाव-ल्याःश्लेष्मलादाहतृड्डराः।वातपित्तहराहारलसत्पीनपयोधरे ॥

अर्थ-चावलके चूनको दहीमें उसनकर उसके वडे बनावे उनको घीमें सेक खांडकी चौतारी चासनीमें तले ये दहीके पूआ वृष्य, रुचिकारी, धातुवर्द्धक, मंदाग्निकारक, बलकर्त्ता तथा कफकारक, एवं दाह, तृषा, वात और पित्त इनको नाश करतेहैं ।

अथ चिरमंठकृतिगुणाः ।

समितामामितानंदेसर्पिषाक्तांविमर्दयेत् । घनामद्भिर्घनोरोजेततःकुर्यादमुंविधिम्॥किंचित्किंचिज्जलंदत्वामर्दयेद्धिपुनःपुनः। सुचिरंकोमलांकृत्वाकोमलांगिमनोहरे । ततः पूगमितंनीत्वावेल्यकृत्वाचपर्पटीम् । सूक्ष्मांपत्रनिभामेवंबह्वीःकृत्वानिधापयेत् । आज्यलिप्तास्ततस्तास्तुस्थापयेदुपर्युपरि। यावद्र्व्यंगुलमुत्सेधंततःकिंचिच्चवेल्लयेत् ।ततःशस्त्रेण संखंड्यत्र्यंगुलोन्मानकानि च । खंडान्येवपुनर्वेल्यतनूकृत्यप्रयत्नतः । चतुःकोणान्पचेदाज्येशर्कराढ्यांश्चभक्षयेत् । चिरमंठाइमेबल्यावृष्याधातुप्रवर्द्धनाः । गुरवोवातपित्तघ्नाः पुष्टिदाःपरिकीर्त्तिताः ॥

अर्थ-मैदामें थोडासा मोयन देकर मिलावे फिर उसे पानी डालकर भिजोवे तदनंतर थोडा पानी देकर वारंवार उसनकर नरमकरे फिर उसमेंसे सुपारीके समान लोई तोड गोलकर चकलापर वेलनीसे पतली पत्तेके समान वेले इसप्रकार बहुतसी पापडी वेलके उनमें घृतलगाय एकके ऊपर दूसरी धरे इसप्रकार धरनेसे जब दो अंगुलके अनुमान मोटी घडी होजावे तब उसको फिर कुछ वेलकर छुरीसे तीन तीन अंगुलके टुकडेकरे उन प्रत्येक टुकडोंको वेलकर घीमें सेकै इनको बूरेके साथ खाय ये चिरमंठ बलदायक, वृष्य, धातुवर्द्धक, भारी, वात पित्तनाशक और पुष्टिदायककहैं । इनको महाराष्ट्रभाषामें चिरोटे कहते हैं ।

अथ खाजा (खजला)।

अंभसित्रिदिनंप्लाव्यतंडुलांस्त्रिःप्रमार्जयेत् । शोषयेदातपे तेषांपिष्टंवस्त्रविगालितम् । तत्समंचघृतंगाढंमिश्रयित्वाप्रमंथयेत्॥ स्थापयेत्तच्छुभेपात्रेततःकुर्यादमुंविधिम्। समितामुभयोस्तुल्यामंभसामर्दयेद्दृढम् । कांतेचातिघनांकिंचिदाज्यलि

मंविकुट्टयेत् । भूयोभूयः प्रयत्नात्तद्गोलकंदृषताऽश्मनि । या-
वन्मृदुतरंपश्चाच्छिलायांसंप्रसार्यच । तत्रगर्त्तान्यंगुलीभिःक-
ल्पयित्वाप्रपूरयेत् । साज्यंतात्पिष्टकंयावद्गर्तपूरंमनोहरे । त-
तस्ताद्द्विगुणीकृत्यकुट्टयेच्चापिपूर्ववत् । एवंवारत्रयंकृत्वात-
तोनीत्वाऽक्षकंपृथक् । किंचिद्विस्तार्यांगुलीभिःकृत्वागर्ता-
निपाचयेत् । घृतेखाजेतिविख्याताभुक्ताशर्करयानरैः । स्त्री-
षुहर्षकरीह्येषागुर्वींपित्तानिलापहा । शुक्रलामधुराकांतेमधु-
राधरपल्लवे ॥

अर्थ—चावलोंको ३ दिन पानीमें भिजोवे, फिर तीन दिनके उपरांत तीन वार जलसे धोय शुद्धकर धूपमें सुखावे, फिर उनको पीस उनके चूनको कपडेमें छानलेवे फिर चावलके चूनके समान गाढा घी मिलावे, फिर इनदोनोंको खूब मथकर एक उत्तम पात्रमें भरिकै धरदेवे, तदनंतर उसके समान गेहूंकी मैदा लेकर उसको पानीसे उत्तम रीतिसे सानकर उसको ओखलीमें डाल मूसलको वारंवार घी लगाकर कूटे इस-प्रकार कूटकर नरम करे, तदनंतर उस कुटीहुई मैदाको एक स्वच्छ पट्टेपर रोटीके समान करके फैलाय देवे, उसमें पांचो उँगालियोंसे गडूढा करे, और ऊपर कहाहुआ चावलका चूनके लेपसे उन गड्ढोंको भरदेवे फिर उसकी घडी करके और गोल करके कूटे, ऐसे ३ वार करे उसमेंसे फिर सुपारीके समान लोई ले हाथोंसे चपटी करके उसमें पांचों उँगलियोंसे गडूढाकर घृतमें सेके इसको खाजा अर्थात् खजला ऐसे कहते हैं। इसको बूरेके [अथवा दूध बूरेके] साथ भोजन करनेसे वृष्य, भारी बात तथा पि-त्तनाशक धातुवर्द्धक और मधुरहै।

अथ मल्लपूपः (मालपूआ) ।

गोधूमपिष्टकंप्रस्थंगुडंपादोनप्रस्थकम् । शर्कराचेत्समानीरे
घोलयेत्तेनवारिणा । पिष्टंविलोडयेत्तावज्जलंदत्त्वापुनःपुनः ।
यावन्माक्षीकतुल्यंस्यात्ततःकृत्वात्विमंविधिम् । लोहमय्यांत-
त्तिकायांशरावैकंघृतंक्षिपेत् । तस्मिंस्तप्तेतुतद्घोलमाम्रमानं
चनिःक्षिपेत् । विस्तृतंचंद्रबिंबाभंघृतोपरितरेद्यदा । तदाप्र-
वर्त्तयेत्पश्चात्सिद्धंज्ञात्वामसुद्धरेत् । मल्लपूपइतिख्यातोवा-
तपित्तहरोगुरुः । बल्योऽयंमधुरोवृष्योहृद्योरुच्यःकफप्रदः ॥

अर्थ-गेहूंका चून १ शेर, तथा गुड तीनपाव, यदि खांड होवे तो चूनके बराबर ले, तदनंतर गुड अथवा खांडको पानीमें भिगोवे उस पानीमें चून डालके खूब मथे इसप्रकारकी उस पानीको मथते मथते सहतके समान पतला होजावे तब चूल्हेपर तई चढावे जब तईका घी खूब गरम होजावे तब उस मथे हुए पानीमेंसे चार चार तोले लेकर उस घीमें छोड देवे, वो फैलके घीके ऊपर आय जावेगा उसको पोनीसे पलट कर दूसरी ओरसे सेकै जब अच्छी रीतिसे सिकजावे तब उसको निकालले इसको मल्लपूप अर्थात् मालपूआ कहते हैं । ये मालपूए वातपित्तनाशक, भारी, बलकारी, मधुर, वृष्य, हृदयको बल देनेवाले रुचिकारी और कफकारक हैं । यद्यपि इनको चतुर्मास्य आदि महिनोंमें सदैव करते हैं परंतु पुरुषोत्तम महिनेमें तो प्रत्येक ग्रहस्ती करता है । इनीको अपूप और सहस्रच्छिद्र कहते हैं इस जगे तईका पैंदा चपटा होना चाहिये ।

अथ कुंडलिनी (जलेबी) ।

लोलाक्षिसमिताप्रस्थंप्रस्थंक्षीरेणमंथयेत् । नवीनेमार्तिकेभांडेक्षिपेद्बध्वाचतन्मुखम् । आतपेस्थापयेत्तावद्यावदम्लत्वमाव्रजेत् । ततोऽन्यपयसालोडचकुर्यान्माक्षीकसन्निभम् । सच्छिद्रेनालिकेरस्यपात्रेकृत्वांऽगुलीतले । तप्तिकायांघृतेतप्ते कृत्वांगुलींततः । द्विधावापित्रिधातत्रभ्रामयित्वाऽतिशीघ्रतः । रेखैकामुपरिन्यस्यचोत्थितांवर्तयेत्ततः । सुपक्कांकुंडलाकारांसितापाकेविनिःक्षिपेत् । मधुतुल्येततोनीत्वास्थापयेत्पंचभाजने । एषाकुंडलिनीवृष्याहृद्याधातुविवर्द्धिनी । तर्पणींद्रियवर्गाणांपुष्टिकांतिवलप्रदा ॥

अर्थ-शेर मैदाको शेरभर दूधमें मिलायके नए मिट्टीके वर्तनमें भरके उसका मुख बंदकर भीतरकी मैदा खट्टी होनेके वास्ते धूपमें धरे तदनंतर छिद्रयुक्त नारियलके पात्रमें अथवा मिट्टीके पात्रमें उसकी पैंदीमें छिद्र कर उसमें वो भीगीहुई मैदा भरके उसको तईके गरम घीमें उस छिद्रके द्वारा गेरै, इसप्रकार कि दो अथवा तीन फेरे गोल-गोल फिराकर उसके ऊपर जल्दीसे एक आडी रेखाके समान फिरावे फिर उस छिद्रको शीघ्र उँगलीसे बंद कर लेवे जब वो घीके ऊपर तैर आवे तब उसको पलट देवे जब सिक जावे तब उसे निकाल इकतारी चासनीमें भिगोकर थोडी देरमें निकाल

लेवे । यह जलेबी वृष्य, हृदयको बलदायक, धातुवर्द्धक, तथा इन्द्रियोंको तृप्त करनेवाली एवं पुष्टि, कांति और बल इनको देनेवाली है ।

अथ द्वितीयः प्रकारः ।

समितायांघृतंतावन्मिश्रयेद्वनितावरे। यावत्स्यान्मुष्टिकाबद्धं ततोनीरेणलोडयेत् । स्थापितंचाम्लतांप्राप्तंपुनर्दुग्धेनमंथयेत् । पूर्ववत्सकलंकृत्वाविधिंचापिगुणैःसमा ॥

अर्थ—मैदामें इतना घी मिलावे कि, जिसमें मुट्ठिमें लेनेसे बंधजावे, फिर उसको पानीसे मथकर जबतक खट्टी न होवे तबतक धरी रहनेदे, फिर दूधसे मथकर पूर्वरीतिके अनुसार जलेबी तयार करलेवे इसके गुणभी पूर्वोक्त जलेबीके समान हैं ।

अथ तृतीयः प्रकारः ।

नूतनंघटमानीयतस्यातःकुशलोजनः । प्रस्थार्द्धपरिमाणेन दध्नालिप्तेनलेपयेत् । द्विप्रस्थांसमितांतत्रदध्यम्लंप्रस्थसंमितम् । घृतमर्धशरावंचघोलयित्वाविनिःक्षिपेत् । आतपेस्थापयेत्तावद्यावद्यातितदम्लताम् । पूर्ववत्त्वखिलंकृत्यंगुणाज्ञेयाश्चपूर्ववत् ॥

अर्थ—नवीन मटका लेकर उसके भीतर आधसेर दहीका लेप करे फिर मैदा २ सेर तथा दही १ सेर और घी आधसराव डाल सबको मिलायदेवे फिर जबतक खट्टी नहीं हो तबतक धूपमें धरदेवे तदनंतर पूर्वोक्त प्रकारसे जलेबी बनाय लेवे इसके गुण पूर्वोक्त जलेबीके समान जानने ।

अथ घृतपूरः (घेवर) ।

पादांशसर्पिषामिश्रांसमितामामितप्रभे । घोलयेत्पयसाकृत्वाघोलंमाक्षीकसन्निभम् । तत्तिकोपरिसंन्यस्यातिर्यग्दंडंसुकाष्ठजम् ।तस्योपरिदृढंन्यस्यझर्झरंधातुनिर्मितम् ।तद्घोलंतत्फणायांचधृत्वाहस्तेनघर्षयेत् । तच्छिद्रैर्निःसृतंघोलंतस्यांतप्ते घृतेपतेत् । द्व्यंगुलोत्सेधकंयावद्भवेत्तावन्निपातयेत् । ततः पक्वंसुविज्ञायाग्रेयेशीघ्रंसमुद्धरेत् । संक्षिपेच्छर्करापाकेमधुतुल्येसुशोभने । ततउद्धृत्यचान्यस्मिन्न्यसेत्पात्रेसुविस्तृते ।

१ परिभ्राम्यघृतेतप्तेपचेत्तन्मंदवह्निना । सुपक्वां कंकणाकारां सितालेहे विनिक्षिपेत् । सातुकुंडलिका नाम्ना कचिच्चजलवल्लिका। जलवल्ली सरावृष्यात्बृंहणी दृष्टिपुष्टिदा । धातस्तन्यकरीहृद्याविशेषाद्बलतुष्टिदा । ।

घृतपूरोगुरुर्वृष्योहृद्योबल्यःकफप्रदः । मांसलोहितशुक्राणां
वर्द्धनश्चप्रियोमतः । सेवितोनाशयत्याशुवातंपित्तंक्षतंक्षयम् ॥

अर्थ-मैदामें चतुर्थांश घी मिलाय तदनंतर दूध डाल सहतके समान पतला कर हाथोंसे मथे फिर तईपर एक सीधी लकडी धरके उसपर झझरी धरके उसमें वो मथीहुई मैदा भरके हाथोंसे रगडे इसप्रकार करनेसे झझरीके छिद्रोंसे वो मैदा निकल कर तईमें पडने लगतीहै इसप्रकार दो अंगुल मोटा घेवर होनेतक गेरे, फिर बंद करके उसको पचावे, जब वह अच्छी रीतिसे परिपक्व होजावे तब उसको निकाल एकतारी चासनीमें गेर देवे थोडी देर उसमें रखकर निकाललेवे यह घेवर भारी, वृष्य, हृद्य, बलकारी तथा कफकर्ता, एवं मांस, रक्त और वीर्य इनको बढावे तथा प्रिय है । उसीप्रकार वात, पित्त, क्षत और क्षय इनका नाशकहै । इस घेवरमें कपूर, मिरच और मिलावे जैसे लिखाहै " घृतपूरोयमुद्दिष्टः कपूरमरिचान्वितः " ।

अथ नारिकेलजघृतपूरः ।

नारिकेलफलंस्वार्द्रंसूक्ष्मंयत्नेनकर्त्तयेत् । सूक्ष्मंगोधूमचूर्णंतु
शर्करामपिमिश्रयेत् ।दुग्धेनालोड्यप्राग्वच्चकारयेद्घृतपूरकम् ॥

अर्थ-मैदामें बूरा और कतरी हुई गीली नारियलकी गिरी मिलाय दूधमें मथके पूर्वोक्त प्रकार घेवर बनाय लेवे ।

अथ क्षीरघृतपूर ।

दुग्धंसंपाचयेद्गाढंपिंडंकृत्वासशर्करम् । ततआम्रद्वयंनीत्वाकृ-
त्वेंदुमंडलाकृतिम् । फलाकारंतुवाकृत्वापचेदाज्येप्रयत्नतः ।
मज्जयेच्छर्करापंकेघृतपूरंमनोरमे ॥

अर्थ-दूधका खोहा कर उसमें मिश्री मिलाय फिर उसमेंसे आठ आठ तोले ले वडेके समान अथवा फलके समान करके घृतमें सेकै फिर इसको चासनीमें तलके निकाल लेवे, तो दूधका घेवर सिद्धहो ।

अथ शालिपिष्टादिघृतपूराः ।

दुग्धमर्द्धशृतंकृत्वाशालिपिष्टंसशर्करम् । संमिश्र्यवटकंकृत्वा
पाचयेच्चापिपूर्ववत् । शृंगाटककसेर्वादिपिष्टजंचाविचक्षणे ।
अनेनविधिनाकुर्याद्घृतपूरंसुशोभनम् ॥

अर्थ-अधोटा दूध करके उसमें धुलेहुए चावलका चून कपडछान कराहुआ और खांडमिलायके परातमें उनसे पीछे वडीक सदृश करके घीमें सेकै फिर उनको उक्त-

विधिके समान चासनीमें तलके तयार कर ले इसे चावलका घेवर कहते हैं इसीप्रकार सिंघाडे तथा कसेरू इत्यादिकोंका घेवर बनाने चाहिये ।

अथाम्ररसघृतपूरः ।

पक्वाम्रस्यरसंकांतेघृतयुक्तंविपाचयेत् । घनीभूतंसमुत्तार्य कारयेद्वटकाकृतीन् । ततःसंपाचयेदाज्येसितापाकेचपूर्ववत् । रोचनादीपनाबल्याश्चूतजाघृतपूरकाः । हृद्यावृष्याश्चगुरवो वातपित्तप्रणाशनाः ॥

अर्थ—पके हुए आमके रसमें घी मिलाय एकत्र करे उसको अग्नि देकर गाढा करे, फिर उसके वडेके समान घेवर बनाय घीमें सेके और ऊपर कही विधिके अनुसार चासनीमें तलके काढलेवे ये घेवर रुचिकारी, दीपन, बलदायक, हृदयको बल देनेवाले, वृष्य, भारी और वातपित्त इनको नाश करनेवाले हैं ।

अथ द्वितीयःप्रकारः ।

पक्वाम्रस्यघृतेनवैसुविपचेन्मंदाग्निनायत्नतो यावत्स्यात्सुघनस्तथापुनरयंपाच्यःसितापंकके । संजातेचघनेततःपृथुतरेविस्तीर्णपात्रेतुतं संलिपेत्तुयथांगुलंघनतरंतंखंडशः कर्त्तयेत् ॥ सोयंचाम्ररसोद्भवोघृतपुरोहृद्योगुरुर्दीपनोरुच्यःपित्तमरुत्प्रणाशनकरोबल्योऽतिवृष्योभवेत् । एवंचान्यपदार्थजोघृतपुरस्तत्तद्गुणैरन्वितो : भीमेनाप्रियभोजनेनचपुराकृष्णार्थमुत्पादितः ॥

अर्थ—पके आमके रसमें घी मिलाय मंदाग्निसे पक कर गाढा करे, फिर उसको खांडकी चासनीमें डालके अच्छी रीतिसे उलटपलट उतार लेवे, और पट्टेपर घी चुपड इसको १ अंगुलके अनुमान मोटा ढाल देवे जब शीतल होजावे तब इसकी कतली कतर लेवे इसको आम्ररस घृतपूर कहते हैं। यह घेवर हृदयको बलदायक, भारी, दीपन, रुचिकारी, वातपित्तनाशक, बलकारी और वृष्यहैं । इसप्रकारके घेवर भीमसेनने श्रीकृष्णकेवास्ते तय्यार करे थे इसी प्रकार दूसरे पदार्थका घेवर करते हैं।

---

१ अथ कसेरुघेवर । कसेरुचूर्णं निक्षिप्यपाकपिंडीकृतं पयः । कसेरुघेवरं कुर्यात्पूर्ववत्खंडमंडितम् ॥

अथ संयावः (गूझा गुझिया)।

गोधूमचूर्णंकांतेभर्जयेत्सर्पिषाततः । शर्करामिश्रितंकृत्वा लवंगैलामरीचकम् । सचंद्रंचूर्णयेत्तस्मिन्मिश्रयेच्चततःप्रिये । घृताक्तांसमितामन्यांमर्दयेत्पयसाघनाम्। ततःपूगमितांनीत्वा वेल्ल्यकृत्वासुपर्पटीम्।तस्यांतत्पूरयेच्चूर्णंसंपुटीकृत्यमुद्रयेत्। मुखमस्याःप्रगुंथ्यापिकुर्यात्कंकणचिह्नवत् । पाचयेच्चघृतेपक्वंसितापंकेनलेपयेत् । संयावोऽयंगुरुर्वृष्योहृद्योधातुप्रवर्द्धनः । मधुरोवातपित्तघ्नोभग्नसंधानकृत्सरः ॥

अर्थ—संयाव (गुझिया) बनानेकी विधि कहते हैं । गेहूंका चून घृतमें भून उसमें मिश्री और लोंग, इलायची, कालीमिरच और कपूर इनका चूरा मिलाय धररक्खे, फिर मैदामें मोयन दे दूधमें उसने फिर उसमेंसे सुपारीके समान लोई तोडकर पापडी वेले, उसमें पूर्वोक्त चूर्ण (अर्थात् भुनाहुआ मिश्री आदि मिला चून) भरे, फिर उसको लंबीकर उसके मुखको नखसे कंकणके समान गूंथे फिर इसको घीमें सेके, इसको संयाव अर्थात् गुझिया कहतेहैं, और दूसरा संस्कृत नाम इसका गुह्यकहै, जैसे लिखाहै "गुह्यको बृंहणो वृष्यो हृद्यःपित्तानिलापहः" यह भारी, वृष्य, हृदयको बलकारी, धातुवर्द्धक, मधुर, वातपित्तनाशक भग्नसंधानकारक और सारक है ।

अथान्यः प्रकारः ।

शुद्धतंदुलजंपिष्टंसूक्ष्मंवस्त्रावगालितम् । यत्पात्रप्रमितंपिष्टंतत्पात्रप्रमितंजलम्।जलमग्नौप्रताप्यैवततःकुर्यादमुंविधिम्।किंचित्किंचित्क्षिपन्पिष्टंदर्व्यासंचालयेन्मुहुः । घनीभूतंसमुत्तार्यकृत्वाशीतेचपर्पटीः । तासांमध्येन्यसेत्पूर्णंश्रीफलैलासितोद्भवम् । सिताधान्याकजंचूर्णंकिंवाविश्वगुडोद्भवम् । ततोद्विगुणितांगुंथेन्नखेनार्द्धेंदुसन्निभाम् । पाचयेच्चघृतेसम्यक्संयावोयंचकीर्तितः । तृणगर्भेऽथवाभांडेसनीरेस्वेद्यपाचयेत् । संयावोऽयंगुरुर्वृष्योविष्टंभीतृप्तिकारकः । श्लेष्मलोवातपित्तघ्नोघनपीनपयोधरे ॥

अर्थ–धुलेहुए चावलोंको पीस कपडेमें छानलेवे; फिर इस चूनके समान पानी चूल्हेपर चढावे, जब वो पानी खौलने लगे तब उसमें चावलका चून थोडा थोडा डालता जाय और कलछीसे चलाता जाय इसप्रकार सब चूनको उसमें डालके पक्व करे जब अच्छी रीतिसे परिपाक हो गाढा होजावे तब उतारले जब शीतल होजावे तब इसके पतले पतले पापड करे, उनमें मिश्रीसंयुक्त गोलाका खीस और छोटी इलायचीका चूर्ण भरे, अथवा गुड और सोंठका चूर्ण मिलाकर भरे, फिर उसको गुझियाके समान नखोंसे गूथ अर्धचंद्रके आकार बनाय ले फिर उसको गरम घीमें छोडदेवे, अथवा विस्तीर्ण पात्रमें थोडा पानी भर और उसमें तृण भर उसमें धरके सेके जब सिकजावे तब चासनीमें तल लेवे, ये संयाव (गूझा) भारी, वृष्य, विष्टंभी कहिये मलस्तंभक, तृप्तिकारक, कफकारी और वातपित्तनाशक है।

अथ कर्पूरनालिका।

घृताक्तांसमितांकांतेमर्दयेदंबुनाचिरम् । ततःपूगमितंनीत्वा रचयेन्नलिकांशुभाम् ।तत्रैलोषणचंद्रश्रीयुतांसंपूरयेत्सिताम् । मुद्रयेत्तन्मुखंचाज्येपचेत्संयाववद्गुणाः । कर्पूरनालिकातज्ज्ञैः कीर्त्तितासुभगालके ॥

अर्थ–मैदामें घीका मोयन दे पानीसे उसने और उसको मुक्की देकर नम्र करे फिर उसमेंसे सुपारीके समान लोई लेकर बांसकी नलीके समान पोली करे, तदनन्तर मिश्रीमें छोटी इलायची, कालीमिरच, भीमसेनी कपूर (वरास) और लोंग इनका चूर्ण मिलाय उस नलीमें भरे फिर उस बत्तीका मुख बंदकर घीमें सेके इसके गुण गूझाके समान है। इसको संस्कृतमें कर्पूरनालिका कहते हैं।

अथेंदुरसाः (अँदरसे)।

त्रिप्रस्थंषाष्टिकांचूर्णंप्रस्थकांशर्कराप्रिये । घनंदध्नाचसंमर्द्यकृत्वापिंडंमनोहरे । ततश्चैकदिनंस्थाप्यद्वितीयेऽह्निविनिर्मयेत् । अपूपांश्चंद्रविंबाभांस्तदैकांगेसितांस्तिलान् । लग्नान्कृत्वापचेदाज्येविष्णवेसन्निवेदयेत् । इमाइंदुरसावल्याःशरदिंदुनिभानने । कफवातहराहृद्याअतिशीताश्चपुष्टिदाः ॥

अर्थ–चावलका चून ३ शेर ले उसमें १ शेर मिश्री मिलावे पीछे थोडा दही मिलायके अच्छीरीतिसे मर्दन कर१दिन धरारहनेदे दूसरे दिन उसके चन्द्रमंडलके समान पतले बडेकर उसके एक तरफ सपेद तिल लगाय घीमें सेके इनको अँदरसा कहतेहैं, यह बलकारी, कफवातहर, हृदयको बलदायक, अतिशीतल और पुष्टिदायक है।

अथ द्वितीयः प्रकारः।

प्रक्षाल्यतंदुलान्सम्यक्चूर्णयेत्तानुलूखले । समयासितया योज्यमर्दयेच्चविचक्षणः । यदापिंडीभवेत्पिष्टंतदालोन्नींवि-धायच । वेल्लयित्वातदेकांगेलग्नान्कृत्वाप्रयत्नतः । अहिफेनस्यबीजानिनिस्तुषान्वातिलांस्ततः । पाचयेद्धिघृतेसम्य-क्ताः स्युरिंदुरसाः प्रिये।इमाइंदुरसावृष्याहृद्याधातुप्रवर्द्धनाः। पित्तघ्नागुरवोरुच्याः पुष्टिकांतिबलप्रदाः । सेविताःसततंयु-क्त्यासकलेंद्रियतर्पणाः ॥

अर्थ-अब दूसरा प्रकार कहतेहैं । चावलोंको अच्छी रीतिसे धोयकर ओंखलीमें कूटकर चूनकरे, फिर जितना चूनहो उतनी मिश्री पिसी डालकर मर्दनकर जलसे गाढा गोलाकरे उसमेंसे थोडाले गोलीसी कर चकला बेलनसे बेल पूरीबनावे और उसके एकतरफ खसखसके अथवा तेली लगायकर घीमें तले ये अंदरसे वृष्य हैं हृदयशोधक, धातुवर्द्धक, पित्तनाशक, भारी तथा रुचिकारी एवं पुष्टि, कांति और बल इनको देवे इनको नित्य सेवन करनेसे इन्द्रियोंको तृप्तिदायक होतेहैं ।

अथ शर्करापालिका ।

समानंपिष्टतःसर्पिःसार्द्धभागाचशर्करा । भर्जितंशर्करापाके पिष्टकंसघृतंक्षिपेत् । लवंगैलादिकंक्षिप्त्वातच्चदर्व्याविचाल-येत् । यावद्वटकयोग्यंस्यात्ततः स्थाल्यांप्रसारयेत् । कवो-ष्णंखंडशः कृत्वाशीतेसीताधवायच । अर्पयेच्छर्करापाली-स्निग्धाः किंचिच्चपित्तलाः । श्लेष्मलागुर्व्यरोचघ्नीर्वातविष्टं-भनाशनीः ॥

अर्थ-चूनके समान घी लेकर उसमें उस चूनको भूने फिर चूनसे ड्योढी मि-श्रीका पाककर उसमें भुनाहुआ चून मिलावे और लोंग, इलायची आदिका चूर्ण डालकर कौंचेसे उलट पलट करता रहे, जब उलटते पलटते वडे होने लायक होजावे तव परातमें उतार कर फैलाय देवे, जब शीतल होजावे तव उसके छुरीसें चौकोन टुकडे कतर लेवे इनको सकलपारे कहते हैं । ये साखरपारे स्निग्ध किंचित् पित्तकारी, कफकारी एवं भारी, अरुचि, वात, मलस्तंभ इनको नाश करतेहैं ।

अथ शंखपालः (मीठे सकलपारे) ।

घृताक्तांसमितामर्द्यंदुग्धेनचजलेनवा । संवेल्लयरोटिकांकुर्या-दुत्सेधामंगुलार्द्धिकाम् । शृंगाटाकृतिकान्यस्याःकांतेखंडानि कारयेत् । घृतेसंपाच्यसांलिंपेत्सितापंकेनयुक्तितः । शंख-पालाइतिप्रोक्ताबृंहणाबलपुष्टिदाः । मधुराः पित्तवातघ्नागुर-वोरुचिकारकाः ॥

अर्थ—अब दूसरे प्रकारके सकलपारोंकी विधि कहतेहैं मैदामें घीका मोयन देकर दूधसे या पानीसे करडी उसन लोईकर आधअंगुल मोटी रोटी करे फिर छुरीसे तिकोने टुकडे कर घीमें छोड़देवे जब सिक जावे तब निकाल चासनीमें तल लेवे ये शंखपाल धातुवर्द्धक, बलकारी, पुष्टिदायक, मधुर पित्त तथा वातनाशक, भारी और रुचिकारीहैं । इसीप्रकार निमकीन सकलपारे बनते हैं ।

अथ मंठः (मठरी) ।

द्विप्रस्थांसमितांसर्पिर्मिश्रयित्वाचतुःपलम् । ततोनीरेणसंमर्द्य कारयेद्वटकान्दृढान् । पाचयित्वाघृतेकांतेततः कुर्यादिमंवि-धिम् । एलालवंगकर्पूरमरीचाद्यैः सुशोभनम् । सितापंकंविधाये-वयुक्त्यामंठेषुलेपयेत् । तेमंठाबृंहणाबल्याः पौष्टिकागुरवस्त-था । वातपित्तहरारुच्यामधुरामधुराधरे ॥

अर्थ—दोसेर मैदामें पावभर घीका मोयन दे पानीसे करडा उसन उसके वडेकर घृतमें सेके, फिर इलायची, मिरच, लौंग, कपूर आदि मसालेसे सुवासित ऐसी मिश्रीकी चासनीमें पागकर निकाल लेवे, ये मठरी सप्तधातुवर्द्धक, बलकर, पुष्टिदायक, भारी, वातपित्तनाशक और रुचिकारकहैं ।

अथ शेविकाः सेमई ।

समितामसिताह्लादेघनंक्षीरेणमर्दयेत् । मृद्वींकुर्यात्पुनर्मर्द्यं तस्यास्तंतून्विनिर्मयेत् । शोषयित्वातपेचैतानीषदाज्येवि-भर्ज्यंच । क्षिपेदुत्कलितेनीरेक्षणेनोत्तारयेद्द्रुतम् । पृथक्तोयं सुनिःसार्यसिताज्याभ्यांनिषेवयेत् । अथवाशर्करादुग्धसंयु-क्ताख्रुटिमिश्रिताः । सेवयेत्सेविकाबल्याभग्नसंधानकारिकाः । गुर्व्यस्तृप्तिकरारुच्याग्राहिण्यःपित्तहामताः ॥

अर्थ-मैदाको दूधसे उसनकर अतिनम्र करावे फिर किसी बडेपात्र (गागर, मटके) की पैदी पर महीन सूतके समान बटकर बनावे, उनको धूपमें युक्तिसे सुखाय लेवे, फिर इनको घीमें भून खलभलाते जलमें पक्क करावे, थोडीदेरमें उतार उसका पानी निकाल डाले, फिर इसमें घी बूरा, अथवा दूध बूरेके साथ भोजन करना चाहिये । ये सेमई बलकारी टूटेहुए भागको जोडनेवाली, भारी, तृप्तिकारी, रुचिकारी, मलग्राहक और पित्तनाशकहैं ।

अथ शष्कुली (पुडी)।

घृताक्तांसमितामद्भिर्मर्दयित्वाचिरंततः । मृद्वींकृत्वाततोनीत्वानिंबुमानंहिगोलकम् । वेल्यकृत्वाचतांतन्वींचंद्रमंडलसन्निभाम् । घृतेसंपाचयेदेषाशष्कुलीफेनिकागुणा ॥

अर्थ-अब पूडी बनानेका विधि कहतेहैं । मैदामें या चूनमें घीका मोयन दे उसनकर नम्र करे, फिर उसमेंसे नींबूके समान लोई ले गोल चंद्रके समान पतली वेलकर घीमें सेके इसको शष्कुली अर्थात् पूडी कहतेहैं । इसके गुण फेनीके समानहैं ।

अथ माषगर्भा (कचौरी) ।

निष्तुषांमाषजांदालीमार्द्रामश्मनिपेषिताम् । तांपिष्टिंप्रवदंतिस्मपाकशास्त्रविचक्षणाः । तत्पिष्ट्यामार्द्रकंहिंगुलवणंतु विमिश्रयेत् । अथवैलादिकंकांतेवेशवारंविमिश्रयेत् । निधायामत्रकेकांतेततःकुर्यादमुंविधिम् । घृताक्तांसमितामद्भिर्मर्दयित्वाघनंततः । किंचित्किंचिज्जलंदत्वामर्दयित्वापुनःपुनः । कृत्वामृदुतरामक्षंततोनीत्वाप्रकल्पयेत् । मूषिकामक्षकांतत्रपिष्टिंपूर्यंविमुद्रयेत् । संवेल्लचपोलिकांकृत्वाघृतेतांभर्जयेच्छनैः । गुर्वीयंमाषगर्भाख्यास्निग्धारुच्यावलप्रदा । स्वाद्वीनेत्रहितोष्णाचपित्तरक्ताविशोधिनी । तैलेनेत्राहितापक्वारक्तपित्ताविदूषिणी ॥

अर्थ-अब कचौडी बनानेकी विधि और गुण कहतेहैं।जलसे धुली हुई छिलकारहित उडदकी भीजी हुई दालको सिल लोढासे पीसे इसको पिट्टी कहतेहैं, इस पिट्टीमें हींग

१ पृथुशशिसमकांतिश्चारुगोधूमजातावितरतिमुदमुच्चैःपोलिकाकस्यनेह । अतुलबलविधात्रीकोष्ठसंशुद्धिकर्त्रीमनसिजजनयित्री वातपित्तापहंत्री ॥ १ ॥

अदरख, मिरच, धनियाँ, जीरा आदि कुटा मसाला मिलाय तयार रक्खे फिर मोय नपडी मैदाको पानीसे उसन खूब नरम करे फिर इसमेंसे एकएक तोलेकी लोई तोड मूसके समान कर उसमें उक्त उडदकी पिट्ठी भर मुख बंद करदेवे, और कुछ बेलकर गरम घीमें छोडदेवे, जब सिक जावे तब निकाल लेवे,इसको माषगर्भा आर्थात् कचौरी कहतेहैं । यह कचौरी भारी, स्निग्ध, रुचिकारी, बलदायक, स्वादु, नेत्रोंको हितकारक और उष्ण एवं पित्त तथा रक्त इनको शुद्धकरे, परंतु तेलमें तले तो नेत्रोंको अहित होताहै और रक्त व पित्त इनको बिगाडेहै ।

अथ दुग्धाम्रम् ।

पक्वाम्रस्यरसंप्रस्थंशृतंदुग्धंचतत्समम् । प्रस्थैकाशर्कराचाज्यं प्रस्थार्द्धंसंविमिश्रयेत् । एलाजातीफलादीनांचूर्णंचेद्वाविमिश्रयेत् । तद्दुग्धाम्रमितिख्यातंस्वादुशीतंचपौष्टिकम् । गुरुवर्णकरंरुच्यंबल्यंधातुविवर्द्धनम् । वातपित्तहरंवृष्यंमुक्तमेवंमदोद्धतैः ॥

अर्थ–पकेहुए आमका रस ६४ तोले और औटाहुआ दूध ६४ तोले, सपेद बूरा ६४ तोले और घी ३२ तोले, एकत्र मिलाय इसमें इच्छा होय तो इलायची, जायफर आदि मसालेका चूर्ण मिलावे,इसको दुग्धाम्र कहतेहैं यह स्वादु, शीतल, पौष्टिक, भारी, कांतिकर, रुचिकर, बलकारी, धातुवर्द्धक, वातपित्तनाशक और वृष्यहै ।

अथ शिखरिणी ।

दधिद्विप्रस्थंभोजलबिरहितंकंजवदनेसिताचप्रस्थैकामधुघृतमयेबिल्वमबले । पृथक्कोलंचैलात्वचमपिगजंपत्रजमुत द्विकर्षंविश्वंवैमरिचमपिलोलाक्षिचपृथक् । पटेसूक्ष्मेबालाकरविगलितंचेतिसकलं । तदाविख्यातेयंमतिमतिरसालाशिखारिणी । इयंस्निग्धावृष्याकफरुचिकराकांतिजननी । मतागुर्वीबल्याश्रमपवनपित्तप्रशमनी । विशालास्येपुष्टिंवितरतिच शुक्रंवितनुते । जनानांशंदात्री सुतनुजघनांभोजसुभगे । कुरुश्रीरामायार्पणमवनिपुत्र्यैचसततंमनोर्थस्तेसिद्धोझटिति भविताकुंददशने ॥

अर्थ—अब शिखरनके गुणदोष कहते हैं । पानी निकालाहुआ दही २ सेर सपेद बूरा १ सेर, सहत छटांक गौका मक्खन छटांकभर, इलायची, दालचीनी, नागकेशर और पत्रज ये प्रत्येक आधा आधा तोला सोंठ २ तोले, कालीमिरच २ तोले इन सबको एकत्र करके महीन वस्त्रमें बालास्त्रीकरके छानागया इसको रसाला सिखरन कहतेहैं । यह स्निग्ध, वृष्य, कफकारी, रुचिकारी, कांतिदायक, भारी एवं बलकारी होनेसे श्रम, वात, पित्त इनको नाशक और पुष्टि तथा वीर्यकारक है । इसका छंदभी शिखरिणी है ।

अथ मज्जिकाशिखरिणी ।

अयिदधिमस्तुविहीनंद्विप्रस्थंवैप्रस्थैकाचासिता । सर्पिः पलं मधुपलंपलंचार्द्रकंमरिचंचार्द्धपलम् । त्वक्पत्रंगजमेलापृथग- क्षैकंकृत्वाचैकध्यम् । चंद्रवासितेभांडेप्रिये मार्तिकेतरुणीनि- मंथयेत् । सामज्जिकाशिखरिणीबालेबल्यारुचिप्रदावृष्या । कांतिकारिणीस्निग्धाशुक्रपुष्टिदागुर्वीश्लेष्मकरी । प्रतिश्याय वातार्तिश्रमपित्तघ्नीनितंबभारभरे । तरुणकमलदलनयनेको- किलवयनेप्रकटितकामकले ॥

अर्थ—पानी निकलाहुआ दही १२८ तोले सपेत बूरा ६४ तोले घृत, सहत, अद- रख ये प्रत्येक चार चार तोले, कालीमिरच दोतोले और दालचिनी, तमालपत्र, नागकेशर, इलायची ये प्रत्येक एक एक तोले ले इसप्रकार सर्व पदार्थ एकत्र करके कपूरसे सुगंधित करेहुए पात्रमें तरुणी स्त्री उसको मथे इसको मज्जिका शिखरण कह तेहैं । यह बलकारी, रुचिकारी, वृष्य, कांतिकर स्निग्ध, वीर्य,तथा पुष्टिदायक, भारी तथा कफकारक होकर सरेकमाँ, वायु, श्रम और पित्त इनको नाश करैहै ।

अथ मंडककृतिगुणानाह।

सामितामंबुनामर्द्यघनांकृत्वातिकोमलाम् । तल्लोप्त्रीं रचयित्वा तुहस्ताभ्यांपरिवर्द्धयेत्। संतप्तेखर्परेचुल्ल्यांमृन्मयेऽधोमुखेत- तः । संक्षिपेदरविंदाक्षिपाचयेच्चशनैःशनैः । मंडकः सहिवि- ज्ञेयोदुग्धखंडेनभक्षयेत् । दुग्धाज्यशर्कराभिर्वाकिंवामांसर- सेनहि । वातघ्नवटकैश्चैनंमधुरोऽयंत्रिदोषनुत् । रुच्योग्राही लघुःपाकेबृंहणोवलपुष्टिदः ॥

अर्थ–गेहूंकी मैदा पानीसे उसनकर फिर जलके छींटे देकर नम्र करे, तदनंतर उसमेंसे थोडी लोई ले गोलाकर हाथोंसे बढाकर गरम मट्टीके उलटे खिपडेपर सेके, इसको मंडक कहते हैं । यह दूधखांडके साथ अथवा दूध खांडमें घी डालके किंवा मांसरसयुक्त अथवा छाछके बडोंके साथ भोजन करे यह मंडक मधुर, त्रिदोषनाशक, रुचिकारक, ग्राही, हलके, धातुवर्द्धक, बलकारी और पुष्टिदायक है

अथ द्रव्ययोजना ।

सूपादौलवणंबालेप्रस्थेमुष्टिमितंक्षिपेत् ।
कौलैकंमारिचंचूर्णंवेशवारंचतत्समम् ॥

अर्थ–प्रथम लवणादिक द्रव्यकी योजना कहतेहैं । दाल कढी आदिमें नोनऽ१ सेरमें एकऽ–छटांक डाले । और मिरच एक कोल अर्थात् सेरभर दालमें आधा तोला डालनी चाहिये । और वेसवार अर्थात् मसाला एक कोल अर्थात् आध तोले डाले ।

गुंजैकंरामठंबालेधूपनार्थंघृतेक्षिपेत् । राजिकाजीरकंचात्रमेथिकालशुनादिकम्। पृथक्टंकमितंक्षिप्त्वाहष्टेधूमेचधूपयेत् ॥

अर्थ–हे बाले ! वघार देनेको एक प्रस्थ प्रमाण दालमें १ रत्ती हींग घृतमें भूनकर डालनी चाहिये । राई, जीरा, मेंथी और लहसन ये पृथक् पृथक् एक एक टंक कहिये पाव पाव तोले घीमें भूनकर वघार देवे । परंतु जब घीमें अच्छी रीतिसे धुंआ निकलने लगे तब वघार देवे, लहसनका वघार इतर जातीके वास्तेहै या रोगीको है ।

टंकैकंरजनीचूर्णमम्लंशुक्तिमितंक्षिपेत् ।
आर्द्रकंहिपलंकर्षंधान्याकंसूक्ष्मचूर्णितम् ॥

अर्थ–दाल आदि सेर भरमें ४ मासे हलदी, अमचूर आदि खटाई २ अर्थात् दो तोले डाले, अदरख एकपल अर्थात् ४ तोले डाले और धनिया पिसाहुआ एक कर्ष अर्थात् एक तोले डालना चाहिये ।

अथ वेसवार (मसाला) ।

एलात्वक्पत्रमारिचश्रीसुमश्यामजीरकैः ।
वेशवारः सधान्याकैरेलादिः कथ्यतेबुधैः ॥

अर्थ-इलायची, दालचीनी, तमालपत्र अथवा पत्रज, काली मिरच, लौंग, काला जीरा और धनिया इनके चूर्णको एलादि वेसवार कहते हैं, आदिशब्दसे सपेद जीरा वगैरह जानने।

माषमुद्गादिजेसूपेनिस्तुषेचामिषेतथा।
वटिकामाषगर्भादौवेशवारंप्रयोजयेत् ॥

अर्थ-उडद, तथा मूंगकी धुलीहुई दालमें और मांस तथा बडी कचोरी आदिमें यह उक्त मसाला डालना चाहिये।

भक्तविधिगुणांश्चाह।

तंडुलान्निर्मलाञ्छुद्धांस्त्रिधाधौतान्वराङ्गने। नीरेपंचगुणेक्षिप्त्वावसुनिघ्नेतुवाप्रिये। दिग्गुणेत्वथवाकांतेचतुर्दशगुणेऽपि वा। पचेदर्द्धशृतेमंडंस्रावयेदतियुक्तितः। षोडशांशंघृतंतस्मिन्संक्षिप्यच्छादयेत्ततः। निर्धूमांगारकेन्यस्यक्षणादुत्तारयेद्द्रुतम्। नस्याद्यदाषोडशांशंयथालाभंघृतंक्षिपेत। नीरसंस्कारभेदेनयथोत्तरगुणाधिकः॥

अर्थ-अब भात बनानेकी विधि कहतेहैं। वीने फटके निर्मल शुद्धि चांवलोंको तीनवार पानीसे धोयकर शेरभरको पांचशेर अथवा आठशेर अथवा १० शेर किंवा १४ शेर पानीवटलेमें भर चावल डालकर पचावे, जब आधे अथवा कुछ थोडे कच्चे रहे तब चूल्हेसे उतारकर मांढ निकाल डाले और उनमें एक पल घृत डालकर अंगारोंके ऊपर धरके वर्तनके मुखको ढकनेसे ढक देवे, इसप्रकार उसको आधघडीपर्यंत धरारक्खे तो भात बनकर तयार हो. यदि एक पल घी न मिलसके तो जितना प्राप्त हो उतनाही डाले। यह भात पानीकी आधिक्यतासे यथोत्तर अधिकाधिक गुणवाला होताहै। जैसे पांच गुने पानीमें पक्व भातसे आठ गुने जलमें पक्व भात श्रेष्ठहै। इसप्रकार जानना परंतु १४ गुने पानीसे अधिक पानी चावलोंमें नहीं चढाना चाहिये।

---

१ कोष्णंपङ्कजचक्षुषस्तनइवस्वच्छंशरच्चन्द्रमोरोचिर्वन्मिलितंमिथोनचयथा चाण्डंसपत्नीजनः। सुस्निग्धं तरुणीकपोलवदलं कान्ताङ्गवत्कोमलं भक्तंभुक्तमनेकदोषशमनं लव्वाग्निकृद्बृंहणम्।सद्यः शालेयमन्त्रंशशिकरनिकरप्रोज्ज्वलंसिद्धसारं भ्राम्यद्बाष्पच्छलेनात्रिदशपुरसुधाधेयमाधुर्यधुर्य्यम्। अन्योन्यंनैवलग्नं रिमलभरितागारवेदीविभागं समाप्नोतिप्रसन्नः प्रमथपरिवृढोयस्यपुंसः सदा स्यात् ॥ १ ॥

मढमढा भातकी विधि ।

चेदश्रावितभक्तंकुर्याद्वालेविधिस्तदायंस्यात् । यदितंडुला हिसूक्ष्माःकेविपचेद्वैतुसार्द्धकेभागे । स्थूलाश्चेत्रिगुणेकेस्थूल-तराश्चेत्सार्द्धद्विभागिके । सपादकेकेसाध्याःसूक्ष्मतरावैसुतं-डुलाललने । अयमस्रावितभक्तोगुरुश्वशीतोरुचिप्रदोवृष्यः । शुक्रवर्द्धनोमधुरोवातकफघ्नोग्राहीतृप्तिकरः । क्षयरोगघ्नश्चा-पिप्रफुल्लपद्मानने वरारोहे ॥

अर्थ—अब बैठेहुए भातकी विधि कहते हैं । उत्तम बीने फटके चावलोंको तीनबार धोकर शेरभरोंको डेढसेर पानीमें चढावे परंतु यह विधि महीन चावलोंकीहै यदि चावल मोटे होवे तो दूने पानीमें पचावे,यदि बहुत मोटे चावल होवे तो ढाईगुने पानीमें चढाकर पचावे और यदि बहुतही महीन चावल होवे तो सवाए पानीमें चढाकर पचावे जब सब पानी जलजावे कुछ थोडा शेष रहे तब उतारकर अंगारोंपर धरदेवे तो यह मढमढा भांत बने यह भात भारी, शीतल, रुचिकारक, वृष्य, वीर्यवर्द्धक, मधुर,वात व कफनाशक, ग्राही, तृप्तिकारक और क्षयरोगकाभी नाश करनेवाला जानना ।

भुने चावलोंके भातकी विधि ।

जीवनेऽर्द्धशृताञ्छालीन्भर्जयेच्छोषयेत्ततः । कंडयेत्तंडुला-नेनांस्त्रिधाधौतान्विपाचयेत् । तद्भक्तोदीपनः पथ्यस्तृप्तिकृ-न्मूत्रलः स्मृतः।लघुः स्वच्छश्चरुच्योऽयंवातश्लेष्मामयापहः । उष्णवीर्यश्चसंप्रोक्तस्ततः पित्तामयेऽहितः।दद्याद्दोषबलंदृष्ट्वा भोजनायविचक्षणः ॥

अर्थ—अब उबले हुए चावलोंका भात करनेका प्रकार कहते हैं । प्रथम धानोंको पानीमें सिजावे जब आधा सीज जावे तब कुछ भूनकर सुखाय देवे तदनंतर चाव-लोंको फटक चावल निकाल इनको भातकी विधिसे बनावे, यह भात अग्निदीपन तथा पथ्य, तृप्तिकारक, मूत्रवर्द्धक, हलका, स्वच्छ, रुचिकारक, वात व कफसे होनेवाले रोगोंको नाशक तथा उष्णवीर्य है अतएव यह पित्तरोगीको अपथ्य है इसको वातादि दोष और रोगीका बलाबल विचारकर देना चाहिये ।

तथा गुणान्तर ।

भर्जिततंडुलभक्तःसुगंधिरुष्णोलघुस्तथारुच्यः । आस्थापने चवमनेविरेचनेचप्रशस्तउक्तोऽयम्।गलामयघ्नश्चाहितःकफम-

रुचिंचैवविनाशयेदबले । यथात्वदीयाप्रीतिःपरांगनायारतिं प्रियेश्रेष्ठा ॥

अर्थ-भुने हुए चावलोंका भात सुगंधवान्, गरम, हलका और रुचिकारक होता है । आस्थापन, वमन और विरेचन इनमें यह भात पथ्यकरहै । और यह गलेके रोगोंका नाशक, हितकारक और कफ तथा अरुचि इनको नाश करे है ।

कच्चे चावलोंका भात ।

तंडुलान्कंडयेदामानंबुनाक्षालयेत्रिधा । विपाच्यस्रावयेन्मंडंतद्भक्तोऽतिमनोहरः । दीपनश्चात्रिदोषघ्नोबृंहणःपथ्यईरितः । लघुःप्रीतिप्रदोनित्यंकीर्तितस्तद्विदांवरैः ॥

अर्थ-हरे चावलोंको अच्छी रीतिसे बीनफठक तीनवार जलसे धोयके सिजावे जब चावल सीज जाय तब मांढ निकाल डाले, यह भात अति श्रेष्ठ, जठराग्निदीपक, त्रिदोषनाशक, धातुवर्द्धक, पथ्यकर, हलका और भोजनमें प्रीतिकारक ऐसा है ।

ताजे जलमें करेहुए भातके गुण ।

सद्यनीरशृतोभक्तोलघुःशीघ्रंविपच्यते । शीतपित्तज्वरेदेयःसितायुक्तोमनोहरे । तथाश्लेष्मज्वरेदेयोमुद्गयूषसमन्वितः ॥

अर्थ-ताजे जलमें पक्व हुआ भात हलका तथा शीघ्र पचनेवाला होताहै । यह शीतपित्तज्वरवाले रोगीको खांडके साथ और कफज्वरवालेको मूंगके यूषके साथ देना चाहिये ।

बासेजलका भात ।

उशितांबुशृतोरूक्षोमूत्रलोमलकारकः ।
मेदःस्वेदकफक्लेदप्रदश्चापिप्रकीर्तितः ॥

अर्थ-बासेजलमें कराहुआ भात रूक्ष, मूत्रवर्द्धक, मलकारक तथा मेद, पसीने, कफ और ग्लानि इनको उत्पन्न करनेवाला जानना ।

कांजिआदिसे बने भातके गुण ।

धान्याम्लसिद्धोरुचिदोलघुश्चैवाग्निदीपनः । तक्रेसिद्धःप्रियःस्वादुःशीतलश्चाग्निदीपनः ॥ पाचनःपुष्टिदोरुच्यःशूलामग्रहणीप्रणुत् । अर्शोघ्नश्चश्रमघ्नश्चानिशिभुक्तोविशेषतः ॥

अर्थ-धान्याम्लमें कराहुआ भात रुचिदायक,हलका और जठराग्निका दीपन करनेवाला है । छाछमें सीजाहुआ भात प्रिय, स्वादु, शीतल, अग्निदीपन,पाचन, पौष्टिक,

और रुचिकारक एवं शूल, आम, ववासीर और संग्रहणी श्रम इनका नाशक जानना। यह भात रात्रिमें खानेसे अधिक गुण करे है ।

अथान्यद्रव्यमिश्रितभक्तके गुण ।

मथितेनयुतोभक्तःशीतःस्वादुःप्रियस्तथा । पौष्टिकः पाचनोरुच्योदीपनोऽर्शोघ्नएवच । श्रमामग्रहणीशूलनाशनःपरिकीर्तितः । यदिरात्रौभक्षितश्चेद्रुच्यस्तृप्तिकरोमतः ॥

अर्थ—विना जल पडेहुए छाछके साथ भात खानेसे शीतल, स्वादु, प्रिय, पौष्टिक, पाचन, रुचिकारी व दीपन जानना उसीप्रकार ववासीर, श्रम, आम, संग्रहणी और शूल इनको नाश करे । इस भातको रात्रिमें खानेसे रुचिकारक, तथा तृप्तिदायक होताहै ।

जवके और गुण ।

यावकश्चमृदुःस्वादुर्गुरुर्वृष्यःप्रकीर्तितः ।
यौगंधरोघनःकासश्वासघ्नश्चगुरुर्मतः ॥

अर्थ—जौका भात नम्र, स्वादु, भारी और धातुवर्द्धकहै । ज्वारका भात कठिन तथा खांसी श्वास इनका नाशक और भारीहै ।

श्यामाकोदीपनोरूक्षोलघुर्वातप्रकोपनः । कृच्छ्रमेहगलार्तकहरोरुचिवलप्रदः । नैवारोदीपनोरुच्योलघुर्वातप्रकोपनः । यकृत्प्लीहव्रणश्वासामामयघ्नः प्रकीर्तितः ॥

अर्थ—सामखियेका भात दीपन, रूक्ष, हलका तथा वातरोगका कोप करनेवाला और मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, गलेके रोग इनको नाश करे और वल करे । पसाईका भात दीपन, रुचिकारक, हलका तथा वातप्रकोपकारक होकर यकृत, तिल्ली, व्रण, श्वास तथा आमविकार इनको नाश करे ।

अथान्नान्याह ।

परमान्नंहरिद्रान्नंदध्यन्नंकृशरान्नकम् ।
गुडान्नंचापिमुद्गान्नमित्यन्नंषड्विधंस्मृतम् ॥

अर्थ—अब अन्नकी कृति तथा गुण दोष कहते हैं—एक परमान्न, दूसरा हरिद्रान्न, तीसरा दध्यन्न, चौथा कृशरान्न, पांचवां गुडान्न, छठवाँ मुद्गान्न, ऐसे अन्नके छः प्रकार कहे हैं ।

परमान्नम् ।

तंडुलात्त्रिगुणंदुग्धंतदर्द्धंजीवनंप्रिये । तदर्द्धंतुगुडंकांतेपाचितंपरमान्नकम् । परमान्नंबल्यंवृष्यंवातपित्तप्रणाशनम् । कफप्रकोपनंबालेतृप्तिकृच्चप्रकीर्तितम् ॥

अर्थ–अब परमान्नके गुणदोष कहते हैं । चावलोंसे तिगुना दूध तथा दूधका अर्द्धभाग पानी तथा पानीका अर्द्धभाग गुड ये सब पदार्थ एकत्र पक्क करनेसे इसको परमान्न कहते हैं । यह परमान्न बलदायक, वृष्य तथा वातपित्तका नाशक और कफकोपकारक तथा तृप्तिकारक है ।

हरिद्रान्नम् ।

आढकंमथितंगव्यंतंडुलानांचप्रस्थकम् । कर्षैकंमारिचंचूर्णं कोलैकंजीरकंप्रिये । निशाटंकमितासर्वंकृत्वैकध्यांविपाचयेत् । पलमेकंपटुक्षिप्त्वाहरिद्रान्नमितीरितम् । पाचनंहिहरिद्रान्नंदीपनंरुचिकारकम् । वातपित्तकफातंकनाशनंपरिकीर्तितम् ॥

अर्थ–अब हरिद्रान्नकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । गौकी विना जल मिली छाछ ४ प्रस्थ, काली मिरचका चूर्ण १ कर्ष, जीरा आधा कर्ष, हलदी १ टांक नोन ४ कर्ष, इन सबको एकत्र कर पक्क करनेसे हरिद्रान्न सिद्ध होताहै। यह हरिद्रान्न पाचन, दीपन, तथा रुचिकारक और वात, पित्त, कफ संबंधी रोगोंका नाशक है ।

दध्यन्नम् ।

प्रस्थैकांस्तंडुलान्कांतेपाचयेद्विधिवत्ततः । नात्यम्लमधुरंतत्रदधिद्विप्रस्थमुत्तमम् । कोष्णेसंमिश्रयेद्भक्तेकोलैकंमारिचंरजः । मुष्ट्यैकंलवणंचाम्रंशृंगवेरंप्रयोजयेत् । इदंदध्योदनंवल्यंरुच्यंवातघ्नदीपनम् ॥

अर्थ–१सेर चावलोंको जलमें विधिपूर्वक पचन करावे जब भात होजावे तब इस भातको अंगारोंसे उतारके धरलेवे, पीछे एक दूसरा पात्र चूल्हेपर चढाय उसमें घी डाल जीरा हींग भूने, पीछे उक्त भातमें न बहुत मीठा न बहुत खट्टा, ऐसा दही दो सेर मिलाय उक्त भातको छौंक देवे, इसको दध्योदन कहते हैं, प्रायः द्राविडी मनुष्य इसको बहुत करते हैं यह बलदायक, रुचिकारक, वातघ्न और दीपन है ।

खिचडी ।

द्विप्रस्थंतंडुलंमुद्गंप्रस्थैकंसंविपाचयेत् । कर्षैकंमारिचंचूर्णं तिलचूर्णंपलंक्षिपेत् । मुष्टचैकंलवणंकांतेपचत्यस्मिन्विमिश्रयेत् । इदंवैकृसरान्नंस्याद्बलवीर्यविवर्द्धनम् । पित्तश्लेष्मकरंचैवगुरुविष्टंभिदुर्जरम् । पुष्टिकृच्चवरारोहेमलमूत्रविवर्द्धनम् ॥

अर्थ—अब कृसरान्न अर्थात् खिचडी बनानेकी विधि कहते हैं । चावल २ शेर, तथा मूँगकी दाल १ शेर, इन दोनोंको एकत्र कर पक्क करे (पकावे) तथा सीजतेसमय इसमें काली मिर्चका चूरा १ कर्ष डाले, ४ कर्ष तिलोंका चूरा, नोन १ पल डारे, इसको कृसरान्न कहते हैं । यह बल वीर्यको बढावे, और पित्तकफको करे है तथा भारी, विष्टंभी, दुर्जर पुष्टिकारक तथा मलमूत्रको यह बढाती है ।

गुडान्नम् ।

तंडुलानांहिप्रस्थैकंदुग्धंप्रस्थत्रयोन्मितम् । दुग्धार्धंतुजलं कांतेनीरतुल्यंगुडंमतम् । गुडादर्द्धंघृतंसर्वंपाचयेद्विधिपूर्वकम् । तद्गुडान्नमितिप्रोक्तंतृप्तिकांतिबलप्रदम् ॥

अर्थ—अब गुडान्नकी विधि कहतेहैं । चावल १ शेर, दूध ३ शेर, पानी १॥ शेर गुड १॥ शेर, घृत तीनपाव, इन सबको एकत्र कर इसकी खीर करे इसको गुडान्न कहते हैं । परन्तु मध्यदेशके मनुष्य दूधमें गुड नहीं मिलाते उनको बूरा डालना चाहिये, इसको भी गुडान्न कहतेहैं । यह तृप्ति, कांति और बल करेहै ।

मुद्गान्न ।

त्रिप्रस्थंतंडुलंमुद्गंप्रस्थंतुल्याचशर्करा । मुद्गान्नमेवंरंभोरुपौष्टिकंबलवीर्यकृत् । घृतमस्मिन्क्षिपेत्प्रस्थंसिद्धेकंजविलोचने ॥ इतिषड्विधान्नम् ॥

अर्थ—अब मुद्गान्नकी विधि और गुण कहतेहैं । चावल ३ शेर, मूँग १ शेर, इन दोनोंको मिलायके रांधे, जब सीज जावें तब बूरा ४ शेर और घृत १ शेर मिलावे इसको मुद्गान्न कहतेहैं । यह पुष्टि करता तथा बल वीर्य इनको उत्पन्न करेहै । यह षड्विधान्न कहा ।

अथकृशरा ।

तिलाःप्रस्थमिताबालेतत्तुल्यास्तंडुलाःप्रिये । कुडवैकंघृतं चाम्रंसैंधवंपाचयेदियम् । कृशरेतिसमाख्यातादीपनीपाचनी मता । बलवीर्यप्रदाश्लेष्मश्वासकासप्रवर्द्धिनी । नातिमूत्रक-राप्रोक्तावातघ्नीपित्तकोपिनी ॥

अर्थ-अब कृशरा (साधारण खिचडी) के बनानेकी विधि और गुणदोष कह-तेहैं । तिल १ शेर, चावल १ सेर, घृत १ कुडव, और नोन ४ तोले, इन सबको मिलाकर खिचडी करावे उसको कृशरा कहतेहैं । यह खिचडी दीपन पाचन होकर बल, वीर्य, कफ, श्वास और खाँसी, इनको बढावे और मूत्रको कमी करे, यह वातनाशक तथा पित्तवर्द्धकहै ।

अथान्याकृशरा ।

तंडुलानांचप्रस्थैकंमुद्गसूपंचतत्समम् । पाचयेल्लवणस्याम्रमार्द्र-कस्यपलंक्षिपेत् । शरावैकंघृतंचैषाकृशराहरिवल्लभा । अ-र्पयेद्धरयेतस्माद्धनुर्मासेविशेषतः । बलवीर्यप्रदागुर्वीकफापि-त्तविवर्द्धिनी । दुर्जरापुष्टिविष्टंभमलमूत्रकरीमता ॥

अर्थ-अब कृशराकी दूसरी विधि कहतेहैं । चावल १ सेर, मूँगकी दाल १ सेर, इनकी खिचडी करे. पीछे इसमें नोन १ पल डारे, और अदरख १ प्रस्थ, घृत आध सेर डाले, इसको कृशरा कहतेहैं । यह भगवान्को अत्यंत प्रियहै इसीसे धनकी संक्रां-तिसे लेकर मकरकी संक्रांतिपर्यंत भोग लगावे यह खिचडी बलवीर्य बढावे, भारीहै, कफ तथा पित्त इनको वृद्धिकरे, दुर्जरहै, पुष्टिकारक, विष्टंभकारक और मल मूत्रको बढानेवालीहै ।

इसको दही पापड और आम नीबू निसोरे आदिके आचारके साथ भोजन करनी चाहिये, एक खिचडी धनुर्मासमें चनेकी दाल और चावलकी बनतीहै ।

द्विदलान्नमितिप्राहुःकृशरामपिकेचन ।
शिंबिधान्यप्रभेदेनतद्गुणान्प्रवदाम्यहम् ॥

---

१ पाठांतरम् । तंदुलैर्मौक्तिकाकारैः कंडितैर्न्न च खंडितैः । सस्नेहा कामिनीवेयं कृशरा शिशिरे हिता ॥ चतुर्थभागैर्माषस्य वैदलैः परिमिश्रितैः । कृशरा दुर्जरावल्या गुर्वी वातविनाशिनी । यथो-चिताम्बुसंसिद्धैः सहिंगुलवणार्द्रकैः । बलपुष्टिमलश्लेष्मापत्तिरेतःप्रदासदा ॥ इति ।

अर्थ–कितनेक आचार्य कृशराको द्विदलान्न कहतेहैं । अतएव द्विदल कहिये फली-से उत्पन्नहुए जो उडद मूँग आदि धान्य उन द्विदलान्नोंके गुण मैं कहताहूं ।

माषान्नंगुरुवृष्यंचवातघ्नंमांसवर्धनम् । कफपित्तकरंबालेदुर्जरं परिकीर्तितम्। आढक्यन्नंविशेषेणगुरुपित्तकफापहम् । वातलं चवरारोहेपीनोत्तुंगपयोधरे । पाकेतीक्ष्णंकुलित्थान्नंरूक्षमुष्णं चदीपनम् । कषायंमधुरंपित्तकारकंलघुकीर्तितम्। कफवात-कृमिश्वासनाशनंनवयौवने ॥

अर्थ–उडदकी खिचडी भारी, धातुवर्द्धक, वातघ्न, मांसवर्द्धक तथा कफ पित्तका करेहै और दुर्जरहै । अरहरकी खिचडी भारी तथा पित्त कफ नाशकहै और वातकारक जाननी । कुलथीकी खिचडी पाकके समय तीक्ष्ण तथा रूक्ष, गरम, दीपन, कसेली, मीठी पित्त कारक तथा हलकीहै तथा कफ, वात और उदरके कृमि और श्वास इनको नाश करे ।

तापहारी (ताहरी)

घृतंभांडेनिशायुक्तंक्षिप्त्वाचुल्ल्यांप्रतापयेत् । तस्मिन्माषवटीः क्षिप्त्वाभर्जयेदतियत्नतः । सुधौतांस्तंडुलांश्चापितत्समान्सु-विभर्जयेत् । तान्भ्रष्टानितिविज्ञाययथायोग्यंजलंक्षिपेत् । पाचयेदर्द्धपकेऽस्मिँल्लवणंहिंगुचार्द्रकम् । संक्षिपेदनुमानेन सिद्धातापहरीस्मृता । बल्यातापहरीरुच्याश्लेष्मघ्नीपुष्टिदा मता । धातुसंवर्द्धिनीबालेगुर्वीसंतर्पिणीतिच ॥

अर्थ–अब ताहरीके बनानेकी विधि और गुणदोष कहते हैं–एक बटलेमें घृत और हलदी डालकर चूल्हेपर धरे, जब घृतमें धूआँ उठनेलगे तब उसमें उडदकी अथवा मूँगकी वडी और उतनेही चावल गेरके भूने । जब दोनों भुनजावें तब उसमें इतना पानी डाले कि, जिसमें वो दोनों सीजजावें, जब अर्द्धपक्क हो जावे तब नोन, हींग और अदरख अनुमान माफिक डाले फिर अच्छीरीतिसे सिजावे इसको ताहरी कहतेहैं । यह बलदायक, रुचिकारक, कफनाशक, पुष्टिदायक, धातुवर्द्धक, भारी तथा तृप्ति करताहै ।

शाकौदनम् ।

रूक्षंशाकौदनंचोष्णंलेखनंपरिकीर्तितम् ।
फलान्नं गुरुरुच्यंचतत्तत्फलगुणागुणम् ॥

अर्थ-शाकयुक्त पकाहुआ भात रूक्ष, गरम, तथा लेखन कहिये कृश करनेवालाहै । उसीप्रकार फलयुक्त सीजाहुआ भात भारी तथा रुचिकारक और फलोंके गुणदोषोंके अनुसार गुणदोष करनेवाला जानना ।

तिलमाषपयोदुग्धसाधितान्नंमनोहरे ।
बल्यंतृप्तिकरंधातुवर्धनंपरिकीर्तितम् ॥

अर्थ-तिल, उडदकी दाल, दूध और पानी इनसे सिद्ध कराहुआ अन्न, बल और तृप्ति तथा धातु इनकी वृद्धि करनेवालाहै ।

नवान्नंमधुरंस्निग्धंगुरुश्लेष्मप्रवर्द्धनम् ।
वातलोहितपित्तघ्नंमलावष्टंभकारकम् ॥

अर्थ-नवीन कहिये नवीन उत्पन्न होनेवाला धानका अन्न यह मधुर, स्निग्ध, भारी, कफवर्द्धक, वात, रक्त और पित्त इनका नाशक तथा मलावरोधकारक जानना ।

कोष्णान्नगुणाः ।

कोष्णान्नं लघुदीपनं कृमिहरं सश्वासकासापहंहिक्काध्मानकगुल्मजाडचहरणंपानात्ययातंककृत् । पित्तासृग्भ्रममेहरोगजननं वातामयध्वंसनंश्लेष्मघ्नंक्षतकासनाशनमयेलोलाक्षिभक्तप्रिये ॥

अर्थ-अब किंचित् गुनेगुने अन्नके गुणदोष कहतेहैं । किंचित् उष्ण अन्न हलका, दीपन, पेटकी कृमिनाशक, तथा श्वास, खाँसी, हिचकी, पेटफूलना गोला और शरीरका जडत्व इनको हरण करताहै । पानात्ययरोग, रक्तपित्त भ्रम प्रमेह, इनको करेहै । तथा वात, कफ और क्षत, खांसी इनको नाश करेहै ।

शीतौदनगुणदोषाः ।

शीतौदनंशीतवीर्यंरक्तपित्तप्रमेहनुत् । पानात्ययभ्रमच्छर्दिमूर्च्छाघ्नं चाङ्गनोत्तमे । वाताग्निसादहृल्लासश्वासकृच्चापिकीर्तितम् ॥

अर्थ-अब शीतौदन कहिये शीतल अन्नके गुणदोष कहतेहैं । शीतलहुआ अन्न शीतवीर्य होकर रक्तपित्त, प्रमेह, पानात्ययरोग, भ्रम, वमन, मूर्च्छा इनका नाशक है और वातसंबंधी रोग, मंदाग्नि, हृल्लास कहिये मुखसे पानी छूटना तथा श्वास इनको उत्पन्न करताहै ।

अतिशीतोष्णक्लिन्नशुष्कान्नगुणाः ।

अतिशीतान्नंदुर्जरंचात्युष्णंबलनाशनम् । अतिक्लिन्नंग्लानि-
करंचातिशुष्कंहिदुर्ज्जरम् । नातिशीतंनचात्युष्णंनातिशुष्कंन
चार्द्रकम् । अतोऽन्नंसंभजेत्कांतिसुखेप्सुर्मनुजोऽनिशम् ॥

अर्थ–अब अतिशीतल अन्न तथा अत्यंत गरमागरम तथा अति पतला अन्न इनके गुणदोष कहतेहैं । अतिशीतल अन्न शीघ्र नहीं पचे, और अतिगरम अन्न बलनाशकहै, अत्यंत पतला अन्न ग्लानि करैहै, इसीसे सुखकी इच्छा करनेवाले पुरुषको अत्यंत गरम और अति शीतल न होवे ऐसा मध्यम अन्न सेवन करना चाहिये ।

अथ मण्डविधिगुणाः ।

मंडश्चतुर्दशगुणेसिद्धस्तोयेत्वसिक्थकः । सचग्राहीलघुःशी-
तोदीपनोधातुसाम्यकृत् । स्वेद्योमार्दवकृच्चापिपाचनःश्रम-
वातनुत् । त्रिदोषज्वरतृट्पित्ताश्मरीश्लेष्मातिसारहा ॥

अर्थ–१ पल चावलको १४ पल पानीमें पक्क कर उसमेंसे जो मांड निकलता है उसको मंड कहतेहैं । यह मंड ग्राही, हलका, शीतल, दीपन, समधातुकर, पसीना लानेवाला, शरीरको कोमल करनेवाला, तथा पाचन होकर श्रम, वात, त्रिदोषज्वर, प्यास, पित्त, पथरी, कफ और अतिसार इनका नाशक है ।

रक्ततंडुलजोग्राहीवातलोमधुरोहिमः ।
अश्मरीमेहपित्तानांनाशनः परिकीर्तितः ॥

अर्थ–लाल चावलोंका मांड ग्राही, वातकारक, मधुर तथा शीतल होकर पथरी, प्रमेह और पित्तका नाशक कहाहै ।

श्वेततंडुलजोग्राहीवातलः शीतलः स्मृतः ।
किंचिच्छ्लेष्मकरः शोषाश्मरीमेहप्रणाशनः ॥

अर्थ–सपेद चावलोंका मांड ग्राही वातल, शीतल और किंचित् कफकारीहै तथा शोषरोग, पथरी, प्रमेह, इनको दूर करैहै ।

वाद्यमंड और लाजामंड ।

वाद्यमंडोयवैर्भृष्टैर्लाजामंडस्तुशालिभिः । वाद्यमंडः कषायो-
ष्णः पाचनोदीपनोलघुः । ग्राहीत्रिदोषविष्टंभशूलानाहप्रणा-
शनः । पटोलपिप्पलीयुक्तस्त्रिदोषज्वरनाशनः । हितोयंक-

थितोबालेतरुणामनवज्वरे । लाजामंडोलघुर्ग्राहीप्रियः पाचनदीपनः । वातानुलोमनोबालेविरिक्तस्यहितावहः । आमयघ्नोविशेषेणविश्वकृष्णासमन्वितः ॥

अर्थ-अब वाद्यमंड और लाजामंडको कहते हैं । भुनेहुए जौके मंडको 'वाद्यमंड' कहतेहैं । तथा चावलकी खीलोंके माँडको 'लाजामंड' कहतेहैं । वाद्यमंड कषेला, गरम, पाचन, दीपन, हलका, ग्राही होकर, त्रिदोष, विष्टंभ, शूल और आनाह इनका नाशकहै । यदि पटोलपत्र और पीपल इसमें मिला वो तो वात, पित्त, कफ ज्वर इनका नाशक है, उसीप्रकार तरुणज्वर, आमज्वर और नवज्वर इनको हितकारीहै ।

लाजामंड लघु, ग्राही, प्रिय, पाचन, दीपन, वातानुलोमन करता और जुलाब लियाहो ऐसे मनुष्योंको हितकारीहै । यदि इस मंडमें शुंठी और पीपल मिलाकर देवे तो विशेष रोगनाशक होय ।

गोधूममंडोमधुरोलघुपाकोमनोहरे । उष्णः पित्तप्रशमनोयथाकांताऽधरामृतम् । जूर्णलीमंडकोग्राहीमूत्रलः कफवातकृत् । पित्तप्रणाशनोबालेकामकेलिविशारदे । अतिवातकरोमंडः क्षुद्रधान्यसमुद्भवः । कोद्रवोग्लानिकृच्छीघ्रंतथामूर्च्छाकरोऽहितः ॥

अर्थ-गेहूंका मंड मधुर, शीघ्र पचनेवाला, उष्ण व पित्तनाशक है । ज्वारका मंड ग्राही तथा मूत्र, कफ, वात इनको करनेवाला और पित्तनाशक है । क्षुद्रधान्य कहिये समा पसाई आदिका मंड अतिवातकारक है । कोदोंका मंड तत्काल ग्लानि लानेवाला तथा मूर्च्छाकारकहै । इति मंडगुणागुणाः ।

अथ विलेपी ।

चतुर्गुणजलेसिद्धाविलेपीघनसिक्थका । साचाग्निदीपनीबल्याहृद्यासंग्राहिणीमता । आमशूलहरीस्वाद्वीलघ्वीपुष्टिरुचिप्रदा । व्रणाक्षिरोगिणांपथ्यातर्पणीतृड्ज्वरापहा ॥

अर्थ-अब विलेपी कहिये पतले भातके गुणदोष कहते हैं चौगुने पानीमें चावलों को सिजावे, जब चावल सीजजावें तब ज्योंका त्यों रहने दे अर्थात् इसका मांढ न निकाले इसको 'विलेपी' कहते हैं । यह विलेपी अग्निदीपन, बलकारक, हृदयशोधक, ग्राही, आमशूलनाशक, स्वादु, लघु, पुष्टि तथा तृप्तिदायक व्रणरोगी तथा नेत्ररोगी इनको पथ्य और तृषा तथा ज्वर इनको नाश करनेवाली है ।

अथ पेया ।

पेयासिक्थान्वितातोये चतुर्दशगुणेकृता । साचकुक्षिगदक्ष्मा-तिज्वरस्तंभातिसारहा । रुच्यासंदीपनीलघ्वीमलदोषानुलो-मिनी । अस्वेदिनांस्वेदकरीस्मरस्वेदलसन्मुखे ॥

अर्थ–एक भाग चावलोंको चौदहगुणे पानीमें सिजावे उसको पेया कहते हैं । यह पेया कूखके रोग, मुखसे पानीगिरना, ज्वर, स्तंभ तथा अतिसार इनको नाश करे तथा रुचिकारक, जठराग्निदीपन, लघु, मल तथा वातादि दोष इनको अनुलोमन करनेवाली और जिन्होंके पसीने नहीं आतेहो उनको पसीने आवे ॥ इति ।

अथ यूषविधिगुणाः ।

अष्टादशगुणेनीरेनिस्तुषान्द्विदलान्पचेत् ।
वस्त्रपूतं चतुर्थांशं यूषं विद्धिवरांगने ॥

अर्थ–एक भाग धुलीहुई दाल अठारह गुने जलमें सिजावे और जब पानी चतुर्थांश रहे तब वस्त्रमें छानलेवे इसको यूष कहतेहैं । इसीको दालका पानि कहते हैं ।

अथ कृताकृतौ यूषौ ।

व्योषाज्यसैंधवैः सिद्धः सयूषः कृतसंज्ञकः ।
एतैर्हीनोऽकृतोयूषः क्रमात्कांतेगुरुर्लघुः ॥

अर्थ–जिस यूषमें सोंठ, मिर्च, पीपल, घृत और सैंधानिमक डालके सिद्ध करें उसको 'कृतयूष' कहते हैं । और जो केवल दालकाही यूष कहता है उसको 'अकृत-यूष' कहते हैं इनमें कृतयूष गुरु है तथा अकृतयूष हलका है ।

यूषस्तक्रेण संसिद्धो धान्याम्लेन च वा तथा । फलाम्लेनवरारो-हेगुरुःप्रोक्तोयथोत्तरम् । रुच्यावातहराश्चेमेसर्वेयूषाघटस्तानि ॥

अर्थ–छाँछमें सिद्ध करा तथा धान्याम्लमें सिद्ध करा तथा फलाम्लमें सिद्ध करा यूष ये एकसे दूसरा भारी है, और ये तीनों यूष रुचिकारक तथा वातनाशक हैं ।

मुद्गयूष ।

मुद्गयूषस्तुमधुरोहृद्यःसंदीपनोहिमः । रक्तपित्ततृषादाहज्व-रिणांहितकारकः । कफव्रणशिरोरोगयुक्तानांचाहितावहः । अयंसर्वोत्तमोयूषोयथात्वंवनितोत्तमा ॥

अर्थ-मूँगका यूष मधुर, हृदयको बलदायक, अग्निदीपक तथा शीतल होकर रक्तपित्त, तृषा, दाह, ज्वर, कफ, व्रण और मस्तकसंबंधी रोगोंको हितावह है यह मुद्गयूष सर्वोत्तम कहिये संपूर्ण यूषोंमें उत्तम है ।

अथ द्वितीयमुद्गयूष।

मुद्गानांप्रसृतिंकांतेद्विप्रस्थेसलिलेक्षिपेत् । चतुर्थांशावशेषेतु सूक्ष्मवस्त्रेणगालयेत् । तास्मिन्सैंधवधान्याकदाडिंबत्वङ्महौषधम् । पिप्पलीजीरकंचापिक्षिपेट्टंकंपृथक्पृथक् । कोष्णं पीत्वाजयेत्पित्तंकफातंकंनसंशयः । तवाधरसुधापानसुरक्ताभ्यामिमाविव ॥

अर्थ-अब मूँगके यूषकी दूसरी विधि कहतेहैं-मूँगकी धुली हुई दाल एक प्रसृति लेवे और दो प्रस्थ पानीमें सिजावे जब चौथाई जल बाकी रहे तब महीन वस्त्रमें छान सैंधानोन, धनियाँ, अनारकी छाल, सोंठ, पीपर तथा जीरा ये पदार्थ एक २ टंक ले चूर्ण कर उसमें डाले तो यह यूष किंचित् उष्णरहे इसको गरमागरम पीनेसे पित्त और कफको दूर करैहै ।

मसूरादि यूष।

मसूरमुद्गगोधूमकुलित्थसैंधवैःकृतः । यूषोवातहरःश्लेष्मपित्तयोश्चविवर्धनः । एषैवदाडिमद्राक्षासंयुक्तोरुचिकारकः । पाकेतीक्ष्णश्चहृद्यश्चदीपनोवातनाशनः ॥

अर्थ-अब मसूरादि यूष कहते हैं-मसूर, मूंग, गेहूं, कुलथी और सैंधानिमक इनसे बनाहुआ यूष वातनाशक, और कफ तथा पित्त इनको बढानेवाला है । यह यूष अनारदाना और दाखके मिलानेसे रुचिकारक होताहै । और पाकके समय तीक्ष्ण, हृदयको बलदायक दीपन और वातनाशक होवै ।

अथ शूकधान्ययूष।

एकोभागःपटोलस्यत्रिभागाःशूकधान्यतः।द्वौभागौपारिभद्रस्यपचेद्यूषंविधानतः । एषसंदीपनोहृद्यः कफमेदोगदापहः । क्रिमिज्वरहरश्चैवपित्तकुष्ठप्रणाशनः ॥

अर्थ-जव इत्यादिक धान्य जिन्होंमें कांटे होतेहैं उनको शूकधान्य कहते हैं । सके यूषकी विधि कहतेहैं । परवल एकभाग, शूकधान्य तीन भाग और नीमकी

छाल दो भाग, ये सर्व एकत्र कर इनका यूष करे। यह यूष दीपन, तथा हृदयको बलदायक होकर कफ, मेद, कृमि, ज्वर, पित्त और कुष्ठ इनका नाशक है ।

अथ मूलकयूष ।

मेदोवृद्धिप्रतिश्यायंकफंकासंगलग्रहम् ।
ज्वरारोचकहृल्लासाञ्जयेन्मूलकयूषकः ॥

अर्थ—अब मूल, (जड) इनके यूषोंके गुण कहतेहैं । यह मूलकयूष मेदोवृद्धि, सरेकमां, कफ, खाँसी, गलग्रह, ज्वर, अरोचक और हृल्लास कहिये सूखी रद इनका नाश करे ।

अथ पंचामृतयूषः ।

कुलित्थमाषनिष्पावमुद्गाढकिसमुद्भवः । दीपनःपाचनोयूषोरुच्योधातुविवर्धनः॥अंगमर्दज्वरश्लेष्मक्षयानांनाशनःस्मृतः । अयंपञ्चामृतोयूषःकथितोभिषगुत्तमैः ॥

अर्थ—अब पंचामृतयूष कहतेहैं । कुलथी, उडद, चौरा, मूंग, अरहर इनका यूष दीपन, पाचन, रुचिकारक तथा धातुकी वृद्धि करनेवाला है तथा अंगोंका टूटना, ज्वर, कफ और क्षय इनका नाशक है ।

अथ मुद्गपर्णीयूषः ।

वनमुद्गभवोयूषोवृष्योधातुविवर्धनः ।
रक्तपित्तंज्वरंकृच्छ्रंपित्तंसंतापकंजयेत् ॥

अर्थ—वनमूँग (मोठ) का यूष वृष्य तथा धातु वढानेवाला होकर रक्तपित्त, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, पित्त और संताप इनको नाश करताहै ।

अथ कुलित्थयूषः ।

कुलित्थसंभवोयूषःकषायोमधुरोमतः । वीर्योष्णोदीपनोवालेतथावातानुलोमनः। गुल्मार्शकफवातघ्नोमेदोमेहानिकृंतनः।
अश्मरीश्वासकासघ्नः प्रतितूणीप्रणाशनः ॥

अर्थ—कुलथीका यूष कषैला, मधुर, वीर्योष्ण, दीपन और वातानुलोमन करनेवाला तथा गुल्म, बवासीर, कफ, वात, मेद, प्रमेह, पथरी, श्वास, खाँसी इनको नाश करेहै ।

आढकी (अरहर) यूषः ।

आढकीसंभवोयूपोवालेस्वादुःकपायकः । नाशयेत्पीनसंश्वासंत्रिदोपंकसनंज्वरम्। रक्तंदोपंकृमीन्हन्यात्त्वंयथामदनव्यथाम्॥

अर्थ-अरहरका यूष स्वादु तथा कषाय होनेसे पीनस,श्वास, त्रिदोष, कास, ज्वर, रक्तदोष और कृमि इनका नाशकहै ।

चणकयूषः ।

चाणकःशीतलोयूषस्तिक्तश्चैवकषायकः ।
कासश्वासप्रतिश्यायरक्तदोषत्रिदोषनुत् ॥

अर्थ-चनेका यूष शीतल, कडुआ तथा कषेला होनेके कारण खाँसी, श्वास, सरेकमा, रक्तदोष और त्रिदोष इनको नाश करताहै ।

मसूरयूषः ।

मासूरोमधुरोयूषोग्राहीमेहप्रणाशनः ।
धातुसंवर्द्धनःप्रोक्तःपीनोत्तुंगपयोधरे ॥

अर्थ-मसूरका यूष शीतल, ग्राही, मंमेहनाशक और धातुवर्धकहै ।

अथ माषयूषः(उरदका यूष)।

माषयूषोगुरुर्वृष्यःकिंचित्पित्तप्रकोपनः । वातातंकहरःकांते कफरोगप्रवर्धनः । मलाधिक्यकरश्चायंप्रस्फुरत्करकंकणे ॥

अर्थ-उरदोंका यूष भारी, वृष्य, किंचित् पित्तकारक, वातरोगोंका नाशक, कफसंबंधी रोगोंका बढानेवाला और मलवर्द्धकहै ।

निष्पावयूषः ।

निष्पावयूषकोबालेस्त्रीणांस्तन्यविवर्धनः ।
दृष्टिरोगकफातंकनाशनःपरिकीर्तितः ॥

अर्थ-निष्पाव (चोराओं) का यूष स्त्रियाके दूध बढानेवालाहै एवं नेत्रसंबंधी रोग, कफरोग इनको नाश करनेवालाहै ।

अथ पंचमुष्टिकयूषः ।

यवबदरकुलित्थमुद्गमूलैर्मुष्टिमितैःपृथगब्जलोचने । अयितुर्यगणेजलेसुसिद्धंयूषमुशंतिहिपंचमुष्टिकम् । ज्वरपवनकफाश्वशूलगुल्मापित्तंश्वासमपिक्षयंचकासम् । अपहरतिमनोहरे प्रयुक्तोयषोयंनलिनाक्षिचंद्रवक्रे ॥

अर्थ-जव. वेर, कुलथी, मूंग और मूल ये पांचोंवस्तु एक एक पल लेवे, इनसे चौगुने जलम यूष सिद्ध करे, इसको पंचमुष्टिक यूष कहते हैं। यह ज्वर, वात, कफ, शूल, गोला, पित्त, श्वास, क्षय तथा खाँसी इनको नाश करेहै ।

नवांगयूषः ।

मूलकंबदरंविश्वंमुद्गकृष्णाकुलित्थकम् । यवतंडुलकंधात्रीफलंनीरेचतुर्गुणे । एतेषांसाधितोयूषोनवांगःपरिकीर्तितः । कफपित्तहरश्चायंकीर्तितोभिषगुत्तमैः ॥

अर्थ–मूली, वेर, सोंठ, मूंग, पीपल, कुलथी, जव, चावल तथा आमरे ये नौ (९) पदार्थ एकत्र कर चौगुने पानीमें यूष करे इसको नवांगयूष कहते हैं। यह कफ और पित्तको नाशकरे ।

दाडिम्बामलकयूषः ।

दाडिबामलकैर्यूषः प्रियः संशमनोलघुः ।
दीपनोवातपित्तघ्नोमदमूर्च्छानिवारणः ॥

अर्थ–अनार और आमले इनका यूष प्रियहै । वातादि दोषोंको शमन करनेवाला हलका तथा दीपन होनेसे वात, पित्त, मद और मूर्च्छा, इनका नाशकहै ।

खलयूषः ।

कपित्थंचचामरिचाग्निविल्वाजाजीकृतोयूषकएषहृद्यः ।
वातामयंश्लेष्मभवंविकारंछर्दिंनिहन्यात्खलसंज्ञकोऽयम् ॥

अर्थ–कैथ, इमली, मिर्च, चीतेकी छाल, वेलगिरी और जीरा इनका यूप हृदयको वलदायक तथा वात, कफ, उलटी, इनका नाश करहताहै तथा इसको खलयूष कहते हैं ।

कांवलिकयूषः ।

दध्यम्ललवणस्नेहतिलमाषप्रसाधितः ।
यूषः कांवलिकोहृद्यश्छर्दिवातकफप्रणुत् ॥

अर्थ–दही, आमरे, नोन, तेल अथवा घृत, तिल तथा उरद, इनका जो यूप उसको कांवलिक यूप कहते हैं । यह हृदयको वलदायक होनेसे वमन, वातरोग और कफरोग इनका नाश करताहै ।

अथ सारमाह ।

सारंभोजनसारंसारंसारंगलोचनाऽधरतः ।
पिवकिलवारंवारंनोचेद्वृथाभवतिसंसारः ॥

अर्थ–भोजनमें सार सारहै । अथवा स्त्रीका अधरामृत सार है, इस लिये हे मित्र! तू वारंवार पी अन्यथा संसारमें जन्मलेना वृथाहै ।

वे, यह दाल रुचिकारक, पाचन, अग्निदीपन, स्निग्ध, पथ्य तथा बलदायक होकर, कफ और वात इनकी नाशक है। इसके विना अन्नमें रुचि नहीं होती।

अब संस्कारभेदसे दालके गुण।

भ्रष्टानांशिंविधान्यानांनिस्तुषाणांमनोहरः। शीघ्रपाकी भवेत्सूपोरुचिकृच्चलघुर्मतः। सतुषाणामभ्रष्टानांजराकृच्च गुरुर्मतः॥

अर्थ-भुनेहुए उडद आदिकी निस्तुष दाल मनोहर, जल्दी पचनेवाली, रुचिकारी, तथा हलकी है।

हरे मूँग उरद आदिकी छिलकेवाली दाल बुढापेको लानेवाली और भारीहै।

अथ मुद्गसूपगुणाः।

मुद्गसूपोलघुर्ग्राहीशीतः स्वादुः कषायकः। नेत्ररोगेहितश्चायं प्रियेतृप्तिकरोमतः। संतापंरक्तपित्तंचज्वरंवातंकफंजयेत्। ग्लानिंपित्तंचलोलाक्षिवेतंडवरगामिनि॥

अर्थ-मूंगकी दाल हलकी, ग्राही, शीतल, स्वादु, कषेली, नेत्ररोगमें हित, तथा तृप्तिकारक होकर संताप, रक्तपित्त, ज्वर, वात, कफ, ग्लानि और पित्त इनको दूर करेहै।

अथ चणकसूपः।

रसज्ञेचाणकः सूपः पाचनोरुचिकारकः। किंचिद्वातकरोरूक्षो बल्योबलवतिप्रिये। रक्तदोषंकफंपित्तंरक्तपित्तंतुनाशयेत्।

अर्थ-चनेकी दाल पाचन, रुचिकारक, किंचित् वातकर, रूक्ष तथा बलकारक होकर रक्तविकार, कफ, पित्त आर रक्तपित्त इनको नाशकरे।

अथ तुवरीसूपः।

आढकीसंभवः सूपः शीतलोऽल्पकषायकः। रुचिवातकरो रूक्षः कफपित्तप्रणाशनः। यदिचाज्ययुतः सिद्धः स्निग्धः कंजविलोचने। पित्तश्लेष्मसमीराणांशामकः परिकीर्तितः।

अर्थ-अरहकी दाल-शीतल, थोडी कषेली, रुचिकारक, वातकारक, रूक्ष,

---

१ अरहरकी दाल-अरहकी दाल [illegible] घी [illegible] आधपाव, अदरख २ तोले, धनियाँ १ तोला मिर्च साढेचार आनेभर, [illegible], केशर एक आनेभर, छोटी इलायची दो आनेभर, दालचीनी [illegible] को किसी हांडीमें-

रसज्ञेप्रवदाम्येवशृणुसूपविधिंप्रिये ।
गुणज्ञेतद्गुणांश्चापिसूपशास्त्रप्रमाणतः ॥

अर्थ–कवि उत्तर देता है कि, हे रसज्ञे ! सूपशास्त्रके अनुसार मैं सूपकी विधि तथा गुण तेरे आगे कहताहूं सो सुन ।

कांचनसूप (धोवादाल)

कृष्णसर्षपतैलाक्तांशिंबीधान्यंवरांगने । शोषयेदातपेचाश्मयात्राचैवविदालयेत् । उलूखलेततःपश्चात्कंडयेच्छोधयेत्ततः । शूर्पेणकांचनःसूपःकथितोयंविदांवरैः । दध्याज्यरजनीभिर्वा लिप्तांबालेसुदालिकाम् । संपीड्यस्थापयेद्भांडेनिशैकांशोषयेत्ततः । आतपेकंडयेत्तत्तांशोधयेच्छूर्पकेणच । अयमप्यरविंदास्ये सूपःकाञ्चनसंज्ञकः ॥

अर्थ–काली सरसोंके तेलमें शिंबीधान्य (मूंग, उडद आदि) को चुपडकर धूपमें धरदेवे; जब सूखजावे तब दरेतासे दरके दाल करे । पीछे इस दालको ओखरीमें डालकर मूसलसे छरडाले और सूपसे फटककर स्वच्छ करे । इसको कांचनसूप अर्थात् धोवादाल कहते हैं । और मालवे देशमें इसको मोगर कहते हैं ।

अथवा दालमें दही, घृत और हलदी लगाय एक पात्रमें भर १ रात्रि दवाकर धरदेवे, प्रातःकाल होलेही धूपमें धरे फिर ओखलीमें कूट सूपसे फटक स्वच्छ करलेवे इसकोभी "कांचनसूप" कहते हैं ।

अथ सूपपाकविधिः ।

रसज्ञेकांचनंसूपंप्रस्थैकंसुमनोहरम् । पचेदब्धिगुणेतोयेचार्द्धसिद्धेविनिःक्षिपेत् । हरिद्रांरामठंसर्पिर्लवणंचयथोचितम् । नातिद्रवोघनोवापिससूपोरुचिकारकः । पाचनोदीपनःस्निग्धःपथ्योवल्योवरांगने । कफवातहरश्चान्नंविनानेनवृथा भवेत् ॥

अर्थ–अब धोवादालके वनानेकी विधि कहतेहैं–एक प्रस्थ धोवादाल ले चौगुने पानीमें सिजावे जब आधी सीजजावे तब इसमें हलदी, हींग, घृत और निमक परिभाषामें कहे अनुसार डाले । पीछे अत्यंत पतली न हो न बहुत गाढी हो ऐसी सिजा-

अम्लिकायाः फलंपक्वंकुडवैकंविनिःक्षिपेत्।प्रस्थेनीरेपचेत्स-
म्यग्रसज्ञेसारकप्रिये। अर्द्धाऽवशिष्टेपूतेचमरिचंद्व्यक्षकंप्रिये ॥
सैंधवंजरणंहिंगुयथायोग्यंविपेषितम् । श्लक्ष्णंपिंडीकृतंसर्वं
चार्द्रकुस्तुंबरीयुतम्।तस्मिन्क्वाथेविनिक्षिप्यपाचयेच्चक्षणंपुनः।
अम्लिकासारमञ्जाक्षिवातातंकप्रणाशनम् । पित्तश्लेष्मकरं
किंचित्सुरुच्यंवह्निबोधकम् ॥

अर्थ-अब इमलीके सारकी विधि और गुणदोष कहतेहैं। पकी इमली १६ तोले ले, और ६४ तोले पानीमें औटावे, जब आधा जल शेष रहे तब महीन वस्त्रमें छानकर धरदेवे, पीछे दो तोले कालीमिर्च, सैंधानिमक, जीरा, हींग तथा हराकोथमीर इन सबको अनुमानके माफक ले पीसकर गोलाकरके: उसको उस इमलीके रसमें गेरदेवे फिर एक क्षणमात्र उसे चूल्हेपर धरके पचावे इसको अम्लिका सार कहतेहैं। यह वातरोगका नाशक, किंचित् पित्त और कफकर और रुचिकर तथा अग्निदीपन करताहै। इसे दक्षिणीलोग भातके साथ बहुत खातेहैं।

अगस्त्यसार।

अगस्त्यकुसुमंक्वांतिसारेस्मिन्संक्षिपेद्यदा।
अगस्त्यसारकंप्राहुः सूपशास्त्रविदस्तदा॥

अर्थ-यदि इसी इमलीके सारमें अगास्तियेके फूल डालदेवे तो इसीको अगस्त्यसार कहते हैं।

आगस्त्यसारके गुण।

अगस्त्यसारंसुस्वादुतिक्तंवातकफापहम्।
पांडुशोफारुचिप्लीहगुल्मशूलगदप्रणुत्॥

अर्थ-अगस्त्यसार-स्वादु तथा तिक्त होनेसे वात, कफ, पांडुरोग, सूजन, अरुचि, प्लीहा कहिये तिल्ली गोला और शूल इनका नाश करनेवालाहै।

वदसूपविधिंविद्वन्भोजनेऽस्यविशेषतः।
सूपयोगोऽस्तिनैवात्रविनानेनरुचिर्भवेत्॥

अर्थ-कविकी स्त्री प्रश्न करतीहै कि, हे विद्वन्! आप सूपकी (दालकी) विधिमेरेको कहो, भोजनमें इसकी विशेष आवश्यकता रहतीहै- कारण कि, सूपके विना अन्य भोजनोंसे रुचि नहीं होती।

रसज्ञेप्रवदाम्येवशृणुसूपविधिंप्रिये ।
गुणज्ञेतद्गुणांश्चापिसूपशास्त्रप्रमाणतः ॥

अर्थ–कवि उत्तर देता है कि, हे रसज्ञे ! सूपशास्त्रके अनुसार मैं सूपकी विधि तथा गुण तेरे आगे कहताहूं सो सुन ।

कांचनसूप (धोवादाल)

कृष्णसर्षपतैलाक्तांशिंबीधान्यंवरांगने । शोषयेदातपेचाश्मयात्राचैवविदालयेत् । उलूखलेततःपश्चात्कंडयेच्छोधयेत्ततः। शूर्पेणकांचनःसूपःकथितोयंविदांवरैः । दध्याज्यरजनीभिर्वा लिप्तांबालेसुदालिकाम् । संपीड्यस्थापयेद्भांडेनिशैकांशोषयेत्ततः । आतपेकंडयेत्तत्तांशोधयेच्छूर्पकेणच । अयमप्यरविंदास्ये सूपःकाञ्चनसंज्ञकः ॥

अर्थ–काली सरसोंके तेलमें शिंबीधान्य (मूंग, उडद आदि) को चुपडकर धूपमें धरदेवे; जब सूखजावे तब दरेतासे दरके दाल करे । पीछे इस दालको ओखरीमें डालकर मूसलसे छरडाले और सूपसे फटककर स्वच्छ करे । इसको कांचनसूप अर्थात धोवादाल कहते हैं । और मालवे देशमें इसको मोगर कहते हैं ।

अथवा दालमें दही, घृत और हलदी लगाय एक पात्रमें भर १ रात्रि दवाकर धरदेवे,प्रातःकाल होतेही धूपमें धरे फिर ओखलीमें कूट सूपसे फटक स्वच्छ करलेवे इस कोभी "कांचनसूप" कहते हैं ।

अथ सूपपाकविधिः ।

रसज्ञेकांचनंसूपंप्रस्थैकंसुमनोहरम् । पचेदब्धिगुणेतोयेचार्द्धसिद्धेविनिःक्षिपेत् । हरिद्रांरामठंसर्पिर्लवणंचयथोचितम् । नातिद्रवोघनोवापिससूपोरुचिकारकः । पाचनोदीपनःस्निग्धःपथ्योवल्योवरांगने । कफवातहरश्चान्नंविनानेनवृथा भवेत् ॥

अर्थ–अब धोवादालके बनानेकी विधि कहतेहैं–एक प्रस्थ धोवादाल ले चौगुने पानीमें सिजावे जब आधी सीजजावे तब इसमें हलदी, हींग, घृत और निमक परिभाषामें कहे अनुसार डाले । पीछे अत्यंत पतली न हो न बहुत गाढी हो ऐसी सिजा-

वें, यह दाल रुचिकारक, पाचन, अग्निदीपन, स्निग्ध, पथ्य तथा बलदायक होकर कफ और वात इनकी नाशक है। इसके विना अन्नमें रुचि नहीं होती।

अब संस्कारभेदसे दालके गुण।

भ्रष्टानांशिंविधान्यानांनिस्तुषाणांमनोहरः । शीघ्रपाकी भवेत्सूपोरुचिकृच्चलघुर्मतः । सतुषाणामभ्रष्टानांजराकृच्च गुरुर्मतः ॥

अर्थ—भुनेहुए उडद आदिकी निस्तुष दाल मनोहर, जल्दी पचनेवाली, रुचिकारी, तथा हलकी है।

हरे मूँग उरद आदिकी छिलकेवाली दाल बुढापेको लानेवाली और भारीहै।

अथ मुद्गसूपगुणाः।

मुद्गसूपोलघुर्ग्राहीशीतः स्वादुः कषायकः। नेत्ररोगेहितश्चायं प्रियेतृप्तिकरोमतः । संतापंरक्तपित्तंचज्वरंवातंकफंजयेत् । ग्लानिंपित्तंचलोलाक्षिवेतंडवरगामिनि ॥

अर्थ—मूंगकी दाल हलकी, ग्राही, शीतल, स्वादु, कषेली, नेत्ररोगमें हित, तथा तृप्तिकारक होकर संताप, रक्तपित्त, ज्वर, वात, कफ, ग्लानि और पित्त इनको दूर करेहै।

अथ चणकसूपः।

रसज्ञेचाणकः सूपः पाचनोरुचिकारकः। किंचिद्वातकरोरूक्षो बल्योबलवतिप्रिये । रक्तदोषंकफंपित्तंरक्तपित्तंतुनाशयेत् ।

अर्थ—चनेकी दाल पाचन, रुचिकारक, किंचित् वातकर, रूक्ष तथा बलकारक होकर रक्तविकार, कफ, पित्त आर रक्तपित्त इनको नाशकरे।

अथ तुवरीसूपः।

आढकीसंभवः सूपः शीतलोऽल्पकषायकः । रुचिवातकरो रूक्षः कफपित्तप्रणाशनः। यदिचाज्ययुतः सिद्धः स्निग्धः कंजविलोचने। पित्तश्लेष्मसमीराणांशामकः परिकीर्तितः।

अर्थ—अरहरकी दाल—शीतल, थोडी कषेली, रुचिकारक, वातकारक, रूक्ष,

---

१ अरहरकी दाल—अरहरकी दाल१ शेर, घी पावभर, दही आधपाव, अदरख २ तोले, धनियाँ १ तोला मिर्च साढेचार आनेभर, निमक ४ तोला, लौंग दोआनेभर, केशर एक आनेभर, छोटी इलायची दो आनेभर, दालचीनी दोआनेभर, जल चार शेर, प्रथम बीनीहुई शुद्धदालको किसी हांडीमें—

कफ और पित्त इनकी नाशकहै । यदि यह घृत डालकर सिद्ध करी जावे तो स्निग्ध तथा वात, पित्त, कफ इनको शमन करे है ।

माषसूपः ।

माषसूपोगुरुर्वृष्यउष्णःस्निग्धोबलप्रदः । स्वादुस्तृप्तिकरोबाले कीर्तितोरुचिकारकः । कफपित्तकरोधातुवर्द्धनोवातनाशनः । भर्जितानांलघुःकिंचिन्माषाणांसूपईरितः ॥

अर्थ–उरदकी दाल-भारी, वृष्य, गरम, स्निग्ध, बलदायक, स्वादु, तृप्तिकर, रुचिकर और कफ, पित्त, धातु इनको बढानेवाली तथा वातनाशकहै । और भुनी उडदकी दाल किंचित् लघुहै ।

त्रैपुटसूपः ।

वातलस्त्रैपुटःसूपःस्वादुश्चा[illegible]कः ।
शूलसंजनकश्छर्दिरक्तपित्त[illegible] ॥

अर्थ–खिसारीकी दाल वातकारक तथा [illegible] और शूल इनको करे । और छर्दि (उलटी) रक्तपित्त [illegible] इनका नाशकहै ।

[illegible]

माकुष्ठःपाचनोवृष्योलघु[illegible] । [illegible]नोल्पबलोबाले बृंहणःपरिकीर्तितः । [illegible]गामिनि । तवाधरसुधेवाशुमा[illegible] ॥

अर्थ–मोठको दाल, पाचन, [illegible] दीपन, किंचित् बलकारक तथा मांसादिकोंको [illegible] इनकी नाशकहै ।

–पानी भर चूल्हेपर चढावो [illegible] और [illegible] तब उस दालका [illegible] अदरखका रस और [illegible] रक्खो चार [illegible] पहले [illegible] सीतासे सिद्ध [illegible] तथा फिर [illegible] छोडकर [illegible] रक्खो तो [illegible]

चौराकी दाल।

राजमाषभवःसूपोरूक्षःस्वादुःकषायकः ।
रुचिवातकरोग्राहीगुरुःस्तन्यविवर्द्धनः ॥

अर्थ-चौराकी दाल रूक्ष, स्वादु, कषेली, रुचिकारी, वातकारी, ग्राही; भारी और स्त्रियोंके दूधको बढातीहै ।

निष्पावसंभवःसूपोगुरुरुष्णश्चशुक्रहृत् । विदाहीचसरःपित्त-
रक्तमूत्रविवर्द्धनः । श्लेष्मस्तन्यमरुच्छोफवर्द्धनश्चप्रकीर्तितः ॥

अर्थ-शिंबीधान्यमात्रकी दाल-भारी, गरम, धातुनाशक, दाहकारक तथा रेचक होकर पित्त, रक्त, मूत्र, कफ, दूध, वात और सोंफ (सूजन) इनके बढानेवालीहै ।

मटरकी दाल ।

कलायसंभवःसूपःपाकेस्वादुःप्रकीर्तितः । मेध्योरूक्षोलघुर्ग्रा-
हीशीतलःसीत्कृतिप्रिये । अरोचकंकफंपित्तंरक्तदोषंव्यपोहति॥

अर्थ-मटरकी दाल-पाकके समय स्वादु होनेसे बुद्धिवर्द्धक, रूक्ष, लघु, ग्राही तथा शीतलहै और अरुचि, कफ, पित्त, रक्तविकार इनकी नाशकहै ।

पाकेतिक्तःकुलित्थानांसूपश्चापिकषायकः । पित्तरक्तकरः
श्वासकासवातकफापहः । अश्मरीनाशनश्चापिकीर्तितस्तद्वि-
दैर्जनैः ॥

अर्थ-कुलथीकी दाल पाककालमें कटु तथा कषेली, पित्तरक्तकारकहै । श्वास, खाँसी, बादी, कफ और पथरी इनको नाशकारकहै ।

मंगल्यासंभवःसूपोलघुर्ग्राहीचशीतलः । वातलोमधुरःपाके
रूक्षश्चापिप्रकीर्तितः । कफंपित्तंतथारक्तंहंतिस्वादुर्मनोहरे ॥

अर्थ-मसूरकी दाल, लघु, ग्राही, शीतल, वातकारक, पाककालमें मधुर तथा रूक्षहै और कफ, पित्त, रक्त इनकी नाशकहै तथा स्वादुहै ।

मिश्रितानांचदालीनांसूपोवलकफप्रदः । गुरुश्चमधुरःपाके
शुक्रलोवातनाशकः । अरोचकहरोबालेसर्वदाप्रीतिवर्द्धनः ॥

अर्थ-दो चार मिली हुई दाल,वलकारक, भारी, पाककालमें मधुर, वीर्यवर्द्धक, वात और अरुचि, इनके नाशक और सर्वकाल प्रीतिके बढानेवाली जाननी ।

विना छिलकाकी और छिलकेकी दाल ।

रसज्ञोनिस्तुषःसूपःकफारोचकनाशकः । ज्वरक्षयहरोवालेलघुःपाकविचक्षणे । तथैवसतुषःसूपोगुरुराध्मानकारकः ॥

अर्थ—छरीहुई धांसकी दाल कफ, अरुचि, ज्वर और क्षय इनकी नाशकहै लघु है और साधारण (जिसमें छिलकाहो ऐसी) दाल भारी और अफरा करनेवालीहै ।

अथ कुल्माषः (घूँघरी)

हिंगुसैंधवसंयुक्तंधान्यंनीरेविपाचयेत् । अर्द्धस्विन्नंयदातत्स्यात्तंकुल्माषंविदुर्बुधाः । किंवांवुप्लावितंधान्यंधूपयेद्रामठादिना । सैंधवादियुतंसिद्धंकुल्माषंतद्विदोविदुः । कुल्माषो वातलोरूक्षोगुरुश्चमलभेदकः । मंदाग्निकफमेदोरुक्पुष्टिशुक्र वलप्रदः ॥

अर्थ—हींग, सैंधानिमक डालकर चने इत्यादि धान्यको पानीमें सिजावे जब आधे सीज जावे तब चूल्हेसे उतार लेवे, इसको "घूंघरी" कहते हैं। अथवा भीजेहुए चनाआदि धान्योंको घृत और हींगसे छौंक दे मसाला डाल सिजावे, तो घूंघरी सिद्ध हो । यह वातकारक, रूक्ष, भारी मलको भेदन करनेवाली, मंदाग्नि, कफ, मेदरोग, पुष्टि, वीर्य और वल इनको वढानेवाली है ।

कुल्माषोमाषजोवालेमाषसूपसमोगुणैः ।
मुद्गसूपसमोमौद्गश्चान्येसर्वेस्वरूपवत् ॥

अर्थ—उडदकी घूँघरीमें उडदकी दालके समान गुण है । इसीप्रकार, अन्य धान्यकी घूँघरी उसी उसी धान्यके गुणसदृश गुण करनेवाली है ।

अथ क्वथितामाह (कढी)

नात्यम्लमधुरेतक्रेचतुःप्रस्थेविमिश्रयेत् । वेसनंकुडवंसूक्ष्मं मरीचलवणान्वितम् । ततस्ताम्रादिजंभांडंवंगलिप्तंवृहन्मुखम् । चुल्ल्यांनिधायवह्निंतुकृत्वाततेचभांडके । क्षिपेदाज्यंतुतत्तते मेथिकांरामठंतुवा।जीरकंराजिकांवापिक्षिपेद्रक्तांमरीचिकाम् । यथारुचिरुचिप्रेष्टेसर्वेवातुरसोनकम् ।क्षणंचैवान्यपात्रेणछादयेत्सुप्रयत्नतः । दृष्ट्वातुनिःसृतंधूमंशनैरुद्घाट्यसंक्षिपेत् ।

अर्धसवेसनंतक्रंद्रुतमाच्छादयेत्ततः । पलादुद्घाटचशेषंतुक्षि-
पेद्दव्यांप्रचालयेत् । ततोमंदानलेनैवपाचयेदतियुक्तितः ।
अर्द्धशेषेत्रिपादेवासमुत्तार्यनिधापयेत् । क्वथितामितितांप्राहुः
सूपशास्त्रविशारदाः ॥

अर्थ-अब कढी अथवा झोरकी विधि कहते हैं । न अत्यंत मीठा और न अत्यंत खट्टा ऐसा दही ४ प्रस्थ लेवे और बेसन अर्थात् चनेका बारीक चून १ कुडव मिर्च और निमक उसमें अनुमानसे मिलायके सबको घोल देवे पीछे कलईके पात्र या स्वच्छ कढाईको चूल्हेपर धरे जब गरम होजावे तब उसमें घृत डाले जब घृत तपजावे तब उसमें मेथी, हींग, जीरा, राई अथवा लाल मिर्च कोईसीवस्तु डालके अथवा कहीहुई सर्व वस्तु डाले अथवा लहसन डाले और क्षणमात्र उसको ढक देवे पीछे उसमें भाफ निकलने लगे तब युक्तिसे उसको उघाड उसमें दही बेसन-मिलाहुआ पानी आधा डाल देवे और ढक देवे फिर थोडी देरमें उघाड शेष आधे कोभी डाल देवे, कलछीसे चलाय देवे जब वह औटकर पौन अथवा आधा रहे तब उतार लेवे इसको कढी कहते हैं और माथुरजन इसको झोर कहते हैं । इसमें इतनी वस्तू और अनुमान माफिक डाले जैसे धनियाँ दोनों जीरे: सोंठ लोंग, इलायची, दालचीनी, काली मिर्च, तेजपात इनको कूट पीसकर डाले, इस कढीको ब्रजवासी राँडकढी कहते हैं ।

क्षिपेत्तस्यांवटीर्वापिचाणकीर्घृतसाधिताः । तैलसिद्धास्तु
वाकांतेतत्क्रांतिंप्रवदाम्यहम् । सुसूक्ष्मंचाणकंपिष्टंपानीयेनावि-
लोडयेत् । लवणंमरिचंजीरंहरिद्रामत्रनिःक्षिपेत् । नातिद्र-
वंघनंवापिहस्तेनैवप्रमंथयेत् । निःक्षिप्यभुवनेदृष्ट्वायदावारि-
तरंभवेत् । तदाहस्तेनतन्नीत्वाघृतेतैलेऽथवाप्रिये । कोलंको-

---

१ सूखा दही बनानेकी विधि. दहीको किसी महीन कपडेमें छाने जब उसका बिलकुल पानी निकलजावे तब उस दहीकी छोटीछोटी बरी तोड़देवे, फिर उनको छायामें सुखाय अपने पास धर रक्खे ये परदेशमें काम देती है जिससमय दहीकी अपेक्षा हो उसीसमय उन दहीकी बडीन्को निकाल किसी मट्टी या पत्थरके पात्रमें थोडी देर भिगोनेसे वांछित दही बनजावेगा, परंतु जैसे खट्टे या मीठे दहीकी बरी तोडेंगे वैसेही स्वादका दही स्वादमें बनेगा ।

लंक्षिपेत्ततेप्रफुल्लास्तुविचालयेत् । कुंकुमाभा यदा ताः स्युर्द्रु-
तंनिष्कासयेत्तदा।तावटीःक्वथितामध्येक्षिपेद्वाकेवलाभजेत् ॥

अर्थ–यदि इस कढीमें वेसनकी पकौरी या टेटी डाले तो इसको सुहागिलकढी कहते हैं । बनानेकी विधि कहतेहैं कि, महीन वेसनमें नोन, मिर्च, जीरा और हलदी डालके फिर पानीसे इसको गाढा गाढा मथे, (परंतु वहुत गाढाभी न हो) जव खूव मथ चुके तव इसमेंसे थोडासा ले जलमें डाले यदि वह जलमें तैरने लगे तव जाने कि पकोडी, तोरने लायक होगया, फिर उस मथे वेसनकी आधे तोलेकी पकौरी घृत अथवा तेलकी कढाईमें छोडे, जव वो फूलकर सिक जावे अर्थात् केसरी रंगकी होजावे तव निकास लेवे इसप्रकार वनीहुई पकौरी उस कढीमें डाले इसको पकौरीका झोर कहतेहैं । और यदि वेसनकी नुकती घृतमें बनाकर डाले तो नुकतीका झोर कहते हैं । और वेसनमें मोयन डाल गाढा उसन हाथोंसे टैंटीके माफिक वटकर घृतमें तलके यदि कढीमें डाले तो उसको टेटिका झोर कहतेहैं ।

अथ चणकवटीगुणाः ।

चाणकीवटिकावल्यापुष्टिदारुचिकारिका ।
विष्टंभकारिणीकांतेकीर्तिताशास्त्रकोविदैः ॥

अर्थ–वेसनकी पकौरी (मगोरी) वलदायक तथा पुष्टिदायक और रुचिकारी तथा मलको रोकनेवाली ऐसे सूपशास्त्रज्ञोंने कहाहै ।

अथ क्वथितागुणाः ।

क्वथितापाचनीरुच्यादीपनीप्रीतिकारिणी । लघ्वीपत्पित्त-
लावातविवंधकफनाशिनी । तक्राभावेप्रियेचान्येनाम्लवर्गेण
साधयेत् । अर्पयेद्धरयेप्रीत्यासकांतायततोभजेत् ॥

अर्थ–केवल कढी पाचक, रुचिकारक, जठराग्निदीपनी, प्रीतिकारक, हलकी तथा किंचित पित्तकारक और वात, मलावरोध और कफ इनकी नाशकहै । यदि कहीं दही न मिलता होवे तो उसजगे इमलीआदि दूसरा खट्टा पदार्थ लेकर उसकीः कढी करे और परमात्माको अर्पण करके पश्चात् आप भोजन करे ।

क्वथिताललनेसवटीसुखदा क्वथिताहिनटीवसुनृत्यविधौ ।
मृदुहास्यविलासकलाकुशला परभृत्स्वरमंजुलगानपरा ॥

अर्थ-हे प्रिये ! जैसे मंदहास्य करनेवाली तथा विनोदमें कुशल होकर नाचनेके समय कोकिलस्वर करके मनोहर गान करनेवाली ऐसी नटी अत्यंत सुखके देनेवाली होती है उसीप्रकार पकोडी पडी हुई कढी अत्यंत सुखदायक होतीहै।

अथ पंचकोलाद्याकथिता।

पिप्पलीपिप्पलीमूलचव्यचित्रकनागरम्।यवानीमरिचंधान्यं सैंधवंजीरकद्वयम्। दाडिंबामलकंपथ्यारामठंमाषकंपृथक्। हरिद्रांलवणंचैव निःक्षिपेदनुमानतः। बेसनंकुडवैकंचतक्र-माढकसम्मितम्। पंचकोलादिकासिद्धाकथितैतैर्मनोहरा। हृद्यासंदीपनीवातंवातगुल्मंकफंतथा। शूलमामातिसारंच कासंश्वासंप्रणाशयेत्॥

अर्थ-पीपल, पीपलीमूल, चव्य, चीता, सोंठ, अजवायन, कालीमिर्च, धनियाँ, सैंधानिमक, जीरा, कालाजीरा, अनारदाना, आमले, हरड और हींग, ये प्रत्येक पदार्थ मासे २ भर ले और हलदी तथा नोन अनुमानके माफिक तथा बेसन १६ तोले और दही २५६ तोले ये सब पदार्थ एकत्र कर कढी करे इसको पंचकोलादिकढी कहते हैं। यह हृदयको बलदायक तथा जठराग्नि दीपन करनेवा-ली, वातरोग, वातगुल्म, तथा कफ, शूल, आमातिसार, खांसी और श्वास इनका नाश करे।

अथ काथली (कथली)

तक्रादिसाधितंयत्स्याच्छाकमात्रंवरांगने। फलंमूलंतुपत्रंवा सुमंपद्मसुमप्रभे। काथलीतिसमाख्यातादीपनीपाचनीम-ता। हृद्याप्रीतिप्रदारुच्यालघ्वीवातकफापहा। त्यक्त्वास्वी-यांश्चशाकस्यगुणानैतद्गुणाभवेत्। पीनोत्तुंगघनोरोजशालि-न्यग्रसरेप्रिये॥

अर्थ-कथली कहिये दहीमें पक्क करा साग, फल अथवा मूल तथा पत्र किंवा फूल, इनमेंसे किसी एक सागको दही बेसनमें औटानेसे उसको कथली कहतेहैं। यह कथली जठराग्निको दीपन करे, पाचनहै, हृदयको बलदायक, प्रीति तथा रुचिको करे और हलकी है। वात कफ इनका नाश करे, यह सागकी कढी पूर्वोक्त अपने

कढीके गुणोंको त्याग ऊपर कहे गुणोंको करतीहै अर्थात् जैसे जैसे शाकके साथ बनतीहै वैसी उसीकेसे गुणोंको करतीहै ।

अलीकमत्स्याः ।

(पानवडी)

वैसनाश्चामसेयाश्चालीकमत्स्याद्विधामताः । शृणुवेसनचाम-स्योः कृतिंतेप्रवदाम्यहम् । माषाश्चमंथास्त्वग्घीनाः पृथग्या-त्राश्रुपेषिताः । चामसीमाषपिष्टंस्याद्वेसनंचाश्वमंथजम् ॥

अर्थ—अब अलीकमत्स्य कहते हैं। तहां कहते हैं कि, अलीकमत्स्य दो प्रकारकेहैं । एक वेसनके दूसरे चामसीके इनमें प्रथम वेसन और चामसी बनानेकी क्रिया कहतेहैं. छिलकारहित उडद अथवा चनेकी दालको पीसे । चनेकी दालके चूर्णको वेसन और उडदके चूर्णको चामसी कहते हैं ।

चामसींवेसनंवापिमंथयेदंबुनासमम् । तत्रैवैलादिकंकांतेवेस वारंविमिश्रयेत् । नागवल्लीदलानीषत्पक्कान्येवततःप्रिये । लेपयेत्तेनपिष्टेनसूपशास्त्रविशारदः । वेष्टयेच्चप्रयत्नेनततः कुर्यादिमंविधिम् । किंचिन्नीरयुतंभांडंतृणैरर्द्धंविपूरयेत् । त-स्योपरिन्यसेत्तानिपाचयेन्मंदवह्निना । यदितानिघनानि स्युर्भांडान्निष्कासयेत्पृथक् । तेषांशस्त्रेणखंडानिमत्स्याना-मिवकल्पयेत् । घृतेतैलेऽथवातानिपाचयेन्नवयौवने ॥

अर्थ—चामसी अथवा वेसनको पानीमें सानकर उसमें परिभाषामें कहा एलादिक वेसवार डालकर खूब मथे, फिर नागरवेलके पके पानोंमें मथीहुई पीठी लगावे फिर एक पात्रमें थोडा पानी डाल उसमें आधे भागमें तिनका भरके उसमें वो लिपटेहुए पान भरे फिर उस पात्रके मुखपर ढकना देकर चूल्हेपर मंद मंद अग्नि देवे, कुछ देरमें वो पान सीजकर कठोर हो जातेहैं । तब उस पात्रमेंसे काढलेवे फिर छुरीसे टु-कडे करके घृतमें अथवा तेलमें तल लेवे, इसको अलीकमत्स्य कहतेहैं । और लौकि-कमें इनको पानवडे कहतेहैं ।

अलीकमत्स्योंके गुण ।

प्रियास्तेऽलीकमत्स्याःस्युर्बल्यावृष्यारुचिप्रदाः । ईषत्पित्त-

कराःपुष्टिप्रदाधातुविवर्द्धनाः । वातार्दितहनुस्तंभहराःकोष्ठ-
विशोधकाः । क्वथितायांक्षिपेद्वापितथाप्येतद्गुणाःस्मृताः ।
एवमन्यस्यशाकस्यपत्रपुष्पादिकस्यच । युक्त्याकुर्याद्गुणैस्तु
ल्याअलीकामत्स्यकाः प्रिये ॥

अर्थ–ये अलीकमत्स्य प्रिय, बलकारक, धातुवर्द्धक, रुचिकर, किंचित् पित्तकारक पुष्टिदायक तथा वृष्यहैं उसीप्रकार वातरोग, अर्दित तथा हनुस्तंभ इनके नाशक और कोष्ठको शुद्ध करनेवालेहैं इनको कढीमें डालकर भोजन करनेसेभी उक्त गुणोंको करेहैं इसप्रकार बैंगन, मूली, पालक आदि किसी फल पत्र पुष्प आदिके अलीकमत्स्य बनावे उनके गुण जो ऊपर कहेहैं वो होतेहैं । परंतु हमारे मध्यदेशमें इनको चंद्रसेनी कहतेहैं । इतना भेदहै कि, अलीकमत्स्योंको पात्रमें घासके ऊपर धरके सेकते हैं और यहांके मनुष्य फल फूल आदिको गाढे वेसनमें लपेटकर घीमें छोड देतेहैं जब पक्क होजातेहैं तब निकाल लेतेहैं ।

अथ रसाज्याः ।

प्रस्थैकंचाणकंपिष्टंप्रसृतैकंघृतंतथा । एकीकृत्यतुसंमर्द्यपचे
न्नीरेचतुर्गुणे । यावद्गाढंभवेत्पश्चात्स्थाल्यांकृत्वाप्रसारयेत् ।
कनिष्ठिकामितोत्सेधंशीतेखंडानिकल्पयेत् । दीर्घाणिशिंवि-
कातुल्यान्याज्येतानिविपाचयेत् । फुल्लानिकुंकुमाभानिदृष्ट्वा
निष्कासयेद्द्रुतम् । रसाज्याइतिसंप्रोक्ताः सूपशास्त्रविशारदैः ।
रसनातलकेहीमानर्त्तक्यःसुखदायकाः ॥

अर्थ–अब रसाज्याकी विधि कहतेहैं । चनाका वेसन ६४ तोले तथा घृत ८ तोले एकत्र मिलाय चौगुने पानीमें पक्क करे जब सीजकर गाढा होजाय तब उसको कांसेकी स्वच्छ थालीमें १ अंगुल मोटी रहे इस तरह फैलाय देवे जब शीतल होजावे तव छुरीसे सेवके समान लंबे २ टूक कतर लेवे उन टूकोंको गरम घृतमें छोडदेवे और जब कि फूलकर केशरके समान रंग होजावे तव उनको निकाल ले इनको सूपशास्त्रमें "रसाज्या" कहतेहैं ।

चेदिमाललनेक्षिस्वादध्यादावतिशंप्रदाः । सांसितेमथितेवा-
पिक्षिपेत्तक्रेसितान्विते । अम्लिकापानकेवापिक्वथितायांवि-

निःक्षिपेत् । राजिकाजाजिधान्याकमरीच्यादियुतेषुच । स-
पट्टषुक्षिपेद्वापिद्रवेषूक्तेषुशोभनाः । रसाज्याःपुष्टिदारुच्याव-
ल्यावीर्यकफप्रदाः । वातपित्तहराःख्याताअम्लेक्षिप्ताःकफा-
पहाः । ईषत्पित्तकरावालेवातघ्नाः परिकीर्तिताः ॥

अर्थ–इन रसाज्याओंको दही आदि पदार्थमें भिगोकर भोजन करनेसे अति सुख-
दायक होतीहै । सो इसप्रकार कि–दहीको मथकर उसमें सपेद बूरा डालके अथवा
बूरेको छाँछमें मिलायके उसमें इनको डालदेवे, अथवा इमलीके पनेमें बूरा डा-
लके भिजोदेवे, अथवा कढीमें किंवा राई, जीरा, धनियाँ, मिर्च और निमक इन
सबको मथेहुए दहीमें डालके भिजोकर भोजन करनेसे उत्तम गुणकारी होताहै । यह
रसाज्या पुष्टिदायक, रुचिकारक, वल वीर्य तथा कफ इनको वढानेवाला है । और
वात पित्त इनको नाशकरनेवाला है, और खट्टेपदार्थोंमें भिगोनेसे कफनाशक तथा
किंचित् पित्तकारक और वातनाशक है ।

अथ माषरंगी ।

माषकान्दलितान्नीरेक्षिप्त्वारात्रौचतुर्गुणे । प्रातस्तान्निस्तुषा-
न्कृत्वाप्रक्षाल्याद्भिःप्रयत्नतः । ततस्तान्पेषयेत्सम्यक्पिष्टिंकृ-
त्वाश्मनाऽश्मनि । तस्यांपिष्ट्यांहिलवणंजीरकंमरिचंनिशा-
म् । रामठंचानुमानेनवेसवारंतुवाप्रिये ।क्षिपेदेलादिकंपश्चान्मं-
थयद्भृशमेवच । कोलंकोलंक्षिपेत्तप्तेघृतेसंपाच्यतूद्धरेत् । त-
च्छेषांपिष्टिकामद्भिर्घोलयित्वाऽष्टभागके । काथलीमिवसंपा-
च्यक्षिपेदेलादिकंततः।वेसवारंचलवणंतत्रेमावटिकाःक्षिपेत् ।
ततोदद्यात्क्षणंवह्निंसिद्धामेवसमुद्धरेत् । एषाप्रोक्ताप्रियेतत
ज्ज्ञैर्माषरंगीतिनामतः । माषसूपसमाज्ञेयागुणैरंबुरुहेक्षणे ।
मुद्गसूपसमातद्वद्गुणैर्मौद्गीविचक्षणे ॥

अर्थ–अव माषरंगी (मगौरी) के वनानेकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । उड-
दकी (या मूंगकी) दाल रातको चौगुने पानीमें भिजोवे (परंतु गरमियोंमें वहुत
देर भीजनेसे खट्टी होजातीहै इसीसे तडकाऊ भिजोवे) प्रातःकाल उसको धोकर
उसके छिलके दूर करे, और सिल लोढेसे महीन पीसे फिर; इसमें नोन, जीरा,

कराःपुष्टिप्रदाधातुविवर्द्धनाः । वातार्दितहनुस्तंभहराःकोष्ठ-
विशोधकाः । क्वथितायांक्षिपेद्वापितथाप्येतद्गुणाःस्मृताः ।
एवमन्यस्यशाकस्यपत्रपुष्पादिकस्यच । युक्त्याकुर्याद्गुणैस्तु
ल्याअलीकामत्स्यकाः प्रिये ॥

अर्थ—ये अलीकमत्स्य प्रिय, बलकारक, धातुवर्द्धक, रुचिकर, किंचित् पित्तकारक
ायक तथा वृष्यहैं उसीप्रकार वातरोग, आर्दित तथा हनुस्तंभ इनके नाशक
कोष्ठको शुद्ध करनेवालेहैं इनको कढीमें डालकर भोजन करनेसेभी उक्त गुणोंको
इसप्रकार बैंगन, मूली, पालक आदि किसी फल पत्र पुष्प आदिके अलीकम-
बनावे उनके गुण जो ऊपर कहेहैं वो होतेहैं । परंतु हमारे मध्यदेशमें इनको
ानी कहतेहैं । इतना भेदहै कि, अलीकमत्स्योंको पात्रमें घासके ऊपर धरके
। हैं और यहांके मनुष्य फल फूल आदिको गाढे बेसनमें लपेटकर घीमें छोड
जब पक्क होजातेहैं तब निकाल लेतेहैं ।

अथ रसाज्याः ।

प्रस्थैकंचाणकंपिष्टंप्रसृतैकंघृतंतथा । एकीकृत्यतुसंमर्द्यपचे
न्नीरेचतुर्गुणे । यावद्गाढंभवेत्पश्चात्स्थाल्यांकृत्वाप्रसारयेत् ।
कनिष्ठिकामितोत्सेधंशीतेखंडानिकल्पयेत् । दीर्घाणिशिंबि-
कातुल्यान्याज्येतानिविपाचयेत् । फुल्लानिकुंकुमाभानिदृष्ट्वा
निष्कासयेद्द्रुतम् । रसाज्याइतिसंप्रोक्ताः सूपशास्त्रविशारदैः ।
रसनातलकेहीमानर्त्तक्यःसुखदायकाः ॥

अर्थ—अब रसाज्याकी विधि कहतेहैं । चनाका बेसन ६४ तोले तथा घृत ८ तोले
। मिलाय चौगुने पानीमें पक्क करे जब सीजकर गाढा होजाय तब उसको कांसे-
स्वच्छ थालीमें १ अंगुल मोटी रहे इस तरह फैलाय देवे जब शीतल होजावे तब
ते सेवके समान लंबे २ टूक कतर लेवे उन टूकोंको गरम घृतमें छोडदेवे और
कि फूलकर केशरके समान रंग होजावे तब उनको निकाल ले इनको सूपशास्त्रमें
ाज्या" कहतेहैं ।

चेदिमालल्लनोक्षिस्वादध्यादावतिशंप्रदाः । ससितेमथितेवा-
पिक्षिपेत्तक्रेसितान्विते । अम्लिकापानकेवापिक्वथितायांवि-

निःक्षिपेत् । राजिकाजाजिधान्याकमरीच्यादियुतेषुच । सपट्टुषुक्षिपेद्वापिद्रवेपूतेषुशोभनाः । रसाज्याःपुष्टिदारुच्यावल्यावीर्यकफप्रदाः । वातपित्तहराःख्याताअम्लेक्षिताःकफापहाः । ईषत्पित्तकरावालेवातघ्नाः परिकीर्तिताः ॥

अर्थ–इन रसाज्याओंको दही आदि पदार्थमें भिगोकर भोजन करनेसे अति सुखदायक होतीहै । सो इसप्रकार कि–दहीको मथकर उसमें सपेद बूरा डालके अथवा बूरेको छाँछमें मिलायके उसमें इनको डालदेवे, अथवा इमलीके पनेमें बूरा डालके भिजोदेवे, अथवा कढीमें किंवा राई, जीरा, धनियाँ, मिर्च और निमक इन सबको मथेहुए दहीमें डालके भिजोकर भोजन करनेसे उत्तम गुणकारी होताहै । यह रसाज्या पुष्टिदायक, रुचिकारक, बल वीर्य तथा कफ इनको बढानेवाला है । और वात पित्त इनको नाशकरनेवाला है, और खट्टेपदार्थोंमें भिगोनेसे कफनाशक तथा किंचित् पित्तकारक और वातनाशक है ।

अथ माषरंगी ।

माषकान्दलितान्नीरेक्षिस्वारात्रौचतुर्गुणे । प्रातस्तान्निस्तुषान्कृत्वाप्रक्षाल्याद्भिःप्रयत्नतः । ततस्तान्पेषयेत्सम्यक्पिष्टिंकृत्वाश्मनाऽश्मनि । तस्यांपिष्टयांहिलवणंजीरकंमरिचंनिशाम् । रामठंचानुमानेनवेसवारंतुवाप्रिये ॥क्षिपेदेलादिकंपश्चान्मंथयद्भृशमेवच । कोलंकोलंक्षिपेत्ततेघृतेसंपाच्यतूद्धरेत् । तच्छेषांपिष्टिकामद्भिर्घोलयित्वाऽष्टभागके । क्राथलीमिवसंपाच्याक्षिपेदेलादिकंततःवेसवारंचलवणंतत्रेमावटिकाःक्षिपेत् । ततोदद्यात्क्षणंवह्निंसिद्धामेवसमुद्धरेत । एषाप्रोक्ताप्रियेतज्ज्ञैर्माषरंगीतिनामतः । माषसूपसमाज्ञेयागुणैरंबुरुहेक्षणे । मुद्गसूपसमातद्वद्गुणैर्मौद्गीविचक्षणे ॥

अर्थ–अब माषरंगी (मगौरी) के बनानेकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । उडदकी (या मूंगकी) दाल रातको चौगुने पानीमें भिजोवे (परंतु गरमियोंमें बहुत देर भीजनेसे खट्टी होजातीहै इसीसे तडकाऊ भिजोवे) प्रातःकाल उसको धोकर उसके छिलके दूर करे, और सिल लोढेसे महीन पीसे फिर इसमें नोन, जीरा,

मिर्च, हलदी तथा हींग, ये पदार्थ उस पीठीम गरक उस पीठीको मथे अथवा एलादि वेसवार डालके मथे पीछे वेरके प्रमाण गोलकर तप्त घृतमें तललेवे, तदनंतर उसी पीठीमेंसे थोडीसी बाकी राखे उसको अठगुने पानीमें मिलाय कढीके समान तयार करके उसमें तलीहुई मगोडी डालदेवे, पीछे वेसवार और नोन उसके अनुमान माफिक डाल एक क्षणभर और औंटावे, इसको सूपशास्त्रमें माषरंगी कहतेहैं यदि यह माषरंगी उडदके होनेसे उडदकी दालके समान गुण करेहै । और मूँगकी होवे तो मूँगकी दालके समान गुणकारी जाननी ।

अथ पत्रवटिका: ।

सुसूक्ष्मेचाणकेपिष्टेप्रियेरक्तांमरीचिकाम् । धान्याकंवह्लिजांहिं- गुजीरकंपत्रकंत्वचम् । नालिकेरस्यमज्जानंकंकोलंचलवंगकम् । मरीच्यादिगणंसर्वंतैलभ्रष्टंसुपेषितम् ॥ लवणंचानुमानेनस- क्षिप्याप्सुविलोडयेत् । नातिद्रवंघनंवापिघनपीनपयोधरे ॥ वेसनेनदलंतेननागवल्ल्यादिजंदिहेत् । वेष्टयेत्पाचयेद्युक्त्या तांयुक्तिंप्रवदाम्यहम् ॥

अर्थ-अब पानके वडेकी दूसरी विधि कहतेहैं । महीन वेसनमें (मिर्च, धनियाँ, जीरा, लाल मिर्च, हींग, पत्रज, दालचीनी, गिरीका चूर्ण, कंकोल, लोंग, आदि सर्व पदार्थ तेलमें बारीक पीसे) तथा नोन इसमें अनुमानके माफिक मिलाय पानी डालके मथे, फिर उस पीठीको नागरवेल अथवा आलू आदिमें लपेटकर युक्तिसे सिजावे वो प्रकार इसरीतिपर है ।

किंचिदंबुयुतं भांडं तृणैरर्द्धं प्रपूरयेत् । तत्तृणोपरि संस्थाप्य तानिपत्राणियत्नतः । मंदाग्निनाघनीभूतान्यरंनिष्कासयेद्बहिः । ततोऽच्छूरिकयाखंडेद्व्यंगुलोन्मानतःस्फुटम् । घृतेतैलेऽथ- वाक्वांतेपाचयेन्मंदवह्निना । ताः पत्रवटिकारुच्याःशुक्रलाबुद्धि- कांतिदाः । स्थौल्यवह्निप्रदावल्यावातापित्तकफापहाः ॥

अर्थ-एक पात्रमें थोडासा जल डालके उसमें अधपात्रको तिनकोंसे भरदेवे और उन तिनकोंके ऊपर उन पत्रोंको अथवा आलू आदि वेसन लिपटी हुई पकोडीन्को धरे तथा मंद मंद अग्निदेकर सिजावे जब वो कठोर होजावे तब उतारकर छुरीसे टुकडे कर गरम तेल या घीमें तल लेवे इनको पत्रवटिका कहतेहैं । ये वडी रुचिका-

रक तथा धातु, बुद्धि, शरीरकी कांति, स्थौल्य, जठराग्नि तथा बल इनको देती है और वात, पित्त और कफ इनकी नाशकहै ।

अथ माषेंडरी ।

आर्द्रकंलवणंहिंगुजीरकंमाषपिष्टके । मिश्रयित्वातुनीरेणमर्दयेत्कठिनंततः । तत्पिष्टवटिकाःकृत्वापचेत्पत्रवटीरिव । गुर्वीमाषेंडरीवल्याशुक्लापौष्टिकीप्रिये । नाशयेदर्दितंवातमरोचकमसंशयम् । एवमल्पबलामौद्गीलध्वीकंजविलोचने ॥

अर्थ—अब माषेंडरी (उडदकी वरी) की विधि तथा गुण कहते हैं—अदरख, नोन हींग तथा जीरा, ये पदार्थ एकत्र पीस उडदके चूर्णमें मिलाय उसमें जल मिला भलेप्रकार मथे फिर उसकी वडी कर पानवडीके समान सिजाय टुकडे कर घृतमें व तेलमें तले ये माषेंडरी भारी, बलदायक, धातुवर्द्धक तथा पुष्टिकारकहै । और अर्दि तरोग, वातरोग, अरुचि इनको नाश करे, इसीप्रकार मूँगकी माषेंडरी इससे किंचि न्यूनगुणकारी और हलकी होतीहै ।

अथ वटिकाः (मरीच भरी)

माषाश्चमंथतुवरीतंडुलादीन्विपेषयेत् । कुस्तुंबरुचबाह्लीकलवणंचानुमानतः । नातिद्रवंघनंपिष्टंमंथयेच्चभृशंततः । मरीचिगर्भांवटिकाःकृत्वाचणकसन्निभाः । शोषयेदातपेचाज्येपाचयेद्रुचिकारिकाः । वातगुल्महराःख्याताभोजनेप्रीतिदायकाः । एवंमुद्गादिकानांचवटिकाःपरिकल्पयेत् । इमाःमरीचगर्भाख्याःकीर्तितावटिकाःप्रिये । एताएवांबुनापक्काअत्यंतं प्रीतिकारिकाः । यदिचैवाम्लवर्गेणपाचिताःकिमुतब्रुवे ॥

अर्थ—उडद, चना अरहर अथवा चावल इत्यादिक जो धान्य ले, महीन पी उसकी पीठी करे उसमें कोथमीर, हींग और निमक अनुमान माफिक मिलाय फि उस पिठीको मथकर प्रत्येकमें एक एक मिर्च भरके वरी तोडदेवे, प्रमाणमें चनेके बराबर कर फिर उनको धूपमें सुखाय घृतमें तललेवे। ये मरीचिगर्भा वडी रुचिकारक वातगुल्मनाशक और भोजनविषयमें प्रीति उत्पन्न करनेवाली है। इसीरीतिसे मूंग, मोठ आदिकी वडी करनी चाहिये ये वडी पानीमें पक्क करनेसे अत्यंत प्रीतिकारकहै । औ यदि खटाई आदि पदार्थमें सिजानेसे उसके गुण कहनेमें नहीं आवे अर्थात् बहुत गुण करे ।

मिर्च, हलदी तथा हींग, ये पदार्थ इस पीठीमे गरक उस पीठीको मथे अथवा एलादि वेसवार डालके मथे पीछे वेरके प्रमाण गोलकर तप्त घृतमें तललेवे, तदनंतर उसी पीठीमेंसे थोडीसी बाकी राखे उसको अठगुने पानीमें मिलाय कढीके समान तयार करके उसमें तलीहुई मगोडी डालदेवे, पीछे वेसवार और नोन उसके अनुमान माफिक डाल एक क्षणभर और ओंटावे, इसको सूपशास्त्रमें माषरंगी कहतेहैं यदि यह माषरंगी उडदके होनेसे उडदकी दालके समान गुण करेहै । और मूँगकी होवे तो मूँगकी दालके समान गुणकारी जाननी ।

अथ पत्रवटिकाः ।

सुसूक्ष्मेचाणकेपिष्टेप्रियेरक्तांमरीचिकाम् । धान्याकंवह्निजांहिं-गुजीरकंपत्रकंत्वचम् । नालिकेरस्यमज्जानंकंकोलंचलवंगकम् । मरीच्यादिगणंसर्वंतैलभ्रष्टंसुपेषितम् ॥ लवणंचानुमानेनस-क्षिप्याप्सुविलोडयेत् । नातिद्रवंघनंवापिघनपीनपयोधरे ॥ वेसनेनदलंतेननागवल्ल्यादिजंदिहेत् । वेष्टयेत्पाचयेद्युक्त्या तांयुक्तिंप्रवदाम्यहम् ॥

अर्थ-अब पानके वडेकी दूसरी विधि कहतेहैं । महीन वेसनमें (मिर्च, धनियाँ, जीरा, लाल मिर्च, हींग, पत्रज, दालचीनी, गिरीका चूर्ण, कंकोल, लोंग, आदि सर्व पदार्थ तेलमें बारीक पीसे) तथा नोन इसमें अनुमानके माफिक मिलाय पानी डालके मथे, फिर उस पीठीको नागरवेल अथवा आलू आदिमें लपेटकर युक्तिसे सिजावे वो प्रकार इसरीतिपर है ।

किंचिदंबुयुतं भांडं तृणैरर्द्धं प्रपूरयेत् । तत्तृणोपरि संस्थाप्य तानिपत्राणियत्नतः । मंदाग्निनाघनीभूतान्यरंनिष्कासयेद्बहिः । ततोऽच्छूरिकयाखंडेद्व्यंगुलोन्मानतःस्फुटम् । घृतेतैलेऽथ-वाक्वांतेपाचयेन्मंदवह्निना । ताः पत्रवटिकारुच्याःशुक्रलाबुद्धि-कांतिदाः । स्थौल्यवह्निप्रदावल्यावातपित्तकफापहाः ॥

अर्थ-एक पात्रमें थोडासा जल डालके उसमें अधपात्रको तिनकोंसे भरदेवे और उन तिनकोंके ऊपर उन पत्रोंको अथवा आलू आदि वेसन लिपटी हुई पकोडीन्को धरे तथा मंद मंद अग्निदेकर सिजावे जब वो कठोर होजावे तब उतारकर छुरीसे टुकडे कर गरम तेल या घीमें तल लेवे इनको पत्रवटिका कहतेहैं । ये वडी रुचिका-

स्मृताः । रक्तदोषंतथापित्तंनाशयंत्यपिभक्षिताः । अकीर्तिमपलोकंचयथाधर्माःसुरक्षिताः ॥

अर्थ-अब खंडवटिकाकी विधि कहतेहैं । वेसन और जल वरावर लेकर सिजावे, सिजतेसमय उसमें लाल मिर्च, निमक, हींग, धनियाँ, हलद तथा गिरीका चूर्ण, ये पदार्थ वारीक पीसके डालदेवे, जब वो वेसन सीजकर गाढा होवे तब उताकर घी चुपडे पट्टेपर गेर वरावर हाथसे धीरे धीरे फैलाय देवे, जब शीतल होनेसे जमजावे तब छुरीसे वरफीसमान टुकडे कतरके गरम घीमें सेक लेवे, इनको खंडवटिका कहतेहैं । ये खंडवटिका वल, वीर्य, कांति, पुष्टि, कफ, विष्टंभ और रुचि इनको करेहै । भारी है, तथा वातरोग रक्तदोष और पित्त इनको नाश करेहै ।

अथ वटकाः (वडे)

माषकान्विदलीकृत्यक्षिपेन्नीरेद्विर्यामकम् । संक्षाल्यनिस्तुषान्कृत्वापेषयेदश्मनाश्मनि । पलैकंचपटुप्रस्थेशृंगवेरंपलं तथा । टंकैकंरामठंभृष्टंजीरकंचाद्विषाणकम् । कोलैकंमरिचं कृत्वाचैकध्यंमंथयेत्ततः । भवेन्नीरतरंयावत्ततोनीत्वापलंपृथक् । कृत्वाचंद्रसमाकारंशरच्चंद्रप्रभानने । मध्यच्छिद्रंततश्चाज्येतैलेवापाचयेच्छनैः । कुंकुमाभान्निरीक्ष्यैवपृथक्कृत्वानिधापयेत् । माषाणांवटकारुच्याःकफवाताविवर्द्धनाः । कंपवातमरुत्पक्षाघातकार्श्यहराः स्मृताः ॥

अर्थ-अब वडे बनानेकी विधि और गुण कहते हैं । उडदकी दालको दो प्रहर पानीमें भिजोवे फिर उसको धोय छिलके दूरकर महीन पीसे फिर १ प्रस्थ दालमें १ पल निमक डाले, १ पल अदरख, १ टंक भुनी हींग, २ टंक, जीरा तथा दो टंक मिर्चका चूरा इन सबको मिलाय फिर उस पीठीको अच्छीरीतिसे मथे फिर उसमेंसे एक एक पल पिटी ले गोल गोल चंद्रके समान हाथोंसे चुपडकर वडे बनावे, उसके बीचमें एक छिद्रकर गरम घीमें अथवा तेलमें छोड देवे, जब पक्क हो और केशरके समान लाल रंगहो तब निकास जलमें गेर देवे, इसको वडा कहते हैं । ये उडदके वडे रुचिकारक कफ और पित्त इनको बढावे और कंपवात, वातरोग, पक्षाघात तथा कृशत्व इन रोगोंको नाश करे हैं ।

अथ माषवटिका:।

माषान्विदलितान्नीरेप्लावयेत्प्रहरद्वयम् । ततस्तोयेनसंक्षाल्य कारयेदपिनिस्तुषान् । शिलायांपेषयेत्पश्चादश्मनासूक्ष्मकं ततः । तत्पिष्टयामनुमानेनलवणार्द्रकरामठम्। संमिश्र्यमंथयेत्तावद्यावन्नीरतरंभवेत् । ततोवस्त्रेप्रकल्पेतचणकप्रमिता वटीः । शोषयेदातपेसम्यगिमामाषवटीःप्रिये । किंचिदाज्येनसंभर्ज्यपाचयित्वांबुनाभजेत् । रुच्यामाषवटीहन्यात्कंपवातंतथार्दितम् । वातरुक्सर्पिणीचेयंकफपित्तविवर्द्धिनी । मुद्गसूपगुणामौद्गीचान्याःस्वान्नगुणाःस्मृताः ॥

अर्थ—अब उडदकी वरी बनानेकी विधि और गुण कहतेहैं । उडदकी दाल दो प्रहरपर्यंत भिजोवे; पीछे उसको धोकर छिलका दूरकर बारीक पीसे, फिर निमक अदरख और हींग, इनको अनुमान माफिक मिलाय फिर थोडा पानी डारके मथें पीछे इसकी चनेके समान वडी एक वडे स्वच्छवस्त्रपर तोड देवे । इनको धूपमें सुखाय धर रक्खे, फिर उसमेंसे कार्यके समय जितनी चाहिये उतनी लेकर घीमें तलके पानीमें सिजावे, ये वडी रुचिकारक, कंपवात, अर्दितवात और वातविकार इनको नाश करे और कफ तथा पित्तको वढावे इसीप्रकार मूँगकी वरीके गुण मूँगकी दालके समान जानने और अरहरकी, मटरकी मोठकी इत्यादिकी वडी अपनी २ दालके समान गुणकारी जाननी ।

अथ खंडवटिका:।

सुपिष्टंचाणकंनीरेसमानेसांविपाचयेत् । मरिचंलवणंहिंगुधान्याकंशर्वरींक्षिपेत् । सुसूक्ष्मंनालिकेरस्यमज्जानंचापिसंक्षिपेत् । घनीभूतंसमुत्तार्यघृताक्तेकाष्ठपट्टके । संक्षिप्यघृतलिप्तेनहस्तेनैव शनैःशनैः । वर्द्धयेत्तारपाकारशीतेखंडानिकल्पयेत् । चतुष्कोणानिशस्त्रेणशृंगाटकनिभानिवा । ततःसंपाचयेदाज्येखंडाख्यावटिकाःस्मृताः । इमावल्याःशुक्रलाश्च कांतिपुष्टिकफप्रदाः । विष्टंभकारिकारुच्यागुर्व्योवातहराः

च्चतंतुना । वेल्लयेत्पर्पटांस्तेषांचंद्रमंडलसन्निभान् । सूक्ष्मान्स्नेहेऽथवांगारेभर्जयेत्तांश्चशोषितान् । पर्पटामाषजावल्य दीपनारुचिकारकाः । कफकांतिप्रदाः कांतेपाचनावातनाशनाः । सारकागुरवःपुष्टिरक्तपित्तप्रवर्द्धनाः । चेदाज्येपाचिता स्तेचन्यूनाःस्युर्गुणतस्ततः ॥

अर्थ—अव पापडोंकी विधि कहतेहैं। उज्ज्वल और छिलका रहित उडदोंकी दालक चूर्णको किसी वस्त्रमें छान उस चूनके प्रमाण माफिक निमक, कालीमिर्च, जीरा और हींग ये पदार्थ पीसकर मिलाय देवे, पीछे पापडखार अथवा और किसी क्षारके पानीमें उस चूनको उसन कर रात्रिभर धरा रहने देवे, प्रातःकाल ओखली मूसलसे कूटे जव कूटते कूटते अतिनम्र होजावे तव इसकी कमलकंदके सदृश लंवी वत्ती करे उसवत्तीके डोरीसे दो दो तोलेके गँडेरीके समान टुकडे करे, फिर चकला और वेलनमें कुछ तेल लगाकर उस टुकडेनको वहुत पतला वेलकर गोल पत्रेके समान करे और उनको धूपमें सुखाता जावे, फिर इनको घीमें तलके अथवा अंगारोंपर भूनकर भगवान्‌को भोग धरे। ये उडदके पापड वलकारक जठराग्निदीपन, रुचिकारी, कफकारक तथा कांतिदायक, पाचन, वातनाशक, किंचित् रेचक, तथा भारी, एवं पुष्टता और रक्तपित्त इनको वढातेहैं घृतके भुने पापड अंगारोंपर भुने पापडोंकी अपेक्षा अल्पगुणवालेहैं ।

अथ मुद्गपर्पटानाह ।

निस्तुषाणांचमुद्गानांपिष्टंवस्त्रविगालितम् । मरिचंलवणंहिंगुजीरकंवात्रमिश्रयेत् । मर्दयेत्क्षारनीरेणपूर्ववत्कुट्टनंविना । वर्तिकादीनिकृत्यानिकुर्यात्संवेल्लयेत्ततः । घृताक्तपट्टकेकांतेवेल्लनेनेंदुबिंववत् । शोषयेदातपेसम्यग्मृद्भांडेसन्निधापयेत् । भर्जिताःश्रेष्ठामध्यमाघृतभर्जिताः । मुद्गानांपर्पटाः [illegible]ताः । त्रिदोषशमनाःप्रोक्ताहिताःकर्णाक्षि-

गुणदोष कहतेहैं, छिलका रहित मूगकी [illegible] र्च, जीरा और हींग पीसके मि- [illegible]के पानीमें उसनकर मले जव मलते [illegible] समान उसकी आकृतिकर चकला

अथैतेषामन्यां कृतिमाह ।

त्वग्घीनांमाषजांदालींयात्रासूक्ष्मांविपेषयेत् । दध्नातात्पिष्ट-कंमथ्यकृत्वातद्वटकान्प्रिये । गोघृतेपाचिताबल्यास्तेहिताः स्त्रीप्रसंगिनाम् । वातघ्नाः शुक्रलाः श्लेष्मरक्तपित्तप्रकोपनाः ॥

अर्थ—उडदके दालके चूनको दहीमें मथकर उसके वडे बनावे उनको गौके घीमें सेंके, ये बडे बलदायक, स्त्रीप्रसंग करनेवालोंको परमहितकारी, वातनाशक तथा धातुबढानेवाले एवं कफ और रक्तपित्त इनको कुपित करनेवाले हैं ।

अथ कांजिकवटिकाः ।

मृद्भांडंकटुतैलाक्तंधूपयेद्रामठाज्यतः । तत्रकोष्णोदकंजीरं राजिकांपटुविश्वकम् । संक्षिप्यवटकांस्तत्राक्षिपेत्सम्यग्विमुद्र-येत् । त्रिदिनानंतरंभांडात्समुद्धृत्यानिषेवयेत् । कांजिकाव-टकारुच्याः कफपित्तविवर्धनाः । वातदाहप्रशमनाःशूलाजी-र्णविभंजनाः ॥

अर्थ—अब कांजीके वडेन्की विधि कहते हैं । माटीके पात्रमें कडुआ तेल चुपड उसमें हींग और घीकी धूनी देवे, फिर उस पात्रको आधा गरम जलसे भरे, फिर उस पानीमें जीरा, राई, निमक और सोंठ इनका चूर्ण अनुमान माफिक डालकर उसमें उडदके वडे भिजोय देवे, फिर उस पात्रका मुख बांध तीन दिन पर्यंत धरा रहने दे, फिर उसमेंसे जितने वडे निकालने हो उतने निकाल फिर उसपात्रका मुख बांधकर धरदेवे ये कांजिक वडे रुचिकारक तथा कफ पित्तको बढानेवाले और वात, दाह, शूल और अजीर्ण इनके नाशक हैं ।

अथ तक्रवटकाः ।

मृद्भांडंकटुतैलाक्तंधूपयेद्रामठाज्यतः । तत्रतक्रंसलवणंसा-जाजीशुंठिराजिकम् । संक्षिप्यवटकांस्तत्रधौतानुष्णोदकेनच । मुद्रयित्वाष्टयामांतंस्थापयेच्चततोभजेत् । तेहृद्याःशुक्रला बल्याः पौष्टिकालघवः स्मृताः । वातातंकप्रशमनारक्तपि-त्तकफप्रदाः ॥

अर्थ—अब छाँछके वडेन्के गुणदोष कहते हैं । माटीके पात्रके भीतर कडुआ तैल चुपडकर उसको हींग और घीकी धूनी दे उसको छाँछसे आधा भर देवे उस

छाँछमें निमक, जीरा और सोंठ तथा राई इनको पीसके डाले, फिर वडोंको गरम जलसे धोयकर उस छाँछमें भिजोय देवे तथा उसपात्रका मुख बांधकर आठ प्रहर- तक धरा रहने देवे फिर उसमेंसे वडा निकाल भोजनेमें लेने चाहिये । ये वडे हृदयको बदलदायक, धातुवर्द्धक, बलकारी, पुष्टिकर्ता, हलके तथा वातनाशक हैं । और रक्तपित्त तथा कफ इनको बढानेवाले हैं ।

अथ पानकवटकाः ।

अम्लिकापनकेकांतेप्लावितावटकायदि ।
लोलाक्षिगुणतः प्रोक्तास्तक्रार्द्रवटकाइव ॥

अर्थ–इमलीके पनेमें भीजेहुए वडे–छाँछमें भीगेहुए वडानूके समान गुणकारी जानने ।

अथ मुद्गवटकगुणाः ।

मुद्गानांवटकारुच्याःपौष्टिका कफकारकाः । कोमला गुरवो व- ल्याःशुक्रलाःसुरतप्रिये । रक्तदोषप्रहरणावातपित्तहराःस्मृताः ॥

अर्थ–मूँगके वडे रुचिकारक, पुष्टिकर, कफकारक, कोमल तथा भारी एवं बल, वीर्य इनको बढानेवाले और रक्तदोष, वात तथा पित्त इनके नाशक हैं ।

अथ सूरणवटकाः ।

सूरणंखंडशः कृत्वापाचयेत्पेषयेत्ततः । लवणंमरिचंतत्ररास- ठंजीरकंतुवा । संक्षिप्यमंथयेत्पश्चात्पाचयेद्वटकान्घृते । तेचाग्निदीपनारुच्याअर्शोवातविभंजनाः ॥

अर्थ–अब सूरण (जमींकंद) के वडेन्की विधि और गुणदोष कहतेहैं–जमीकंद- के टुकडे कर उनको इमलीके पानीमे भिगोवे और उनमें निमक हींग, अथवा जीरा डालकर पीसे फिर हाथोंमें घृत चुपड खुब मथे पीछे इसके वडे बनाय घृतमें तल लेवे, ये वडे जठराग्निदीपक तथा रुचिकारी एवं बवासीर तथा वातरोग इनको नाश करते हैं ।

अथ कूष्मांडवटकः ।

कूष्मांडखंडशः कृत्वासूक्ष्मंतच्चापिवाससा । निष्पीडचानिर्ज- लंकृत्वाततस्तस्मिन्विमिश्रयेत् । वेसनंमाषपिष्टंवानिशा- धान्याकरामठम् । लवणंमरिचंसर्वंमंथयेद्वटिकाद्रवम् । ततः संरचयेत्तस्यवटकानतिशोभनान् । शोषयित्वातपेचैतान्पा-

अथैतेषामन्यां कृतिमाह ।

त्वग्घीनांमाषजांदालींयात्रासूक्ष्मांविपेषयेत् । दध्नातांतपिष्ट-कंमथ्यकृत्वातद्वटकान्प्रिये । गोघृतेपाचितावल्यास्तेहिताः स्त्रीप्रसंगिनाम् । वातघ्नाः शुक्रलाः श्लेष्मरक्तपित्तप्रकोपनाः ॥

अर्थ-उडद्के दालके चूनको दहीमें मथकर उसके वडे बनावे उनको गौके घीमें सेके, ये वडे बलदायक, स्त्रीप्रसंग करनेवालोंको परमहितकारी, वातनाशक तथा धातुबढानेवाले एवं कफ और रक्तपित्त इनको कुपित करनेवाले हैं ।

अथ कांजिकवटिकाः ।

मृद्भांडंकटुतैलाक्तंधूपयेद्रामठाज्यतः । तत्रकोष्णोदकंजीरं राजिकांपटुविश्वकम् । संक्षिप्यवटकांस्तत्राक्षिपेत्सम्यग्विमुद्र-येत् । त्रिदिनानंतरंभांडात्समुद्धृत्यानिषेवयेत् । कांजिकाव-टकारुच्याः कफपित्तविवर्धनाः । वातदाहप्रशमनाःशूलाजी-र्णविभंजनाः ॥

अर्थ-अब कांजीके वडेन्की विधि कहते हैं । माटीके पात्रमें कडुआ तेल चुपड उसमें हींग और घीकी धूनी देवे, फिर उस पात्रको आधा गरम जलसे भरे, फिर उस पानीमें जीरा, राई, निमक और सोंठ इनका चूर्ण अनुमान माफिक डालकर उसमें उडद्के वडे भिजोय देवे, फिर उस पात्रका मुख बांध तीन दिन पर्यंत धरा रहने दे, फिर उसमेंसे जितने वडे निकालने हो उतने निकाल फिर उसपात्रका मुख बांधकर धरदेवे ये कांजिक वडे रुचिकारक तथा कफ पित्तको बढानेवाले और वात, दाह, शूल और अजीर्ण इनके नाशक हैं ।

अथ तक्रवटकाः ।

मृद्भांडंकटुतैलाक्तंधूपयेद्रामठाज्यतः । तत्रतक्रंसलवणंसा-जाजीशुंठिराजिकम् ।संक्षिप्यवटकांस्तत्रधौतानुष्णोदकेनच। मुद्रयित्वाष्टयामांतंस्थापयेच्चततोभजेत् । तेहृद्याःशुक्रला वल्याः पौष्टिकालघवः स्मृताः । वातातंकप्रशमनारक्तपि-त्तकफप्रदाः ॥

अर्थ-अव छाँछके वडेन्के गुणदोष कहते हैं । माटीके पात्रके भीतर कडुआ तैल चुपडकर उसको हींग और घीकी धूनी दे उसको छाँछसे आधा भर देवे उस

च्चतंतुना । वेल्लयेत्पर्पटांस्तेषांचंद्रमंडलसन्निभान् । सूक्ष्मा-
न्स्नेहेऽथवांगारेभर्जयेत्तांश्चशोषितान् । पर्पटामाषजावल्य
दीपनारुचिकारकाः । कफकांतिप्रदाः कांतेपाचनावातनाश-
नाः । सारकागुरवःपुष्टिरक्तपित्तप्रवर्द्धनाः । चेदाज्येपाचिता
स्तेचन्यूनाःस्युर्गुणतस्ततः ॥

अर्थ–अब पापडोंकी विधि कहतेहैं। उज्ज्वल और छिलका रहित उडदोंकी दालक चूर्णको किसी वस्त्रमें छान उस चूनके प्रमाण माफिक निमक, कालीमिर्च, जीरा और हींग ये पदार्थ पीसकर मिलाय देवे, पीछे पापडखार अथवा और किसी क्षारके पानीमें उस चूनको उसन कर रात्रिभर धरा रहने देवे, प्रातःकाल ओखली मूसलसे कूटे जब कूटते कूटते अतिनम्र होजावे तब इसकी कमलकंदके सदृश लंबी बत्ती करे उसबत्तीके डोरीसे दो दो तोलेके गँडेरीके समान टुकडे करे, फिर चकला और बेल-नमें कुछ तेल लगाकर उस टुकडेनूको बहुत पतला बेलकर गोल पत्रेके समान करे और उनको धूपमें सुखाता जावे, फिर इनको घीमें तलके अथवा अंगारोंपर भूनकर भगवान्को भोग धरे। ये उडदके पापड बलकारक जठराग्निदीपन, रुचिकारी, कफ-कारक तथा कांतिदायक, पाचन, वातनाशक, किंचित् रेचक, तथा भारी, एवं पुष्टता और रक्तपित्त इनको बढातेहैं घृतके भुने पापड अंगारोंपर भुने पापडोंकी अपेक्षा अल्पगुणवालेहैं ।

अथ मुद्गपर्पटानाह ।

निस्तुपाणांचमुद्गानांपिष्टंवस्त्रविगालितम् । मरिचंलवणंहिं
गुजीरकंवात्रमिश्रयेत् । मर्दयेत्क्षारनीरेणपूर्ववत्कुट्टनंविना ।
वर्तिकादीनिकृत्यानिकुर्यात्संवेल्लयेत्ततः । घृताक्तपट्टकेकां-
तेवल्लनेनेंदुबिंबवत् । शोषयेदातपेसम्यग्मृद्भांडेसन्निधापयेत् ।
तेंऽगारभर्जिताःश्रेष्ठामध्यमाघृतभर्जिताः । मुद्गानांपर्पटाः
स्निग्धगुरवश्चज्वरेहिताः । त्रिदोषशमनाःप्रोक्ताहिताःकर्णाक्षि-
रोगिणाम् ॥

अर्थ–अब मूंगके पापडोंकी विधि और गुणदोष कहतेहैं, छिलका रहित मूंगकी दालको पीस कपडेमें छान उसमें निमक, कालीमिर्च, जीरा और हींग पीसके मि-लावे, और पापडखार अथवा कोई दूसरे खारके पानीमें उसनकर मले जब मलते मलते नम्र हो जावे तब उडदके पापडोंकी विधिके समान उसकी आकृतिकर चकला

चयेद्घृतभर्जितान् । लवणंत्वनुमानेनाक्षिपेदंबुप्रमाणतः । कूष्मांडवटकारुच्यावातातंकविनाशनाः ॥

अर्थ–कुम्हडा (पेठे) के वडे बनानेकी विधि कहतेहैं । पेठेके बारीक टुकडे कर (अथवा घीयाकसमें कसके) उसको कपडेमें बांधके खूब निचोड लेवे, फिर उसमें बेसन अथवा उडद्का चून मिलावे और हलदी, धनियाँ, हींग, निमक और मिर्च ये पदार्थ मिलाय उसको दो घडीपर्यंत खूब मथे फिर उसके वडे करके उनको धूपमें धरदेवे, जब सूखजावे तब उठायकर धर रक्खे जब वडे करने हो तब उनको घीमें सेक पानीमें भिगोदेवे और उनमें पानीके प्रमाण निमक डाले ये कुम्हडेके वडे रुचिकारक तथा वातनाशकहैं ।

अथैतेषामन्यां कृतिमाह ।

कूष्मांडंनिस्त्वचंसूक्ष्मंखंडितंनिर्जलीकृतम् । तत्सममाषजं पिष्टंमिश्रयित्वावरांगने । मारिचंलवणंधान्यंहरिद्रांचतिलानपि । प्रमाणेनक्षिपेन्मथ्यकारयेद्वटकान्प्रिये । संशुष्कानातपेचाज्येभर्जितान्केविपाचयेत् । पूर्ववच्चगुणाश्चैवपूर्ववद्धिद्धिसुंदरि । एवमन्यफलादीनांशाकाहाँणांघनस्तानि । मारलोलविशालाक्षिकारयेद्वटकान्प्रियान् ॥

अर्थ–अब वडीकी दूसरी विधि कहते हैं । पेठेको छील उसके छोटे छोटे टुकडे कर उनका पानी निकाल डाले फिर उस पेठेकी बराबर उडद्का चून या पिट्ठी मिलाय मिर्च, निमक, धनिया, हलदी और तिल ये इसके अनुमान माफिक लेकर उसमें मिलावे पीछे हाथोंसे खूब फेंटकर इसकी वडी तोडदेवे, उनको धूपमें सुखाय धररक्खे, जब कामहो तब पूर्वोक्तविधिके अनुसार पानीमें सिजावे इसके गुण पूर्वगुणोंके समान जानने । इसीप्रकार अन्यशाककी और फलादिकोंकी वरी बनानी चाहिये इनको पेठेकी वरी कहतेहैं ।

अथ पर्पटाः । तत्रमाषपर्पटकृतिमाह ।

निस्तुषाणांचमाषाणांपिष्टंवस्त्रविगालितम् । लवणंमरिचंजीरं किंवारामठकंक्षिपेत् । क्षारांबुमर्दितंगाढंनिशायामुषितंततः । कुट्टयेदश्मनासम्यक्पाषाणेकोमलंयथा । ततस्तद्वर्तिकांकृत्वामृणालसदृशींशुभाम् । शुक्तिमानानिखंडानितस्याः कुर्या-

अथ पोलिकाः (मामूठे) ।

अयिगोधूमपिष्टकंजलेनगाढंविमर्दयेत्कांते । किंचित्किंचिन्नीरंततश्चदत्त्वाविमर्दयेद्भूयः । यावन्मंजुतरंस्यान्मदनसमानंमदनकलाकुशले । तस्यपोलिकांकृत्वाचंद्रबिंबाच्चपत्रमिवसूक्ष्माम् । आज्यविलिप्तांबालेलोहतप्तकेविपाचयेच्छनकैः । पुनःपुनर्लोलाक्षि प्रवर्त्तयित्वोत्तारयेच्चपक्काम् । अर्पयेच्चहरयेतांमदनवर्द्धिनींबल्यांपित्तघ्नीम् । कोष्ठशुद्धिकर्त्रीमपिवातनिहंत्रींभजेत्ततः सततम् ॥

अर्थ–अब मामूठे बनानेकी विधि और गुणदोष कहते हैं । गेहूंके चूनको पानीसे कुछ गाढा उसनकर थोडा जल छिडककर थोडी देर भीजने दे फिर उसमें थोडे थोडे जलकी छींटा देकर मुक्की मारके उसने जब नरम होजावे तब उसकी लोई तोड उसको चकलेपर पलोथन लगायकर बेलनसे गोल और पतली बेले फिर उसमें घी लगाकर गरम तवेपर डालदेवे जब सिकजावे तब दूसरी तरफ घृत लगाकर उलट देवे जब दोनों तरफसे सिकजावे तब उतारकर परमात्माको अर्पण करे । इसको मामूठे, उपरांमठे, कटचोंरा, मंजेडोरे, पलेटा, आदिभी मथुरा दिल्ली आगरेवाले कहतेहैं । यह मामूठे कामदेवको बढावे, बलदायक, पित्तघ्न, कोष्ठशोधक और वातनाशकहैं ।

अथ द्विदलपोलिका (पुरतदार मामूठे) ।

गोधूमपिष्टकंपूर्वमष्टमांशाज्यमिश्रितम् । मर्दयेत्पूर्ववच्चैनंकृत्वैतस्यैवपोलिकाम् । ततश्चाज्येनसंलिप्यकृत्वातांचचतुर्गुणाम् । पुनश्चंद्रसमाकारां बेल्लयकृत्वा प्रपाचयेत् । पुनःपुनः प्रवर्त्त्यैवलघुहस्ताविचक्षणा । पक्कामुत्तारयेदेनांपोलिकेवगुणैरियम् ॥

अर्थ–अब पुरतदार मामूठे बनानेकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । गेहूंके चूनमें अष्टमांश घी मिलाय उसको पूर्वोक्त विधिके अनुसार उसने और उसके मामूठे करे. फिर उसमें घी लगाय चौपट घडी करे पीछे बेलकर तवेपर डालदेवे और वारंवार हलके हाथसे उलट पुलट कर सेके इसके गुणभी पूर्वोक्त मामूठेके समानहैं ।

अथ पूलिका तत्तत्कारणभूतांसमितांप्रथममाह ।

गोधूमान्धवलान्धौतान्कुट्टयेपच्छोषयेत्ततः । शूर्पेणप्रोक्षयेद्वालेयंत्रेणापिप्रपेषयेत् । तत्पिष्टंसूक्ष्मवस्त्रेणगालितंसमितामता ॥

पर बेलनसे बेलकर पत्तेके समान पतले पापड बनावे, और धूपमें सुखायलेवे, फिर इनको अंगारोंपर भूनके अथवा घीमें तलकर भोजन करे, अँगारोंपर भूनेहुए पापड घृत में तलेहुए पापडोंकी अपेक्षा गुणोंमें अधिक श्रेष्ठहैं। ये पापड स्निग्ध, भारी, ज्वर-रोगीको–पथ्य, तथा त्रिदोषनाशक, एवं कान और नेत्रसंबंधी रोगोंको अत्यंत हितकारी है।

अथ तंडुलपर्पटाः ।

धौतानांतंडुलानांचपिष्टंनीरेविपाचयेत् । मरीचपटुबाह्लीकं मिश्रयेदनुमानतः । पर्पटास्तद्भवामिष्टाबल्यावृष्यारुचि-प्रदाः । धातुसंवर्धनाहृद्यागुरवःपाचनाःसराः । त्रिदोष शमनाःख्यातामंजुकोकिलभाषिणि । अंगारभर्जिताः श्रेष्ठा-मध्यमाघृतभर्जिताः । अस्यैववटकाकाराःकृताश्चाज्येविभ-र्जिताः । गुणैर्गुणवतिज्ञेयाहृद्यावातकफापहाः ॥

अर्थ–अब चावलके पापडोंकी विधि कहतेहैं । शुद्ध धुलेहुए चावलके चूनको पानीमें पक्करे और पकतेसमय काली मिर्च, निमक और हींग इनका चूरा प्रमाण माफिक डाले, पीछे शीतल होनेपर उसके पापड करे,ये पापड मीठे, बलदायक, वृष्य रुचिकारी, धातुकी वृद्धि करनेवाले, हृदयको बल देनेवाले, भारी, पाचन, रेचक तथा त्रिदोषनाशकहैं । अंगारोंपर भुनेहुए पापड श्रेष्ठ और घृतमें तले मध्यम होतेहैं । यदि इसी सिजेहुए चावलके चूनकी वडी करके घृतमें तलकर खावे तो हृदयको बलदायक और वात तथा कफ इनकी नाशक जाननी ।

अथ भरित्र (भरता)

वृंताकादिफलंवापिकंदंचांगारभर्जितम् । यत्नात्तन्निस्त्वचं कृत्वाहस्तेनैवविमर्दयेत् । आर्द्रकुस्तुंबरुंतत्रपटुरक्तांमरी-चिकाम् । हरितामपिवाकांतेभर्जितांहिंगुमिश्रयेत् । तद्भरित्र-स्यलोलाक्षिगुणास्तत्तत्फलैःसमाः ॥

अर्थ–अब भरित्र (भरते) की विधि कहते हैं । बैंगनसे आदि ले फल अथवा कोईसा कंद ले मंदाग्निसे भून उसका छिलका निकाल डाले पीछें उसको हाथोंसे मीडके उसमें अदरख, कोथमीर, निमक, लाल मिर्च अथवा हरी मिर्च और भूनी हींग मिलावे इसको भरता कहतेहैं । जिस फलका अथवा कंदका भरता होता है उसके गुण उसी फल कंदके प्रमाण होते हैं । कोई कहता है इस भरताको घीमें भूनकर फिर मसाला मिलावे ।

अथ पोलिकाः (मामूठे)।

अयिगोधूमपिष्टकंजलेनगाढंविमर्दयेत्कांते । किंचित्किंचि-न्नीरंततश्चदत्त्वाविमर्दयेद्भूयः । यावन्मंजुतरंस्यान्मदनसमानंमदनकलाकुशले । तस्यपोलिकांकृत्वाचंद्रबिंबाच्चपत्रमिवसूक्ष्माम्। आज्यविलिप्तांबालेलोहतप्तकेविपाचयेच्छनकैः। पुनःपुनर्लोलाक्षि प्रवर्त्तयित्वोत्तारयेच्चपक्काम्। अर्पयेच्चहरयेतांमदनवर्द्धिनींबल्यांपित्तघ्नीम् । कोष्ठशुद्धिकर्त्रीमपिवातनिहंत्रींभजेत्ततः सततम् ॥

अर्थ–अब मामूठे बनानेकी विधि और गुणदोष कहते हैं। गेहूंके चूनको पानीसे कुछ गाढा उसनकर थोडा जल छिडककर थोडी देर भीजने दे फिर उसमें थोडे थोडे जलकी छींटा देकर मुक्की मारके उसने जब नरम होजावे तब उसकी लोई तोड उसको चकलेपर पलोथन लगायकर बेलनसे गोल और पतली बेले फिर उसमें घी लगाकर गरम तवेपर डालदेवे जब सिकजावे तब दूसरी तरफ घृत लगाकर उलट देवे जब दोनों तरफसे सिकजावे तब उतारकर परमात्माको अर्पण करे। इसको मामूठे, उपरांमठे, कटचोंरा, मंजेडोरे, पलेटा, आदिभी मथुरा दिल्ली आगरेवाले कहतेहैं। यह मामूठे कामदेवको बढावे, बलदायक, पित्तघ्न, कोष्ठशोधक और वातनाशकहैं।

अथ द्विदलपोलिका (पुरतदार मामूठे)।

गोधूमपिष्टकंपूर्वमष्टमांशाज्यमिश्रितम् । मर्दयेत्पूर्ववच्चैनंकृत्वैतस्यैवपोलिकाम्। ततश्चाज्येनसंलिप्यकृत्वातांचचतुर्गुणाम्। पुनश्चंद्रसमाकारां वेल्ल्यकृत्वा प्रपाचयेत् । पुनःपुनः प्रवर्त्त्यैवलघुहस्ताविचक्षणा। पक्कामुत्तारयेदेनांपोलिकेवगुणैरियम् ॥

अर्थ–अब पुरतदार मामूठे बनानेकी विधि और गुणदोष कहतेहैं। गेहूंके चूनमें अष्टमांश घी मिलाय उसको पूर्वोक्त विधिके अनुसार उसने और उसके मामूठे करे, फिर उसमें घी लगाय चौपट घडी करे पीछे वेलकर तवेपर डालदेवे और वारंवार हलके हाथसे उलट पुलट कर सेंके इसके गुणभी पूर्वोक्त मामूठेके समानहैं।

अथ पूलिका तत्रतत्कारणभूतांसमितांप्रथममाह।

गोधूमान्धवलान्धौतान्कुट्टयेपच्छोषयेत्ततः। शूर्पेणप्रोक्षयेद्यंत्रेणापिप्रपेषयेत् । तत्पिष्टंसूक्ष्मवस्त्रेणगालितंसमितामता ॥

अर्थ-अब पूरी बनानेकी क्रिया कहते हैं । परंतु प्रथम जिस्से पूडी बनती है ऐसी मैदाके बनानेकी विधि कहते हैं उत्तम सपेद गेहुंओंको धोय ओखलीमें छरे, फिर धूपमें कुछ सुखाय सूपसे फटक डाले फिर उनको चक्कीसे महीन पीस वारीक वस्त्रमें छान लेय इसको समिता (मैदा) कहते हैं ।

समितापोडशमांशंघृतंविधिज्ञोविमर्दयेत्सम्यक् । गाढंतत-श्चांबुनाविमर्दयेत्तांरचयेत्तल्लोप्नीम् । शुक्तिमितांवास्वेष्टांततश्च क्रिकांकृत्वातल्लोम्न्याःसंवेल्लयतांचसूक्ष्मांविपाचयेद्वैकटाह-केसघृते । सापूलिकेतिकथितास्निग्धागुर्वीमरुत्पित्तहर्त्री । शुक्रवर्द्धिनीकांतेतथादुर्जराजरापहाचापि । सैंधवघृतमिश्रे-णगोधूमपिष्टकेनच । कृतालघ्वीगुणैःख्यातापूर्ववत्पूलिकाप्रिये ॥

अर्थ-मैदामें सोलहवाँ हिस्सा घी मिलाय फिर पानी डाल धीरे धीरे खूब उसने जब नरम होजावे तब उस लूँडमेंसे दोदो तोलेकी लोई करे फिर उनमेंसे एक एक ले बेलनसे वेल बहुत पतली पत्तेके समान गोल पूरी करे उसको गरम घीके कढावमें छो-डता जावे जब फूलकर सिकजावे तब उतारकर झालमें धरता जाय । ये मैदाकी पूरी स्निग्ध, भारी, वातघ्न, पित्तनाशक, धातुवर्द्धक और वृद्धको तरुणता देनेवाली ऐसीहै । यदि इसी पूरीको विना घीका मोयन दिये करे तो हलकी तथा पूर्ववत गुणकारी होतीहै ।

अथ करपट्टिका. (रोटी) ।

गोधूमचूर्णकंकांतेमर्दयेदंबुनाघनम् । किंचित्किंचिज्जलंदत्त्वा मर्दयेच्चपुनःपुनः । यावन्मृदुतरंकुर्यात्ततोलोप्नींपलोन्मिताम् । पश्चात्तच्चक्रिकांकृत्वाहस्ताभ्यांतांविवर्द्धयेत् । संवेल्लयवर्द्धये-द्वापिचंद्रमंडलसन्निभाम् । तांक्षिपेल्लोहजेततैक्षणैकेनप्रवर्तये त् । पुनरंगारचक्रेचाक्षिपेन्निर्धूमकेहिताम् । प्रफुल्लांवैयदापश्ये त्तदाशीघ्रंसमुद्धरेत् । सर्पिषालिप्यतांसम्यक्स्थापयेद्भाज-नेशुभे । अर्पयेद्वरयेवल्यांरुच्यांपुष्टिप्रदांप्रिये । धातुसंवर्द्धि-नींगुर्वींश्लेष्मलांवातनाशिनीम् । भक्षयेत्सनरश्चैनांयस्याग्निः प्रवलोभवेत् ॥

अर्थ–अब गेहूंकी रोटी बनानेकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । गेहूंके चूनको
ीसेगाढा उसन थोडा थोडा जल डालकर वारंवार मर्दन करे इसप्रकार करनेसे
न नरम होजाता है । फिर उस चूनकी चारचार तोलेकी अनुमान लोई बना हाथों
गोलकर चकला वेलनसे वेल तवेपर डालदेवे अथवा हाथोंसे रोटी करके तवेपर
ले, थोडी देरमें इसको उलट देवे, जब चित्ती पडजावे तब तवेपरसे उतार चूल्हेके
गारोंपर रख देवे, जब फूलकर सिकजावे तब अंगारोंसे उतार झाडकर उनपर घी
पडकर पात्रमें धरदेवे इसको संस्कृतमें करपट्टिका और भाषामें रोटी कहतेहैं ।
ोई इसको फुलका, चपाती, ऐसे कहतेहैं । ये रोटी बलकरता, रुचिकारक, पुष्टि-
ायक, धातुवर्द्धक, भारी, कफकारक, वातनाशकहै । जिसकी जठराग्नि प्रवल हो
सको ये रोटी भोजन करनी चाहिये परंतु यह नियम दक्षिणी वंगाली आदिको है
ध्यदेश आदिके रहनेवालोंको नहीं है ।

अथांगारकर्कटीमाह ।

गोधूमचूर्णकेपूर्वंकिंचिदाज्यंविमिश्रयेत् । मर्दयेदंबुनासम्य
क्पूर्ववच्चातियत्नतः । ततोनिंबुमितांलोप्नींकृत्वांगुष्ठेनपीडये-
त् । निर्धूमेगोमयांगारचक्रेसंपाचयेच्चताम् । प्रवर्त्यबहुधाप-
श्चादंगारैश्छादयेद्दृढम् । क्षणादुद्धृत्यतद्भस्मौपूर्ववत्परिवर्त्तयेत्।
नीत्वाविकसितांपक्वांस्फोटयित्वाघृतेक्षिपेत् । सांगारकर्क-
टीवल्यापौष्टिकीशुक्रवर्द्धिनी । अग्निसंदीपनीलघ्वीकफात-
कप्रणाशिनी । कासश्वासप्रहरणीपीनसातंकनाशिनी ॥

अर्थ–अब अंगारकर्कटी अर्थात् बाटी और अंगाकरकी विधि और गुणदोष कहते
हैं । गेहूंके चूनमें घृतका मोयन देकर फिर जलसे करडा उसन फिर जल डालकर
थोडी देर भीजने देवे, फिर जलके थोडेथोडे छींटा देकर हाथोंसे गूंदे, जब अत्यंत
नम्र होजावे तब उसमेंसे बडे नींबूके सदृश लोई तोड कुछ चपटी कर उसके बीचमें
अँगूठेसे दबाय गड्ढा कर फिर निर्धूम अंगारोंपर डालकर उलट पुलट करके सेके,जब सिक-
जावे तब उनको इकटी कर गरम राखमें दाब देवे, फिर उसमेंसे निकाल राखमें उलट पुलट
करके सेके जब सिकतेर फुंदके माफिक एक तरफसे फटजावे तब जाने कि सिकगई,
इसको मुट्ठीसे दाबे जब खिलजावे तब घृतमें डबोयकर धरदेवे इसको अंगारकर्कटी
(बाटी) कहतेहैं यह बलकर, पौष्टिक, वीर्यवर्द्धक, अग्निदीपक, तथा हलकी है एवं
कफ, श्वास, और पीनस इनको दूर करे है । परंतु अंगाकर करडे चूनकी मटरीके
समान चपटी और मोटी बनती है ।

अथ बलभद्रिकागर्गरीकृतिगुणानाह ।

माषपिष्टकृताकांतेरोटिकाबलभद्रिका । माषाणांनिस्तुषाणांचेतिपिष्टजागर्गरीमता । रूक्षोष्णावातलाबल्याकीर्त्तिताबलभद्रिका । गर्गरीवातलाकिंचित्कफपित्तहरास्मृता ॥

अर्थ—अब बलभद्रिका और गर्गरी इनके बनानेकी विधि तथा गुणदोष कहते हैं। उडदके चूनकी रोटीको बलभद्रिका और उडदकी धुलीहुई दालके चूनकी रोटीको गर्गरी कहते हैं । इनमें बलभद्रिका रूक्ष, उष्ण, वातकारक तथा बलदायक एवं गर्गरी किंचित् वातजनक, कफ तथा पित्त इनकी नाशक है ।

अथ वेढमिकाकृतिगुणानाह ।

तत्रपूर्वपिष्टीमाह ।

माषकान्विदलीकृत्यप्लावयेदंबुनिप्रिये । संक्षाल्यनिस्तुषीकृत्यपेषयेदश्मनाऽश्मनि । सापिष्टीतिसमाख्यातासूपशास्त्रविचक्षणैः ॥

अर्थ—अब वेढईके बनानेकी विधि कहतेहैं । परंतु ये वेढई विना पिट्ठीके हो नहीं सकती इस कारण प्रथम पिट्ठीके बनानेकी विधि कहतेहैं । उडदकी दाल पानीमें भिगो उसके छिलके दूर कर फिर उसको बारीक पीसे इसको सूपशास्त्रज्ञ पिष्टी अर्थात् पिट्ठी कहते हैं ।

पिष्टचामेलादिकंकांतेवेसवारंविमिश्रयेत् । शृंगवेरंचलवणं रामठंजीरकंतथा । ततोगोधूमजंपिष्टमंबुनामर्दितंभृशम् । तन्मध्येपिष्टिकांन्यस्यतन्मुखंचविमुद्रयेत् । ततश्चंद्रसमाकारांकृत्वासंवेल्ययत्नतः । पाचयेल्लोहजेतप्तेत्वंगारेहिविधूमके । प्रफुल्लामुद्धरेदाशुमतावेढमिकाहिसा । बल्यावेढमिका वृष्यारुच्योष्णातृप्तिकारिणी । गुर्वीपुष्टिप्रदाधातुमेदःस्तन्यविवर्द्धिनी । परिणामभवंशूलंगुदकीलंमरुद्रुचथाम् । अर्दितं श्वसनंहंतिभेदिनीकफपित्तकृत् ॥

अर्थ—उडदकी पिट्ठीमें एलादिकी वेसवार (मसाला) और अदरख, निमक, हींग और जीरा मिलाय फिर गेहूंके चूनको पानीसे उसन उसमेंसे लोई तोड

मूसके समान बनावें, उसमें पीठी भर मुख बंदकर गोल करें, फिर चकला वेलनसे गोल चन्द्रमाके आकार वेले फिर इसको तवेपर गेरकेर सेकै जब दोनोंओरसे सिक-जावे तब तवेसे उतार चूल्हेके अगाडी अंगारोंपर सेके जब फूलजावे तब निकाल साफ कर घीसे चुपड देवे इसको वेढई कहते हैं । वेढई बलदायक, वृष्य, रुचिकार-क, गरम, तृप्तिकारक, भारी, तथा पुष्टिदायक है । एवं धातु, मेद और स्त्रियोंके दूध बढानेवाली उसीप्रकार परिणामशूल, बवासीर, वातरोग, अर्दित रोग तथा श्वास इनकी नाशक, मलभेदक और कफ तथा पित्त इन्होंको करे है ।

भ्राष्ट्रजा (खापर पोळी)।

धौतानांतंडुलानांहिपिष्टंवस्त्रविगालितम् । ततोऽष्टमाषकंस-र्पिर्मिश्रयेदंवुनाततः । मंथयित्वाचतद्वोलंमृन्मयेखर्परेशु भे । शुद्धभस्मप्रलिप्तेचमंदवह्निप्रतापिते । क्षिप्त्वाप्रसारये-च्छीघ्रमुत्सेधमंगुलोन्मितम्। पूर्णचंद्रसमाकारांपाचयेन्मंदव-ह्निना । छादितामन्यपात्रेणसुपक्वांतुसमुद्धरेत् । सच्छिद्रां तांक्षिपेदुष्णांततेक्षीरेसशर्करे । भ्राष्ट्रजैपास्मृताकांतेसूपशा-स्त्रविचक्षणैः । प्रोक्तैपादुर्जरागुर्वीवृष्योष्णाधातुवर्द्धिनी ॥

अर्थ-अब भ्राष्ट्रजा (चावलकी रोटी)की विधि तथा गुणदोष कहतेहैं । धुलेहुए चावलोंका चून वस्त्रसे महीन छान उसमें आठवाँ भाग घीका मोयन दे पानीसे सान-लेवे, फिर उसको मथकर राख लगेहुए मट्टीके खिपडेमें उस उसने हुए चूनका १ अंगुल मोटा लेप करे, पीछे उसके ऊपर दूसरा माटीका खीपरा ढकके अग्नि देवे, उसमें जगे जगे बहुत छिद्र पडनेसे जाने कि, अब पक्व होगई फिर उसको निकाल मिश्री मिले दूधमें भिगोदेवे इसको भ्राष्ट्रजा कहतेहैं । यह खापरपोली दुर्जर, जड, वृष्य, उष्ण और धातुवर्द्धकहै ।

अथ वेष्टनी ।

माषपिष्टेहिलवणंशृंगवेरंचरामठम्। मिश्रयेदनुमानेनमर्दयेदं-बुनाघनम् । तस्यामोचाफलाकारांचपटामर्द्धचंद्रवत् । वेष्टनीं रचयेद्रम्यांरमणीयेसुलोचने । किंचिन्नीरयुतंभांडंतृणैरर्द्धप्र-पूरयेत् । तत्तृणोपरिसंस्थाप्यपाचयेदातियत्नतः । वेष्टनीशु-क्लागुर्वीबल्यापित्तकफप्रदा । पाककालेचमधुरामार्गस्था-

नांहितावहा । वातरुङ्नाशिनीचैषाघृतेपक्वायदाभवेत् । कचवल्लीतिसाख्यातागुर्वीबल्याचपौष्टिकी । वृष्यातृप्तिप्रदातेजःश्लेष्मपित्तप्रवर्द्धिनी । वातघ्नैषातुमुद्गानांगोधूमानां भवत्यापि ॥

अर्थ—अब वेष्टनीकी कृति और गुणदोष कहतेहैं । उडदके चूनमें निमक, अदरख और हींग मिलाय पानी डालके उसने, फिर उसका स्वरूप केलाकी फलीके आकार बनावे, फिर मिट्टीके पात्रमें थोडा जलभर आधेमें तिनका भरे उसके ऊपर उन फलेन्को धरे और सिजवावे जब सिकजावे तब निकाल लेवे, इसको वेष्टनी कहतेहैं । यह वेष्टनी वीर्यवर्द्धक, भारी, बलदायक, पित्तकर्ता, कफकारी, पाकके समय मधुर, रक्तागिरोंको हितकारी, तथा वातनाशकहै यदि येही फली घीमें तललीनी जावे तो इसको कचवल्लीकहते है यह कचवल्ली भारी, बलकारक, पौष्टिक, वृष्य, तथा तृप्तिकारक, एवं तेज, कफ और पित्त इनको बढावे तथा वातघ्नहै ये गेहूं और मूंग इत्यादिकीभी करतेहैं ।

अथ पूर्णगर्भापूलिका (पूरनपोली)।

प्रस्थैकंचाणकंसूपमाढकीसंभवंतुवा । पाचयेत्केप्रियेतावद्यावदंगुलिमार्दितम् । ज्ञात्वानीरंपृथक्कृत्यसंक्षिप्यपाककोविदः । गुडंप्रस्थंसपादंवाशर्करांसार्द्धप्रस्थिकाम् । क्षणादुत्तार्य वामोरुपेषयेदश्मनाश्मानि । यत्नतोललनेरम्येशुभेऽमत्रेनिधापयेत् । ततोगोधूमजंचूर्णमर्दयेदंबुनाभृशम् । तस्मान्निंबुमितंपिष्टंपृथङ्नीत्वाविचक्षणे । कृत्वाचमूषिकाकारंतन्मध्येतुप्रपूरयेत् । तत्पूर्णंमुद्रयेत्तस्यमुखंकृत्वासुगोलकम् । चंद्रवत्पूलिकांतस्यकृत्वाततोविपाचयेत् । किंचिदाज्यसमालिप्तेभूयोभूयःप्रवर्त्तयेत् । पक्वांज्ञात्वासमुत्तार्यभूमिजापतयेऽर्पयेत् । पूर्णगर्भापूलिकेयंलघ्वीस्वाद्वीचशीतला । दीपनीराजयक्ष्मघ्नीप्रमेहघ्नीचकीर्तिता । सैषैवसार्पिषापक्वाविशेषेणगुणोत्तमा ॥

अर्थ—अब पूरणपोलीकी विधि कहते हैं । एकप्रस्थ चनेकी अथवा अरहरकी दाल जबतक सीजे नहीं तबतक जलमें पचावे जब दाल उँगलीके दाबनेसे पिसने लगे

तव चूल्हेसे उतार इसके पानीको निकाल डाले और इसमें गुड एक अथवा सवाप्रस्थ और खांड डेढप्रस्थ डालकर फिर थोडी सिजावे, तदनंतर उतारकर वारीक पीसे इसको पूरण कहते हैं, जव पूरण तयार होजावे तव गेहूंका वारीक चून पानीसे उसनकर तयार करे फिर उसकी लोई तोड उसके भीतर पूरणको भर मुख वंदकर गोल करे फिर उसको चंद्रमाके समान गोल वेलकर पूरनपोली करे, इसको तवेपर सेककर उतार ले, इसको घीसे चुपडे यह पूरनपोली हलकी, स्वादु, शीतल तथा दीपन एवं राजयक्ष्मा और प्रमेह, इनको नाश करे । यदि यह पूरनपोली घीमें तली जावे तो विशेष गुणयुक्त होवे ।

चाणकीरोटिकारूक्षाकफासृक्पित्तनाशिनी ।
स्मृताविष्टंभिनीगुर्वीहितावैनेत्ररोगिणाम् ॥

अर्थ–चनेकी रोटी रूक्ष, कफपित्तनाशक, विष्टंभकारक, भारी और नेत्ररोगीनको हितकारी है ।

अथ रागः ।

अम्लिकांतुल्यनीरेणमर्दयेद्ग्राहयेद्रसम् । तत्समंमातुलुंगस्य क्षोदंसिंधूद्भवंसिताम्।क्षोदंपरूषकस्यापिजंभनीरंचराजिकाम्। अनुमानेनचैकध्यंकृत्वारागोयमीरितः । कांतरुचिप्रदोहृद्यः शुक्रलश्चमुखप्रियः। पौष्टिकास्तिक्तकःस्वादुःक्षारश्चाम्लःप्रकीर्तितः। मुखजिह्वाशुद्धिकरोरक्तपित्तप्रकोपनः । नेत्रयोरहितो वृष्यःकफकुष्ठप्रकोपनः । जडोऽतऊर्द्धगःकुर्यात्कफमाध्मान कारकः ! तृषांमूर्च्छांभ्रमच्छर्दिमेदोदोषंचनाशयेत् ॥

अर्थ–पकी इमलीमें समानभाग पानी मिलाय उसका रस काढे, फिर उसमें समभाग बिजोरेका जीरा डाले और सैंधानिमक, चूरा, कूटेहुए फलसे जंमीरीका रस, तथा राई ये पदार्थ अनुमानमाफिक लेकर, पीसकर मिलावे इसको राग ऐसा कहते हैं । यह राग रुचिकारी,हृद्य, वीर्यवर्द्धक, मुखप्रिय, पौष्टिक,कडुआ,स्वादु, खट्टा, खारी, मुख, जिह्वा इनको शुद्ध करता, रक्तपित्तवर्द्धक, नेत्रोंको अहितकर, अवृष्य, कफ और कुष्ठ इनको कुपित करनेवाला और भारी है । इसीसे कफको ऊर्द्धगामी करै है उसीप्रकार अफराकारक होनेसे प्यास, मूर्च्छा, भ्रम, ओकारी और मेदरोग, इनको नाश करै है ।

नांहितावहा । वातरुङ्नाशिनीचैषाघृतेपक्कायदाभवेत् । कचवल्लीतिसाख्यातागुर्वीबल्याचपौष्टिकी । वृष्यातृप्तिप्रदातेजःश्लेष्मपित्तप्रवर्द्धिनी । वातघ्नैषातुमुद्गानांगोधूमानां भवत्यपि॥

अर्थ-अब वेष्टनीकी कृति और गुणदोष कहतेहैं । उडदके चूनमें निमक, अदरख और हींग मिलाय पानी डालके उसने, फिर उसका स्वरूप केलाकी फलीके आकार बनावे, फिर मिट्टीके पात्रमें थोडा जलभर आधेमें तिनका भरे उसके ऊपर उन फलेन्को धरे और सिजवावे जब सिकजावे तब निकाल लेवे, इसको वेष्टनी कहतेहैं । यह वेष्टनी वीर्यवर्द्धक, भारी, बलदायक, पित्तकर्ता, कफकारी, पाकके समय मधुर, रस्तागिरोंको हितकारी, तथा वातनाशकहै यदि येही फली घीमें तलली-नी जावे तो इसको कचवल्लीकहते है यह कचवल्ली भारी, बलकारक, पौष्टिक, वृष्य, तथा तृप्तिकारक, एवं तेज, कफ और पित्त इनको बढावे तथा वातघ्नहै ये गेहूं और मूंग इत्यादिकीभी करतेहैं ।

अथ पूर्णगर्भापूलिका (पूरनपोली)।

प्रस्थैकंचाणकंसूपमाढकीसंभवंतुवा । पाचयेत्केप्रियेतावद्यावदंगुलिमर्दितम् । ज्ञात्वानीरंपृथक्कृत्यसंक्षिप्यपाककोविदः । गुडंप्रस्थंसपादंवाशर्करांसार्द्धप्रस्थिकाम् । क्षणादुत्तार्यवामोरुपेषयेदश्मनाश्मानि । यततोललनेरम्येशुभेऽमत्रेनिधापयेत् । ततोगोधूमजंचूर्णमर्दयेदंबुनाभृशम् । तस्मान्निंबुमितंपिष्टंपृथग्नीत्वाविचक्षणे । कृत्वाचमूषिकाकारंतन्मध्येतुप्रपूरयेत् । तत्पूर्णंमुद्रयेत्तस्यमुखंकृत्वासुगोलकम् । चंद्रवत्पूलिकांतस्यकृत्वाततेविपाचयेत् । किंचिदाज्यसमालिप्तभूयोभूयःप्रवर्त्तयेत् । पक्कांज्ञात्वासमुत्तार्यभूमिजापतयेऽर्पयेत् । पूर्णगर्भापूलिकेयंलघ्वीस्वाद्वीचशीतला । दीपनीराजयक्ष्मघ्नीप्रमेहघ्नीचकीर्तिता । सैषैवसार्पिषापक्का।विशेषेणगुणोत्तमा ॥

अर्थ-अब पूरणपोलीकी विधि कहते हैं । एक प्रस्थ चनेकी अथवा अरहरकी दाल जबतक सीजे नहीं तबतक जलमें पचावे जब दाल उँगलीके दाबनेसे पिसने लगे

तब चूल्हेसे उतार इसके पानीको निकाल डाले और इसमें गुड एक अथवा सवाप्रस्थ और खांड डेढप्रस्थ डालकर फिर थोडी सिजावे, तदनंतर उतारकर बारीक पीसे इसको पूरण कहते हैं, जब पूरण तयार होजावे तब गेहूंका बारीक चून पानीसे उसनकर तयार करे फिर उसकी लोई तोड उसके भीतर पूरणको भर मुख बंदकर गोल करे फिर उसको चंद्रमाके समान गोल बेलकर पूरनपोली करे, इसको तवेपर सेककर उतार ले, इसको घीसे चुपडे यह पूरनपोली हलकी, स्वादु, शीतल तथा दीपन एवं राजयक्ष्मा और प्रमेह, इनको नाश करे । यदि यह पूरनपोली घीमें तली जावे तो विशेष गुणयुक्त होवे ।

चाणकीरोटिकारूक्षाकफासृक्पित्तनाशिनी ।
स्मृताविष्टंभिनीगुर्वीहितावैनेत्ररोगिणाम् ॥

अर्थ-चनेकी रोटी रूक्ष, कफपित्तनाशक, विष्टंभकारक, भारी और नेत्ररोगीनको हितकारी है ।

अथ रागः ।

अम्लिकांतुल्यनीरेणमर्दयेद्राहयेद्रसम् । तत्समंमातुलुंगस्य क्षोदंसिंधूद्भवंसिताम्।क्षोदंपरूषकस्यापिजंभनीरंचराजिकाम्। अनुमानेनचैकध्यंकृत्वारागोयमीरितः । कांतरुचिप्रदोहृद्यः शुक्रलश्चमुखप्रियः। पौष्टिकास्तिक्तकःस्वादुःक्षारश्चाम्लःप्रकीर्तितः। मुखजिह्वाशुद्धिकरोरक्तपित्तप्रकोपनः । नेत्रयोरहितो वृष्यःकफकुष्ठप्रकोपनः । जडोऽतऊर्द्धगःकुर्यात्कफमाध्मान कारकः ! तृषांमूर्च्छांभ्रमछर्दिमेदोदोषंचनाशयेत् ॥

अर्थ-पकी इमलीमें समानभाग पानी मिलाय उसका रस काढे, फिर उसमें समभाग बिजोरेका जीरा डाले और सैंधानिमक, चूरा, कूटेहुए फलसे जंभीरीका रस, तथा राई ये पदार्थ अनुमानमाफिक लेकर, पीसकर मिलावे इसको राग ऐसा कहते हैं । यह राग रुचिकारी,हृद्य, वीर्यवर्द्धक, मुखप्रिय, पौष्टिक,कडुआ,स्वादु, खट्टा, खारी, मुख, जिह्वा इनको शुद्धि करता, रक्तपित्तवर्द्धक, नेत्रोंको अहितकर, अवृष्य, कफ और कुष्ठ इनको कुपित करनेवाला और भारी है । इसीसे कफको ऊर्द्धगामी करे है उसीप्रकार अफराकारक होनेसे प्यास, मूर्च्छा, भ्रम, ओकारी और मेदरोग, इनको नाश करे है ।

अथ खांडवः ।

बीजपूराम्रदाडिंबचिंचादधिफलादिकाः । एषामन्यतरस्यापिचिकीर्षाखांडवंप्रति ॥ तद्गृहीत्वापिनिःक्षिप्यतत्रसैंधवशर्करे । गुडंवाहिंगुसहितंदृषदाचाविपेषयेत् । कथितोमुनिभिर्वैद्यैःखांडवोरागवद्गुणैः ॥

अर्थ-बिजोरा, अमचूर, अनारदाना, इमली, कैथ इनमेंसे जिसका खांडव करना हो उसको ले उसमें काली मिरच, सैंधानिमक, हींग, तथा गुड, अथवा खांड डालके शिलाके ऊपर पीसकर उसकी चटनी करे इसको खांडव अर्थात् चटनी कहते हैं इसके गुण रागके समान जानने ।

अथ रागखांडवः (मुरब्बा) ।

आम्रमामंसमीचीनंत्वगष्टीरहितंप्रिये । द्विधात्रिधाचतुर्द्धावाफलमानेनखंडयेत् ।एवंप्रस्थंरसालानांखंडानांमधुरप्रिये । सर्पिषाभर्ज्यतानीषन्मृत्पात्रेचानिधापयेत् । प्रस्थत्रयसितापाकेत्रितारेतानिसंक्षिपेत् । अंगुलीद्वितयेपश्चात्पाकंनीत्वा निरीक्षयेत् । भूयोभूयःप्रयत्नेनचैकतंतुर्यदाद्वयोः । अंगुल्योरंतरेपश्येज्जानीयाच्चैकतारकम् । यदितंतुर्नदृश्येतकिंचिदन्यांसितांक्षिपेत् । दृष्ट्वातंतुसमुत्तार्यमरीचैलादिभावितम् । कृत्वा सुशीतलंपश्चात्काचपात्रेनिधापयेत् । अथवामार्तिकेपात्रे लाक्षालिप्तांतरेप्रिये । अयंहिपौष्टिकःस्निग्धोगुरुःस्वादुर्बलप्रदः । तृप्तिदश्चवरारोहेवातपित्तारुचिप्रणुत् । हंतिरक्तविकारंचानुरक्तेरागखांडवः ॥

अर्थ-उत्तम छिले और भीतरकी गुठली निकली पकी अँबियाके दो तीन किंवा चार टुकडे करे, इसप्रकार ६४ तोले टुकडेनको घीमें कुछ भून मिट्टीके कुंडेमें धरे, तदनंतर १९२ तोले खांडकी तितारी चासनी करे उसमें उन अँबियाके टुकडेनको डालके कुछ देरतक चूल्हेपरही रहने देवे, फिर चुटकीसे देखे यदि एक तार न निकलता होवे तो उसमें कुछ थोडीसी खांड मिलायके देखे जब एक तार निकलने लगे तब इसमें काली मिरच और छोटी, इलायची, इनका चूर्ण करके गेरे, फिर

उतार लेवे जब शीतल होजावे तब कांचके पात्रमें अथवा इमरतवानमें या चीनीके पात्रमें भरके धर रक्खे यह रागखांडव अर्थात् मुरब्बा पुष्टि करे, स्निग्ध, भारी, स्वादु, बलकारी तथा तृप्तिदायक ऐसा है । उसीप्रकार वात, पित्त, अरुचि और रुधिरविकार इनको नाश करे ।

अथान्यफलरागखांडवविधिः ।

फलान्यामलकादीनांभित्त्वाकंटकतोभृशम्। त्रुटिनीरेसुमग्नानित्रिरात्रंस्थापयेत्ततः । सुधौतान्यन्यनीरेणतानीषत्स्वेदयेत्प्रिये । आम्रवच्चक्रियाशेषातत्तुल्याश्चगुणामताः ॥

अर्थ—यदि आमले आदि छोटे फलोंका मुरब्बा बनाना होवे तो उन फलोंको कांटेसे खूब गोदकर तीन दिनतक फिटकरीके पानीमें डुबोयकर धरदेवे फिर दूसरे पानीसे धोय किंचित् सिजावे फिर आमके मुरब्बेके सदृश तयार करलेवे इनके गुण आम्रके अथवा अपने फलके समान होते हैं । इसीप्रकार सर्व प्रकारके मुरब्बा बनाय लेवे ।

अथान्यप्रकारः ।

आमंयष्टित्वचाहीनंकृत्वाम्रंपेषयेद्भृशम् । तत्समंचगुडंकिंचित्तैलंविश्वंचमिश्रयेत् ।स्थापयेन्मार्तिकेपात्रेरसज्ञेरागखांडवः । किंचिन्न्यूनगुणः पूर्वात्कीर्तितोभिषगुत्तमैः ॥

अर्थ—कच्ची अमियाको छील बीज निकाल बारीक पीसे और उसमें उसके समभाग गुड तथा किंचित् तेल और सोंठ मिलावे, इनको रागखांडव कहतेहैं । यह गुणोंमें पहलेके समान कुछ हीनहै ।

अथाम्रलेहः ।

भर्जयेत्तरुणंस्वाम्रंतद्रसेचविमिश्रयेत् । शर्करांसुगुडंवापितत्सममधुराधरे । ततोविंशांशकंचूर्णपटुवह्लिजाहिंगुजम्।आम्रलेहोऽयमब्जाक्षिहृद्यस्तृप्तिप्रदोगुरुः॥स्निग्धोरुचिप्रदः कांते मधुरोमधुरस्वरे। मीनलोलविशालाक्षिप्रियेबिल्वफलस्तनि॥

अर्थ—उत्तम आमको भूनकर उसका रस निकाल उसमें उसके समान सपेद बूरा अथवा गुड मिलावे उसीप्रकार रसका बीसवाँ भाग नोन, काली मिरच, तथा भुनी हींग इनका चूर्ण मिलावे, इसको आम्रलेह कहतेहैं । यह लेह हृद्य, तृप्तिकारक, भारी, स्निग्ध, रुचिकारी, तथा मधुर है ।

अथ फलवृष्याशिखरिणी ।

प्रियेपक्वांचिंचामयिसुदतिमर्दैत्समजले सिताद्राभ्यांतुल्या त्रुटिमरिचचूर्णंतदुचितम् । विमिश्र्यैतद्भांडेसकलमपिमात्तैं सुललिते जनैर्विख्यातेयंजगतिफलवृष्याशिखरिणी ॥ इयंवृष्याकांतेसुभगजघनेकंकणकरे सराह्द्यागुर्वीसुध्रुरुकुचद्युग्मेसुरुचिदा । अतः श्रीरामायार्पयझटितिमांदेहिचततोव- रारोहेभुंक्ष्वत्वमपिरासिकेकंजवदने ॥

अर्थ–उत्तम पकी इमलीको समभाग पानीमें मर्दन करके रस निकाले फिर उस रसमें उस रसके समान सपेद बूरा तथा इलायची, काली मिरच, आदि मसाला उसके अनुमान माफिक डाले, और अच्छी रीतिसे मिलाय मट्टीके बर्तनमें भरकै धरदेवे, इसको फलवृष्य शिखरिणी कहते हैं । यह वृष्य, सारक, हृद्य, भारी तथा रुचिकारक ऐसी है ।

अथ पानकान्याह (पने) ।

द्राक्षाम्लिकापरूषादिफलान्यंबुरुहेक्षणे । नीरेसप्तगुणेक्लिन्ना- न्यब्जहस्तेविमर्दयेत् । वस्त्रपूतेक्षिपेत्तस्मिञ्छर्करांद्रव्यतः समाम्।विंशांशंपत्रमरिचत्वगार्द्रैलागजोद्भवम्। सकर्पूरंक्षिपेच्चूर्णंपानकंतत्प्रकीर्तितम्। पानकंमूत्रलंहृद्यंतृप्तिकृत्तृष्णमदापहम्। वातवांतिश्रमग्लानिघ्नंमूर्च्छापित्तदाहनुत् । तद्द्विधाम्लंचमधुरंगुणैस्तुल्यौप्रकीर्तितौ ।द्राक्षायाः पानकंदाहश्रमग्लानितृषापहम् । रक्तपित्तंचमूर्च्छांचनिहन्यादाब्धिजानने। विष्टंभकारकंहृद्यंवादरंचपरूषजम् । अम्लिकाफलसंभूतंपानकंच श्रमापहम्।दाहच्छर्दितृषावातक्रमिभ्रांतिनिवारणम् । कंठतालूद्भवंशोषंनाशयेदितिकीर्तितम् ।

अर्थ–दाख, इमली, फालसे इत्यादि फलोंको सातगुने पानीमें कुचल उस पानीको वस्त्रम छानले, तथा फलके समान मिश्री मिलावे, तथा फलोंका बीसवाँ भाग पत्रज, काली मिरच, दालचीनी, अदरख, इलायची, नागकेसर, तथा कपूर इनका चूर्ण, उस रसमें डाले, सबको मिलाय ले इसको पानक कहतेहैं । यह पानक मूत्रल

हृद्य, तथा तृप्तिकारक होनेसे तृषा, मद, वात, वांती, श्रम, ग्लानि, मूर्च्छा, पित्त और दाह इनका नाश करे । इसमें खट्टा और मिष्ट ऐसे दो प्रकारका रस है । परंतु उनके गुण समानही हैं । अब प्रत्येकके विशेष गुण कहतेहैं। दाखका पना दाह, श्रम, ग्लानि, तृषा, रक्तपित्त, तथा मूर्च्छा इनको नाश करे बेरका और फालसेका पना विष्टंभकारक तथा हृद्य है । एवं इमलीका पना श्रम, दाह, हृल्लास, तृषा, वायु, कृमि, भ्रांति, कंठशोष और तालुशोष इनको नाश करेहै ।

अथ पंचसाराभिधं पानकम् ।

द्राक्षापरूषखर्जूरदाडिंबबदरोद्भवम् । गुडेक्षुरसकर्पूरचातुर्जातोषणैर्युतम् । पंचसाराभिधंपानंतृप्तिकृद्गुरुमूत्रलम् । विष्टंभकारकंहृद्यंश्रमग्लानितृषापहम् ॥

अर्थ–दाख, फालसे, खजूर, अनार, बेर, तथा गुड इनका ईखके रसमें पना करके उसमें कपुर, दालचीनी, तमालपत्र, इलायची, और नागकेसर, इनका चूर्ण डाले इसको पंचसारक पना कहते हैं । यह तृप्तिकर, भारी, मूत्रल, विष्टंभकारक तथा हृद्य ऐसा है । उसीप्रकार श्रम, ग्लानि, तृषा इनका नाशकरे ।

अथ वर्द्धमानषट्टकः ।

घनंदधिप्रियेप्रस्थंप्रस्थार्द्धंशुभ्रशर्करा । व्योषाजाजीभवंचूर्णं कर्षैकंमादिरेक्षणे । पक्वदाडिंबबीजानिचतुराम्राणिमिश्रयेत् । हस्तेनालोडयेत्सिद्धःसट्टकोऽयमुदाहृतः । वर्द्धमानाभिधो बल्योदीपनोरुचिकारकः । गुरुस्तृप्तिकरःस्वर्यःश्रमग्लानितृषापहः । वातपित्तहरः पीनोरोजकेमधुराधरे ॥

अर्थ–गाढा दही १ सेर, सपेद बूरा आद सेर, तथा सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा इनका चूर्ण १ तोला, और पके अनारके दाने पावभर, इन सबको एकत्र करके मिलावे और हाथसे मथकर तयार करे इसको वर्द्धमानसट्टक कहतेहैं । यह बलकारी, अग्निदीपन कर्ता, रुचिकर, स्वरशोधक, भारी, तथा तृप्तिकर, एवं श्रम, ग्लानि, तृषा, वात, और पित्त इनका नाशक है।

अथ सोमषट्टकः ।

घनंदध्याढकंकांतेसिताद्धाढकसंमिता । त्रिकट्वग्निभवंचूर्णं पलैकंचविमिश्रयेत् । गालयेत्सूक्ष्मवस्त्रेणततोभांडेनिधाप-

अथ फलवृष्याशिखरिणी ।

प्रियेपक्वांचिंचामयिसुदतिमर्दैत्समजले सिताद्वाभ्यांतुल्या त्रुटिमरिचचूर्णंतदुचितम् । विमिश्र्यैतद्भांडेसकलमपिमात्तैं सुललिते जनैर्विख्यातेयंजगतिफलवृष्याशिखरिणी ॥ इयंवृ-ष्याकांतेसुभगजघनेकंकणकरे सराहृद्यागुर्वीसुगुरुकुचयु-ग्मेसुरुचिदा । अतः श्रीरामायार्पयझटितिमांदेहिचततोव-रारोहेभुंक्ष्वत्वमपिरसिकेकंजवदने ॥

अर्थ-उत्तम पकी इमलीको समभाग पानीमें मर्दन करके रस निकाले फिर उस रसमें उस रसके समान सपेद बूरा तथा इलायची, काली मिरच, आदि मसाला उसके अनुमान माफिक डाले, और अच्छी रीतिसे मिलाय मट्टीके बर्तनमें भरके धरदेवे, इसको फलवृष्य शिखरिणी कहते हैं । यह वृष्य, सारक, हृद्य, भारी तथा रुचिकारक ऐसी है ।

अथ पानकान्याह (पने) ।

द्राक्षाम्लिकापरूषादिफलान्यंबुरुहेक्षणे । नीरेसप्तगुणेक्लिन्ना-न्यब्जहस्तेविमर्दयेत् । वस्त्रपूतेक्षिपेत्तस्मिञ्छर्करांद्रव्यतः समाम्।विंशांशंपत्रमरिचत्वगार्द्रैलागजोद्भवम्। सकर्पूरंक्षिपेच्चू-र्णंपानकंतत्प्रकीर्तितम्। पानकंमूत्रलंहृद्यंतृप्तिकृत्तृण्मदापहम्। वातवांतिश्रमग्लानिघ्नंमूर्च्छापित्तदाहनुत् । तद्विधाम्लंचम-धुरंगुणैस्तुल्यौप्रकीर्तितौ ।द्राक्षायाः पानकंदाहश्रमग्लानि-तृषापहम् । रक्तपित्तंचमूर्च्छांचानिहन्यादब्धिजानने। विष्टंभ-कारकंहृद्यंवादरंचपरूषजम् । अम्लिकाफलसंभूतंपानकंच श्रमापहम्।दाहच्छर्दितृषावातक्लमिभ्रांतिनिवारणम् । कंठता-लूद्भवंशोषंनाशयेदितिकीर्तितम् ।

अर्थ-दाख, इमली, फालसे इत्यादि फलोंको सातगुने पानीमें कुचल उस पानी-को वस्त्रम छानले, तथा फलके समान मिश्री मिलावे, तथा फलोंका बीसवाँ भाग पत्रज, काली मिरच, दालचीनी, अदरख, इलायची, नागकेसर, तथा कपूर इनका चूर्ण, उस रसमें डाले, सबको मिलाय ले इसको पानक कहतेहैं । यह पानक मूत्रल

हृद्य, तथा तृप्तिकारक होनेसे तृषा, मद, वात, वांती, श्रम, ग्लानि, मूर्च्छा, पित्त और दाह इनका नाश करे । इसमें खट्टा और मिष्ट ऐसे दो प्रकारका रस है । परंतु उनके गुण समानही हैं । अब प्रत्येकके विशेष गुण कहतेहैं। दाखका पना दाह, श्रम, ग्लानि, तृषा, रक्तपित्त, तथा मूर्च्छा इनको नाश करे बेरका और फालसेका पना विष्टंभकारक तथा हृद्य है । एवं इमलीका पना श्रम, दाह, हृल्लास, तृषा, वायु, कृमि, भ्रांति, कंठशोष और तालुशोष इनको नाश करेहै ।

अथ पंचसाराभिधं पानकम् ।

द्राक्षापरूषखर्जूरदाडिंबबदरोद्भवम् । गुडेक्षुरसकर्पूरचातुर्जातोषणैर्युतम्। पंचसाराभिधंपानंतृप्तिकृद्गुरुमूत्रलम् । विष्टंभकारकंहृद्यंश्रमग्लानितृषापहम् ॥

अर्थ-दाख, फालसे, खजूर, अनार, बेर, तथा गुड इनका ईखके रसमें पने करके उसमें कपूर, दालचीनी, तमालपत्र, इलायची, और नागकेसर, इनका चूर्ण डाले इसको पंचसारक पना कहते हैं । यह तृप्तिकर, भारी, मूत्रल, विष्टंभकारक तथा हृद्य ऐसा है । उसीप्रकार श्रम, ग्लानि, तृषा इनका नाशकरे ।

अथ वर्द्धमानसट्टकः ।

घनंदधिप्रियेप्रस्थंप्रस्थार्द्धंशुभ्रशर्करा । व्योषाजाजीभवंचूर्णं कर्षैकंमादिरेक्षणे । पक्कदाडिंबबीजानिचतुराम्राणिमिश्रयेत् । हस्तेनालोडयेत्सिद्धःसट्टकोऽयमुदाहृतः । वर्द्धमानाभिधो बल्योदीपनोरुचिकारकः। गुरुस्तृप्तिकरःस्वर्यःश्रमग्लानितृषापहः । वातपित्तहरः पीनोरोजकेमधुराधरे ॥

अर्थ-गाढा दही १ सेर, सपेद बूरा आद सेर, तथा सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा इनका चूर्ण १ तोला, और पके अनारके दाने पावभर, इन सबको एकत्र करके मिलावे और हाथसे मथकर तयार करे इसको वर्द्धमानसट्टक कहतेहैं । यह बलकारी, अग्निदीपन कर्ता, रुचिकर, स्वरशोधक, भारी, तथा तृप्तिकर, एवं श्रम, ग्लानि, तृषा, वात, और पित्त इनका नाशक है।

अथ सोमसट्टकः ।

घनंदध्याढकंकांतेसिताद्धांढकसंमिता । त्रिकट्वग्निभवंचूर्णं पलैकंचविमिश्रयेत् । गालयेत्सूक्ष्मवस्त्रेणततोभांडेनिधाप-

अथ फलवृष्याशिखरिणी ।

प्रियेपक्वांचिंचामयिसुदतिमर्दैत्समजले सिताद्राभ्यांतुल्या त्रुटिमरिचचूर्णंतदुचितम् । विमिश्र्यैतद्भांडेसकलमपिमात्तें सुललिते जनैर्विख्यातेयंजगतिफलवृष्याशिखरिणी ॥ इयंवृ-ष्याकांतेसुभगजघनेकंकणकरे सराह्यागुर्वीसुगुरुकुचयुग्मेसुरुचिदा । अतः श्रीरामायार्पयझटितिमांदेहिचततोव-रारोहेभुंक्ष्वत्वमपिरासिकेकंजवदने ॥

अर्थ–उत्तम पकी इमलीको समभाग पानीमें मर्दन करके रस निकाले फिर उस रसमें उस रसके समान सपेद बूरा तथा इलायची, काली मिरच, आदि मसाला उसके अनुमान माफिक डाले, और अच्छी रीतिसे मिलाय मट्टीके वर्तनमें भरके धरदेवे, इसको फलवृष्य शिखरिणी कहते हैं । यह वृष्य, सारक, हृद्य, भारी तथा रुचिकारक ऐसी है ।

अथ पानकान्याह (पने) ।

द्राक्षाम्लिकापरूषादिफलान्यंबुरुहेक्षणे । नीरेसप्तगुणेक्लिन्ना-न्यब्जहस्तेविमर्दयेत् । वस्त्रपूतेक्षिपेत्तास्मिञ्छर्करांद्रव्यतः समाम्।विंशांशंपत्रमरिचत्वगार्द्रैलागजोद्भवम्। सकर्पूरंक्षिपेच्चू-र्णंपानकंतत्प्रकीर्तितम्। पानकंमूत्रलंहृद्यंतृप्तिकृत्तृण्मदापहम्। वातवांतिश्रमग्लानिघ्नंमूर्च्छापित्तदाहनुत् । तद्विधाम्लंचम-धुरंगुणैस्तुल्यौप्रकीर्तितौ ।द्राक्षायाः पानकंदाहश्रमग्लानि-तृपापहम् । रक्तपित्तंचमूर्च्छांचानिहन्यादाब्धिजानने। विष्टंभ-कारकंहृद्यंवादरंचपरूपजम् । अम्लिकाफलसंभूतंपानकंच श्रमापहम्।दाहच्छर्दितृपावातक्लमिभ्रांतिनिवारणम् । कंठता-लूद्भवंशोपंनाशयेदितिकीर्तितम् ।

अर्थ–दाख, इमली, फालसे इत्यादि फलोंको सातगुने पानीमें कुचल उस पानी-को वस्त्रम छानले, तथा फलके समान मिश्री मिलावे, तथा फलोंका वीसवाँ भाग पत्रज, काली मिरच, दालचीनी, अदरख, इलायची, नागकेसर, तथा कपूर इनका चूर्ण, उस रसमें डाले, सबको मिलाय ले इसको पानक कहतेहैं । यह पानक मूत्रल

हृद्य, तथा तृप्तिकारक होनेसे तृषा, मद, वात, वांती, श्रम, ग्लानि, मूर्च्छा, पित्त और दाह इनका नाश करे । इसमें खट्टा और मिष्ट ऐसे दो प्रकारका रस है । परंतु उनके गुण समानही हैं । अब प्रत्येकके विशेष गुण कहतेहैं। दाखका पना दाह, श्रम, ग्लानि, तृषा, रक्तपित्त, तथा मूर्च्छा इनको नाश करे बेरका और फालसेका पना विष्टंभकारक तथा हृद्य है । एवं इमलीका पना श्रम, दाह, हृल्लास, तृषा, वायु, कृमि, भ्रांति, कंठशोष और तालुशोष इनको नाश करेहै ।

अथ पंचसाराभिधं पानकम् ।

द्राक्षापरूषखर्जूरदाडिंबबदरोद्भवम् । गुडेक्षुरसकर्पूरचातुर्जातोषणैर्युतम्। पंचसाराभिधंपानंतृप्तिकृद्गुरुमूत्रलम् । विष्टंभकारकंहृद्यंश्रमग्लानितृषापहम् ॥

अर्थ–दाख, फालसे, खजूर, अनार, बेर, तथा गुड इनका ईखके रसमें पनें करके उसमें कपूर, दालचीनी, तमालपत्र, इलायची, और नागकेसर, इनका चूर्ण डाले इसको पंचसारक पना कहते हैं । यह तृप्तिकर, भारी, मूत्रल, विष्टंभकारक तथा हृद्य ऐसा है । उसीप्रकार श्रम, ग्लानि, तृषा इनका नाशकरे ।

अथ वर्द्धमानखट्टकः ।

घनंदधिप्रियेप्रस्थंप्रस्थार्द्धांशुभ्रशर्करा । व्योषाजाजीभवंचूर्णं कर्षैकंमादिरेक्षणे । पक्वदाडिंबबीजानिचतुराम्राणिमिश्रयेत् । हस्तेनालोडयेत्सिद्धःसट्टकोऽयमुदाहृतः । वर्द्धमानाभिधो बल्योदीपनोरुचिकारकः। गुरुस्तृप्तिकरःस्वर्यःश्रमग्लानितृषापहः । वातपित्तहरः पीनोरोजकेमधुराधरे ॥

अर्थ–गाढा दही १ सेर, सपेद बूरा आद सेर, तथा सोंठ, मिरच, पीपल, जीरा इनका चूर्ण १ तोला, और पके अनारके दाने पावभर, इन सबको एकत्र करके मिलावे और हाथसे मथकर तयार करे इसको वर्द्धमानसट्टक कहतेहैं । यह बलकारी, अग्निदीपन कर्ता, रुचिकर, स्वरशोधक, भारी, तथा तृप्तिकर, एवं श्रम, ग्लानि, तृषा, वात, और पित्त इनका नाशक है।

अथ सोमसट्टकः ।

घनंदध्याढकंकांतेसिताद्धांढकसंमिता । त्रिकट्वग्निभवंचूर्णं पलैकंचविमिश्रयेत् । गालयेत्सूक्ष्मवस्त्रेणततोभांडेनिधाप-

येत् । पक्कदाडिंववीजानिप्रस्थैकानिघनस्तानि । मिश्रयित्वाजनैः ख्यातः सोमास्येसोमसट्टकः । वर्द्धमानकवच्चायं गुणैर्गुणवतिप्रिये ॥

अर्थ-गाढा दही २५६ तोले, सपेद बूरा १२८ तोले, और सोंठ मिरच, पीपल तथा चित्रक, चूर्ण ४ तोले, ये सब एकत्र मिलाय वारीक कपडेमें छाने फिर इसमें पके अनारके दाने ६४ तोले मिलाय किसी उत्तम पात्रमें भरकर धरदेवे इसको सोमसट्टक कहतेहैं । यह गुणोंमें वर्द्धमान सट्टकके समानेहै ।

अथ प्रमोदसट्टकः ।

सुघनंहिदधिप्रस्थंप्रस्थार्द्धंशर्कराप्रिये । चंद्रत्र्योषलवंगानां चूर्णंकर्षप्रमाणकम् । मिश्रयेद्गालयेच्चापिसूक्ष्मवस्त्रेणयत्ततः । पक्कदाडिंववीजानिचतुर्बिल्वानिमिश्रयेत् ।स्थापयेन्मृन्मयेभांडेप्रमोदायनृणामयम् ।प्रमोदसट्टकःख्यातोवर्द्धमानसमोगुणैः ॥

अर्थ-गाढा दही ६४ तोले, खांड ३२ तोले और कपूर, सोंठ, मिरच, पीपल तथा लवंग इनका चूरा १ तोला ये सब एकत्र मिश्रितकर वारीक वस्त्रमें छान लेवे और उसमें पकेहुए अनारके दाने १६ तोले मिलाय मिट्टीके वरतनमें भरकर धरदेवे इसको प्रमोदसट्टक कहते हैं ।

अथ कांजिका ।

यवाद्यंनिस्तुषंधान्यंप्लावयेदंबुनित्र्यहम् । तन्नीरंतुपृथङ्नीत्वालवणंतत्रनिःक्षिपेत् । राजिकाजीरमरिचाहिंगुचूर्णप्रमाणतः । तदेवात्यम्लतांप्राप्तंकांजिकंपरिकीर्तितम् । एवंकुर्याद्वरारोहेयुक्त्यामंडतुषोदयोः । कांजिकंपाचनंरुच्यंभेद्युष्णंच लघुस्मृतम् । वातश्लेष्महरंपीतंदेहेदिग्धंचदाहनुत् । ज्वरघ्नं चभवेन्नूनमंगलघ्नंनसंशयः ॥

अर्थ-छिलका रहित जौ इत्यादि धान्योंको ३ दिन पानीमें भिगोदेवे, फिर उनमेंसे पानी निकाल ले उस पानीमें निमक, राई, जीरा, मिरच और हींग, इनका चूर्ण अनुमानमाफिक मिलावे और इसको मट्टीके वरतनमें भरकर धर रक्खे, तो यह अत्यंत खट्टा होजावे इसको कांजी कहतेहैं । इसीप्रकार मंड और तुषोदककीभी कांजी

बनावेहैं । यह कांजी पीनेसे पाचन, रोचन, भेदक, उष्ण, हलकी, वातहर, कफ-नाशकहै । और इसका देहमें लेप करनेसे दाह, तथा ज्वर इनका नाश होय ।

अथ दुग्धगुणानाह ।

गव्यंमाहिषमाजंचकारभंस्त्रैणमाविकम् ।
औष्ट्रमेकशफंचेतिदुग्धमष्टविधंस्मृतम् ॥

अर्थ—दूध गौका, भैंसका, बकरीका, हाथिनीका, स्त्रीका, मेंढाका, ऊंटनीका और घोडी इत्यादि एक नखवाले जनावरोंका ऐसे आठ प्रकारकाहै ।

दुग्धंतुमधुरंस्निग्धंसद्यःशुक्रकरंमतम् । पौष्टिकंचसरंशीतंसर्वे-षांचहितावहम् । बलप्रदंजीवनंचधातुवृद्धिकरंमतम् । वयसः स्थापनंचैववाजीकरणमुत्तमम् । रसायनंकांतिकरंक्षुधितेबा-लवृद्धयोः । अतिव्यवायेक्षीणेचक्षतक्षीणेहितावहम् ॥

अर्थ—साधारणसर्वप्रकारका दूध मधुर,स्निग्ध,तत्काल वीर्यकारक, पौष्टिक, सारक, शीतल, सबको हितकारी, बलप्रद, जीवन, सप्तधातुवर्द्धक, वयःस्थापक, वाजीकरण, रसायन तथा कांतिकारकहै । उसी प्रकार क्षुधित, बाल, वृद्ध, अतिमैथुन करनेसे जो क्षीण होगया हो और क्षतक्षीण इनको हितकारीहै ।

गोदुग्धके गुण ।

गोदुग्धंमधुरंशीतंगुरुहृद्यंरसायनम् । वयसःस्थापनंस्वादु स्निग्धंपथ्यतमंमतम्। रुच्यंबल्यंशुक्रलंचमेध्यंपुष्टिप्रदायकम्। कांतिकृत्तुष्टिजनकंवातेपित्तेविषेभ्रमे । रक्तपित्तेवातरक्तेदाहे चैवातिसारके । उदावर्त्तेमदेकासेश्वासेजीर्णज्वरेतृषि । उद-रेमूत्रकृच्छ्रेचगुल्मेशूलेऽम्लपित्तके । आधावर्शस्यपस्मारेक्षये पांडावतिश्रमे । योनिरोगेगर्भपातेनेत्ररोगेहितावहम् । पथ्यं प्रवाहिकायांचप्रवदंतिभिषग्वराः ॥

अर्थ—गौका दूध मधुर, शीतल, भारी, हृद्य, रसायन, वयःस्थापक, स्वादु, स्निग्ध अति पथ्यकर, एवं वात, पित्त, विष, भ्रम, रक्तपित्त, वातरक्त, दाह, अतिसार, उदा-वर्त, मद, खांसी, श्वास, जीर्णज्वर, तृषा, उदर, मूत्रकृच्छ्र, गुलम, शूल, अम्लपित्त, मनोविकार, बवासीर, अपस्मार, क्षय, पांडुरोग, अतिश्रम, योनिरोग, गर्भपात, नेत्ररोग और प्रवाहिका, इन रोगोंपर पथ्यहै ।

गौकी जातिपरत्व दूधके गुण ।

कृष्णायागोर्वरंक्षीरंवातपित्तकफप्रणुत् । पीतायावातपित्तघ्नंरक्तायावातहृत्परम् । वातघ्नंचित्रवर्णायाःश्वेतायाःकफकृद्गुरु । वालवत्साविवत्सानांगवांक्षीरंत्रिदोषकृत् । वष्कयण्यास्त्रिदोषघ्नंतर्पणंवलदंपयः । पिण्याकाम्लान्नभोक्तॄणांक्षीरंगुरुकफप्रदम् । निद्रारेतोवलस्थौल्यवह्निमांद्यकरंहिमम् । गवांपलालभोक्तॄणांदुग्धंयवसभोक्तॄणाम् । कथितंमुनिभिर्वैद्यैः सर्वरोगेहितावहम् । तरुणीनांगवांदुग्धंमधुरंचरसायनम् । त्रिदोषनाशकंचैववृद्धायादुर्वलंस्मृतम् । सगर्भायाःसमुद्दिष्टंत्रिमासोर्ध्वंचपित्तलम् । क्षारंचमधुरंचैवस्मृतंवैशोषकारकम् । धारोष्णंतुगवांदुग्धंवृष्यंधातुविवर्द्धनम् । निद्राकांतिकरंस्निग्धं पथ्यंस्वाद्वग्निदीपनम् । अमृतेनसमंप्रोक्तंसर्वातंकविनाशनम् । सपादप्रहरादूर्ध्वंत्रिदोषजनकंभवेत् ॥

अर्थ-काली गौका दूध श्रेष्ठ तथा वात, पित्त, कफ, इनका नाशकहै । पीली गौका दूध वातपित्तनाशक, लाल गौका दूध वातनाशक, चित्रवर्ण गौका दूध वातनाशक, सपेद गौका दूध कफकारक और भारी, वालवत्सा कहिये दो महीनेके भीतर व्याई हुई तथा विवत्सा कहिये जिसका वछडा मरगयाहो ऐसी गौका दूध त्रिदोषकारकहै । जिसको व्याये हुये १ वर्ष होगयाहो ऐसी गौका दूध त्रिदोषनाशक, तृप्तिकर, वलकरहै खल और खट्टा अन्न खानेवाली गौका दूध भारी एवं कफ, निद्रा वीर्य, वल, स्थूलता तथा अग्निमान्द्य इसको करैहै, और शीतलहै, कडवी, फटैर, घास इत्यादि खानेवाली गौका दूध सर्वरोगोंमें हितकारी है । तरुण गौका दूध मधुर, रसायन, तथा त्रिदोषनाशक है । वृद्ध गौका दूध दुर्बल है, और गाभिन गौका तीन महीने उपरांतका दूध पित्तकर, खारी, मधुर, और शोषकारक है । धारोष्ण दूध वृष्य, धातुवर्द्धक, निद्राकारक, कांतिकर, स्निग्ध, पथ्यकर, स्वादु, अग्निदीपन, और अमृतके तुल्य सर्व रोग नाशक है दूधको काढके धरदेनेसे वह सवापहरके उपरांत त्रिदोषकारक होताहै ।

भैंसके दूधके गुण ।

महिष्यामधुरंदुग्धंपाकेशीतंचपौष्टिकम् । स्निग्धंनिद्राकरंवल्यं

गुरुवृष्यंचशुक्रलम् । पित्तदाहश्रमघ्नंचकफालस्यरुचिप्रदम् ।
अभिष्यंदिचसंप्रोक्तमग्निमांद्यकरंमतम् ॥

अर्थ–भैंसका दूध मधुर, पाककालमें शीतल, पौष्टिक, स्निग्ध, निद्राकारक, बलकर, वृष्य, गुरु, व वीर्यप्रद, एवं पित्त दाह तथा श्रम, इनका नाशकहै । उसीप्रकार कफ, आलस्य, रुचि इनको कर्ता, अभिष्यन्दी और अग्निमांद्यकारक है ।

बकरीके दूधके गुण ।

आजंगव्यगुणंग्राहिविशेषाद्दीपनंलघु । क्षयार्शोऽतिसृतिंहन्यात्रिदोषास्रभ्रमज्वरान् । अजानामल्पकायत्वात्कटुतिक्तनिषेवणात् । अल्पांबुपानाद्व्यायामात्सर्वदोषहरंपयः ॥

अर्थ–बकरीका दूध गुणोंमें गौके दूधके समान है, परंतु विशेष करके अग्निदीपन होकर क्षय, बवासीर, अतिसार, त्रिदोष, रक्तविकार, भ्रम तथा ज्वर इनका नाश करे । बकरीका छोटा शरीर होनेसे वह कटु और तीखी ऐसी बनस्पति भक्षण करती है और पानी थोडा पीती है, और व्यायाम अर्थात् परिश्रम अधिक करतीहै इस कारण उसका दूध सर्व दोषनाशक है ।

अथ विशेषः ।

धाराशीतंमहिष्यास्तुधारोष्णंचगवांपयः । शृतशीतमजादुग्धंकेपिश्रेष्ठंवदंतिहि । अन्यच्च । शृतोष्णंकफहृत्प्रोक्तंशृतशीतंतुपित्तहृत् । अतप्तंदोषलंप्रोक्तंभोजनेत्वौषधंविना । अन्यच्च । गवांदुग्धंहिपूर्वाह्णेमहिष्यास्त्वपराह्णके । तत्तुशर्करयायुक्तंहितमाजंतुसर्वदा ॥

अर्थ–भैंसका धाराशीत अर्थात् काढकर शीतलकरा, गौका धारोष्ण और बकरीका औटायकर शीतल ऐसा दूध श्रेष्ठहै । गरम करके जो दूध पियाजाय वो कफको नाश करैहै । और गरम कर फिर शीतल कराहुआ दूध पित्तका नाशक है । और विना औटाया दूध औषधके विना अन्य भोजनमें दोषकारक है, पूर्वाह्णमें गौका दूध; व अपराह्णमें भैंसका दूध, और बकरीका दूध सर्वदा हित है, परंतु कोईसा दूध हो उसमें खांड मिलाकर पीना चाहिये, और यदि मिश्री गेरके पीवे तो बहुतही उत्तमहै क्योंकि आगे कहेंगे ।

आविकादिकदुग्धानामुपयोगोनप्रायशः ।
भोजनेदृश्यतेऽस्माकंततोनोक्ताहितद्गुणाः ॥

अर्थ-मेंढी (भेड) इत्यादिकोंके दूधका उपयोग अपने आर्यलोग भोजनमें नहीं करते इसीकारण उनके गुणदोषभी यहां नहीं कहे ।

शृतोष्णंकफवातघ्नंपित्तघ्नंशृतशीतलम् । अर्द्धोदकंक्षीरशिष्टंशृतंलघुतरंहितत् । आमंसपादप्रहरंशृतंसार्द्धद्वियामकम् दुग्धंपथ्यमधश्चोर्ध्वमम्लत्वाद्धिविनिंदितम् ॥

अर्थ-औंटाया हुआ दूध पीनेसे कफ, तथा वायु इनको नाश करेहै, और औंटाकर शीतल कराहुआ दूध पित्तका नाश करेहै, दूधमें अर्धभाग जल मिलाय औंटावें जब दूधमात्र शेष रहे तब उतार कर शीतल करे यह हलका तथा अति हितावह है । विना औंटा दूध सवाप्रहर और औंटा दूध ढाईप्रहरपर्यंत पथ्यहै, उपरांत खट्टा होजाताहै ।

अथ कालविशेषेणगुणाः ।

बल्यंबृंहणमग्निवृद्धिजनकंपूर्वाह्णकालेपयोमध्याह्नेबलदायकंरतिकरंकृच्छ्राश्मरीनाशनम् । बालेष्वग्निकरंक्षयेबलकरंवृद्धेच रेतःप्रदंरात्रौक्षीरमनेकदोषशमनंसव्यंततोमानवैः ॥

अथ कालविशेषकरके गुण कहते हैं ।

अर्थ-प्रातःकालमें पियाहुआ दूध बलकर, बृंहण तथा अग्निवर्द्धकहै, मध्याह्नकालमें सेवन करा हुआ बलदायक तथा प्रीतिकर एवं मूत्रकृच्छ्र और पथरी इनको नाश करे, रात्रिमें सेवन कराहुआ दूध बालकोंकी जठराग्निको बढावे, क्षयरोगीके बलको बढावे, बुड्ढे मनुष्यके वीर्यको बढावे, और सर्व दोषोंका नाशकहै इससे मनुष्योंको सर्वकाल दूध सेवन करना चाहिये ।

अथ दुग्धाहारवर्ज्यरोगाः ।

नवज्वरेचाग्निमांद्येचकुष्ठेचैवामदोषके ।
प्रशस्तंनपयःपानंकृमिरोगेविशेषतः ॥

अर्थ-नवीन ज्वर, अग्निमांद्य, कुष्ठ, आमदोष और कृमिरोगी इनको दूध अपथ्यकारक है ।

अथ द्रव्यसंयोगेन गुणदोषाः ।

शर्करासहितंक्षीरंरुचिकृद्वातनाशनम् । तथासितोपलायुक्तंशुक्रदंदोषन[illegible] । [illegible] [illegible]श्लेष्मकरंमतम् ॥

अर्थ–अब पदार्थोंके संयोगसे दूधके गुणदोष कहतेहैं। खांडमिला दूध रुचिकर तथा वातनाशक है। मिश्री मिला दूध वीर्यवर्द्धक और त्रिदोषनाशक है। गुडमिला दूध मूत्रकृच्छ्रनाशक और पित्त तथा कफको नष्ट करे।

पक्वमाम्रंसुमधुरंगोस्तनीमाक्षिकंघृतम्। नवनीतंशृंगवेरंकृष्णामाचश्यामभूषणम्। सिताशिवाचपृथुकापटोलंनागराशिवा। क्षीरेणसहसंसेव्याहिताःस्युःसेविताइमे॥

अर्थ–पका मीठा आम, दाख, शहत, घी, मक्खन, अदरख, पीपल, काली मिर्च, खांड, हरड, चिरवा, परवल, सोंठ और आंवले, ये पदार्थ दूधके साथ भक्षण करनेसे हितकारी होतेहैं।

मत्स्यमांसपटुमुद्गमूलकैःकुष्ठमावहतिसेवितंपयः। शाकजांबवसुरादिकैस्तथामारयत्यबुधमाशुसर्पवत्। नैकध्यंपयसाऽश्नीयात्सर्वमुष्णंद्रवाद्रवम्। तैलंकपित्थंजंबीरंपनसंमातुलुंगकम्। वांशंकरीरंबदरंकदल्यम्लंचदाडिमम्। फलमीदृग्विधंचान्यत्तद्वद्बिल्वफलानिच। जनःक्षीरविरुद्धानिभुंजीयाच्चेद्धितत्सह। बाधिर्य्यंमूकतांचैववैरूप्यंचाग्निमंदताम्। मरणंचाप्यवाप्नोतिकरकंकरकादिव॥

अर्थ–मछली, मांस, निमक, मूंग और मूली इन पदार्थोंके साथ सेवन करा हुआ दूध कुष्ठरोग उत्पन्न करेहै। शाक कहिये बैंगन इत्यादिक और जामुन, तथा मद्य इनके साथ सेवन कराहुआ दूध मृत्युके समान अथवा बहुत सेवन करे तो अवश्य सर्पके समान मृत्यु करे। सर्वप्रकारके पतले तथा खट्टे पदार्थ इनको गरमागरम दूधके साथ न भक्षण करे। तैल, कैथ, नींबू, पनस, बिजोरा, वंशके अंकुर (अर्थात् बांसके कोंपल) करील, बेर, हरेकेला, खट्टा अनार तथा इसीप्रकारके दूसरे फल और बेलफल ये पदार्थ क्षीरविरुद्ध हैं। इसीसे जो पुरुष ये पदार्थ दूधके साथ खाताहै उसके बहरापना गूँगापना कुरूपता तथा अग्निमांद्य ये व्याधि प्राप्तहो और अतिभक्षण करनेसे अंतमें मृत्युको करेहै।

अथ भोजनकुतूहलात्सुषेणवाक्यम्।

क्षीरंनभुंजीतकदाप्यतप्तंतप्तंचनैतल्लवणेनसार्द्धम्।
पिष्टंनसंधानकषायमुद्गकोशातकीकंदफलादिकैश्च॥

अर्थ-भोजनकुतूहलनामक ग्रंथमें ग्रंथकारने दूधके विषयमें सुषेणका वाक्य इस-प्रकार लिखा है कि, विना औटा दूध किसीकालमें न पीवे और औटेहुए दूधमें निमक डालकर न पीवे. उसीप्रकार पीठीके पदार्थ (कचौडीआदि) संधान (अचार) कषैले पदार्थ मूंग तोरई, कंद, तथा फल इनके साथ दूध न पीवे।

अथ मथितक्षीरगुणाः।

क्षीरंगव्यमथाजंवाकोष्णंदंडाहतंभवेत्।
लघुवृष्यंज्वरहरंवातपित्तकफापहम् ॥

अर्थ-गौका अथवा बकरीके दूधको तपाय कुछ गरम रहते उसको रई डालकर मथनेसे यह दूध हलका, तथा वृष्य, एवं ज्वर, वात, पित्त और कफ इनका नाशक होता है।

अथ क्षीरपाकपात्रगुणाः।

ताम्रेतापहरंपात्रेसौवर्णेपित्तनाशनम्। रौप्येश्लेष्महरंप्रोक्तंकां-स्येरक्तप्रसादनम्। आयसेतुश्रृतंक्षीरंकृमिपित्तकफप्रणुत्। कांतसारमयेश्रेष्ठंत्रिदोषघ्नंरसायनम्। कुष्ठप्रमेहपिडिकाकृमि-गुल्मास्रशूलनुत्। मृत्पात्रेतुश्रृतंक्षीरंताम्रपात्रश्रृतंयथा ॥

अर्थ-तामेके पात्रमें तपाया हुआ दूध तापनाशक होता है। सोनेके पात्रमें तपाया हुआ दूध पित्तनाशक, चांदीके पात्रमें तपाया हुवा दूध कफनाशक, कांसेके पात्रमें औटाया हुआ दूध रक्तशोधक, लोहके पात्रमें औटाया हुआ दूध कृमि, पित्त, तथा कफ इनको दूर करे। कांतिसारके पात्रमें तपायाहुआ दूध त्रिदोषनाशक तथा रसायन होनेसे कुष्ठ, प्रमेह, पिडिका, कृमि, गुल्म, रक्तदोष, और शूल इनका नाशक। तथा मट्टीके पात्रमें औटायाहुआ दूध तापनाशक जानना, (तामेके पात्रमें दूधका औटाना बहुतसे मनुष्य वर्जित कहते हैं)।

दुग्धसंतानिकास्निग्धारुच्याबल्याचशुक्रला। तर्पणीवात-पित्तघ्नीदाहपित्तास्रनाशिनी। स्वाद्वीपाकेरसेगुर्वीदीपनीक-फवर्द्धिनी ॥

अर्थ-दूधकी मलाई स्निग्ध, रुचिकारी, बलप्रद, वीर्यवर्द्धक, तथा तृप्तिकर, ऐसी होनेसे वात, पित्त, दाह, तथा रक्तपित्त, इनको नाश करे उसीप्रकार रस कालमें और पाककालमें स्वादु; भारी, अग्निदीप्तकर तथा कफवर्द्धक है।

प्रियेसद्यः प्रसूतानांशृतेक्षीरेतुयद्भवेत् । पीयूषंतद्भवादीनांपी-
यूषमधुराधरे । दुग्धेचातिशृतेयत्स्याद्घनंकिट्टंतदुच्यते ।
किलाटंविकृतेक्षीरेभृतेगाढतरंतुयत् । यच्चामंविकृतंक्षीरंक्षीर-
शाकंतदेवहि । विकृतस्यचदुग्धस्यनीरंमोरटमुच्यते । प्रोक्त-
मेतद्गणंसर्वंपौष्टिकंधातुवर्द्धनम् । गुरुश्लेष्मकरंबल्यंदीप्ताग्नी-
नांहितावहम् । वातपित्तहरंहृद्यंनिद्रासंजननंपरम् । हितंमै-
थुनसक्तानांसुजंघेमोरटंविना । मोरटस्तुलघुर्बल्योरोचकःस-
सितोपलः । आस्यशोषतृषादाहरक्तपित्तज्वरापहः ॥

अर्थ–हे प्रिये! नई व्याईहुई गौ भैंस इत्यादिकोंके दूधको औटाकर गाढा करते हैं उसको पीयूष कहतेहैं । तथा दूधको अत्यंत औटाकर जो खोहा करते हैं उसको संस्कृतमें किट्ट कहते हैं । उसीप्रकार दूधको फाडकर जो खोहा करतेहैं उसको संस्कृतमें किलाट कहते हैं । और कच्चे फटे दूधको क्षीरशाक कहतेहैं । और फटे दूधके जलको मोरट कहतेहैं । ये पीयूषादिक पदार्थ पौष्टिक, धातुवर्द्धक, भारी, कफकर, बलकारी, दीप्ताग्निमनुष्यको हितकारी, वातपित्तनाशक, हृद्य तथा निद्राको प्रगट करतेहैं । उसीप्रकार मैथुनासक्त पुरुषको मोरटके विना सर्व पदार्थ हितकारी हैं. मिश्रीमिला मोरट हलका, बलकारी, तथा रोचक होनेसे मुखशोष, तृषा, दाह, रक्तपित्त और ज्वर इनका नाशकहै ।

अथ दधिगुणानाह ।

दधिपंचविधंप्रोक्तंमंदंस्वादुसुभाषिते । स्वाद्वम्लमम्लंचात्य-
म्लंशरच्चंद्रनिभानने । मंदंकिंचिद्घनंस्वादुदुग्धवच्चप्रकीर्तितम् ।
मूत्रलंचसरंदाहित्रिदोषजनकंमतम् । दधिस्वादुघनंजातरसं
मेदःकफप्रदम् । अत्यभिष्यंदिपाकेचमधुरंपवनापहम् । पुष्टिदं
प्रेयसिप्रोक्तंरक्तपित्तविशोधनम् । घनंस्वाद्वम्लकंप्रोक्तंमधुरंस-
कषायकम् । तदुष्णंदीपनंस्निग्धंपाकेऽम्लंगुरुकीर्तितम् । ग्राह्य-
तीसारशमनंरक्तपित्तकफप्रदम् । मेदःशोथकरंबालेबलवीर्य-
विवर्द्धनम् । मूत्रकृच्छ्रप्रतिश्यायशीतांगाविषमज्वरान् । नाश-
येदरुचिंकार्श्यंपीनोत्तुंगपयोधरे । यत्त्वम्लंदीपनंतत्स्याद्र-

क्तपित्तप्रकोपनम् । श्लेष्मलंसुरतस्वेदप्रोल्लसन्मुखपंकजे । अत्यम्लंदीपनंचैवरोमहर्षप्रदंमतम् । दंताम्लतारक्तपित्तकंठदाहकरंभवेत् ॥

अर्थ-अब दहीके गुण कहते हैं। १ मंद, २ स्वादु, ३ स्वाद्वम्ल, ४ अम्ल, ५ अत्यम्ल, ऐसे दही पांचप्रकारकाहै। जो दही किंचित् गाढा तथा जिसका स्वाद दूधके समान हो उसको मंद कहतेहैं। यह मूत्रल, सारक, दाहकारक, तथा त्रिदोष कारकहै। जो गाढा तथा मीठा दही हो उसको स्वादु कहतेहैं। यह मेद तथा कफ इनको उत्पन्न करे है, और अति अभिष्यंदकारक है। पाककालमें मधुर, वातनाशक, पुष्टिकर तथा रक्तपित्तशोधक है। जो दही गाढा तथा मधुरतायुक्त खट्टा होय उसको स्वाद्वम्ल कहतेहैं। यह मधुर, कषेला, उष्ण, दीपन, स्निग्ध, पाककालमें खट्टा, भारी, ग्राहक, तथा अतिसारनाशक, होकर रक्तपित्त, कफ, मेद, सूजन, बल और वीर्य इनको बढावे; और मूत्रकृच्छ्र, सरेकमाँ, शीतांग, विषमज्वर, अरुचि, और कृशता, इनको नाश करनेवालाहै। ४ अम्ल कहिये खट्टा दही दीपन, रक्तपित्तको कुपित करनेवाला, और कफकारी है। ५ अत्यम्ल कहिये अत्यंत खट्टा दही दीपन, रोमहर्षकारक, तथा दांतोंको खट्टा करनेवाला होकर रक्तपित्त तथा कंठदाह, इनको उत्पन्न करताहै।

गव्यंदध्युत्तमंबल्यंपाकेस्वादुरुचिप्रदम्। दीपनंपौष्टिकंग्राहि शीतलंवातनाशनम् । माहिषंदाधिसुस्निग्धंश्लेष्मलंवातपित्तनुत्। स्वादुपाकमाभिष्यंदिवृष्यंगुर्वस्रदूषणम् । आजंदध्युत्तमंग्राहिलघुदोपत्रयापहम् । प्रशस्तंश्वासकासार्शःक्षयकार्श्येषुदीपनम् ॥

अर्थ-गौका दही उत्तम बलकारी, पाककालमें मधुर, रुचिकर, दीपन, पौष्टिक, ग्राहक, शीतल, तथा वातनाशक, ऐसा है। भैंसका दही स्निग्ध और रक्तदूषक है। बकरीका दही उत्तम ग्राहक, हलका, लघु, तथा त्रिदोपनाशक होनेसे श्वास, खांसी, बवासीर, क्षय और कृशता इन रोगोंको पथ्यकर और दीपन है।

ततदुग्धोद्भवंप्रोक्तंदाधिस्निग्धंरुचिप्रदम्। सर्वधातुबलाग्नीनांवर्द्धकंचगुणोत्तमम्। वातपित्तहरंचैवकीर्त्तितंमुनिसत्तमैः। ततो हीनगुणंप्राहुरामदुग्धोद्भवंदाधि ॥

अर्थ—औटाहुआ दूधका दही स्निग्ध, रुचिकारी, तथा सर्वधातु, बल, अं इनको बढानेवाला, गुणोंमें उत्तम और वातपित्तनाशक है । कच्चे दूधका दही उ दहीकी अपेक्षा गुणोंमें न्यून है ।

हीनसांतानिकोत्पन्नंदधिशीतंलघुस्मृतम् । विष्टंभवातलंग्राहिदीपनंमधुरंमतम् । रुच्यमीषत्पित्तलंचप्रदिष्टंभिषगुत्तमैः ॥

अर्थ—औटाकर मलाई निकाले हुए दूधका दही शीतल, हलका, विष्टंभी, वातल ग्राहक, दीपन. मधुर, रुचिकारी और किंचित् पित्त करता है ।

अथ संयोगविशेषगुणानाह ।

सशर्करंदधिश्रेष्ठंतृष्णापित्तास्रदाहनुत् । सगुडंवातजिद्वृष्यंबृंहणंतर्पणंगुरु ॥

अर्थ—बूरा मिला दही श्रेष्ठ एवं प्यास, रक्तपित्त, तथा दाह इनको नाश करेहै गुड मिला दही वातनाशक, वृष्य, बृंहण, तृप्तिकर, तथा गुरु ऐसा है ।

मूत्रकृच्छ्रेप्रतिश्यायेशीतगेविषमज्वरे । अतिसारेऽरुचौकाश्र्येंदिवाचदधिशस्यते । शस्यतेदधिनोरात्रौशस्तंचांबुघृतान्वितम् । रक्तपित्तकफोत्थेषुविकारेषुनशस्यते ॥

अर्थ—मूत्रकृच्छ्र, सरेकमाँ, शीतसे उत्पन्न विषमज्वर, अतिसार, अरुचि, तथ कृशता इन रोगोंमें दिनमें दही खाना उत्तम है, रात्रिमें दही खाना वर्जितहै । यदि रात्रिमें दही खाना होय तो पानी और घी डालके खाय, रक्तपित्त और कफके रोगोंमें दही खाना सर्वथा अहितकारी है ।

दध्नस्तूपरियत्तोयंतन्मस्तुपरिकीर्तितम् । मस्तुक्लमहरंबल्यंलघुभक्ताभिलाषकृत् । स्रोतःशोधनमाह्लादिकफतृष्णानिलापहम् । अवृष्यंप्रीणनंशीघ्रंभिनत्तिमलसंग्रहम् ॥

अर्थ—दहीके पानीको मस्तु कहते हैं । यह मस्तु ग्लानिनाशक, बलकर, लघु, भोजनमें रुचिकारक, इन्द्रियशोधक, आनंदकारक; तथा कफ, तृषा, वातके रोग, इनको नाश करे, अवृष्य, तृप्तिकर और मलसंग्रहभेदक ऐसा है ।

दध्नस्तूपरिसांतानीसरइत्याभिधीयते । सरः स्वादुर्गुरुर्वृष्योवातवह्निप्रणाशनः । साम्लोवस्तिप्रथमनःपित्तश्लेष्मप्रवर्द्धनः ॥

अर्थ-दहीके ऊपरकी मलाईको सर कहते हैं । यह स्वादु, गुरु, वृष्य, वायु तथा अग्नि, इनको नाश करे । खट्टी, मूत्राशयको अहित और पित्त तथा कफ इनको बढानेवाली है ।

अथ तक्रगुणानाह ।

घोलंमथितमुदश्वित्तक्रमाहुश्चतुर्विधम् । सरसंनिर्जलंघोलंमथितंरसवर्जितम्। तक्रंपादजलंप्रोक्तमुदश्विच्चार्द्धजीवनम्। केचित्तुच्छच्छिकांप्राहुर्बहुनीरांहिपंचमीम्।वातपित्तहरंघोलंमथितंकफपित्तनुत् । तक्रंत्रिदोषशमनमुदश्वित्कफकारकम् । छच्छिकाश्रमपित्तघ्नीशीतातृड्वातनाशिनी । गुर्वीश्लेष्मप्रदाप्रोक्तादीपनीलवणान्विता ॥

अर्थ-अब तक्रके गुण कहते हैं । छाँछ चार प्रकारकी है जैसे १ घोल, २ मथित, ३ उदश्वित, ४ तक्र जो पानीके विना मथते हैं परंतु उसमेंसे मक्खन नहीं निकालाहो उसको घोल कहते हैं, और पानीके विना मथके मक्खन निकालते हैं उउसको मथित कहते हैं, जिसमें चौथा भाग पानी डालके मथे उसको तक्र और अर्द्धभाग पानी मिलाय मथते हैं उसको उदश्वित् ऐसे कहते हैं, इसके शिवाय जिसमें बहुत पानी मिलायके मथते हैं, उसको कोई छच्छिका कहते हैं; यह पांचवां प्रकार है। घोल वातपित्तनाशक, मथित कफ पित्तनाशक, तक्र त्रिदोषनाशक, उदश्वित् कफकारक और छच्छिका यह भ्रम तथा पित्तनाशक है, शीतल, वात तथा तृषानाशक, कफकर और गुरु है, इसमें निमक डालनेसे दीपक होती है ।

अथ तक्रविशेषगुणानाह ।

तक्रंग्राहिकषायाम्लंस्वादुपाकेरसेलघु । वीर्योष्णंदीपनंप्रोक्तं पौष्टिकंवातनाशनम् । ग्रहण्यादिकरोगेषुतक्रंपथ्यतमंमतम् । राजिकालवणाजाजीरामठैःसंयुतंयदि । पाचनंदीपनंरुच्यं विशेषादुदरापहम्। वातेम्लसैंधवोपेतंपित्तेस्वादुसशर्करम्। पिबेत्तक्रंकफेरूक्षंव्योपक्षारसमन्वितम् । मूत्रकृच्छ्रेतुसगुडंपांडुरोगेसचित्रकम् । हिंगुजीरयुतंघोलंसैंधवेनावधूलितम् । तद्भवेदतिवातघ्नमर्शोऽतीसारनाशनम् । सुरुच्यंपुष्टिदंवल्यंवस्तिशूलहरंमतम् ॥

अर्थ–अब तक्रके विशेष गुण कहते हैं । तक्र ग्राहक, कषेला, खट्टा, पाककालमें तथा रसकालमें स्वादु, लघु, वीर्यकालमें उष्ण, दीपन, पौष्टिक, वातनाशक, तथा संग्रहणी, इत्यादि रोगोंमें अति पथ्यकर है । यदि तक्र (छाँछ)में भुना जीरा भुनी हींग डाले तो विशेषकरके पाचन, दीपन, रुचिकारी, तथा उदरविकारनाशक होय है । वादीके रोगमें खट्टी छाँछमें सैंधानिमक डालके देवे, पित्तके रोगमें मीठी छाँछमें बूरा डालके देवे, कफके रोगमें रूक्ष अर्थात् जिस छाँछमें मक्खनका लेशभी न होवे उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल, तथा जवाखार डालके देवे, मूत्रकृच्छ्रमें गुड मिलायके देय, पाण्डुरोगमें चित्रककी छाल डालके देय, घोल इसमें भुनी हींग, जीरा, तथा सैंधानिमक डालके देय तो यह अतिवात, बवासीर, तथा अतिसार, इनको नाश करे । रुचिकर, बलकर, पौष्टिक और बस्तिशूल नाशक ऐसा है ।

शीतकालेऽग्निमांद्येचकफवातामयेषुच । अरुचौस्रोतसांरोधे तक्रंस्यादमृतोपमम् । तक्रंतुलवणोपेतंदीपनंग्रहणीगदे । लवणेनविनायत्तद्ग्रहण्यर्शोविवर्द्धनम् ॥

अर्थ–शीतकालमें तथा अग्निमांद्य, कफ, वात, अरुचि और नाक, कान, इत्यादि इन्द्रियोंके अवरोध इन रोगोंमें तक्र अमृतके तुल्य है, निमक पडी छाँछ संग्रहणी रोगमें अग्निदीपक है, और निमक विना संग्रहणी और बवासीरको बढातीहै ।

नमूर्च्छाभ्रमदाहार्तौरक्तपित्तीक्षतीनरः ।
दुर्बलोऽद्यान्नवैतक्रमुष्णकालेपिनिंदितम् ॥

अर्थ–मूर्च्छा, भ्रम, दाह, तथा रक्तपित्त, इन रोगवाले पुरुषोंको तथा दुर्बलको तक्र (छाँछ) नहीं पीना चाहिये और उष्णकालमें तो किसीकोही तक्र नहीं पीना चाहिये ।

स्वर्गेसुराणाममृतंयथास्तितक्रंनराणांभुवितद्वदेवं ।
तक्रप्रदग्धानपुनर्भवेयूरोगानतक्राद्व्यथतेकदाचित् ॥

अर्थ–जैसे स्वर्गमें देवताओंको अमृत प्रधानहै, उसीप्रकार पृथ्वीमें मनुष्योंको तक्र है । तक्रसे जो दग्धहुए रोग वो फिर नहीं होते और तक्र सेवन करता पुरुष प्रायः रोगी नहीं होता । "तक्रमत्तीति तक्रात्" ।

गव्यंतुदीपनंतक्रंमेध्यंश्वित्रत्रिदोषजित् । कुष्ठगुल्मातिसारघ्नंप्लीहार्शोग्रहणीप्रणुत् । माहिषंश्लेष्मलंतक्रंसांद्रंशोफकरंगु-

रु । सुस्निग्धंछागलंतक्रंलघुदोषत्रयापहम् । गुल्माशोंग्रहणी-शोफपांडुरोगप्रणाशनम् ॥

अर्थ-गौकी छाँछ दीपन तथा वुद्धिवर्द्धक होकर श्वेतकुष्ठ, त्रिदोष, गलित कुष्ठ, गुल्म, अतिसार, प्लीहा, अर्श, और संग्रहणी इनको नाश करे । भैंसकी छाँछ कफकर, स्निग्ध, शोथकर, तथा गुरु है । वकरीकी छाँछ स्निग्ध तथा लघु होनेसे त्रिदोष गुल्म, अर्श, संग्रहणी, सूजन, और पांडुरोग इनका नाश करे ।

अथ नवनीतगुणानाह ।

नवनीतंहितंगव्यंवृष्यंवर्णवलाग्निकृत् । संग्राहिवातपित्तास्र-क्षयार्शोऽर्दितकासजित् । तद्बालेसुहितंवृद्धेविशेषादमृतंशिशोः । वीर्यसंवर्द्धनंयूनांरोचकंचप्रकीर्तितम् ॥

अर्थ-गौकी लोनी (मक्खन) हितकर, वृष्य, वर्णकारक, वलकर, जठराग्निदीपक, तथा ग्राहक हो वात, पित्त, रक्तविकार, क्षय, अर्श, अर्दित वायु और खांसी इनका नाश कर्ता है । उसीप्रकार वृद्धमनुष्योंको हितकारक, वालकोंको अमृतके समान आर तरुणोंको वीर्यवर्द्धक, तथा रुचिकारीहै ।

माहिषंनवनीतंतुवातश्लेष्मकरंगुरु । दाहपित्तश्रमहरंमेदः-शुक्रविवर्द्धनम् । आजंत्रिदोषशमनंनवनीतंतयोर्वरम् । क्षीरोत्थंमंथजंश्रेष्ठमतिस्निग्धंवलप्रदम् । चक्षुष्यंमधुरंवृष्यंशीतं ग्राह्यस्रपित्तनुत् । नवनीतंतुसद्यस्कंस्वादुग्राहिहिमंलघु । मेध्यंकिंचित्कषायाम्लमीपत्तक्रांशसंभवात् । श्लेष्मलंगुरुमेदस्कंनवनीतंचिरंतनम् । सक्षारंकटुकाम्लत्वाच्छर्द्यर्शःकुष्ठ-कोपनम् ॥

अर्थ-भैंसकी लोनी वातकारक, कफकर, तथा भारी, एवं दाह, पित्त, श्रम, इनकी नाशक और मेद, वीर्य, इनको वढावे । वकरीकी लोनी त्रिदोषनाशक, तथा गौकी लोनी भैंसकी लोनीकी अपेक्षा श्रेष्ठहै । दूधमेंसे निकाली हुई लोनी श्रेष्ठ, अतिस्निग्ध, वलदायक, नेत्रोंको हितकारक, मधुर, वृष्य, शीतल, और ग्राहक होनेसे रक्तपित्तनाशकहै । दूधसे अथवा दहीसे निकाली ताजी लोनी स्वादु, ग्राहि, शीतल, लघु, वुद्धिवर्द्धक, छाँछके योगसे कुछ कपेली, तथा खट्टी ऐसीहै । वहुत दिनोंकी लोनी कफकर,

भारी, मेदवर्द्धक, किंचित् चरपरी, तथा खट्टी ऐसीहै । इसीसे उसमें क्षारांश उत्पन्न होताहै । यह वमन बवासीर इनको कुपित करैहै ।

अथ घृतगुणानाह ।

गव्यंस्नेहवरंघृतंगुरुहिमंवृष्यंसुराणांप्रियंमेध्यंनेत्रहितंविपाकमधुरंमांगल्यमारोग्यदम् । ओजःपुष्टिकरंरसायनवरंबल्यं वपुःस्थैर्यदंतेजःकांतिविवर्द्धनंस्मृतिकरंरुच्यंसुधास्पर्द्धकम् । स्वर्यंवह्निविवर्द्धनंश्रमहरंवातंचपित्तंविषंहन्यादेवकफंसरोजवदनेग्लानिंत्वलक्ष्मीमपि । नातःश्रेष्ठतरंवदंतिमुनयोलोकत्रयेमन्मतेगव्यंसर्पिरथोऽधरामृतमयेतुल्यंकुरंगीदृशाम् ॥

अर्थ–गौका घी सर्वस्नेह पदार्थोंमें श्रेष्ठ, भारी, शीतल, वृष्य, देवताओंको प्रिय, बुद्धिदायक, नेत्रोंको हितकर, पाककालमें मधुर, मंगलीक, आरोग्यदायक, इन्द्रियोंको बल, तथा पुष्टि देनेवाला, श्रेष्ठ रसायन, बलकर, शरीरको स्वस्थता देनेवाला, तेज तथा कांति इनको बढानेवाला, स्मृतिकारक, रुचिकर, अमृतके समान, स्वरकारक, और अग्निवर्द्धक ऐसाहै उसी प्रकार श्रम, वातपित्त, विष, कफ, ग्लानि तथा अलक्ष्मी इनको नाश करे ।

आज्यंमाहिषमग्निदीपनमपिस्निग्धंचहृद्यंहिमंनेत्र्यंस्वादुरसायनंगुरुमतंसौख्यप्रदंबुद्धिदम् । धैर्यश्लेष्मबलप्रदंरुचिकरं कांतिप्रदंपौष्टिकंवर्ण्यंपित्तमरुद्भ्रमग्रहणिकाश्रांत्यस्रपित्तप्रणुत् । अर्शोघ्नंमहिषीभवंचकथितंत्वग्दोषसंनाशनमाजंचाज्यमथोऽग्निकृल्लघुमतंवृष्यंचपाकेकटु । नातिस्वादुरसेदृशो र्हितकरंबल्यंकफार्शःप्रणुत्कासश्वासविनाशनंक्षयहरंपूर्णेंदुबिंबानने ॥

अर्थ–भैंसका घी अग्निदीपक, स्निग्ध, हृद्य, शीतल, नेत्रोंको हितकारी, स्वादु, रसायन, भारी, सुखदायक होकर बुद्धि, धैर्य, कफ तथा बल इनको बढावे । रुचिकारी, कांतिकारक, पौष्टिक, वर्णकारक, ऐसाहै.उसीप्रकार पित्त, वात, भ्रम, संग्रहणी, श्रम, रक्तपित्त और बवासीर संबंधी रोग इनको नाश करे. बकरीका घी अग्निदीपक, लघु, वृष्य, पाककालमें तीक्ष्ण, रसकालमें अल्पस्वादु, नेत्रोंको हितकारी, तथा बलकारीहै । उसीप्रकार कफ, अर्श, खांसी, श्वास, और क्षय इनको नाश करे ।

योजयेन्नवमेवाज्यंभोजनेतर्पणेश्रमे । बलक्षयेपांडुरोगेका
मलानेत्ररोगयोः । राजयक्ष्मणिबालेचवृद्धेश्लेष्मगदान्विते ।
सामेरोगेविषूच्यांचविबंधेचमदात्यये । नवज्वरेऽग्निमांद्येच
नसर्पिर्बहुमन्यते ॥

अर्थ-भोजनमें, तर्पणमें, तथा श्रम, बलक्षय, पांडुरोग, कामला, नेत्ररोग इनमें नवीन घी लेना चाहिये। परंतु राजयक्ष्मा (खई) बालक, वृद्ध, कफरोगी, आमरोग, विषूचिका, विबंध, मदात्यय, नवीन ज्वर, तथा अग्निमांद्य इनरोगोंमें घी हितकारी नहीं है ।

अथ सक्तुकृतिगुणाः ।

धान्यानांभ्राष्ट्रभृष्टानांपिष्टंसक्तुरुदाहृतः । शीतलःसारकोरू-
क्षोबलशुक्रविवर्द्धनः। कफश्रमग्लानिदाहभ्रमपित्तापहारकः॥

अर्थ-अब सत्तू अर्थात् भुनेहुए अन्नके चूनकी विधि तथा गुणदोष कहते हैंः-प्रथम गेहूं चना आदि धान्यको भाड़में भूने फिर चक्कीसे पीसे उस चूनको सत्तू ऐसा कहतेहैं। यह सत्तू शीतल, सारक, रूक्ष, बलकारी, तथा वीर्यवर्द्धक हो कफ, श्रम, ग्लानि, दाह, भ्रम, तथा पित्त इनका नाश करे है सत्तू काशी पटना आदि प्रांतोंमें उत्तम बनताहै ।

चाणकाःसक्तवःशीतारूक्षास्तृप्तिकरामताः । ग्राहिणोवात-
लाश्चैवरक्तशुद्धिकराअपि । पित्तघ्नाश्चकफघ्नाश्चस्मृताःपाक-
विदुत्तमैः । सक्तुर्लाजोद्भवःशीतोलघुर्ग्राहीत्रिदोषजित् ।
छर्दिरक्तप्रशमनःपथ्यस्तृप्तिप्रदायकः ॥

अर्थ-चनेका सत्तू शीतल, रूक्ष, तृप्तिकर, मलग्राहक, वातल, रक्तशोधक तथा पित्तकफनाशक है, और खीलोंका सत्तू शीतल, हलका, ग्राहक, तथा त्रिदोषनाशक ऐसा होकर वमन तथा रक्तविकार इनको नष्ट करे। और पथ्यकर तथा तृप्तिकारक है।

अथ यवसक्तुगुणाः ।

यवसक्तुर्विलोलाक्षीसितानीरप्रसेवितः । हंतिपित्तंकफंबाले
शीतलोदीपनोलघुः।लेखनोरेचनोरूक्षोबल्योधातुविवर्द्धनः ।
मधुरोभेदनोरुच्यःक्षुत्तृषाश्रमनाशनः । वमंदाहप्रहरणःकर्ण-
नेत्रामयापहः । मार्गव्यायामखिन्नानांहितःपीतोनभक्षितः ॥

अर्थ–जौका सत्तू मीठेके साथ पानीमें सानकर खानेसे पित्त तथा कफ इनका नाश करे, उसीप्रकार शीतल, अग्निदीपक, हलका, लेखन कहिये शरीरका मल शुष्क कर छुडायके काढनेवाला, रेचन, रूक्ष, बलकर, धातु बढानेवाला, मधुर, भेदन, तथा रुचिकारी है । उसीप्रकार क्षुधा, तृषा, श्रम, पसीने, दाह, कर्णरोग और नेत्ररोग, इनका नाशक तथा मार्ग किंवा दंडकसरतसे जो क्षीणहुए उनको हितकारी यह सक्तु पानीमें घोलकर पीनेसे उत्तम है । परंतु गाढा करके भक्षण कराहुआ अवगुण करे है ।

सक्तवःशालिसंभूतावह्निदालघवोहिमाः ।
मधुराग्राहिणोरुच्याःपथ्याश्चबलशुक्रदाः ॥

अर्थ–चावलका सत्तू अग्निदीपक, लघु, शीत, मधुर, ग्राहक, रुचिकारी, तथा पथ्यकारी हो बल वीर्य इनको उत्पन्न करे हैं ।

अथ सक्तूनांद्रव्यसंयोगेनगुणाः ।

तत्र प्रथमतोमंथकृतिगुणाः ।

सक्तून्घृतेनमिश्रयित्वाजलेनसहघोलयेत् । नातिद्रवंनातिघनं समंथोबलदःस्मृतः । परिणामेबलहरोमधुरःशीतलस्तथा । वर्णपुष्टिस्थैर्यकारीदाहतृट्छ्रमछर्दिहा । प्रमेहक्षयकुष्ठानां नाशकःपरिकीर्तितः ॥

अर्थ–अब सत्तूमें दूसरा पदार्थ डालकर इसके साथ भक्षण करनेसे उसके गुण कहते हैं। तिनमें प्रथम मंथकी कृति और गुणदोष कहते हैं. सत्तूको उत्तम घीमें मिलाय फिर पानी डाल न बहुत पतला न बहुत गाढा ऐसा करे । इसको मंथ ऐसा कहतेहैं । यह बलकारी, परिणाममें बलहरणकर्त्ता, मधुर तथा शीतल ऐसा होकर, वर्ण, पुष्टि, स्थैर्य इनको देनेवाला तथा दाह, तृषा, श्रम, वमन, प्रमेह, क्षय, तथा कुष्ठ, इनको नाश करे ।

सगुडाम्लघृतैःसार्द्धंभक्षितोमूत्रकृच्छ्रहा । उदावर्तहरश्चैवस-सितेक्षुरसैर्युतः । द्राक्षाभिर्भक्षितोनित्यंवातरक्तविनाशनः । पित्तस्यनाशकश्चोक्तःसद्राक्षामधुनासह । जलेनघोलितश्चा-त्तःकफनाशकरोमतः । अम्लेक्षुघृतसीताभिर्मधुद्राक्षागुडैः सह । भक्षितश्चमलान्दोषान्यथामार्गेणवाहकः । सक्तुश्च

योजयेन्नवमेवाज्यंभोजनेतर्पणेश्रमे । बलक्षयेपांडुरोगेका मलानेत्ररोगयोः । राजयक्ष्मणिबालेचवृद्धेश्लेष्मगदान्विते । सामेरोगेविषूच्यांचविबंधेचमदात्यये । नवज्वरेऽग्निमांद्येच नसर्पिर्बहुमन्यते ॥

अर्थ-भोजनमें, तर्पणमें, तथा श्रम, बलक्षय, पांडुरोग, कामला, नेत्ररोग इनमें नवीन घी लेना चाहिये । परंतु राजयक्ष्मा (खई) बालक, वृद्ध, कफरोगी, आमरोग, विषूचिका, विबंध, मदात्यय, नवीन ज्वर, तथा अग्निमांद्य इनरोगोंमें घी हितकारी नहीं है ।

अथ सक्तुकृतिगुणाः ।

धान्यानांभ्राष्ट्रभृष्टानांपिष्टंसक्तुरुदाहृतः । शीतलःसारकोरूक्षोबलशुक्रविवर्द्धनः । कफश्रमग्लानिदाहभ्रमपित्तापहारकः ॥

अर्थ-अब सत्तू अर्थात् भुनेहुए अन्नके चूनकी विधि तथा गुणदोष कहते हैं:-प्रथम गेहूं चना आदि धान्यको भाड़में भूने फिर चक्कीसे पीसे उस चूनको सत्तू ऐसा कहतेहैं । यह सत्तू शीतल, सारक, रूक्ष, बलकारी, तथा वीर्यवर्द्धक हो कफ, श्रम, ग्लानि, दाह, भ्रम, तथा पित्त इनका नाश करे है सत्तू काशी पटना आदि प्रांतोंमें उत्तम बनताहै ।

चाणकाःसक्तवःशीतारूक्षास्तृप्तिकरामताः । ग्राहिणोवातलाश्चैवरक्तशुद्धिकराअपि । पित्तघ्नाश्चकफघ्नाश्चस्मृताःपाकविदुत्तमैः । सक्तुर्लाजोद्भवःशीतोलघुर्ग्राहीत्रिदोषजित् । छर्दिरक्तप्रशमनःपथ्यस्तृप्तिप्रदायकः ॥

अर्थ-चनेका सत्तू शीतल, रूक्ष, तृप्तिकर, मलग्राहक, वातल, रक्तशोधक तथा पित्तकफनाशक है, और खीलोंका सत्तू शीतल, हलका, ग्राहक, तथा त्रिदोषनाशक ऐसा होकर वमन तथा रक्तविकार इनको नष्ट करे । और पथ्यकर तथा तृप्तिकारक है ।

अथ यवसक्तुगुणाः ।

यवसक्तुर्विलोलाक्षिसितानीरप्रसेवितः । हंतिपित्तंकफंबाले शीतलोदीपनोलघुः । लेखनोरेचनोरूक्षोबल्योधातुविवर्द्धनः । मधुरोभेदनोरुच्यःक्षुत्तृषाश्रमनाशनः । वर्मदाहप्रहरणःकर्णनेत्रामयापहः । मार्गव्यायामखिन्नानांहितःपीतोनभक्षितः ॥

अर्थ-जौका सत्तू मीठेके साथ पानीमें सानकर खानेसे पित्त तथा कफ इनका नाश करे, उसीप्रकार शीतल, अग्निदीपक, हलका, लेखन कहिये शरीरका मल शुष्क कर छुडायके काढनेवाला, रेचन, रूक्ष, बलकर, धातु बढानेवाला, मधुर, भेदन, तथा रुचिकारी है । उसीप्रकार क्षुधा, तृषा, श्रम, पसीने, दाह, कर्णरोग और नेत्ररोग, इनका नाशक तथा मार्ग किंवा दंडकसरतसे जो क्षीणहुए उनको हितकारी यह सक्तु पानीमें घोलकर पीनेसे उत्तम है । परंतु गाढा करके भक्षण कराहुआ अवगुण करे है ।

सक्तवःशालिसंभूतावह्निदालघवोहिमाः ।
मधुराग्राहिणोरुच्याःपथ्याश्चबलशुक्रदाः ॥

अर्थ-चावलका सत्तू अग्निदीपक, लघु, शीत, मधुर, ग्राहक, रुचिकारी, तथा पथ्यकारी हो बल वीर्य इनको उत्पन्न करे हैं ।

अथ सक्तूनांद्रव्यसंयोगेनगुणाः ।

तत्र प्रथमतोमंथकृतिगुणाः ।

सक्तून्घृतेमिश्रयित्वाजलेनसहघोलयेत् । नातिद्रवंनातिघनं समंथोबलदःस्मृतः । परिणामेबलहरोमधुरःशीतलस्तथा । वर्णपुष्टिस्थैर्यकारीदाहतृट्छ्रमछर्दिहा । प्रमेहक्षयकुष्ठानां नाशकःपरिकीर्तितः ॥

अर्थ-अब सत्तूमें दूसरा पदार्थ डालकर इसके साथ भक्षण करनेसे उसके गुण कहते हैं। तिनमें प्रथम मंथकी कृति और गुणदोष कहते हैं. सत्तूको उत्तम घीमें मिलाय फिर पानी डाल न बहुत पतला न बहुत गाढा ऐसा करे । इसको मंथ ऐसा कहतेहैं । यह बलकारी, परिणाममें बलहरणकर्त्ता, मधुर तथा शीतल ऐसा होकर, वर्ण, पुष्टि, स्थैर्य इनको देनेवाला तथा दाह, तृषा, भ्रम, वमन, प्रमेह, क्षय, तथा कुष्ठ, इनको नाश करे ।

सगुडाम्लघृतैःसार्द्धंभक्षितोमूत्रकृच्छ्रहा । उदावर्तहरश्चैवस-सितेक्षुरसैर्युतः । द्राक्षाभिर्भक्षितोनित्यंवातरक्तविनाशनः । पित्तस्यनाशकश्चोक्तःसद्राक्षामधुनासह । जलेनघोलितश्चा-त्तःकफनाशकरोमतः । अम्लेक्षुघृतसीताभिर्मधुद्राक्षागुडैः सह । भक्षितश्चमलान्दोषान्यथामार्गेणवाहकः । सक्तुश्च

योजयेन्नवमेवाज्यंभोजनेतर्पणेश्रमे । बलक्षयेपांडुरोगेका मलानेत्ररोगयोः । राजयक्ष्मणिबालेचवृद्धेश्लेष्मगदान्विते । सामेरोगेविषूच्यांचविबंधेचमदात्यये । नवज्वरेऽग्निमांद्येच नसर्पिर्बहुमन्यते ॥

अर्थ-भोजनमें, तर्पणमें, तथा श्रम, बलक्षय, पांडुरोग, कामला, नेत्ररोग इनमें नवीन घी लेना चाहिये। परंतु राजयक्ष्मा (खई) बालक, वृद्ध, कफरोगी, आम-रोग, विषूचिका, विबंध, मदात्यय, नवीन ज्वर, तथा अग्निमांद्य इनरोगोंमें घी हित-कारी नहीं है ।

अथ सक्तुकृतिगुणाः ।

धान्यानांभ्राष्ट्रभृष्टानांपिष्टंसक्तुरुदाहृतः । शीतलःसारकोरू-क्षोबलशुक्रविवर्द्धनः। कफश्रमग्लानिदाहभ्रमपित्तापहारकः॥

अर्थ-अब सत्तू अर्थात् भुनेहुए अन्नके चूनकी विधि तथा गुणदोष कहते हैं:-प्रथम गेहूं चना आदि धान्यको भाड़में भूने फिर चक्कीसे पीसे उस चूनको सत्तू ऐसा कहतेहैं । यह सत्तू शीतल, सारक, रूक्ष, बलकारी, तथा वीर्यवर्द्धक हो कफ, श्रम, ग्लानि, दाह, भ्रम, तथा पित्त इनका नाश करे हैं सत्तू काशी पटना आदि प्रांतोंमें उत्तम बनताहै ।

चाणकाःसक्तवःशीतारूक्षास्तृप्तिकरामताः । ग्राहिणोवात-लाश्चैवरक्तशुद्धिकराअपि । पित्तघ्नाश्चकफघ्नाश्चस्मृताःपाक-विदुत्तमैः । सक्तुर्लाजोद्भवःशीतोलघुर्ग्राहीत्रिदोषजित् । छर्दिरक्तप्रशमनःपथ्यस्तृप्तिप्रदायकः ॥

अर्थ-चनेका सत्तू शीतल, रूक्ष, तृप्तिकर, मलग्राहक, वातल, रक्तशोधक तथा पित्तकफनाशक है, और खीलोंका सत्तू शीतल, हलका, ग्राहक, तथा त्रिदोषनाशक ऐसा होकर वमन तथा रक्तविकार इनको नष्ट करे । और पथ्यकर तथा तृप्तिकारक है ।

अथ यवसक्तुगुणाः ।

यवसक्तुर्विलोलाक्षिसितानीरप्रसेवितः । हंतिपित्तंकफंबाले शीतलोदीपनोलघुः।लेखनोरेचनोरूक्षोबल्योधातुविवर्द्धनः । मधुरोभेदनोरुच्यःक्षुत्तृषाश्रमनाशनः । वमंदाहप्रहरणःकर्ण-नेत्रामयापहः । मार्गव्यायामखिन्नानांहितःपीतोनभक्षितः ॥

अर्थ–जौका सत्तू मीठेके साथ पानीमें सानकर खानेसे पित्त तथा कफ इनका नाश करे, उसीप्रकार शीतल, अग्निदीपक, हलका, लेखन कहिये शरीरका मल शुष्क कर छुडायके काढनेवाला, रेचन, रूक्ष, बलकर, धातु बढानेवाला, मधुर, भेदन, तथा रुचिकारी है । उसीप्रकार क्षुधा, तृषा, श्रम, पसीने, दाह, कर्णरोग और नेत्ररोग, इनका नाशक तथा मार्ग किंवा दंडकसरतसे जो क्षीणहुए उनको हितकारी यह सत्तु पानीमें घोलकर पीनेसे उत्तम है । परंतु गाढा करके भक्षण कराहुआ अवगुण करे है ।

सक्तवःशालिसंभूतावह्निदालघवोहिमाः ।
मधुराग्राहिणोरुच्याःपथ्याश्चबलशुक्रदाः ॥

अर्थ–चावलका सत्तू अग्निदीपक, लघु, शीत, मधुर, ग्राहक, रुचिकारी, तथा पथ्यकारी हो बल वीर्य इनको उत्पन्न करे हैं ।

अथ सक्तूनांद्रव्यसंयोगेनगुणाः ।

तत्र प्रथमतोमंथकृतिगुणाः ।

सक्तून्घृतेमिश्रयित्वाजलेनसहघोलयेत् । नातिद्रवंनातिघनं समंथोबलदःस्मृतः । परिणामेबलहरोमधुरःशीतलस्तथा । वर्णपुष्टिस्थैर्यकारीदाहतृट्छ्रमछर्दिहा । प्रमेहक्षयकुष्ठानां नाशकःपरिकीर्तितः ॥

अर्थ–अब सत्तूमें दूसरा पदार्थ डालकर इसके साथ भक्षण करनेसे उसके गुण कहते हैं। तिनमें प्रथम मंथकी कृति और गुणदोष कहते हैं. सत्तूको उत्तम घीमें मिलाय फिर पानी डाल न बहुत पतला न बहुत गाढा ऐसा करे । इसको मंथ ऐसा कहतेहैं । यह बलकारी, परिणाममें बलहरणकर्त्ता, मधुर तथा शीतल ऐसा होकर, वर्ण, पुष्टि, स्थैर्य इनको देनेवाला तथा दाह, तृषा, भ्रम, वमन, प्रमेह, क्षय, तथा कुष्ठ, इनको नाश करे ।

सगुडाम्लघृतैःसार्द्धंभक्षितोमूत्रकृच्छ्रहा । उदावर्तहरश्चैवस-सितेक्षुरसैर्युतः । द्राक्षाभिर्भक्षितोनित्यंवातरक्तविनाशनः । पित्तस्यनाशकश्चोक्तःसद्राक्षामधुनासह । जलेनघोलितश्चा-त्तःकफनाशकरोमतः । अम्लेक्षुघृतसीताभिर्मधुद्राक्षागुडैः सह । भक्षितश्चमलान्दोषान्यथामार्गेणवाहकः । सक्तुश्च

योजयेन्नवमेवाज्यंभोजनेतर्पणेश्रमे । बलक्षयेपांडुरोगेका मलानेत्ररोगयोः । राजयक्ष्मणिबालेचवृद्धेश्लेष्मगदान्विते । सामेरोगेविषूच्यांचविबंधेचमदात्यये । नवज्वरेऽग्निमांद्येच नसर्पिर्बहुमन्यते ॥

अर्थ–भोजनमें, तर्पणमें, तथा श्रम, बलक्षय, पांडुरोग, कामला, नेत्ररोग इनमें नवीन घी लेना चाहिये । परंतु राजयक्ष्मा (खई) बालक, वृद्ध, कफरोगी, आमरोग, विषूचिका, विबंध, मदात्यय, नवीन ज्वर, तथा अग्निमांद्य इनरोगोंमें घी हितकारी नहीं है ।

अथ सक्तुकृतिगुणाः ।

धान्यानांभ्राष्ट्रभृष्टानांपिष्टंसक्तुरुदाहृतः । शीतलःसारकोरूक्षोबलशुक्रविवर्द्धनः। कफश्रमग्लानिदाहभ्रमपित्तापहारकः॥

अर्थ–अब सत्तू अर्थात् भुनेहुए अन्नके चूनकी विधि तथा गुणदोष कहते हैंः– प्रथम गेहूं चना आदि धान्यको भाड़में भूने फिर चक्कीसे पीसे उस चूनको सत्तू ऐसा कहतेहैं । यह सत्तू शीतल, सारक, रूक्ष, बलकारी, तथा वीर्यवर्द्धक हो कफ, श्रम, ग्लानि, दाह, भ्रम, तथा पित्त इनका नाश करे हैं सत्तू काशी पटना आदि प्रांतोंमें उत्तम बनताहै ।

चाणकाःसक्तवःशीतारूक्षास्तृप्तिकरामताः । ग्राहिणोवातलाश्चैवरक्तशुद्धिकराअपि । पित्तघ्नाश्चकफघ्नाश्चस्मृताःपाकविदुत्तमैः । सक्तुर्लाजोद्भवःशीतोलघुर्ग्राहीत्रिदोषजित् । छर्दिरक्तप्रशमनःपथ्यस्तृप्तिप्रदायकः ॥

अर्थ–चनेका सत्तू शीतल, रूक्ष, तृप्तिकर, मलग्राहक, वातल, रक्तशोधक तथा पित्तकफनाशक है, और खीलोंका सत्तू शीतल, हलका, ग्राहक, तथा त्रिदोषनाशक ऐसा होकर वमन तथा रक्तविकार इनको नष्ट करे । और पथ्यकर तथा तृप्तिकारक है ।

अथ यवसक्तुगुणाः ।

यवसक्तुर्विलोलाक्षिसितानीरप्रसेवितः । हंतिपित्तंकफंवाले शीतलोदीपनोलघुःलेखनोरेचनोरूक्षोवल्योधातुविवर्द्धनः । मधुरोभेदनोरुच्यःक्षुत्तृषाश्रमनाशनः । वर्मदाहप्रहरणःकर्णनेत्रामयापहः । मार्गव्यायामखिन्नानांहितःपीतोनभक्षितः ॥

रालघ्व्योरूक्षाः संदीपनाहिमाः । स्वल्पमूत्रमलाबल्यादाह-
पित्तकफापहाः । छर्द्यतीसारतृण्मेदोरक्तमेहापहाश्चताः ॥

अर्थ–अब लाजा कहिये खील इनकी विधि और गुण कहते हैं. जिनके चावल होतेहैं; ऐसे शालिधानको छिलकासहित भूने जब भूनकर फूलजावें तब उनका छिलका दूर करे इनको लाजा अर्थात् खील कहतेहैं, यह मधुर, लघु, रूक्ष, दीपन, शीतल, किंचित् मूत्रकारक, बलकारी, तथा दाह, पित्त, कफ, इनको नाशक और वमन, अतिसार, मेदरोग, तृषा, रक्तप्रमेह, इनकोभी नाश करे हैं । दिवालीके दिन सर्व गृहस्थी इनसे लक्ष्मीका पूजन करतेहैं ।

अथ पृथुककृतिगुणाः ।

वालुकायांसुतप्तायामार्द्रान्छालीन्विभर्जयेत् शीघ्रमुष्णां-
स्ततः कुट्टेदुलूखलगतान्भृशम् । चर्पटास्तुयदातेस्युस्तदा
शूर्पेणशोधयेत् । अभावेचार्द्रशालीनामत्युष्णेंबुनिसंक्षिपेत् ।
शालीपर्य्युषितान्नीत्वाजलाद्वस्त्रेनिपीडयचच । निर्जलान्भ-
ज्र्यसंकुटचशूर्पेणैवचशोधयेत्।तेस्मृताः पृथुकाः कांतेगुरुवःक
फकारकाः । वातातंकहराश्चातिविशेषमपरंशृणु । सितादु-
ग्धान्वितावल्याः सारावृष्याश्चशुक्रलाः । वातघ्नाः कफलाः
प्रोक्ताः पृथुका पृथुकान्विते । वालुकायांपुनर्भृष्टाश्चिपिटास्ते
प्रफुल्लिताः । स्वादुपाकास्त्रिदोषघ्नाविशेषाद्रुचिकारकाः ॥

अर्थ–अब पृथुक कहिये चिरवा इनकी विधि तथा गुणदोष कहतेहैं । लाल सांटी चावल इत्यादि जातिके नवीन कच्चे चावल खिपडेमें वालु डालकर भूने, और गरमा गरमोंको ओखलीमें डालकर कूटे, कूटतेकूटते जब पतले चिरवा होजावें तब सूपमें डालके फटककर धर रक्खे, यदि कच्चे चावल न मिलें तो सूखेही चावलोंको अत्यंत गरम जलमें एक दिन भिजोवे दूसरे दिन काढकर कपडेमें दाबकर निचोडे फिर उनको भाडमें भुनायकर ऊपर कहीहुई विधिके अनुसार चिरवा करलेवे ये चिरवा जड, कफकारी, और वातनाशकहैं । दूध बूरेकेसाथ चिरवा खानेसे बलकारी, रेचक, वृष्य, धातुवर्द्धक, वातहर, और कफकारी होते हैं यादि ये चिरवा फिर वालूमें भूनके चुरमुरा करनेसे पाककालमें स्वादु, त्रिदोषनाशक, और विशेष करके रुचिकारक होतेहैं ।

शर्करासर्पिर्युक्तोग्रीष्मेऽतिपूजितः । शुक्रलश्चलघुर्बल्यःशीत-स्तृप्तिरुचिप्रदः ॥

अर्थ-गुड, इमली, घी इनके साथ सत्तू भक्षण करनेसे मूत्रकृच्छ्रका नाश करे । खांड और ईखके रसकेसाथ भक्षण करे तो उदावर्त्त दूर होय । दाखके साथ भक्षण करनेसे वातरक्तका नाश करे । दाख और शहतके साथ पित्तनाशक, केवल पानीमें मिलायकर भक्षण करनेसे कफनाशक होताहै । खटाई,घृत, खांड, ईखका रस, शहत, दाख, गुड, इनके साथ भक्षण करनेसे वातादि दोष और मल इनको यथामार्गकरके लानेवाला होताहै परंतु इस कहे हुए सर्व योगोंमें पानी मिलालेना उचित है । खांड तथा घीयुक्त सत्तू ग्रीष्मऋतुमें अतिश्रेष्ठ धातुवर्द्धक, लघु, बलकारी, शीतल, तृप्तिकारी, तथा रुचिकारी है ।

सक्तुसेवीजनः कांतेदशकर्माणिवर्जयेत् । तान्यहंतेप्रवक्ष्यामि शृणुकंजविलोचने । एकस्मिन्दिवसेसक्तून्भुक्त्वानाद्यात्पुनः क्वचित् । केवलान्नरदैश्छित्त्वासामिषान्पयसानिशि । भोजनांतेवहूँश्चोष्णमश्नन्कंनापिवेत्पृथक् ॥

अर्थ-हेकान्ते ! सत्तू खानेवाले मनुष्यको आगे कहेहुए दशप्रकारके आचरण वर्जित हैं । एक दिनमें एकवार सत्तू भक्षण करके फिर नहीं खाना चाहिये विना पानीके न खाय, दाँतोंसे चबायकर न खाय, मांसके साथ, दूधके साथ, रात्रिमें, भोजन करनेके पश्चात्, वहुत गरम करके, तथा सत्तू भक्षण करतेसमय पृथक् पानी न पीवे ।

अथ धानाकृतिगुणाः ।

धानाभृष्टयवागुर्व्योमेदश्छर्दिकफापहाः । लेखनादुर्जरारूक्षावातलास्तृप्तितृट्प्रदाः । मलवंधकराः ख्यातारूपशीलघनाग्रगे ॥

अर्थ-अव धाना (वोहरि) की कृति तथा गुण कहते हैं। भुनेहुए जौओंको धाना वा वोहरी कहतेहैं । ये धाना भारी होकर मेदरोग, वमन, कफ, इनका नाशक. लेखन कहिये शरीरके धातु तथा मलको शुष्क करके काढनेवाले. दुर्जर कहिये शीघ्र न पचे रूक्ष, वायुकारक, तृप्तिकर, तृषादायक और मलवंधक है ।

अथ लाजाकृतिगुणाः ।

शालयः सतुषाभृष्टाः प्रफुल्लानिस्तुषीकृताः । लाजाख्यामधु-

रालघ्व्योरूक्षाः संदीपनाहिमाः । स्वल्पमूत्रमलाबल्यादाह-
पित्तकफापहाः । छर्द्यतीसारतृण्मेदोरक्तमेहापहाश्वताः ॥

अर्थ-अब लाजा कहिये खील इनकी विधि और गुण कहते हैं. जिनके चावल होतेहैं; ऐसे शालिधानको. छिलकासहित भूने जब भूनकर फूलजावें तब उनका छिलका दूर करे इनको लाजा अर्थात् खील कहतेहैं, यह मधुर, लघु, रूक्ष, दीपन, शीतल, किंचित् मूत्रकारक, बलकारी, तथा दाह, पित्त, कफ, इनको नाशक और वमन, अतिसार, मेदरोग, तृषा, रक्तप्रमेह, इनकोभी नाश करे हैं । दिवालीके दिन सर्व गृहस्थी इनसे लक्ष्मीका पूजन करतेहैं ।

अथ पृथुककृतिगुणाः ।

वालुकायांसुतप्तायामार्द्राञ्छालीन्विभर्जयेत् शीघ्रमुष्णां-
स्ततः कुट्टेदुलूखलगतान्भृशम् । चर्पटास्तुयदातेस्युस्तदा
शूर्पेणशोधयेत् । अभावेचार्द्रशालीनामत्युष्णेंबुनिसंक्षिपेत् ।
शालीपर्य्युषितान्नीत्वाजलाद्वस्त्रेनिपीडयच । निर्जलान्भ-
र्ज्यसंकुटयशूर्पेणैवचशोधयेत् तेस्मृताः पृथुकाः तेगुरुवःक-
फकारकाः । वातातंकहराश्चातिविशेषमपरंशृणु । सितादु-
ग्धान्वितावल्याः सारावृष्याश्चशुक्लाः । वातघ्नाः कफलाः
प्रोक्ताः पृथुका पृथुकान्विते । वालुकायांपुनर्भृष्टाश्चिपिटास्ते
प्रफुल्लिताः । स्वादुपाकास्त्रिदोषघ्नाविशेषाद्रुचिकारकाः ॥

अर्थ-अब पृथुक कहिये चिरवा इनकी विधि तथा गुणदोष कहतेहैं । लाल साँटी चावल इत्यादि जातिके नवीन कच्चे चावल खिपडेमें वालु डालकर भूने, और गरमा गरमोंको ओखलीमें डालकर कूटे, कूटतेकूटते जब पतले चिरवा होजावें तब सूपमें डालके फटककर धर रक्खे, यदि कच्चे चावल न मिलें तो सूखेही चावलोंको अत्यंत गरम जलमें एक दिन भिजोवे दूसरे दिन काढकर कपडेमें दावकर निचोडे फिर उनको भाडमें भुनायकर ऊपर कहीहुई विधिके अनुसार चिरवा करलेवे ये चिरवा जड, कफकारी, और वातनाशकहैं । दूध बूरेकेसाथ चिरवा खानेसे बलकारी, रेचक, वृष्य, धातुवर्द्धक, वातहर, और कफकारी होते हैं यदि ये चिरवा फिर वालूमें भूनके चुरमुरा करनेसे पाककालमें स्वादु, त्रिदोषनाशक, और विशेष करके रुचिकारक होतेहैं ।

अथौलंबीकृतिगुणाः।

गोधूमान्वायवानार्द्रानर्द्धपक्कान्समाहरेत् । सनालान्कूर्चिकां बद्धानालेग्राह्यविभर्जयेत् । तृणप्रज्वालितायांचज्वालायामतियत्नतः । तन्मंजरीश्च्युतान्नासात्तस्मिन्नग्नौचपूरयेत् । क्षणादुद्धृत्यसंमर्द्यशूर्पेणचविशोधयेत् । सौलंबीवातपित्तघ्नी गुर्वीश्लेष्मबलप्रदा ॥

अर्थ-अब ओलंबी कहिये कच्चे नाजको भूनकर जो पदार्थ बनता है उसके गुणदोष कहते हैं। गेहूं किंवा जौ अधपके और हरे जडसहित ले उनकी गुच्छी बांध जड पकडके युक्तिसे भूने भुनते भुनते जब वो जडसे पजरकर गिरपडें उनको थोडी देर उन्हीं तिनकोंमें रहने देवे फिर काढकर हाथोंसे मींड मसलकर उन दानेनको सूपसे न्यारे फटक लेवे, इसको संस्कृतमें ओलंबी कहते हैं यह ओलंबी वातपित्तहर, भारी, कफकर्ता, और बलदायक हैं।

अथ होलककृतिगुणाः।

समूलान्यर्द्धपक्कानिशिंविधान्यानिचाहरेत् । तृणाग्नौभर्जयेत्तानितदग्नौचप्रपूरयेत् । क्षणादुद्धृत्यशूर्पेणशोधयेद्धोलको मतः । होलकोदुर्जरः शीतोवातमेदःकफंकरः । श्रमघ्नश्चगुरूरूक्षोमलावष्टंभकारकः । यद्यद्धान्यकृतश्चायंतत्तद्धान्यगुणोभवेत् ॥

अर्थ-अब होलक कहिये होरा इनकी विधि तथा गुणदोष कहते हैं। शिंविधान्य कहिये चूँटआदि अधपके लावे फिर तिनको इकट्टे कराय ऊपर कहे प्रमाण उनको भूनकर एक क्षण उसी तिनकाकी आगमें रहने देवे फिर निकालकर सूपसे फटक भूनेहुए दानेनको इकट्टे करलेवे,इनको होलक कहतेहैं और भाषामें होरा कहते-हैं। ये होरा दुर्जर, शीतल, तथा वात, मेद, कफ, इनको उत्पन्न करनेवाले, श्रमनाशक, भारी, रूक्ष और मलका अवरोध करनेवाले इसप्रकार जिसजिस धान्यके होलक कहिये होरां करेजावें उनके गुण उसी उसी धान्यके समान होते हैं।

अथ चणकगुणाः संस्कारभेदात् ।

वाजिमंथोहिमोऽपक्कोरोचनस्तर्पणस्तथा । तृषादाहाश्मरीमेदोदोषघ्नश्चकषायकः।ईषत्कफकरोऽकालेशुक्लः परिकीर्तितः।

स्वच्छांगारैश्चसंभृष्टस्तैलभृष्टश्चतद्गुणः । आर्द्रभृष्टोबलकरोरोचनश्चप्रकीर्तितः।शुष्कभृष्टोऽतिरूक्षः स्याद्वातकुष्ठप्रकोपनः । स्विन्नः पित्तकफौहन्याद्गुरूरूक्षश्चवातलः। आर्द्रोऽतिकोमलो रुच्योरक्तपित्तहरोहिमः ॥

अर्थ–अब संस्कारका भेद करके चनाके गुणदोष कहतेहैं । कच्चे चना शीतल, रोचन, तथा तृप्तिकारीहैं । तृषा, दाह, पथरी, मेदरोग, इनके नाशकहैं, तथा कषैलेहैं । इसीप्रकार किंचित् कफकर और वीर्यवर्द्धकहैं । ये चने अंगारोंपर भुनेहुए अथवा तेलमें भूने होयँ तोभी पूर्वोक्तगुणकारी जानने । यदि ये चना गीले भूने तो बलकारी, रुचिकारक होतेहैं । यदि वालूमें भूनेजांय तो अति रूक्ष और वातपित्त इनको कुपित करनेवाले जानने । सीजे हुए चना पित्त कफ इनके नाशक, भारी, रूक्ष तथा वातलहैं और गीले होनेसे हरे और अति नम्र होयँ तो रुचि करें एवं रक्तपित्तनाशक जानने ।

अब कुंकुमौदनकृतिगुणाः ।

रसिकेशरसज्ञोसिब्रूह्यतोमधुराप्रिय । कथंकुर्यामहंकांतत्वत्प्रियंकुंकुमौदनम्। शृणुलोलाक्षिवक्ष्येऽहंकुरुत्वंमधुराधरे । अर्पयस्वारविंदाक्षिलक्ष्मीकांतायसत्वरम्।प्रस्थैकंतंदुलानांभोजीर्णानामलिकुंतले । सूक्ष्माणामाढकेनीरेपाचयस्वशनैःशनैः । अर्धपक्वेचविस्राव्यततश्चेमंविधिंकुरु । तंडुलांस्तान्बृहत्पात्रे कृत्वादर्व्याप्रसार्यच।बादामंकुडवंद्राक्षाकुडवैकंसुशोधितम् । सार्द्धप्रस्थांसितांशुद्धांकुडवैकंनिकोचकम् । कुंकुमंनीरसंपिष्टं सर्वंयत्नाद्विमिश्रय । भांडमन्यत्ततश्चुल्ह्यांतप्तंकृत्वाघृतंक्षिप । सार्द्धप्रस्थंघृतेतप्तेकोलंदेवसुमंक्षिप । क्षणमाच्छाद्यचोद्घाट्य यद्द्रव्यंतंदुलादिकम् । तत्सर्वंचघृतेतस्मिन्क्षिप्त्वासंचाल्यझंपय । ततःशीघ्रंसमुत्तार्यनिर्धूमांगारकेन्यस । यावन्मृदुततश्चान्येविस्तीर्णेभाजनेकुरु। तत्रपुष्पसितांकांतेकुडवैकांकणाकृतिम् । कर्षमेलारजःकोलंलवंगंचाविमिश्रय। इदंबल्यंस्वादुवृष्यंपुष्टिदंकुंकुमौदनम् ॥

अर्थ-अब केशरिया भातकी विधि तथा गुणदोष कहतेहैं । एक प्रस्थ कहिये ६४ तोले बहुत उत्तम बारीक और पुराने चावल लेकर स्वच्छ धोयकर २५६ तोले पानीमें सिजावे, जब अर्धपक्क होजावें तब उनका मांड निकाल डारे और उसको परातमें करके कलछीसे बराबर फैलाय देवे, फिर इसमें १६ तोले बादामकी मिंगी-गिरी १६ तोले, दाख १६ तोले, पिस्ते १६ तोले, शुद्ध सपेद बूरा ३२ तोले और ४ तोले पानीमें घुटीहुई केशर १ तोला, इन सबको एकसाथ समान डालके फिर उलट पलट एकसा मिलाय देवे, फिर एक बडा बर्तन चूल्हेपर चढाय उसमें ९६ तोले घी डालके अच्छीरीतसे तपावे जब खूब गरम होजावे तब ६ मासे कुटी हुई लौंग डाल थोडी देर ढक देवे फिर उसमें वो सब सामान मिलाहुआ भात डालके कलछीसे चलाय देवे और ढकनासे ढक देवे, फिर जल्दी उतार अंगारोंपर धरदेवे जब चावल सीज-जावें तब एक बडी परातमें निकाल लेवे और उसमें कंदका चूरा १६ तोले इला-यचीके दानेका चूरा १ तोला और लौंगका चूरा आधे तोला मिलावे, इसे केशरिया भात कहते हैं । यह बलदायक, स्वादु, वृष्य और पुष्टिकारक है ।

अथेक्षुरसौदनकृतिगुणाः ।

तंदुलानांसुधौतानांप्रस्थैकमैक्षवेरसे । पाचयत्वंवरारोहेपक्के तूत्तारयेद्द्रुतम् । कुडवैकंघृतंतत्रकर्षमेलाभवंरजः । मिश्र यित्वाततः कोष्णंभूमिजापतयेऽर्पय । इदंबल्यंचवृष्यंचरु-च्यमिक्षुरसौदनम् । विश्वचूर्णयुतंचेत्स्यादामदोषहरंभवेत् ॥

अर्थ-अब इक्षुरसौदनकी कृति कहते हैं । उत्तम धुलेहुए चावल ६४ तोले लेकर ईखके रसमें सिजावे और उसमें १६ तोले घी तथा १ तोला इलायचीके दानेकी चूर मिलावे इसको इक्षुरसौदन कहतेहैं । यह बलकर, वृष्य, तथा रुचिकारीहै । यदि इसमें सोंठका चूरा मिलाय दिया जाय तो यह आमदोपनाशक होता है ।

"अकबरी-चावलका आटा१ शेर, घी,तीनपाव, चीनी१ सेर, दही पावभर प्रथम आध सेर घीको किसीपात्रमें हाथोंसे खूब मथो जब मथतेमथते सपेद होजावे तब उसमें आटा और दही मिलाकर सानकर चार गोला बनाकर पानीमें रक्खो जब वह पानीमें तरने लगें तो जलसे निकाल डेढ डेढ तोलेके अन्दाजकी टिकरी बनावे फिर घी मधुरी आंचपर चढावे जब तयार हो जावे तब उस टिकरीको छोडदेवे और बडी सावधानीसे टिकरीको भूने आंच नेकभी तेज होजायगी तो मठरी करडी प-डजावेगी इसीसे मध्यम आंचपर भूनकर साढेतीन तारी चासनीमें भिगोकर निका-ल ले यह परमोत्तम बालूसाई बनेंगे" ।

"थालीपीट दक्षिणी-गेहूं १ सेर, बाजरी १ सेर, चनाकी दाल २॥ पाव उडद की दाल आध सेर, यह सब पृथक् पृथक् भुनवाकर पिसवाओ फिर धनियाँ जीरा मिरच इनके चूर्णको कुछ थोडा थोडा भून पीसकर उसी चूनमें मिलाय देउ, हींग और निमकभी अनुमानमाफिक मिलाओ पीछे दूध या जलमें रोटीके आटेकी भाँति सानकर कढाईमें घी चढाय गरम होनेपर उसकी हथेलीसे भारी रोटीकी भांति बनाकर डालदेवे जब केसरके समान लाल होजावे तब निकाललो" ।

अथ शाककृतिमाह ।

शाकपाकविधिंवक्ष्येशृणुपाकविशारदे । पत्रंपुष्पंफलंनालं कंदंसंस्वेदजंतथा । शाकंषड्विधमुद्दिष्टंगुरुविद्याद्यथोत्तरम् ॥

अर्थ-हे पाकविशारदे ! शाककी विधि कहता हूं तू सुन-शाक छः प्रकारका है । जैसे पत्र, पुष्प, फल, नाल, मूल और संस्वेदज, तिनमें पत्रका चौलाई, बथुआ आदि, पुष्प केलाका फूल अगस्तियाका फूल इत्यादि, फल-बैंगन करेला आदि, नाल-मूली आदि, कंद-जमीकंद अरई आदि, संस्वेदज छतोना आदि, इन शाकोंमें अनुक्रमसे एकसे दूसरा भारी है ।

दीपनार्थंहिपत्रेषुजीरकंलशुनंमतम् । रक्तामरीचिकाचापिरामठंवाविचक्षणे । पुष्पेषुराजिकाहिंगुजीरकंचरसोनकम् । मरीचिकातथारक्तादीपनेमदिरेक्षणे । चतुर्ष्वपिफलाद्येषुपृथ्वीकाऽजाजिमेथिकाः । रसोनंराजिकाहिंगुवातुरक्तामरीचिका ॥

अर्थ-पत्रशाक अर्थात् पालिक, मेथी, चौलाई, आदिमें जीरा, लहसन, लाल मिरच तथा हींगका छौंक देवे । फूलके शाकमें राई, हींग, जीरा, लहसन तथा लाल मिरचका छौंक देवे । और फलादिक चार शाकोंमें कलौंजी, जीरा, मेथी, लहसन, राई, हींग तथा लालमिरचका छौंक देना चाहिये ।

धूपनार्थंघृतंश्रेष्ठंतैलमेवाधमंमतम् । लवणंहिपलंप्रस्थेवेसवारमुदुंवरम् । तदप्येलादिकंवापिसौरभंचयथारुचि । टंकैकारजनींक्षिप्त्वासाम्लंवानम्लमेवच । सगुडाम्लंतुवाकांते लसन्नीलनिचोलके । सजलंनिर्जलंवापिपाचयेन्मंदवह्निना ॥

अर्थ-छौंक देनेमें घी उत्तम है । और तेल अधम है । ६४ तोले सागमें ४ तोले निमक, एलादि वेसवार अथवा सौरभ वेसवार इनमेंसे जो अपनेको प्रिय होय

वो १ तोले, हलदी ३ मासे डाले, इस शाकमें खटाई डाले अथवा विना खटाईकी अथवा खटाई और गुड डालके रसेदार या गाढी जैसी इच्छा हो ऐसी करे ।

अथ सौरभमाह ।

षट्पलंधान्यकंप्रोक्तंराजिकाश्चाद्रिकार्षिकाः । त्रिपलंरक्तमारिचंत्रिकर्षंवेल्लजंमतम् । निशात्रिकार्षिकाप्रोक्ताकंकोलंदेवपुष्पकम् । शिलाजंत्वक्चिरफलंप्रत्येकंचार्द्धकार्षिकम् । नारिकेलफलंशुष्कंबहुशःसूक्ष्मखंडितम् । हिंगुशाणमितंग्राह्यंकिंचिदेरंडजात्वचा । तैलभृष्टंचतत्सर्वंपाषाणेसूक्ष्मपेषितम् । सौरभाख्यमिदंप्रोक्तंवृंताकादिषुयोजयेत् ॥

अर्थ-धनियाँ २४ तोले, राई २ तोले, मिर्च १२ तोले, हलदी २ तोले, कंकोल, लोंग, पत्थरका फूल, दालचीनी, चिरफल, ये प्रत्येक आधे आधे तोला लेवे एक सूखेगोलेका बारीक टुकडा, हींग ३ मासे और थोडी अंडकी जडकी छाल, इन सबको तेलमें तलके महीन पीसे इसको सौरभ अथवा गरम मसाला कहते हैं। यह बैंगन आदि सागमें डालना चाहिये ।

अथैलादिकवेसवारमाह ।

एलात्वक्पत्रमरिचश्रीसुमश्यामजीरकैः ।
वेसवारःसधान्याकैरेलादिःकथ्यतेबुधैः ॥

अर्थ-इलायची, दालचीनी, तेजपात, मिरच, लौंग, काला जीरा और धनियाँ, इन सबको पीस बारीक चूर्ण करे इसको एलादि वेसवार कहते हैं ।

अथ केसरादि वेसवार ।

केशरत्रिकटुधान्यजीरकैस्त्वक्तिलत्रुटिशताह्वपत्रकैः । कासमर्ददलधर्मपत्तनैरामठारुणमरीचिकान्वितैः । दाडिमीरजनिनालिकेरकैराजिकातरुणमूलमासुमैः । चूर्णितैरपिनवाज्यभर्जितैर्वेसवारइतिकेशरादिकः ॥

अर्थ-अब केशरादि वेसवार कहते हैं । नागकेशर, सोंठ, मिरच, पीपल, धनियाँ, जीरा, दालचीनी, तिल, इलायची, सौंफ, तेजपात, कसोंदीके पत्ते, मिरच, हींग, लाल मिरच, खट्टा अनारदाना, हलदी, नारियलका गोला, राई, अंडकी जड और लौंग, ये पदार्थ घीमें भूनकर चूर्ण करे । इसको केशरादि वेसवार कहतेहैं ।

उक्तेष्वपिचशाकेषुपुष्पादिष्वेवयोजयेत् ।
वेसवारान्भवेत्तेनशाकंदोषविवर्जितम् ॥

अर्थ-ऊपर कहे पुष्पादि शाकोंमें इनमेंसे कोईसा एक मसाला डाले तो साग निर्दोष होय ।

विशेषंचप्रवक्ष्यामिशृणुपद्मविलोचने। वृंताककारवेल्लादिफल मर्द्धंविदीर्यच । तत्रेदंपूरयेत्सर्ववक्ष्यमाणंनिबोधमे । रसोन-स्यपलंहिंगुभर्जितंकोलसंमितम्। धान्याकंद्विपलंभृष्टंजीरक-स्यचतिंदुकम् । अम्लवर्गपलैकंचपलारक्तांमरीचिकाम् । ना-तिसूक्ष्मीकृतंसर्वंकर्षाष्टलवणान्वितम् ।वृंताककारवेल्लादिद्विप्र-स्थेपूरयेदिदम् । ततःसूत्रेणसंवध्यघृतेतैलेऽथवाप्रिये । युक्त्या संपाचयेच्छुष्कंरसार्थंवाजलान्वितम् ॥

अर्थ-अब सागकी विधि कुछ कहतेहैं । बैंगन, करेला, इत्यादि फल खडे एक तरफसे चीरकर उनमें उक्त मसालेको भरे लहसन ४ तोले, भुनी हींग ६ मासे, भुनाहुआ धनियाँ ८ तोले, भुना जीरा एक तोले, अमचूर ४ तोले लाल मिरच ४ तोले, तथा निमक ८ तोले, ये सब पदार्थ कुछ बारीक कूटकर १२८ तोले करेलेमें यह कुटा मसाला भरे, फिर डोरेसे उनको बांध घीमें अथवा तेलमें तले यदि रसेदार बनाने होय तो तलकर फिर जल डालके सिजावे ।

पटोलादिफलेष्वेवमिदंसंपूर्यपाचयेत् ।
पाचनंदीपनंतत्स्याद्भोजनेसुरुचिप्रदम् ॥

अर्थ-जो विधि करेला बैंगन आदिमें मसाले भरने आदिकीहै उसी रीतिसे परवल आदिमें मसाला भरके सिजानेसे दीपन, पाचन तथा रुचिकारी होताहै ।

पर्णशाकेविशेषंचकंजास्येशृणुसांप्रतम् । येनस्याद्रुचिरंस्वादु भोजनेप्रीतिवर्द्धनम् । रामठंदीपनेदद्यात्तथारक्तांमरीचिकाम्। रसोनंचपलांडुंवानिःक्षिप्यच्छादयेत्ततः । धूम्रंदृष्ट्वासमुद्धा-टचशाकंनिःक्षिप्यछादयेत् । क्षणादुद्धाटचप्रस्थंचेच्छाकंपट्ट पलार्द्धकम्। यथारुचितुवाकांतेधान्यकादिरजःक्षिपेत् । तथा

कुस्तुंवरुंचार्द्राःक्षिपेज्ज्वालामरीचिकाः । हरिताअरुणावा-
पिकृताःशस्त्रेणखंडशः । अम्लवर्गंचनिःक्षिप्यपक्कमुत्तारयेच्चहि ॥

अर्थ-अव पर्णशाक कहिये पत्ताके साग जिसप्रकार करनेसे रुचिकारी और स्वादु होवे ऐसे प्रकारकी विशेषविधि कहते हैं । हींगका छौंक देकर उसमें मिरच, लहसन और कांदा आदि गेर उस पात्रका मुख ढकदे, फिर थोडी देरमें उघाड ६४ तोले सागमें २ तोले अथवा रुचिप्रमाण निमक डाले, तथा धनियाँ आदिका चूरा, कोथमीर, हरी अथवा सूखी, लाल मिरचके टुकडे और अमचूर आदिकी खटाई डाले जब पक्क होजावे तब उतार ले ।

अथ हलुवादिकानाह ।

हलुवाबरफीपेडालोकेख्याताःसुशोभनाः ।
तेषांकृतिमहंवक्ष्येशृणुकुंजरगामिनि ॥

अर्थ-हे गजगामिनी प्रिये हलुआ, बर्फी और पेडा ये पदार्थ लोकमें प्रसिद्ध हैं इसीसे उनके बनानेकी विधि और गुणदोष कहते हैं ।

अथ हलुवाकृतिमाह ।

गोधूमान्प्लावयेन्नीरेत्रिदिनंवाचतुर्दिनम् । ततःकराभ्यांसंमर्द्य
पृथक्कृत्वाजलाच्चतान् । तन्नीरंवाससागाल्यनिःशेषंस्थापये-
त्ततः । स्थिरीभूतेजलंयत्नात्पत्रान्निष्कासयेच्छनैः । अन्य-
मंबुविनिःक्षिप्यस्थिरीभूतेतुपूर्ववत् । जलंनिष्कासयेदेवंया-
वद्यातिविगंधताम् । तावत्पुनःपुनर्नीरंदत्वानिष्कास्यशोध
येत् । पिष्टवद्यद्भितत्पात्रंभवेत्तत्सत्वमीरितम् ॥

अर्थ-गेहूं तीन किंवा चार दिन पानीमें भिगोवे फिर उनको हाथोंसे मसलकर छिलका दूर करे और उसके सत्वको वस्त्रसे छानलेय, जब वो छनेहुए पानीका गाद नीचे वैठजाय और जल तरने लगे तव उस जलको नितारकर फेंक देवे, और नया पानी डारके हाथसे चलाय देवे जब गाद वैठजाय तव ऊपरके पानीको फेंकदेवे इसप्रकार उस गेहूंके चूनकी वास जवतक रहे तवतक धोता रहे जब जाने कि अब

१ अदरखका हलुआ-अदरख १ सेर, घी ॥ सेर, चीनी १॥ सेर, मैदा १ छटांक प्रथम अदरखको उबाल उसी जलमें पीस (कि जिसमें उबाला जायगा) मैदा मिलाकर आंचपर चढाकर भूनो पश्चात् १ तारबंध चासनीमें छोडदो और नरम आंचपर भलेप्रकार पचाओ जब पक्क होजावे तो उसको उतारलो ।

इसमें बास नहीं है तब उसको निकाल धूपमें सुखाय चूर्ण करके धर रक्खे इसको गेहूंका सत्व और उर्दू बोलीमें इसीको "निशास्ता" कहते हैं ।

सार्द्धभागांहिसत्वस्यसितांनीरेसमेपचेत् । द्वितारेचासितापाकेतत्सत्वंचशनैःशनैः । क्षिपन्संचालयेद्दर्व्यायावद्गाढंभवेत्प्रिये । ततस्त्वाज्यंक्षिपन्शुक्त्याचालयित्वातिवेगतः । सिद्धंज्ञात्वासमुत्तार्यघट्टयेच्चभृशंदृढम् । तत्रबादामखंडानिचैलाचूर्णादिकंक्षिपेत् । हलुवेतिजनैःख्यातःपौष्टिकोयंबलप्रदः । गुरुः श्लेष्मकरोहंतिवातपित्तेरुचिप्रदः ॥

अर्थ—सत्वसे ड्योढी खांड लेकर उसमें बराबरका पानी मिलाय उसकी चासनी करे जब दुतारी चासनी होजावे तब पूर्वोक्त सत्वको थोडा थोडा डालता जाय और चलाता जाय जबतक गाढा न होय, जब गाढा होने लगे तब उसमें थोडा थोडा घी डाल शुक्तिसे जल्दी जल्दी चलावे जब तयार होजावे तब चूल्हेसे उतार-लेय, खूब उलटे पलटे जब विशेष गाढा होय तब बादामके टुकडे और इलायची-दानेका चूरा मिलावे इसको हलुआ कहते हैं । यह हलुआ पौष्टिक, बलकारी, भारी, कफकारी वातपित्तनाशक तथा रुचिकारी है ।

अथ पेडाकृतिगुणाः ।

दुग्धकिट्टेसितांक्षिप्यषोडशांशंचभर्जयेत् । यावच्छुष्कंभवेत्तावद्घृतमीषदपिक्षिपेत् । ततःकिट्टसमांकिट्टेशुभ्रांपुष्पासितांप्रिये । मिश्रयित्वाचतस्याशुरचयित्वाहिपिंडकान् । लोकेपेडाइतिख्यातावातपित्तहरामता । धातुसंवर्द्धनाः कांते वृष्याबल्याःकफप्रदाः ॥

अर्थ—अब पेडा बनानेकी विधि और गुणदोष कहते हैं । दूधके खोहामें खोहा-का ६ वाँ हिस्सा बुरा मिलाय भुनावे भूनतेसमय थोडा घी डाले जब अच्छी रीतिसे भुनजावे तब उसकी बराबरका बुरा मिलाय उसके गोल गोल पेडे बनावे ये पेडा वातपित्तनाशक, धातुवर्द्धक, वृष्य, बलकारी और कफकारक है ।

भुनीमलाई—दूध ४ शेर, चीनी ॥ शेर, घी पावभर, प्रथम दूध कढाईमें रख आगपर ओंटाओ जब गाढा होजावे तब गरमागरमकोही मथानियासे उसी कढाईमें धीरेधीरे मथो इसप्रकार मथनेसे अत्यंत झाग निकलेंगे फिर उस दूधके

फेनसमेत अंगारोंपर रखदो थोडी देरमें उस दूधमें गाढी मलाई पडजावेगी उसको झरनेसे थाली आदिमें उतारलो फिर उसको छुरीसे कतरकर चौकोन बनाओ पश्चात् कढैयामें घी भर उसको आगपर चढाओ जब घी खूब गरम होजावे तब उसमें उस मलाईको छोडदो जब भुनजावे तब उतारकर एकतारी चासनीमें छोडदो थोडी देरमें किसी पात्रमें निकाललो फिर इसके ऊपर छोटी इलायचीका चूरा बुरकादेवे तो परम स्वादिष्ठ बने ।

मठरी (सकलपारे)–मैदामें घीका मोयन दे जीरा, अजमायन, हींग और निमक मिला जलसे खूब करडा सानलो फिर चकलेपर बेलकर चौखूटे कतर ले पश्चात् घीकी कढाईमें छोडदो और मंद मंद आंचसे सेको और उलटते रहो जब सिककर लाल रंग होजावे तब उतारलो ।

यदि चुटकीसे इसी मैदाको तोड तोड कर और अँगूठेसे दबा दबा कर घीमें छोड देवे तो इनकोभी मठरी कहतेहैं परंतु ये छःमासेके अनुमान होनी चाहिये और इसी मैदाकी लोई तोड पूडीके माफिक बेलकर घीमें सेकनेसभी मठरी कहातीहै ।

अथ बर्फीकृतिगुणाः ।

दुग्धकिट्टेसितांक्षिप्यषोडशांशघृतान्विताम्।भर्जयेल्ललनेताव-
द्यावच्छुष्कतरंभवेत् । किट्टतुल्यांसितांशुद्धांपाचयित्वावि-
धानतः । त्रितारेचापितत्पाकेतत्किट्टंमिश्रयेत्ततः । समुत्तार्य
द्रुतंदर्व्यावट्टयेच्चातिवेगतः । यदापाकेकणान्दृष्ट्वातदाशीघ्रं
विनिःक्षिपेत्। घृताक्तेविस्तृतेपात्रेयुक्त्यातंचप्रसारयेत्।द्व्यंगु-
लोत्सेधकंशीतंकृत्वाखंडान्ययेप्रिये। चतुष्कोणानिखंडानिब-
रफीतिजनैरियम् । विख्यातापौष्टिकीवृष्यावल्यादोषत्रयापहा॥

अर्थ–अब बर्फीके बनानेकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । दूधके खोहामें उस खोहाका १६ वाँ हिस्सा बुरा और थोडा घी डालके भुने फिर इसके समान खाँडकी तितारी चासनी कर उसमेंसे यह भुनाहुआ खोहा डाले और कौचासे खूब चलावे जब चलाते चलाते उसमें रवाके समान कण दीखने लगे तब एक परात घी चुपडीमें निकाल समान करदेवे, और शीतल होनेपर इसके चौकोने टुकडे कतर लेवे, इसको वर्फी कहतेहैं । यह बर्फी पुष्टिकारी, वृष्य, बलकरता, और त्रिदोषनाशकहै । जैपुरमें इसमें कंदके टुकडे और सुगंधित वस्तु डालतेहैं और इसको 'कलाकंद' कहतेहैं ।

मीठी पूरी–मैदा १ सेर, घी डेढपाव, मिश्री पावभर, पिस्ता आधपाव, बदाम आधपाव, अदरखका रस २ तोले, दालचीनी दो मासे, लौंग २ मासे प्रथम मिश्रीका रवा पीसकर उसमें बादाम और पिस्तेके टुकडे टुकडे करके और लौंग तथा अदरख-का रस मिलाकर तयार रक्खो फिर मैदेमें आधपाव घीका मोयन देकर मलके गरम जलसे सानलो जब अच्छीरीतिसे सानलो तब चूल्हेपर कढाई चढाय घी छोंडदो, फिर उस सनीहुई मैदाकी लोई तोड उस लोईके भीतर उक्त मिश्री मेवा आदिके चूं-र्णको भर कचोरीके सदृश बेलकर घीमें छोडदो जब सिकजावे तब उतारलो ।

अमानुषीयभक्षण ।

अथ पलगर्भापूलिका ।

पलंनिरास्थिप्रस्थैकंकृतंसूक्ष्मतरंनवम् । पलैकमार्द्रकक्षोदमाम्र-माम्रस्यचूर्णकम् । भृष्टधान्यरजश्चाम्रमर्द्धाम्रंचरसोनकम् । सा-र्द्धाम्रंलवणंप्रस्थंघृतंटंकंमरीचकम् । समितांप्रस्थैकमितांचतु राम्रंपलांडुतः । कर्षमेलादिकंसर्वंवेसवारंसमाहरेत् । चु ल्यांतत्तेक्षिपेद्भांडेघृतस्यकुडवत्रयम् । घृतेतत्तेक्षिपेत्तत्रसूक्ष्मं खंडचपलांडुकम् । ताम्रीभूतेपलांडौचपलंक्षिप्यविचालयेत् । शृंगवेरंचलवणमाम्रचूर्णंरसोनकम् । मरिचंवेसवारंचधान्यकं पाचयेच्छनैः । शुष्केमांसरसेनीरंक्षिपेत्तत्रानुमानतः । केशु ष्केचपलेपक्वेकुर्याच्छीतंमनोहरे । ततोघृताक्तांसमितांमर्दये-दंबुनाभृशम् । तस्याअर्द्धपलंनीत्वाकूपिकांरचयेत्प्रिये । त-न्मध्येपूर्येतन्मांसंमुद्रयित्वाचवेल्लयेत् । तांपूलिकांपचेदाज्ये पलगर्भाहिसास्मृता । बल्यापुष्टिप्रदावृष्यारुच्यावातहरामता ॥

अर्थ–अब यहाँसे आगे राक्षसीभक्षण पदार्थ लिखते हैं तहां पलगर्भा पूडीकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । हड्डी रहित उत्तम मांस शस्त्रकरके प्रथम बारीक कराहुआ ६४ तोले लेय, बारीक कुटाहुआ अदरख ४ तोले, अमचूर ४ तोले, भुनाहुआ धनियेका चूरा ४ तोले, लहसन २ तोले, नीमक ६ तोले घी ६४ तोले, और एलादिक वेसवार एक तोले ये सब समान तयार करके फिर एक पात्र चूल्हेपर धर नीचे आग जलावे जब पात्र गरम होजावे तब उसमें ४८ तोले घी डालके तपावे फिर उसमें कांदेके टुकडे करके गेरे जब वो लाल होजावें तब उसमें अदरखआदि जो ऊपर कह आएहैं वो सर्व

वस्तु मांसमें मिलायके गेरे और कलछीकी दंडीसे बराबर चलाय देवे, जब मांसका रस सूखजावे तव उसमें अनुमानमाफिक जल गेरके सिजावे; जब पानी सूखके मास पकजावे तव उसको चूल्हेसे उतार लेवे फिर गेहूंकी मैदाको उसन उसकी दो तोलेकी लोईमें वो मांस भरके चकला वेलनसे वेलनकर पूरी करे, उसको घीमें सेके तो इसको पलगर्भा पूडी कहते हैं । यह वलकारी, पुष्टिकारक, वृष्य, रुचिकर और वात-नाशक है ।

अथ मांसकृतिगुणाः ।

प्रस्थैकमामिषंसर्पिःसद्यस्कंचशरावकम् । कुडवैकःपलांडुः-स्याद्विपलेचरसोनतः। पलमेकंचलवणंशृंगवेरंपलंमतम् । द-धिप्रस्थार्द्धकंकांतेसंतानीतुचतुःपला। द्राविडीश्रीप्रसूनंचका-श्मीरंधर्मपत्तनम् । पृथक्टंकमितंचैववादामंकुडवोन्मितम् । मांसखंडानिसंक्षाल्यत्रिधानीरेणयत्नतः । लवणंशृंगवेरांवुद-धितत्रविनिःक्षिपेत्। घृतंभांडेसुसंताप्यतत्राक्षिस्वापलांडुकम्। ताम्रवर्णंचतदृष्ट्वातदामांसादिकंक्षिपेत । भर्जयेद्भर्जनेकाले क्षिपेन्नीरंरसोनजम्। किंचित्किंचिन्मुहुस्तावद्यावत्स्याद्घृत-शेषकम्।लवंगैलामरीचानांकिंचिन्नीरंततःक्षिपेत् । आमिषंच मृदुंदृष्ट्वावादामपिष्टकंक्षिपेत् । संतानिकांचतत्सार्द्धंक्षिपेदंवु-रुहेक्षणे । पंचनिंवुकनीरेणसंपिष्टंकुंकुमंक्षिपेत् । अंगारेषुक्षणं न्यस्यसमुत्तार्यनिषेवयेत् । इदंवल्यंचवृष्यंचगुरुकांतिकफ-प्रदम् । वातघ्नंरुचिकृत्कांतेकिंचित्पित्तकरंमतम् । सूपशास्त्र-विधानज्ञैःकीर्तितंललनोत्तमे ॥

अर्थ-अव मांसकी विधि और गुणदोष कहते हैं । मांस ६४ तोले, घी ३२ तोले, प्याज १६ तोले, लहसन ८ तोले, निमक ४ तोले, अदरख ४ तोले, दही ३२ तोले, दूधकी मलाई १६ तोले, इलायचीके दाने तीन मासे, लौंग तीन मासे, केशर ३ मासे मिर्च ३ मासे, और वादाम १६ तोले, ये सव वस्तू तयार करके धर रक्खे, फिर मांसके टुकडेनको पानीसे तीन दफे धोय उनमें निमक, अदरखका रस और दही मिलायकर धर रक्खे, फिर चूल्हेपर देग चढाय उसमें घी डालके तपावे, जव घीमें धुँआ उठने लगे तव लहसनके टुकडे गेरे जव वो लाल होजावे तव मांस गेरके भूने,

भूनते समय उसमें थोडा थोडा लहसनका रस वारंवार डारे जबतक घी शेष रहे तब-तक चलावे फिर लौंग, इलायची, मिर्च ये पानीमें पीस उसमें गेरे और सिजावे तब मांस सीजकर नरम होजावे तब बादाम पीसके और उसमें मलाई मिलायके डाले, पीछे पांच नींबुओंका रस काढके उस रसमें केशर पीसके उस मांसमें मिलावे फिर अंगारोंपर आध घडी धरकर उतार लेवे यह मांस बलकारी, वृष्य, भारी, कांति और कफ करता, वातनाशक, रुचिकर और किंचित् पित्तकारी है ।

अथान्यप्रकारमाह ।

प्रस्थैकमामिषंसद्यःक्षालयेदंबुनात्रिधा । कुडवैकंघृतंभांडेतापयेत्तत्रनिःक्षिपेत् । पलांडुंद्विपलंक्षुण्णंतत्पक्केचामिषंक्षिपेत् । टंकमेकहरिद्रातोलवणंपलसंमितम् । भर्जेत्यस्मिन्नरसोनस्यकर्षैकस्यजलंपलम् । किंचित्किंचित्क्षिपंस्तत्रचालयेच्चशनैःशनैः । घृतशेषंभवेद्यावत्ततोनीरजलोचने । तप्तंनीरंक्षिपेत्तत्रसार्द्धप्रस्थप्रमाणकम् । धान्यकस्यपलंधन्येभर्जितस्यार्द्रकंपलम् । कोलैकंमरिचंपत्रंत्वचंचैलांलवंगकम् । पृथक्टंकंवरारोहेपेषयित्वाविनिःक्षिपेत् । मृद्वीभूतंसमुत्तार्यभजेद्बल्यंरुचिप्रदम् ॥

अर्थ—अब मांसकी दूसरी विधि कहते हैं—मांस ६४ तोले लेकर उसको तीनवार जलसे धोय धर देवे, फिर चूल्हेपर देग चढाय १६ तोले घी डालके तपावे और उसमें ८ तोले कांदेके बारीक टुकडे करके डाले जब वो लाल होजावे तब मांस डालके उसमें पाव तोला हलदी डाले, तथा चार तोला निमक, डाल कलछीसे चलाता जाय तथा उसमें १ तोला लहसन, ४ तोले पानीमें पीसके थोडा थोडा वारंवार गेरे, इस प्रकार जब पानी जरके घी बाकी रहे तबतक भूने और चलाता रहे फिर ९६ तोले गरम पानी डाल उसमें भुनाहुआ धनियाँका चूरा ४ तोले, अदरख ४ तोले, मिर्चका चूरा आधा तोला, तथा तेजपात, दालचीनी, इलायचीके दाने और लौंग इनका चूरा प्रत्येक पाव पाव तोला डालके सिजावे, जब नरम हो जाय तब उतार लेवे यह बलकारी तथा रुचिकारक है ।

अथ शाकामिषकृतिगुणाः ।

आमिषंप्रस्थकंसर्पिः सद्यस्कंचशरावकम् । पलांडोःकुडवैकं स्याद्रसोनस्यपलद्वये । लवणंचपलंकांतेशृंगवेरंपलंप्रिये ।

निंबुकाः पंचलोलाक्षिदधिप्रस्थार्द्धमेवच । मरिचंकुंकुमंचैव पृथक्टंकंमनोहरे । धान्यकंपलमेकंचहरिद्राकोलसंमिता । यच्चेष्टपत्रपुष्पादिशाकंकंदादिकंतुवा । प्रस्थंशस्त्रेणसंशोध्य पृथक्पात्रेनिधापयेत् । त्रिधानीरेणसंक्षाल्यचामिषंसुप्रयत्नतः । शृंगवेरांबुलवणंदधिधान्याकमेवच । आमिषेसकलंकांतेमिश्रयित्वानिधापयेव् । ततस्ताप्यघृतंभांडेक्षिपेत्तत्रपलांडुकम् । ताम्रीभूतेपलांडौचाक्षिपेत्तत्राविभावरीम् । ततःक्षिप्रंक्षिपेत्तत्रयत्सर्वंचामिषादिकम् । भर्जयन्संक्षिपेत्तत्ररसोनांबुपुनः पुनः । केशुष्केचक्षिपेच्छाकंभर्जयेच्चततः पुनः । किंचिन्नीरंविनिःक्षिप्यपाचयेच्चशनैः शनैः । पक्कंज्ञात्वाक्षिपेत्तत्रनिंबुनीरं सकुंकुमम् । समुत्तार्यनिषेवेतवीर्यवृद्धिकरंपरम् । शाकामिषमिदंकांतेकांतिदंरुचिकारकम् ॥

अर्थ–अब शाकामिषकी विधि तथा गुणदोष कहते हैं । मांस ६४ तोले, घी ३२ तोले, कांदा १६ तोले, लहसन आठ तोले, निमक, ४ तोले अदरख ४ तोले, नींबू ५ तोले, दही ३२ तोले, मिर्च तथा केशर पाव पाव तोले, भूना धनियाँ ४ तोले, हलदी आधे तोले और जो शाक, पत्र, फूल अथवा कंद अपनेको प्रिय होय वो बनायाहुआ ६४ तोले, इसप्रमाण सर्व पदार्थ न्यारे तयार करके धर देवे फिर मांसको तीनवार पानीसे धोयकर उसमें अदरखका पानी, निमक, दही और धनियाँ मिलायके धरे, फिर चूल्हेपर देगची चढाय घी डालके गरम करे, जब घी गरम होजावे तब उसमें प्याजके कतरे हुए टुकडे डाले, जब वो लाल होजावे तब उसमें हलदी डाले, फिर मांसादि सर्व वस्तु डाल देवे और कलछीसे चलावे, भूनते वख्त उसमें थोडा थोडा लहसनका पानी वारंवार डालता जाय और चलाता जाय जब पानी सूखजाय तब उसमें शाक (भाजी) डाल मंद आंचसे सिजावे जब पकजावे तब नींबूका रस निचोड उसमें केसर पीसके डाल देवे और उतारकर धर देवे यह शाकामिष धातुवर्द्धक, कांतिकारक और रुचिकारक है ।

अथ शूलपक्कमांसकृतिगुणाः ।

आमिषंशस्त्रसंक्षुण्णंप्रस्थैकंलवणंपलम् । शृंगवेरंशरावार्द्धंवह्निजंशुक्तिसंमितम् । धान्यकंचपलंबालेपलांडुर्द्विपलोन्मि-

तः । दधिप्रस्थार्द्धकंटंककुंकुमंचलवंगकम् । संतानिकाचसर्पिश्चबादामंकुडवंपृथक् । टंकमेलारजोबालेरसंनिंबुचतुष्कजम् । धान्याकंभर्जितंपिष्ट्वाचान्यत्सर्वमभर्जितम् । वस्त्रबद्धविनिर्मस्तुदध्निसर्वंविमिश्रयेत् । लेपयित्वात्विदंशूलेततः सूत्रेणवेष्टयेत् । निर्धूमांगारकेशूलंसन्निधायविपाचयेत् । शूलपक्वमिदंमांसंधातुपुष्टिकरंमतम् । बल्यंवृष्यंतथारुच्यं कफकांतिविवर्द्धनम् ॥

अर्थ–अब शूलपक्वमांसकी विधि और गुणदोष कहतेहैं। शस्त्रसे बारीक काटाहुआ मांस ६४ तोले, निमक ४ तोले, अदरख १६ तोले, मिर्चे २ तोले, धनियाँ ४ तोले, प्याज ८ तोले, दही ३२ तोले, केशर तीन मासे, लोंग ३ मासे, दूधकी छाँछ १६ तोले, घी १६ तोले, बादाम १६ तोले, इलायचीके दाने ३ मासे और चार निंबुओंका रस ये सर्व वस्तु तयार करके धरे, फिर इनमेंसे धनियेको भूनके पीसे, और बाकीकी सब वस्तुएँ बिना भूनी पीसे, फिर इन सब वस्तुओंको एकत्रकर पानीरहित दहीमें डालके मिलायले और लोहेके कांटेपर इसका एक अंगुल मोटा लेप करे और डोरासे लपेट देवे, फिर अंगारोंपर भूने यह शूलपक्वमांस धातुपुष्टिकारक, बलकर, वृष्य तथा रुचिकारक हो, कफ तथा कांति इनको बढानेवाला है।

शूलपक्वस्यान्यो विधिः ।

पिशितंशस्त्रसंक्षुण्णंप्रस्थैकंलवणंपलम् । शृंगवेरंपलांडुश्चधान्यकंचपलंपृथक् । सद्यमाज्यंचकर्षाष्टंसर्पिषोद्विगुणंदधि । कोलैकंमरिचंसर्वंमिश्रयित्वाचपूर्ववत् । पाचयेच्चगुणैश्चापिकिंचिन्न्यूनंहिपूर्वतः । शूलपक्वमिमंचापिमांसंताद्विद्धिरीरितम् ॥

अर्थ–अब शूलपक्वमांसकी दूसरी विधि कहते हैं। छुरेसे बारीक टुकडा कराहुआ मांस ६४ तोले, निमक ४ तोले, अदरख, प्याज, धनियाँ, ये प्रत्येक चार चार तोले घी ८ तोले, दही १६ तोले, और मिर्चे ६ मासे, ये सब वस्तु लेकर ऊपर कहीहुई विधिके अनुसार बनाय ले इसकोभी शूलपक्वमांस कहते हैं।

अथाखंडितखगामिषपक्वातिगुणाः ।

अंत्रेणरहितंशुद्धंतित्तिरंनिर्दलीकृतम् । भृशंशूलेनसंभेद्यस्थापयेत्तंचभाजने । शृंगवेरंपलंधान्यंकुडवार्द्धंसुभर्जितम् । लवंग

द्राविडीबीजंमाषमात्रंपृथक्प्रिये । द्विपलंदधिनिर्नीरंपलांडुः पलसंमितः । संतानिकाचतुःकर्षाकर्षैकश्चरसोनकः । कर्ष-द्वयंछुलवणंलेपयित्वाविधानतः । तित्तिरंपाचयेदाज्येत्रिदो-षापहमुत्तमम् । बलवर्णप्रदंवृष्यंप्रमदामदगंजनम् । एवमन्यं खगंपक्त्वागुणास्तत्तत्खगोद्भवाः । संप्रोक्तंनामतश्चेदमखंडि-तखगामिषम् । खंडितंपाचयेद्युक्त्यासामान्यामिषवत्प्रिये ॥

अर्थ-अब अखंडित पखेरूके मांसकी विधि तथा गुणदोष कहते हैं आंतडे तथा पंख कटेहुए तीतरको ले उसको कांटेसे जगेजगेपर गोदे, एक बासनमें धरे, फिर अदरख ४ तोले, भूनाहुआ धनियाँ ८ तोले, लौंग, इलायची दाने प्रत्येक एक एक मासे, पानी निकलाहुआ दही ८ तोले, कांदा ४ तोले, दूधकी मलाई ४ तोले, लह-सन १ तोला और निमक २ तोले, ये सर्व पदार्थ एकत्र मिलाय इसका तीतरके ऊपर लेप करे तथा घीमें तले यह खगामिष त्रिदोषनाशक है, इसीप्रकार और कोई दूसरे प्रकारके पक्षीको पकाना चाहिये । उसके गुण उसीउसी पक्षीके समान होते हैं इसको अखंडित खगामिष कहते हैं अथवा इच्छा होय तो टुकडे करके सामान्य मांसके सदृश पचावे ।

अथ मांसवटककृतिगुणाः ।

सूक्ष्मंशस्त्रेणसंक्षुण्णमामिषंद्विशरावकम् । लवणंपलमेकंचशृं-गवेरंचतुःपलम् । पलांडोर्द्विपलंकोलंवल्लिजस्यवरांगने । द्रा-विडीश्रीसुमंटंकंपृथग्धान्यंपलोन्मितम् । शरावंदधिलोलाक्षि संतानीतुचतुःपला । वादामंकुडवंशुद्धंटंकमेणाक्षिकुंकुमम् । पिष्ट्वातिसूक्ष्मकंसर्वंमिश्रयित्वासकुंकुमम् । वस्त्रबद्धंप्रयत्नेनद-धीहनिर्जलीकृतम् । तत्संतानिकयासार्द्धंमिश्रयेत्सकलंपले । एतस्यवटकान्कृत्वाततेसंपाचयेद्घृते । कुंकुमाभान्सुनिष्का-स्य स्थापयेद्भाजनेशुचौ । मांसस्यवटकावल्यावृष्याःकांति-रुचिप्रदाः ॥

अर्थ-अब मांसके वडान्की विधि तथा गुणदोष कहते हैं । शस्त्रसे बारीक कतरा हुआ मांस ६४ तोले, निमक ४ तोले, अदरख १६ तोले, कांदा ८ तोले मिर्चे ६

मासे, इलायची ३ मासे, लोंग ३ मासे, धनियाँ ४ तोले, दही ३२ तोले, दूधकी मलाई १६ तोले, बादाम १६ तोले, तथा केसर ३ मासे, इस प्रमाण सब वस्तु ले इनमें जो पीसनेलायक हो उनको पीस पानी निकले हुए दहीमें मलाईकेसाथ सब मांसादिक मिलाय देवे फिर उस मांसके वडे करे और घीमें उनको सेक लेवे ये बलकारी, वृष्य, कांतिकारी और रुचिकारी हैं ।

अथ मत्स्यपाककृतिगुणाः ।

मत्स्यमांसंशरावैकंद्विपलंसर्पिरुत्तमम्। शृंगवेरंद्विकर्षंचपलांडुश्चपलार्द्धकः । संतानिकापलमिताकुडवंनिर्जलंदधि । धान्यकंचद्विकर्षंस्याद्वेसनस्यपलंमतम्।टंकैकंमरिचंचैलालवंगं माषकंपृथक्।कोलैकंलवणंचाम्लंपलमेकंघटस्तानि । मत्स्यखंडानिशूलेनाभित्त्वातेषुचयत्नतः । वेसनंदिह्यसंक्षाल्यभूयो नीरेणचत्रिधा । ततःसंपेषितंसूक्ष्मंशृंगवेरंमदोद्धते । धान्यकंभर्जितंपिष्टंमरिचादिविचूर्णितम् । दध्निसंतानिकायांचसर्वं चूर्णांविमिश्र्यच । लेपयेन्मत्स्यखंडेषुततःकुर्यादमुंविधिम् । चुल्ह्युपरिस्थितेभांडेतप्तेसद्यघृतंक्षिपेत् । घृतेतप्तेपलांडुंच संक्षिपेत्खंडशःकृतम् । ताम्रीभूतेपलांडौचमत्स्यखंडानि संक्षिपेत् । संवर्त्यपाचयेत्सम्यग्बल्यंवृष्यंरुचिप्रदम् ॥

अर्थ–अब मत्स्य अर्थात् मछलीके बनानेकी विधि और गुणदोष कहतेहैं । मछलीका मांस ३२ तोले, घी ८ तोले, अदरख २ तोले, कांदा २ तोले, दूधकी छाँछ ४ तोले, पानी निकला दही १६ तोले, भूना धनियाँ २ तोले, वेसन ४ तोले, मिर्च ३ मासे, इलायचीके दाने १ मासा, लोंग १ मासा, निमक २ तोले और खटाई ४ तोले, इस प्रमाण सब वस्तु तयार रक्खो, फिर मछलीके टुकडोंको कांटेसे गोंद उसमें वेसन लगाय पानीसे तीन बार धोवे, फिर अदरख, भूना धनियां, मिर्च आदिका चूरा, दही, तथा मलाई, इनको मिलाय उसको मछलीके टुकडेपर लेपकर धरदेवे, फिर चूल्हेपर वर्तन चढाय उसमें घी डाले जब वो गरम होजावे तब उसमें कांदेके टुकडे रेगे जब वो भुनकर लाल होजावे तब मछलीके टुकडे डालके कलछीसे बराबर चलायकर भूने ये मछलीका मांस बलकारी, वृष्य और रुचिकारकहै ।

अथ मत्स्यवटीकृतिगुणाः ।

ईषद्वेसनलिप्तानिमत्स्यखंडान्ययेप्रिये । क्षालयेदंबुनासम्यक्त्रिधापात्रेन्यसेत्ततः । प्रस्थंचेन्मत्स्यखंडानामाद्रकस्यपलं तदा । पलमेकंपलांडोश्चरसोनस्यैकमक्षकम् । दध्यर्द्धकुडवंरात्रीटंकैकाचात्रसंमता । कुडवार्द्धमसूरस्यापिष्टंवाचणकस्यच । तंदुलानांतुवाकांतेलवणस्यपलार्द्धकम् । शृंगवेरादिकंसर्वंसूक्ष्मंपिष्ट्वाविमथ्यच । गाढंनीरेणलोलाक्षिमत्स्यखंडेषुलेपयेत् । घृतेतैलेऽथवायुक्त्यापाचयेद्धिकटाहके । मत्स्यवटचइमावृष्याःशुक्रलारुचिपुष्टिदाः । कफपित्तकरा यर्हितैलपक्वाघटस्तानि ॥

अर्थ-अब मत्स्यवटी अर्थात् मछलीकी वडी वनानेकी विधि और गुणदोष कहते हैं-मछलीके टुकडे कर उनमें थोडा बेसन चुपड तीन वार जलसे धोकर ६४ तोले ले अदरख ४ तोले, कांदा ४ तोले, लहसन १ तोला, दही ८ तोले, हलदी पाव तोला, मसूरका अथवा चनेका किंवा चावलका चून ८ तोले, निमक २ तोले ये सर्व वस्तु लेकर उनमें जो कूटनेके लायक हो उनको कूट सबको एकत्र कर पानीसे मथे, फिर उन टुकडोंपर लेप कर गरम घी या तेलमें सेके, ये मछलीके वडे वृष्य, वीर्यदायक और रुचि तथा पुष्टिको देतेहैं । परंतु यदि तेलमें तलेजावें तो कफ और पित्त इनको उत्पन्न करता होते हैं ।

अथ मत्स्यौदनम् ।

प्रस्थैकंमत्स्यजंमांसंप्रस्थैकंतंडुलंप्रिये । पाचयेत्तैलसंयुक्तमिदंमत्स्यौदनंमतम् । अयिमत्स्योदनंबालेत्रिदोषामयकारकम् । वह्निमांद्यप्रदंतद्वद्विशेषात्कफकारकम् ॥

अर्थ-१ सेर मच्छीका मांस तथा एक सेर चावल इन दोनोंको प्रथम तेलमें भून फिर भातकी विधिसे इसको वनावे इसको मत्स्यौदन कहते हैं । यह मत्स्यौदन त्रिदोषसंबंधी रोग मंदाग्नि और कफ इनको करेहै ।

अथ मांसौदनम् ।

तंडुलानांसुसूक्ष्माणांप्रस्थंप्रस्थंनवंघृतम् । छागमांसंतथा प्रस्थंलवणंपलसंमितम् । द्राविडीश्रीप्रसूनंचपृथक्टंकंवरा-

गेन । पृथक्कोलंवरारोहेवह्लिजंकृष्णजीरकम् । दधिमिष्टशरावैकंसंतानीतुचतुःपला । कुडवैकंप्रियेदुग्धंपलांडुस्तत्समो मतः । शृंगवेरंपलंकांतेतत्समोहिरसोनकः । मांसखंडानिसंक्षाल्यसप्तधावारिणाभृशम् । तंडुलांश्चत्रिधाधौतान्स्थापयेत्पृथगंबुनि । लवणार्द्धंपृथक्पेष्यमांसखंडानिसंदिहेत् । शेषार्धंलवणंनीरमार्द्रकस्यरसोनकम् । क्षिपेन्मांसेमिश्रयित्वा स्थापयेद्भाजनेशुचौ ॥

अर्थ–अब मांसौदनकी कृति तथा गुणदोषको कहतेहैं–महीन चावल १ सेर नवीन घृत १ सेर, नोन १ पल, इलायची और लौंग ये प्रत्येक एक २ टंक, काली मिर्च और काला जीरा आधे २ कर्ष, मीठा दही आधसेर, दूधकी मलाई १६ कर्ष, दूध १६ कर्ष, प्याज १६ कर्ष, अदरख १ पल और लहसन १ पल, ये पदार्थ तयार करके धरे, प्रथम मांसके टुकडे पानीसे सातवार धोवे और चावल ३ वार धोकर भीजने देवे पीछे २ कर्ष पिसा नोन मांसमें मिलावे और दोकर्ष नोन अदरखका रस और लहसन ये उसमें मिलाय शुद्ध बटलोई या देगमें चढाय देवे ।

घृतंभांडेसुसंताप्याक्षिपेत्तत्रपलांडुकम् । ताम्रवर्णंचतंदृष्ट्वामांसंतत्रविनिःक्षिपेत् । भर्जयेद्घृतशेषंतंदुग्धसंतानिकांततः । वस्त्रपूतंक्षिपेत्तत्रतंडुलांश्चविचक्षणः । लवंगादिभवंकल्कंततंकंप्रस्थकद्वयम् । क्षिपेद्वह्निंशनैर्दत्वासिद्धमंगारकेन्यसेत् । क्षणादुत्तार्यसंस्थाप्यभजेत्कोष्णं वरानने । तेनवीर्यंबलंकांतिंकफंप्राप्नोतिमानवः । वातातंकविमुक्तःसन्नामयेद्रमणीं भृशम् । इदंमांसौदनंस्निग्धंगुरुतज्ज्ञैःप्रकीर्तितम् ॥

अर्थ–प्रथम उक्त भांडमें घृतको तप्तकर उसमें कांदेके टुकडे डाले जब वो लाल होजावें तब उसमें मांसको गेरे पीछे उसमेंसे पानीको सुखाता हुआ जबतक घृत शेष रहे तबतक करछीसे धीरे धीरे भूने तदनंतर दूध और दूधकी मलाई वस्त्रसे छानके उसमें डाले पीछे चावल डाले और लौंग वगैरह पानीमें पीसके डाले तथा दोसेर गरमजल उसमें गेरे पीछे मंदाग्निपर पकायकर अंगारोंपर धरदेवे, फिर एकक्षणमें उतार किंचित् किंचित् गरमागरमको भोजनकरे इससे वीर्य, बल, कांति तथा कफको मनुष्य

प्राप्त होवे और वातसंबंधी रोगोंसे छूट अनेक स्त्रीभोगनेकी सामर्थ्यको प्राप्तहोवे, यह मांसौदन स्निग्ध और भारी है । इति भोजनविधिः ।

भोजनके समयवर्जित दृष्टि ।

हीनदीनक्षुधार्त्तानांपापपाखंडरोगिणाम् ।
कुक्कुटाहिशुनां दृष्टिर्भोजनेनैव शोभना ॥

अर्थ-हलके मनुष्य, भिखारी, भूखा, पापी, पाखंडी, रोगी, मुरगा, सर्प और कुत्ता इनकी दृष्टि भोजनपर गिरनेसे उत्तम नहीं है । इसीसे मनुष्यको उचित है कि, इनकी दृष्टि बचायकर भोजन करे । तथा बिल्ली घुग्घु और शत्रु आदिकीभी दृष्टि उत्तम नहींहै ।

शुभ दृष्टि ।

पितृमातृसुहृद्वैद्यपाकक्रुद्धंसबर्हिणाम् ।
सारसस्यचकोरस्यभोजनेदृष्टिरुत्तमा ॥

अर्थ-माता, पिता, सुहृद्, (भाई, मित्र, और संबंधी) वैद्य, रसोय्या, हंस, मोर, सारस, और चकोर [तथा, मृग, खबूतर, तोता, मैना आदि) की दृष्टि भोजनके समय पडना उत्तम है । परंतु वहुत भूखे होतो इनकीभी दृष्टि वर्जितहै । और किसी किसी दुष्ट माता पिता भाई आदिकी दृष्टि दुष्ट होती है। राजा महाराजा और सेठ साहूकारोंको विषमिश्रित अन्नकी प्रथम परीक्षा कर फिर भोजन करना चाहिये सो लिखते हैं ।

विषमिश्रित अन्नकी परीक्षा ।

ध्वांक्षःस्वरान्विकुरुतेऽत्रपिकात्मजश्चबभ्रुःशिखंडितनयश्चभवेद्धिहृष्टः । क्रौंचःप्रहृष्यतिविरौतिचताम्रचूडश्छर्दिंशुकः प्रकुरुतेविलपन्तिकीशाः । हंसाःस्खलन्तिगतिषुप्रसभंचकोरोधत्तेविरक्तिमचिरेणविलोक्यदृष्ट्वा । अन्नाद्विषेणकलितादतएवतेभ्योदत्वाऽल्पमन्नमथपात्रगतात्ततोद्यात् ॥

अर्थ-विषमिश्रित अन्नके भक्षणसे कौएका शब्द बिगड जाताहै और कोकिल, नौला, मोर ये विषमिले अन्नको खायकर प्रसन्न होते हैं । क्रौंचपक्षी आनंदित होताहै मुरगा विष मिले अन्नको खायकर पुकारता है । तोता वमन करताहै । और वन्दर विलाप करते हैं । हंस विषमिश्रित अन्न भक्षणसे गमन करना भूल जावे । और चकोरपक्षी विष मिले अन्नको देख अत्यंत विरक्तताको धारण करता है इसीसे मनुष्यको उचित है कि, भोजनके थालमेंसे कुछ थोडा अन्न प्रथम इनको देकर फिर आप भोजन करे ।

विषमिश्रित अन्नकी अन्य परीक्षा ।

भक्तंपर्युषितोपमंविषयुतंसूपोहरित्फेनिलोमांसंनीरसनीलरा-
जिझटितिव्याशुष्यातिव्यंजनम् । क्षीराद्यन्तुपिशंगपीतत-
तियुक्पुष्पं विगन्ध्यंवरंश्यामंचांबुनिचान्यदेवमुदितंवैरस्यवै-
वर्ण्ययुक् ॥

अर्थ—विष मिलाहुआ ताजा भात-बासेके समान, होजाता है, विष मिली दाल हरी और झागदार होजाती है ताजा मांस विषके मिलनेसे तत्काल रसहीन नीली रेखाओंसे व्याप्त होजाता है । आर्द्र व्यंजन विषके मिलापसे सूख जाता है । दूध आदि पदार्थमें विषके मिलाप होनेसे कुछ पिलास अथवा हलदीके समान पीली रेखाओंसे व्याप्त होजाता है । फूलमें विषके मिलापसे दुर्गंध और कालौंच आय जाती है । इसीप्रकार सूखा अन्न, फल, जल, वीडी, आदिमें विष (जहर) मिलनेकी परीक्षा करे ।

दृष्टिदोषनिवारणोपायः।

अन्नंब्रह्मारसोविष्णुर्भोक्तादेवोमहेश्वरः ।
इतिसंचिंत्यभुंजानोदृष्टिदोषैर्नलिप्यते ॥

अर्थ—अन्न ब्रह्मा, रस विष्णु और इसका भोजन कर्त्ता महेश्वरदेव हैं । इस प्रकार मनमें चिंतवन करके भोजन करनेसे फिर दृष्टि नहीं लगे ।

अंजनीगर्भसम्भूतंकुमारंब्रह्मचारिणम् ।
दृष्टिदोषविनाशायहनुमन्तंस्मराम्यहम् ॥

अर्थ—अंजनीके गर्भसे प्रगट कुमारअवस्थासेही ब्रह्मचारी ऐसे हनूमान्का दृष्टिदोषनिवारणार्थ मैं स्मरण करताहूं ।

भोजनपात्र ।

हैमेवाराजतेकांस्ये आयसेकाचनिर्मिते ।
पात्रे पत्रमयेवापिनरःकुर्वीतभोजनम् ॥

अर्थ—सुवर्ण, चांदी, कांसा, लोह और कांचके पात्रमें तथा पत्तलमें भोजन करना चाहिये ।

पात्रोंका पृथक् पृथक् फल ।

दोषहृद्दृष्टिदंपथ्यं हैमंभोजनभाजनम् । रौप्यं[illegible]
पित्तहृत्कफवातकृत् । कांस्यंबुद्धिप्रदंरुच्यं [illegible]प्रसाद-

नम् । पैत्तलंवातकृद्रूक्षमुष्णंकृमिकफप्रणुत् । आयसेकाचपात्रेचभोजनंसिद्धिकारकम् ॥ शोथपाण्डुहरंबल्यं कामलापहमुत्तमम् । शैलजे मृन्मये पात्रे भोजनं श्रीनिवारणम् ॥ दारूद्भवंविशेषेण रुचिदंश्लेष्मकारिच । पात्रंपत्रमयंरुच्यंदीपनंविषपापनुत् ॥

अर्थ-भोजनके पात्र (थाली, कटोरी, आदि) यदि सुवर्णके होवे तो त्रिदोषनाशक, दृष्टि बढानेवाले और पथ्य ऐसे जानने । चांदीका भोजनपात्र नेत्रोंको हितकारी, पित्त हरणकर्त्ता, तथा वात कफकारी जानना । कांसेका पात्र बुद्धि बढावे, रुचि प्रगट करे, और रक्तपित्तको शांत करे । और पीतलका पात्र वातकारक, रूखा तथा शूल, कृमि और कफका नाशक है । लोहेका पात्र वा चुंबक इनका पात्र सिद्धिकारक, तथा सूजन, पांडुरोग, इनका नाशक और बलकारक तथा कामलानाशक है । पत्थरके पात्रमें वा मट्टीके पात्रमें भोजन करना लक्ष्मीनाशक जानना परंतु चीनीका पात्र इतर जातको शुभ है । लकडीका पात्र विशेष करके रुचिकर्त्ता, और कफकारक जानना । ढाक आदिके पत्तोंकी पत्तलमें भोजन करना रुचिकारी, दीपन और विष, पापको नाश करता जानना ।

तथा च ।

रम्भापत्रेऽशनंहृद्यंरुच्यंवृष्यंबलाग्निदम् । विषश्रमानिलास्रेषु हितंपाण्डौनशस्यते । पालाशपत्रंचमरुच्छ्लेष्मगुल्मोदरकृमीन् । निहन्यात्पीनसंकासंज्वरंचैवातिदारुणम् । अर्कपत्रं स्मृतंरूक्षंकृमिघ्नंपित्तकृत्परम् । गुल्मशूलाविषश्वासपांडुकुष्ठकफानिलान् । हन्यात्परमचक्षुष्यंदीपनंपाचनंलघु । पत्रन्तुक्षीरवृक्षाणांतृष्णादाहास्रपित्तनुत् । नलिनादिदलंरूक्षं निंदितंभोजनेहिमम् ॥

अर्थ-केलाके पत्तेपर भोजन करना रुचिकारक, हृद्य, वृष्य, बल और अग्निको देनेवाला जानना । तथा विष, श्रम, वातरक्त रोगमें हित है । परंतु पांडुरोगमें वर्जित है । ढाकके पत्तेकी पत्तलमें भोजन करना वात, कफ, गुल्म, उदर, कृमि, पीनस, खांसी, और अतिदारुण ज्वरको नाश करता है । आकके पत्ते रूखे हैं, कृमिको दूर

करें और पित्तकर हैं । तथा गोला, शूल, विष, श्वास,पांडुरोग, कुष्ठ,कफ और वातको नाशकरे नेत्रोंको परम हित, दीपन पाचन और हलका है क्षीरवृक्ष (गूलर बड आदि) के पत्तोंकी पत्तलमें भोजन करना तृषा, दाह, और रक्तपित्तको दूर करे है । कमलके पत्ते रूक्ष और भोजनमें निंदित कहे हैं ।

जलपात्रमाह ।

जलपात्रंसुवर्णस्यतदभावेतुरौप्यकम् । तदभावेचताम्रस्य तदभावेतुपैत्तलम् । इतिचत्वारिपात्राणिबलबुद्धिप्रदानिच । पवित्रंशीतलंपात्रंवैदूर्यस्फाटिकोद्भवम् । तद्वत्काचभवंप्रो- क्तंसर्वाभावेतुमृन्मयम् ॥

अर्थ-पानी पीनेके पात्र (लोटा, झारी, अमृखोरा, गिलास, घंटी आदि) सुव- र्णका वा चांदीका तामेका वा पीतलका ये चारही पात्र उत्तम हैं, इन्हींको एकके अभावमें दूसरा लेना चाहिये । ये चारों पात्र बल बुद्धिके देनेवालेहैं वैदूर्यमणि अथवा स्फटिक अथवा कांचका पात्र ये पवित्र तथा शीतल हैं । इनमेंसे कोई न मिले तो इनकी एवजी मट्टीका पात्र (कुल्हडा आदि) लेना चाहिये ।

भोजनके पूर्व भक्षणीय ।

भोजनाग्रेसदापथ्यंलवणार्द्रकभक्षणम् ।
रोचनंदीपनंवह्निजिह्वाकण्ठविशोधनम् ॥

अर्थ-भोजन आरंभ करनेके पूर्व सैंधानिमक और अदरख खाना पथ्य है । रुचि- कर, अग्निसंदीपक, तथा जीभको और कंठको शोधन करे है ।

शिष्य-लवणको पित्तकर्ता होनेसे और अदरखको कुटुत्व करके पित्तकारी कहाहै । और क्षुधित पुरुषके प्रथमही पित्त प्रबल होता है, फिर लवणार्द्रक भक्षण कैसे लिखा है ?

गुरु-इस जगे त्रिदोषनाशक सैंधव लवणका ग्रहण है । यथा-

सैंधवंलवणंस्वादुदीपनंपाचनंलघु ।
स्निग्धंरुच्यंहिमंवृष्यंसूक्ष्मंनेत्र्यंत्रिदोषहृत् ॥

अर्थ-सैंधानिमक स्वादु, दीपन, पाचन, हलका, स्निग्ध, रुचिकर, शीतल वृष्य, सूक्ष्म, नेत्रोंको हितावह और त्रिदोषनाशक है, अतएव भोजनके पूर्व इसका ग्रहण है ।

उसीप्रकार आर्द्रक कटुकभी है परंतु मधुरपाकी होनेसे पित्तका विरोधी नहीं है ।

यथा ।

अर्द्रिकाभेदनीगुर्वीतीक्ष्णोष्णादीपनीचसा ।
कटुका मधुरा पाके रूक्षा वातकफापहा ॥

अर्थ–अदरख मलको तोडनेवाला, भारी, चरपरा, गरम, दीपन, कटु, पाकके समय मधुर और रूक्ष है । तथा वात कफ नाशक है ।

दूसरे संयोगस्वभावसेभी पित्तविरोधी नहीं है अतएव "भोजनाग्रे सदा पथ्यं" यह श्लोक लिखाहै, "लवणं सैंधवं ज्ञेयं चन्दनं रक्तचंदनम्" ।

द्रवाद्यन्नंतुचेत्सेवेत्तत्राम्बुनापिबेद्बहु । मध्येतुकठिनेभक्ष्येयथेष्टंशस्यतेजलम् । तथाचभोजनस्यान्तेपीतमम्बुवलप्रदम् । परन्तुतन्मुहूर्तेनवातदर्द्धेनचेत्पिबेत् । द्रवप्रधानभुक्तान्तेतत्रापिमात्रयापिबेत् ॥

अर्थ–पतले पदार्थ खायकर बहुत जल नहीं पीना चाहियें । कठिन पदार्थ खानेके समय बीच बीचमें यथेष्ट जल पीना चाहिये । उसीप्रकार भोजनके अंतमें जल पीना बलदायक जानना । परंतु वह भोजन करनेके दो घडी अथवा एक घडीके बाद पीवे, यदि पतले (कढी आदि) पदार्थ खानेके पीछे प्यास लगे तो थोडा पानी पीये ।

गुरुपिष्टमयंद्रव्यंतण्डुलान्पृथुकानपि । नजातुभुक्तवान्खादेन्मात्रांखादेद्बुभुक्षितः । घृतंपूर्वंसमश्नीयात्कठिनंप्राक्ततोमृदु । अन्तेपुनर्द्रवाशीतुवलारोग्यंनमुञ्चति ॥

अर्थ–भारी पदार्थ, पिसे अन्नके, अथवा पिठीके पदार्थ, चावल, और चिरवा इनको भोजन करके न खावें । यदि अति क्षुधित होवे तो थोडे खाने चाहियें । भोजनमें प्रथम रोटी इत्यादि कठिन पदार्थ, घृतसे चुपडे, या घृत मिले खाने चाहिये । पीछे मृदु भात, मूंग, साय । और पीछे छाछ, दही, दूध, पीवे इसप्रकार भोजन करनेसे इस पुरुषको वल और आरोग्य कभी नहीं छोडते किंतु सदैव बने रहते हैं ।

स्वादु अन्नके लक्षण ।

यद्यत्स्वादुतरंतद्धिविदध्यादुत्तरोत्तरम् ।
भुक्तायत्प्रार्थ्यतेभूयस्तदुक्तंस्वादुभोजनम् ॥

अर्थ–जो जो पदार्थ अति स्वादु होवे उसी उसीको उत्तरोत्तर भोजन करे । जो पदार्थ वारंवार भोजन करकेभी इच्छित होवे उसको स्वादु भोजन कहतेहैं ।

स्वादु अन्नके गुण।

सौमनस्यंबलंपुष्टिमुत्साहंरसनासुखम् ।
स्वादुसञ्जनयत्यन्नमस्वादुचविपर्य्ययम् ॥

अर्थ—स्वादु पदार्थ मनको आनंद, बल, पुष्टि, उत्साह, और जिह्वाको सुख करे है और कडुआ पदार्थ मनको दुःख, निर्बलता, कृशता, अनुत्साह, और जीभको दुःख प्रगट करे है ।

योग्यायोग्य अन्न ।

अत्युष्णान्नंबलंहन्तिशीतंशुष्कंचदुर्जरम् । अतिक्लिन्नंग्लानिकरंयुक्तियुक्तंहिभोजनम् । अतिद्रुताशिताहारोगुणान्दोषान्नविन्दति। भोज्यंशीतमहृद्यंचस्याद्विलंबितमश्नतः॥

अर्थ—अति गरम अन्न बलका नाश करताहै, तथा शीतल और सूखा अन्न दुर्जर होताहै अर्थात् बडी कठिनतासे पचे है । और अत्यंत गीला अन्न ग्लानि करता है । इसीसे युक्तायुक्त विचार करके भोजन करना चाहिये । अत्यंत जल्दी और अत्यंत देरीमें भोजन नहीं करना चाहिये, जल्दी भोजन करनेसे बडा भारी यही दोष है कि, उस भोज्य पदार्थका गुणदोष मालूम नहीं होता है, उसीप्रकार वह अच्छीरीतिसे चर्वित नहीं होता इसीसे शीघ्र जीर्ण नहीं होवे । और विलंब पूर्वक भोजन करनेसे भोज्य पदार्थ शीतल और स्वादरहित होजाताहै ।

त्रिविध गुरु अन्नका वर्जन ।

मन्दानलोनरोद्रव्यंमात्रागुरुविवर्जयेत् । स्वभावतश्चगुरुयत्तथासंस्कारतोगुरु ॥ मात्रागुरुस्तुमुद्गादिर्माषादिः प्राकृतो गुरुः । संस्कारगुरुपिष्टान्नंप्रोक्तमित्युपलक्षणम् ॥

अर्थ—जिन्होंकी मंदाग्नि है उनको भारी (गरिष्ठ) भोजन नहीं भक्षण करना चाहिये, मात्रा, स्वभाव, और संस्कार, इन तीन भेदकरके भारी पदार्थ तीन प्रकारका है, मूंग मोठ इत्यादि मात्रा गुरु है अर्थात् अधिक खानेसे भारी होती है । उडद आदि स्वभावसेही भारी है, और पिष्टान्न (चून, मैदा, सूजी आदि) संस्कार गुरुहोते हैं । अर्थात् जब उसकी पूडी रोटी आदि करो तब गरिष्ठ होताहै ।

आहारको षड्विधत्व ।

आहारंषड्विधंचोष्यंपेयंलेह्यं तथैव च ।
भक्ष्यंभोज्यंतथाचर्व्यंगुरुविद्याद्यथोत्तरम् ॥

यथा।

अर्द्रिका भेदनी गुर्वी तीक्ष्णोष्णा दीपनी च सा।
कटुका मधुरा पाके रूक्षा वातकफापहा॥

अर्थ-अदरख मलको तोडनेवाला, भारी, चरपरा, गरम, दीपन, कटु, पाकके समय मधुर और रूक्ष है। तथा वात कफ नाशक है।

दूसरे संयोगस्वभावसेभी पित्तविरोधी नहीं है अतएव "भोजनाग्रे सदा पथ्यं" यह श्लोक लिखाहै, "लवणं सैंधवं ज्ञेयं चन्दनं रक्तचंदनम्"।

द्रवाद्यन्नंतुचेत्सेवेत्तत्राम्बुनापिबेद्बहु । मध्येतुकठिनेभक्ष्येयथेष्टंशस्यतेजलम्। तथाचभोजनस्यान्तेपीतमम्बुवलप्रदम्। परन्तुतन्मुहूर्तैनवातदर्द्धेनचेत्पिबेत् । द्रवप्रधानभुक्तान्तेतत्रापिमात्रयापिबेत्॥

अर्थ-पतले पदार्थ खायकर बहुत जल नहीं पीना चाहिये। कठिन पदार्थ खानेके समय बीच बीचमें यथेष्ट जल पीना चाहिये। उसीप्रकार भोजनके अंतमें जल पीना बलदायक जानना। परंतु वह भोजन करनेके दो घडी अथवा एक घडीके बाद पीवे, यदि पतले (कढी आदि) पदार्थ खानेके पीछे प्यास लगे तो थोडा पानी पीये।

गुरुपिष्टमयंद्रव्यंतण्डुलान्पृथुकानपि । नजातुभुक्तवान्खादेन्मात्रांखादेद्बुभुक्षितः। घृतंपूर्वंसमश्नीयात्कठिनंप्राक्ततोमृदु। अन्तेपुनर्द्रवाशीतुवलारोग्यंनमुञ्चति॥

अर्थ-भारी पदार्थ, पिसे अन्नके, अथवा पिठीके पदार्थ, चावल, और चिरवा इनको भोजन करके न खावे। यदि अति क्षुधित होवे तो थोडे खाने चाहिये। भोजनमें प्रथम रोटी इत्यादि कठिन पदार्थ, घृतसे चुपडे, या घृत मिले खाने चाहिये। पीछे मृदु भात, मूंग, खाय। और पीछे छाछ, दही, दूध, पीवे इसप्रकार भोजन करनेसे इस पुरुषको वल और आरोग्य कभी नहीं छोडते किंतु सदैव बने रहते हैं।

स्वादु अन्नके लक्षण।

यद्यत्स्वादुतरंतद्धिविदध्यादुत्तरोत्तरम्।
भुक्त्वायत्प्रार्थ्यतेभूयस्तदुक्तंस्वादुभोजनम्॥

अर्थ-जो जो पदार्थ अति स्वादु होवे उसी उसीको उत्तरोत्तर भोजन करे। जो वारंवार भोजन करकेभी इच्छित होवे उसको स्वादु भोजन कहतेहैं।

स्निग्ध पदार्थ और समान अग्निवालेको समान अर्थात्, जो न भारी हों न हलके हों ऐसे पदार्थ भोजन करने चाहिये ।

पत्नींविहितशृङ्गारांप्राप्यभोजनमण्डपम् । यथाचाग्निबलं वीक्ष्यकुर्याद्भोजनकंनरः। एकएवनभुंजीतयदीच्छेत्सिद्धिमात्मनः । द्वित्रिभिर्बहुभिःसार्द्धंभोजनन्तुदिवानिशम् ॥

अर्थ–भोजनमंडपमें शृंगारयुक्त अपनी प्राणप्रियाको प्राप्त हों यथाग्नि बलको देखकर मनुष्यको भोजनकरना चाहिये । यदि अपने कल्याणकी इच्छा होवे तो अकेला भोजन कदाचित् न करे दो तीन अथवा बहुतसे कुटुम्बके या अन्य पुरुषोंको लेकर दिन और रात्रिमें भोजन करना चाहिये ।

उपलिप्तेशुचौदेशेचतुरस्रंत्रिकोणकम् ।
वर्त्तुलंचार्धचन्द्रंचविप्रादीनांचमण्डलम् ॥

अर्थ–लिपाहुआ पवित्रस्थानमें ब्राह्मणको चौकोन, क्षत्रीको त्रिकोन, वैश्यको गोल और शूद्रको अर्धचंद्रके आकार चौका लगाना चाहिये ।

पञ्चाशत्पलिकंकांस्यंस्थापयेत्तत्रराजतम् ।
सौवर्णंवाथपत्रैर्वानिर्मितं भाजनं शुभम् ॥

अर्थ–भोजन करनेको ५० पलका, कांसेका थाल, वा चांदीका वा सुवर्णका अथवा पत्रनिर्मित पत्तल शुभ है ।

शाकादीन्पुरतःस्थाप्यभक्ष्यंभोज्यंचकामतः ।
अन्नं मध्ये प्रतिष्ठाप्य दक्षिणे घृतपायसौ ॥

अर्थ–भोजन करतेसमय शाकादि (साग, चटनी, मुरब्बा आदि) को आगे धरे और भक्ष्य भोज्य पदार्थोंको यथा इच्छानुसार बगल बगल धरे, और अन्न (भात दाल) आदिको थालके बीचमें धरे, और घी तथा खीरको पात्रमें दहनी तरफ धरने चाहिये ।

हस्तौपादौतथैवास्यंप्रक्षाल्यान्नंप्रणम्यच ।
ततोग्रासान्समुद्धृत्यगवांचाविनिवेदयेत् ॥

अर्थ–हाथ पैर और मुखको धोय शुद्ध हो भोजनको बैठे उस समय अन्नको प्रणामकर [परमात्मासे प्रार्थना करे कि इसीप्रकार अन्न हमको नित्य मिलाकरे] इसप्रकार कहकर फिर गोग्रास निकालकर आप भोजन करे ।

अर्थ-आहार छः प्रकारके हैं, १ चोष्य (जो चूसा जावे जैसे ईख, आम्र आदि) २ पेय है, (जो पीया जावे जैसे पने शर्वत आदि) ३ लेह्य है, (जो लेईके माफिक उंगलियोंसे लिपट जावे जैसे लहपसी, सिखरन, कढी आदि) ४ भक्ष्य (जो भक्षण करा जावे जैसे लड्डू, पेडा,बर्फी,आदि) ५ भोज्य (जो भोजन कराजावे जैसे भात मूंग आदि) ६ चर्व्य जो (चबाये जावे जैसे चने, चिरवा, पापड आदि) ये उत्तरोत्तर भारी हैं अर्थात् चोष्य पदार्थसे पेय, पेयसे लेह्य, लेह्यसे भोज्य, भोज्यसे भक्ष्य, और भक्ष्यसे चर्व्य, पदार्थ अधिक भारीअर्थात् अधिक गरिष्ठ है।

गुरुआदिअन्नका परिमाण।

गुरूणामर्धसौहित्यंलघूनांतृप्तिरिष्यते । द्रवोद्रवोत्तरश्चापि नमात्रागुरुरिष्यते ॥ पेयलेह्यादिभक्ष्याणांगुरुंविद्याद्यथोत्तरम् । द्रवाढचमपिशुष्कन्तुसम्यगेवोपपद्यते ॥

अर्थ-भारी अन्नसे मनुष्यको अर्ध तृप्ति अर्थात् जितने खानेकी इच्छा हो उससे आधा खावे और हलके पदार्थ पेटभरखानेचाहिये द्रवपदार्थ कढी, पेयादि भोजन कर पश्चात् तक्रादि अधिक भक्षण कराहुआभी है परंतु उनकी मात्रा बहुत नहीं माननी चाहिये, क्योंकि पीनेके सब पदार्थ हलके हैं, पेय लेह्य इत्यादि भोजन करनेमें उत्तरोत्तर भारी जानने, और, जो पदार्थ शुष्क है उसको आर्द्र पदार्थ मिलायकर भोजन करनेसे उत्तम रीतिसे पाचन होते हैं।

केवल शुष्कान्नके दोष।

विशुष्कमन्नमभ्यस्तंनपाकंसाधुगच्छति। पिण्डीकृतमसंक्लिन्नंविदाहमुपगच्छति।शुष्कंविरुद्धंविष्टंभिवह्निव्यापदकृद्भवेत्॥

अर्थ-शुष्क अन्न वारंवार भोजन करनेसे अच्छे प्रकार पाकको नहीं प्राप्त होता, वह शुष्क पदार्थ उदरमें पिंडीके सदृश विना आर्द्रताके विदग्ध होजाता है। अतएव शुष्क पदार्थ न खाय, सूखे पदार्थके दोष कहते हैं कि, सूखा अन्न (चिरवा, आदि) विरुद्ध पदार्थ (दूध मछली आदि) और विष्टंभि पदार्थ (चना मसूर आदिभी इनके खानेसे ये मंदाग्नि करता होतेहैं।

चतुर्विध अग्निपरत्व भोजन।

मन्दस्तीक्ष्णोविषमःसमश्चवह्निश्चतुर्विधः पुसाम्।
लघुमन्देगुरुतीक्ष्णेस्निग्धंविपमेसमेसमंभोज्यम् ॥

अर्थ-मंद, तीक्ष्ण, विषम, और सम ऐसे पुरुषोंके चार प्रकारकी जठराग्नि होती है, इसलिये मंदाग्निवालोंको हलके पदार्थ, तीक्ष्णाग्निवालेको भारी, विषमाग्निवालेको

देकर फिर दूसरे देना, भोजनसे पृथक् सत्तू पीना, मांसके साथ दूधके साथ, रात्रिमें, दांतोंसे छेदन और गरम ये सात प्रकार सत्तु खानेमें वर्जित हैं ।

विषमाशनके लक्षण ।

बहुस्तोकमकालेवाज्ञेयंतद्विषमाशनम् ।

अर्थ—कुसमय, बहुत वा थोडे भोजनको विषमाहार कहतेहैं ।

अल्प किंवा अधिक भोजनके दोष ।

आलस्यगौरवाटोपशब्दांश्चकुरुतेभृशम् ।
हीनमात्रंतनोःकाइर्यंकरोतिचबलक्षयम् ॥

अर्थ—बहुत अन्न भक्षण करनेसे आलस्य, देहमें भारीपना, पेटमें गुडगुडाहट शब्द, ये होतेहैं । उसीप्रकार अल्प भोजन करनेसे देहमें कृशता और बलक्षय होताहै ।

अकाल भोजनका निषेध ।

नाप्राप्तकालंभुंजीतहीनाधिकमथापिवा । अप्राप्तकालेभुंजानोअसमर्थतनुर्नरः । तांस्तान्व्याधीनवाप्नोतिमरणंचाधिगच्छति । कालेतीतेश्वतोजंतोर्वायुनोपहतेनले । कृच्छ्राद्विपच्यतेभुक्तंनस्याद्भोक्तुंपुनःस्पृहा । तस्मात्सुसंस्कृतं युक्त्या दोषैरेतैर्विवर्जितः । सुखासन्नोगुणैर्युक्तमुपसेवेत भोजनम् । दौर्मनस्यंभयंक्रोधंभुंजानःपरिवर्जयेत् ॥

अर्थ—विनाकालके थोडा या बहुत भोजन न करे, क्योंकि विना समयके भोजन करनेसे देह सामर्थ्यरहित होता है, तथा शिरोव्यथा, अतिसार, विलंबिका, अलसक इत्यादि अनेक प्रकारकी व्याधि होती हैं । यदि वह व्याधि शांत न होवे तो यह प्राणी मरणदशाको प्राप्त होता है । और भोजनकाल व्यतीत होनेपर भोजन करनेसे वातके कोपसे जठराग्नि मन्द होती है । और भोजन कराहुआ अन्न बडी कठिनतासे पचन होता है । तथा फिर भोजन करनेकी इच्छा नहीं होती अतएव उक्तदोषरहित, सुसंस्कृत तथा उपयुक्त गुणसंपन्न आहार भोजनकरे तथा सुखपूर्वक बैठकर आहार करे । भोजन करते समय दौर्मनस्य, भय, क्रोध इत्यादि सर्व वस्तु त्यागदेनी चाहिये ।

रसेनान्नस्य रसना प्रथमेनोपतर्पिता ।
नतथास्वादमाप्नोतितत:सेव्यंतुनान्तरा ॥

बालासुवासिनीवृद्धगर्भिण्यातुरकन्यकाः ।
संभोज्यातिथिवृद्धांश्चदंपत्योःशेषभोजनम् ॥

अर्थ-प्रथम बालक, नवविवाहिता वधू, वृद्ध, गर्भवती, रोगी, कन्या, अतिथी और अपनेसे बडोंको भोजन कराके फिर गृहस्थी स्त्रीपुरुष आप भोजन करे ।

भोजनसमयके नियम ।

भुंजानोनबहुब्रूयान्ननिन्देदपिकञ्चन ।
जुगुप्सितकथांनैवशृणुयादपिवावदेत् ॥

अर्थ-भोजन करतेसमय बहुत बोले नहीं (न हँसे; न शोक करे, न जँभाई और छींक लेवे) न किसीकी निन्दा करे । तथा निंदित बातको सुनेभी नहीं, और न आप निंदित कथा कहे । अन्नकी स्तुति करताहुआ भोजन करे ।

भोजनक्रम ।

अश्नीयात्तन्मनाभूत्वापूर्वन्तुमधुरंरसम् । मध्येऽम्ललवणौपश्चात्कटुतिक्तकषायकान् । फलान्यादौसमश्नीयाद्दाडिमादीनिबुद्धिमान् । विना मोचाफलन्तद्वद्वर्जनीयाच कर्कटी । मृणालबिसशालूककन्देक्षुप्रभृतीनिच । पूर्वमेवाहिभोज्यानि नतुभुक्ताकदाचन ॥

अर्थ-भोजनकेसमय भोजनकी तरफ मन लगायकर प्रथम मिष्टरस भोजन करना चाहिये। भोजनके मध्यमें खट्टे रस और निमकीन पदार्थ खाने चाहिये।पीछे कड्डए चंरपरे, और कषेले रसके पदार्थ खाने चाहिये । परंतु मंदाग्निवालेको प्रथम लवण आदिकेही पदार्थ भोजनीयहैं । परंतु इनमेंभी अनार, अमरूद आदि फल प्रथम खाने चाहिये । किंतु मोचाफल (केला) और ककडी प्रथम खाना वर्जितहै । मृणाल (कमलकी नाल) बिस (भसींडे) और शालूककंद, तथा ईख इत्यादि पदार्थ भोजनके पूर्वही खाने चाहिये । भोजनके पश्चात् नहीं खावे ।

सक्तु (सत्तू) भक्षणमें निषेध ।

नभुक्त्वानरदैश्छित्वानानिशायांनवाबहून् । नजलान्तरितान्नद्भिःसक्तूनद्यान्नकेवलान् । पुनर्दानंपृथक्पानंसामिषंपयसानिशि । दन्तच्छेदनमुष्णंचसततसक्तुषुवर्जयेत् ॥

अर्थ-भोजन करके, दांतोंसे चाबकर, रात्रिमें बहुतसा, तथा जलान्तरित, अथवा बिना जलके केवल सत्तू न खाय, तथा सत्तू खायकर फिर सत्तू न खाय, एकबार

र फिर दूसरे देना, भोजनसे पृथक् सत्तू पीना, मांसके साथ दूधके साथ, रात्रिमें, तोंसे छेदन और गरम ये सात प्रकार सत्तु खानेमें वर्जित हैं ।

विषमाशनके लक्षण ।

बहुस्तोकमकालेवाज्ञेयंतद्विषमाशनम् ।

अर्थ-कुसमय, बहुत वा थोडे भोजनको विषमाहार कहतेहैं ।

अल्प किंवा अधिक भोजनके दोष ।

आलस्यगौरवाटोपशब्दांश्चकुरुतेभृशम् ।
हीनमात्रंतनोःकार्श्यंकरोतिचबलक्षयम् ॥

अर्थ-बहुत अन्न भक्षण करनेसे आलस्य, देहमें भारीपना, पेटमें गुडगुडाहट ब्द, ये होतेहैं । उसीप्रकार अल्प भोजन करनेसे देहमें कृशता और बलक्षय ताहै ।

अकाल भोजनका निषेध ।

नाप्राप्तकालंभुंजीतहीनाधिकमथापिवा । अप्राप्तकालेभुंजानोअसमर्थतनुर्नरः । तांस्तान्व्याधीनवाप्नोतिमरणंचाधिगच्छति । कालेतीतेश्वतोजंतोर्वायुनोपहतेनले । कृच्छ्राद्विपच्यतेभुक्तंनस्याद्भोक्तुंपुनःस्पृहा । तस्मात्सुसंस्कृतं युक्त्या दोषैरेतैर्विवर्जितः । सुखासन्नोगुणैर्युक्तमुपसेवेत भोजनम् । दौर्मनस्यंभयंक्रोधंभुंजानःपरिवर्जयेत् ॥

अर्थ-विनाकालके थोडा या बहुत भोजन न करे, क्योंकि विना समयके भोजन करनेसे देह सामर्थ्यरहित होता है, तथा शिरोव्यथा, अतिसार, विलंबिका, अलसक इत्यादि अनेक प्रकारकी व्याधि होती हैं । यदि वह व्याधि शांत न होवे तो यह प्राणी मरणदशाको प्राप्त होता है । और भोजनकाल व्यतीत होनेपर भोजन करनेसे वातके कोपसे जठराग्नि मन्द होती है । और भोजन कराहुआ अन्न बडी कठिनतासे पचन होता है । तथा फिर भोजन करनेकी इच्छा नहीं होती अतएव उक्तदोषरहित, सुसंस्कृत तथा उपयुक्त गुणसंपन्न आहार भोजनकरे तथा सुखपूर्वक बैठकर आहार करे । भोजन करते समय दौर्मनस्य, भय, क्रोध इत्यादि सर्व वस्तु त्यागदेनी चाहिये ।

रसेनान्नस्य रसना प्रथमेनोपतापिता ।
नतथास्वादमाप्नोतिततःसेव्यंतनान्तरा ॥

अर्थ-जिह्वा प्रथम अन्नरस करके तृप्त होती है ऐसी इतर पदार्थोंकरके तृप्त नहीं हो इसीसे एकपदार्थके साथ दूसरा पदार्थ सेवन न करे ।

भोजनका प्रमाण ।

कुक्षेर्भागद्वयंभोज्यैस्तृतीयंवारिपूरयेत् ।
वायोःसंचारणार्थायचतुर्थमवशेषयेत् ॥

अर्थ-मनुष्य कूखके दो भाग अन्नसे पूर्ण करे, तथा तीसरा भाग जलकरके पूर्ण करे और चतुर्थ भाग वायुके संचारणार्थ खाली रहने देवे ।

जलका प्रमाण ।

अत्यम्बुपानान्नविपच्यतेन्नंनिरम्बुपानाच्चसएवदोषः । तस्मान्नरोवह्निविवर्द्धनायमुहुर्मुहुर्वारिपिबेदभूरि । भुक्तस्यादौजलं पीतंकार्श्यमन्दाग्निदोषकृत् । मध्येग्निदीपनंश्रेष्ठमन्तेस्थौल्यकफप्रदम् ॥

अर्थ-अत्यंत जल पीनेसे अन्न परिपक्व नहीं हो तथा विना जलके पीनेसे भी वही दोष होता है अर्थात् अच्छीरीतिसे परिपाक नहीं होता अतएव मनुष्य अग्नि बढानेके अर्थ वारंवार थोडा थोडा जल पीवे । भोजनके आदिमें जल पीना कृशता, और मंदाग्नि आदि दोष करे है । भोजनके मध्यमें पीनेसे अग्नि संदीपन करे और भोजनान्तमें जल पीना स्थूलता और कफप्रद जानना ।

तृषाक्षुधामें व्यत्यय उपचारका निषेध ।

तृषितस्तुनचाश्नीयात्क्षुधितोनापिबेज्जलम् ।
तृषितस्तुभवेद्गुल्मी क्षुधितस्तु जलोदरी ॥

अर्थ-तृषामें भोजन न करे और क्षुधामें प्रथम जल न पीवे, कारण कि, प्यासमें भोजन करनेसे गोलेका रोग होवे है और भूखमें जल पीनेसे जलंधरका रोग होता है ।

शिष्य-शिष्टपुरुष भोजनके अंतमें दूध पीते हैं सो यह अनुचित है,क्योंकि भोजनकालके तीन भाग करनेसे भोजनका प्रथमकाल वातका है, दूसरा पित्तका और तीसरा कफका इसीसे लिखा है । यथा "अश्नीयात्तन्मनाभूत्वापूर्वंतुमधुरंरसम् । मध्येम्ललवणौ पश्चात्कटुतिक्तकषायकान्" इसका यह तात्पर्य है कि, भोजनके पूर्व मधुर रस भोजन कराहुआ बुभुक्षित मनुष्यके वातपित्तका शमन करता होता है और भोजनके मध्यमें खट्टे और नमकीन रसोंके खानेसे वो पित्ताशयमें

जठराग्निकी वृद्धि करतेहैं तथा भोजनके अंतमें भक्षण करेहुए कटु, तिक्त और कषेले रस कफको शमन करते हैं, अतएव हे गुरो ! मेरी यह प्रार्थना है कि, भोजनके अंतमें कफका काल है उसमें कफकारी दुग्ध पीना तो सर्वथा अनुचित है, फिर क्यों पीते ? जैसे दूधके गुण लिखे हैं "दुग्धंस्वादुरसंस्निग्धमोजस्यं धातुवर्द्धनम् । वातपित्तहरं वृष्यं श्लेष्मलं गुरुशीतलमिति"

गुरु-तुम्हारा कहना बहुत ठीक है परंतु भोजनके अंतमें दूध पीनेका यह कारण है ।

विदाहीन्यन्नपानानियानिभुंक्तेहिमानवः ।
तद्विदाहप्रशान्त्यर्थंभोजनान्तेपयःपिबेत् ॥

अर्थ-भोजनके समय मनुष्य विदाही अन्न और पने आदि पीता है उनके विदाह शांति करनेको भोजनके अंतमें अवश्य दूध पीवे, यदि केवल मिष्ट पदार्थ आदि भोजन करा होवे तो अंतमें दूध पीनेकी कुछ आवश्यकताभी नहीं है । परंतु भोजनमें एक रस-ही न खावे जैसे ।

ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है ।

नचैकरससेवायांप्रसज्येतकदाचन । एकैकशःसमस्तान्वाना-प्यश्नीयाद्रसान्सदा । कुर्यात्क्षीरान्तमाहारंनदध्यन्तंकदाच-न ॥ लवणाम्लकटूष्णानिविदाहीन्यत्तियानितु । तद्दोषंहर्त्तु-माहारंमधुरेणसमापयेत ॥

अर्थ-प्राणीको उचित है कि, निरंतर एकही प्रकारके रसयुक्त द्रव्य अथवा एक-वारमें अनेक प्रकारके रस मिलायकर भोजन न करे (किंतु कभी मीठा, कभी खट्टा कभी निमकीन, आदि रसोंको भोजन करे) और यहभी स्मरण रहे कि, क्षीरान्त भो-जन करे, दध्यन्त भोजन न करे, अर्थात् भोजनके अंतमें दूध पीवे तो अनेक गुण होते हैं और भोजनके अंतमें दही खानेसे अनेक प्रकारकी व्याधि होती है (परंतु आरंभमें दही खाना लिखा है) नोनके, खट्टे, चरपरे, गरम, और जो विदाहकारी रस खाये हैं उनकी शांतिके लिये मधुर रससे भोजनकी समाप्ति करनी चाहिये ॥

अथवा दूसरा उत्तर यह है कि, भोजनके अंतमें दुग्धादि मधुर भोजन करके वढा जो कफ सो लवणाम्ल कटु भोजनजनित पित्तकी वृद्धिको नाश करे है । पित्तकी वृद्धि नाश होनेसे कफकी अतिवृद्धि स्वयं क्षीण होजाती है । अतएव क्षीण कफ, वृद्धि, अग्निमांद्यादि व्याधि उत्पन्न करनेको समर्थ नहीं होवे ।

शिष्य-हे गुरो ! शत्रुनाश होनेपर शत्रुहन्ताकी वृद्धि होती है, क्षीणता नहीं होती फिर आप पित्तनाश होनेसे कैसे कफकी क्षीणता कहते हो ?

गुरु-इसका यह उत्तर है कि, बलवान् शत्रुके मारनेसे मारनेवालेकी क्षीणता होती है। जैसे लिखा है "**नाशनात्प्रत्यनीकस्य स्वयंचक्षीयते यथा। वह्निसंतप्तलोहस्य तप्ततानाशनाज्जलम्**" इस श्लोकका यह अर्थ है कि, दूसरेको नाश करनेसे आप क्षीण हो जाताहै। इसमें दृष्टान्त है कि, जैसे अग्निमें तपेहुए लोहकी उष्णता शांति करनेसे जल क्षीण हो जाता है, अर्थात् गरम लोहपर शीतल जल डालोगे तो प्रथमतो शीतत्व गुण नष्ट होकर गरम हो जाता है दूसरे वो जल वाफरूप होकर उडजाता है तो तोलमेंभी कम होता है इसीप्रकार यहां जानो।

कदाचित् तुम ऐसा मानो कि, भोजनके अंतमें कटु तिक्त कषाय रसोंके सेवनेसे कफकी शांति हो वात प्रबल होयगी तो उसका यह प्रत्युत्तर है कि,कट्वादि रस क्षीण शक्ति होनेसे वात प्रबल नहीं करसकते जैसे लिखा है।

यदेकंनाशयेद्दोषंतदन्यंवर्द्धयेत्कुतः।
नाशनेह्येकदोषस्ययतस्तत्क्षीणशक्तिकम् ॥

अर्थ-जो दोष एक दोषको नष्ट कर चुकाहै वो दूसरेको कैसे बढावेगा क्योंकि एक दोषके मारनेसे वह दोष क्षीण शक्ति होजाताहै।

वास्तवसे यह सिद्धांत है कि, यह प्राणी जिस रसको अधिक भोजन करता उसी रसके अन्य सब रस वशीभूत हो जाते हैं।

जग्धाःसर्वेऽपिगच्छन्तिबलिनोवश्यतांरसाः।
यथाप्रकुपितादोषावशंयान्तिबलीयसः ॥

अर्थ-संपूर्ण भक्षण करेहुए रसोंमें जो अधिक रस होता है उसीके वश अन्य सब रस होजाते हैं अर्थात् अधिक रसकाही गुण होता है। उसीप्रकार कुपितदोष बलवान् दोषके वशीभूत हो जातेहैं।

एवंभुक्त्वासमाचामेदन्तग्रहणपूर्वकम्। भोजनेदन्तलग्नानिनिर्हृत्याचमनंचरेत्। दन्तान्तरगतंचान्नंशोधनेनाहरेच्छनैः। कुर्यादनिर्हृतंताद्धिमुखस्यानिष्टगन्धताम्। दन्तलग्नमनिर्हार्यं लेपंमन्येतदन्तवत्। नतत्रबहुशःकुर्याद्यत्नंनिर्हरणंप्रति ॥

अर्थ-इसप्रकार भोजन करके आचमन करे फिर जलसे हाथमुखको धोवे और कुरले करे जिससे दांतोंमें अटकाहुआ अन्न बाहर निकल जावे फिर आचमन करे।

यदि कुरले करनेसे भी दांतोंमें अटकाहुआ अन्नादि न निकले तो उसको तिनके आदिसे निकालना चाहिये, क्योंकि दांतोंमें लगेहुये अन्नको न निकालनेसे मुखमें दुर्गंध आने लगतीहै । यदि कोई वस्तु दांतोंमें ऐसी अटक जावे कि निकालनेसे भी न निकले तो उसको बहुत यत्नभी न करे क्योंकि बहुत कुरेदनेसे मसूढेनको हानि पहुँचतीहै । उस अटके पदार्थको दांतोंकेही समान जानना उसका कुछ दोष नहीं है । कहीं दंतग्रहणपूर्वकी जगे "क्षुद्रूक्षग्रहणपूर्वकम्" ऐसा पाठांतरहै ।

द्राक्षादीनिफलानीक्षून्पयोमूलंघृतंदधि ।
ताम्बूलमौषधंपत्रंहविर्भुक्त्वापिनाचमेत् ॥

अर्थ-दाखसे आदि ले फल, ईख, दूध, कंद, घृत, दही, तांबूल, औषध, पत्र, और हविष्यपदार्थको भोजन करनेपर भी आचमन न करना चाहिये क्योंकि इनके ऊपर आचमन करनेसे श्वास कासादि रोग प्रगट होतेहैं ।

भोजनानन्तर क्रिया ।

आचम्यजलयुक्ताभ्यांपाणिभ्यांचक्षुषीस्पृशेत् । भुक्त्वापाणितलेघृष्ट्वाचक्षुषोर्यदिदीयते । अचिरेणैवतद्वारितिमिराणि व्यपोहति ॥

अर्थ-इसप्रकार हाथोंको धोय गीले हाथोंसे नेत्रोंको स्पर्श करे इस विषयमें ऐसा लिखाहै कि भोजन कर हाथ धोवे फिर हाथसे हाथ मलकर नेत्रोंपर फेरनेसे उन हाथोंका पानी नेत्रोंमें लगाहुआ शीघ्र नेत्ररोगोंको नाश करेहै ।

भुक्त्वाचसंस्मरेन्नित्यमगस्त्यादीन्सुखावहान् । विष्णुरात्मा तथैवान्नंपरिणामश्चवैयथा । सत्येनतेनमेभुक्तंजीर्यत्वन्नमिदन्तथा ॥

अर्थ-भोजन करनेके पश्चात् सुखदायक अगस्त्यादि ऋषियोंका स्मरण करे, इसप्रकार कि, भोजनकर्त्ताभी विष्णुहै और अन्नभी विष्णुहै तथा उस अन्नका परिणाम जो है वोभी विष्णुहीहै, यदि यह सत्यहै तो मेरा भोजन करा हुआ यह आहार पाचन होउ ।

अगस्तिरग्निर्वडवानलश्चभुक्तंसमानंजरयंत्वशेषम् ।
सुखंचमेतत्परिणामसम्भवंयच्छत्वरोगंममचास्तुदेहम् ॥

अर्थ-अगस्ति, अग्नि, और वडवानल, ये मेरे भोजन करेहुए अन्नको पाचन करो उस अन्नके परिणामसे जो सुख होताहै वह मुझको देउ, और मेरी देह नैरोग्य हो

अङ्गारकमगस्तिञ्चपावकंसूर्यमश्विनौ ।
पंचैतान्संस्मरेन्नित्यंभुक्तंतस्याशुजीर्यति ॥

अर्थ-मंगल, अगस्त्यऋषि, अग्नि, सूर्य, और अश्विनीकुमार, इन पांचोंका जो पुरुष नित्य स्मरण करताहै उसका भोजन कराहुआ शीघ्र पच जाताहै ।

अगस्तिंकुंभकर्णंचशनिंचवडवानलम् । आहारपाचनार्थाय स्मरेद्भीमञ्चपञ्चमम् । शर्यातिंचसुकन्यांचच्यवनंशक्रमश्विनौ । भुक्तमात्रःस्मरेद्यस्तुचक्षुस्तस्यनहीयते ॥

अर्थ-अगस्त्य, कुंभकर्ण, शनिदेव, वडवानल, और पंचम भीमसेन इनको मैं आहार पचनेके अर्थ स्मरण करताहूं । जो मनुष्य भोजन करके शर्याति, सुकन्या, च्यवन, इन्द्र और अश्विनीकुमार इनका स्मरण करताहै उसके नेत्र कभी नष्ट नहीं होते ।

इत्युच्चार्यस्वहस्तेनपरिमार्ज्यंतथोदरम् । अनायासप्रदायीनिकुर्यात्कर्माण्यतन्द्रितः । "अतन्द्रितः" निरंतरंजागृतस्तिष्ठेन्नतुसुप्यात् । कुतः " भुक्तमात्रस्यतुस्वप्नाद्धन्त्यग्निंकुपितःकफः ॥"

अर्थ-[शर्याति] इस श्लोकको त्याग कर बाकीके श्लोकोंका उच्चारण करता हुआ पेटपर हाथ फेरै तथा जिससे परिश्रम न होवे, ऐसे कर्मोंका अनुष्ठान करे (अतन्द्रितः) इस पदके कहनेका यह प्रयोजनहै कि भोजन करके निरन्तर जगा करे सोवे नहीं क्योंकि सोनेसे कफ कुपितहो मंदाग्निको प्रगट करताहै ।

शब्दान्स्पर्शांश्चरूपाणिरसान्गंधान्मनःप्रियान् । भुक्तवान्साधुसेवेततेनान्नंसाधुतिष्ठति । शब्दःस्पर्शस्तथागन्धोरसोरूपंजुगुप्सितम् । भुक्तमप्रयतस्यान्नमतिहासंचवामयेत् ॥

अर्थ-भोजनके पश्चात् शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, ये मनको आनंददायक ऐसे पांच विषय सेवन करने चाहिये, इसप्रकार करनेसे भोजन कराहुआ अन्न स्वस्थानमें भलेप्रकार स्थित होता है । परंतु निंदित शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, और अति हास्य इनके योग करके वमन हो जाताहै इसीसे सुंदर गीत, बाजे, आदिको सुनै । सुंदर वस्तु आदिको देखनां चाहिये ।

भोजनोत्तर दोषवृद्धि ।

जीर्णेऽन्नेवर्द्धतेवायुर्विदग्धेपित्तमेधते ।
भुक्तमात्रेकफश्चापिक्रमोऽयंभोजनोपरि ॥

अर्थ—अन्न पचनेपर वात बढती है, और अन्न पचतेसमय पित्त बढता है, और भोजन करतेही कफ बढता है । यह क्रम भोजनकरनेके उपरांत जानना ।

कफप्रतीकार ।

धूमेनापोह्यरूक्षैर्वाकषायकटुतिक्तकैः । कफंचभक्षयेद्युक्तंताम्बूलंक्रमुकादिभिः । पूगकर्पूरकस्तूरीलवंगसुमनंफलैः । फलैः कटुकषायैर्वामुखवैशद्यकारिभिः । ताम्बूलपत्रसहितैःसुगंधैर्वाविचक्षणः ॥

अर्थ—भोजनके पश्चात् मुखशोधन करके बाद धूमपान आदि करके अथवा कषेले चरपरे और कडुए रसोंके सेवन करके कफको नष्टकर तदनंतर सुपारी आदि करके युक्त ताम्बूल (बीडा) खाना चाहिये ।

ताम्बूलभक्षणके गुण ।

कामंप्रदीपयातिरूपमभिव्यनक्तिसौभाग्यमावहतिवक्रसुगन्धिताञ्च । ऊर्जंकरोतिकफजांश्चनिहन्तिरोगांस्ताम्बूलमेवमपरांश्चगुणान्करोति ॥

अर्थ—कामोद्दीपन करे, रूपको उज्ज्वल करे, तथा सुभगता और मुखको सुगंधित करे, बलकरे तथा कफजन्य रोगोंको दूर करे इसीप्रकार अन्य गुणोंकोभी ताम्बूल भक्षण करना करता है ।

चन्द्रश्चन्द्रनिभाननेचखदिरंपत्रंत्वगेलासुधाजातीपत्र्ययिपत्रयुक्तवदनेकङ्कोलजातीफलम् । कस्तूरीचलवङ्गमेणिनयनेबाह्लीकपुगीफलंद्रव्यैरेभिरापित्रयोदशमितैस्ताम्बूलमित्युच्यते॥

अर्थ—कपूर, कत्था, पान, दालचीनी, छोटी इलायचीके बीज, चूना, जावित्री, कंकोल, जायफल, कस्तूरी, लोंग, केशर, और सुपारीके वर्क इन १३ पदार्थोंको बीडाके पानमें धरके तांबूल कहते हैं उसको बीडा बनायकर भक्षण चाहिये ।

पानके सत्ताईस गुण।

ताम्बूलंकटुतिक्तमुष्णमधुरंक्षारंकषायंसरंरुच्यंवीर्यकरंलघुप्रियतमेवैशद्यसौगन्ध्यकृत्। आस्यस्याभरणंप्रसेकशमनंदौर्गन्ध्यहृच्छुद्धिकृज्जन्तुश्लेष्ममरुद्गलामयहरंकान्तिप्रदंवश्यकृत्। वृष्यंदन्तविरञ्जनंश्रमहरंसौभाग्यदंकीर्त्तितंजिह्वाजाड्यगदापहंमुनिवरैर्नक्षत्रगुण्यंमतम् ॥

अर्थ—ताम्बूल चरपरा, कडुआ, गरम, मीठा, खारी, कषैला, दस्तावर, रुचिकर, वीर्यकारक, लघु, स्वच्छताकारक, सौगन्ध्यकारक, मुखको शोभित करता, मुखसे जो लार गिरती है उसको रोकनेवाला, मुखकी दुर्गंधतानाशक, शुद्धिकर, और कृमिनाशक, तथा कफ, वायु, गलरोग, इनका नाशक कांतिकर, वशीकरणकर्त्ता, वृष्य, दांतोंको रंगनेवाला, श्रमनाशक, सौभाग्यदायक, और जीभकी जडता नाशकारक, ऐसे ताम्बूलमें २७ गुण हैं।

चूनाकत्थाके न्यूनाधिकमें कथन।

युक्तेनचूर्णेनकरोतिरागंरागक्षयंपूगफलातिरिक्तम्। चूर्णाधिकंवक्त्रविगंधकारिपत्राधिकंसाधुकरोतिगंधम्। पत्राधिकंनिशिहितंसफलंदिवाचप्रोक्तान्यथाकरणमस्यविडम्बनैव। कंकोलपूगलवलीफलपारिजातैरामोदितंमदमुदामुदितंकरोति॥

अर्थ—उचित चूनेसे बीडा मुखमें रंग करता है। और बीडेमें सुपारी अधिक होवे तो रंगका नाश होता है। यदि पानमें चूना अधिक लगायाजाय तो मुखमें दुर्गंध करता है। और पत्राधिक होय तो सुगंध करे रात्रिमें पत्राधिक बीडा खाना हित है, और दिनमें सुपारी सहित खाना हित है, इससे विपरीत बीडा खाना केवल विडंवन मात्र है। कंकोल, सुपारी, लौंग, जायफल इनसे सुगंधित ताम्बूल मनुष्यको मदोन्मत्त आनन्दसे आनंदित करताहै।

चूनेकत्थेआदिका प्रमाण।

गुंजार्द्धंचूर्णकंचैवतत्समंखादिरंमतम्। माषैकंक्रमुकंसर्वेकर्पूरादिगणंचयत्। मिश्रितंपूगतुल्यंस्यात्ताम्बूलेमानमीरितम्॥

अर्थ—चूना और कत्था आध आध रत्ती लगावे, सुपारीका चूरा ६ रत्ती और कपूर लौंग आदिका चूर्ण ६ रत्ती इस प्रमाणसे बीडा बनाना चाहिये।

बीडाखानेका समय ।

रतौसुप्तोत्थितेस्नातेभुक्तेवान्तेचसंगरे ।
सभायांविदुषांराज्ञांकुर्यात्ताम्बूलचर्वणम् ॥

अर्थ—स्त्रीसंभोगके समय, शयनसे उठकर, स्नान पूजादिसे निवृत्त होकर, भोजन करके, वमन करके, युद्धमें (कुश्ती, वा संग्राममें) राजा अथवा पंडितोंकी सभामें इतनी जगह बीडा खाना चाहिये ।

नवंतदेवमधुरंकषायानुसरंगुरु । बलासजनकंप्रायःपत्रशाकसमंस्मृतम् । पर्णंपुराणमकटुक्षुल्लकंतनुपांडुरम् । विशेषाद्गुणवज्ज्ञेयमन्यद्धीनगुणंमतम् ॥

अर्थ—नया पान मीठा, कषेला, भारी, कफकारक और पत्रशाकके समान गुणोंमें है; यदि पान पुराने होवे तो चरपरे नहीं हों और हलके पतले पीले होते हैं । वो विशेष गुण करते हैं । और कोमल (मुरझे) पान हीनगुण होते हैं ।

सुपारीके गुण ।

पूगंगुरुहिमंरूक्षंकषायंकफपित्तनुत् ।
मोहनंदीपनंरुच्यमास्यवैरस्यनाशनम् ॥

अर्थ—सुपारी भारी, शीतल, रूखी, कषेली, कफपित्तनाशक, मोहकर्त्ता, दीपन, रुचिकारी और मुखकी विरसताको नाश करे हैं ।

पूगंस्याद्दृढमध्यंयत्स्विन्नंवापित्रिदोषनुत् ।
सरसंगुर्वभिष्यान्दितद्भृशंवह्निनाशनम् ॥

अर्थ—सुपारी जो बीचमें कठोर तथा सिजायकर तयार करी अर्थात् चिकनी सुपारी त्रिदोषनाशक, स्वादिष्ठ, भारी, लार बहानेवाली और वह्निनाशक है ।

कत्थे चूने और पानके मिलेहुए गुण ।

खदिरःकफपित्तघ्नश्चूर्णवातबलासनुत् ।
संयोगतस्त्रिदोषघ्नःसौमनस्यंकरोतिच ॥

अर्थ—कत्था कफपित्तको नाश करता है, चूना वातकफको दूर करे, इन कत्थे चूने और पानके मिलनेसे त्रिदोषघ्न होजाता है । और मनको प्रसन्न करे है । यदि बीडीमें चूनेकी अधिकतासे मुख फटजावे तो उत्तम कत्थेका चूर्ण उस फटे स्थानमें बुरकनेसे अच्छा होता है कोई कोई चूने कत्थेको गुलाबजल आदिमें भिजोकर सुगंधित करते हैं ।

पानके त्याज्य अंग।

आयुरग्रेयशोमूलेलक्ष्मीर्मध्येव्यवस्थिता। तस्मादग्रंतथामूलंमध्यंपर्णस्यवर्जयेत्। पर्णमूलेभवेद्व्याधिःपर्णाग्रेपापसंभवः। चूर्णपत्रंहरत्यायुः शिराबुद्धिविनाशिनी॥

अर्थ--पानके अग्रभागमें आयुष्य, मूलमें यश, मध्यभागमें लक्ष्मी रहती है। इसीसे पानका मूल मध्य और अग्रभाग त्यागकर भक्षण करना चाहिये। पानका मूल भक्षण करनेसे व्याधि प्रगट हो, अग्रभाग खानेसे पाप हो, तथा पानका चूरा करके खानेसे आयुष्य नष्ट हो और शिरायुक्त (पानकी लकीर होती है उनके विना निकाले) खानेसे बुद्धिका नाश होता है।

पानकी पीकके गुणागुण।

आद्यंविषोपमंपीकंद्वितीयंभेदिदुर्जरम्।
तृतीयादितुपातव्यंसुधातुल्यंरसायनम्॥

अर्थ--वीडी चबायकर उसकी प्रथम पीक थूक देवे, यह विषके समान मारक है और दूसरी पीक रेचक और दुर्जर है। तथा तीसरी पीक न थूके उसको निगल जावे यह अमृतके तुल्य हितकारक है। तथा जरा व्याधि इनको नाशक है।

विना पानके सुपारीखाना निषेध।

अनिधायमुखेपर्णंपूगंखादातियोनरः।
दशजन्मदरिद्रःस्यात्ततश्चाधोगतिंव्रजेत्॥

अर्थ--वीडीके पान विना जो मनुष्य सुपारी खाता है वह दशजन्म दरिद्रीहो फिर अधोगतिको जाता है। परंतु यह निषेध वीडी खानेवालेके प्रति है अन्यको नहीं है।

ताम्बूलनिषेध।

ताम्बूलंनातिसेवेतनविरिक्तोबुभुक्षितः। देहदृक्केशदन्ताग्निश्रोत्रवर्णवलक्षयः। शोषः पित्तानिलास्रंस्याददतिताम्बूलभक्षणात्। ताम्बूलंनहितंदन्तदुर्बलेक्षणरोगिणाम्। विषमूर्च्छामदार्त्तानांक्षतिनांरक्तपित्तिनाम्॥

अर्थ--जिसको विशेष दस्तहुये हो, तथा भूख लग रहीहो इनको वीडा नहीं खाना चाहिये, यदि खाय तो देह, दृष्टि, केश, दांत, अग्नि, कान, कांति और वल इनका क्षय हो। तथा शोष, पित्त, वातरक्त, ये, विकार होतेहैं और जिसके दांत

दुर्बल हो नेत्ररोग, विष, मूर्च्छा, मद, इनसे पीडित उरःक्षती, तथा रक्तपित्ती, इन-को तांबूलभक्षण अहितकारी जानना ।

शतपदगमन ।

भुक्त्वाशतपदंगच्छेच्छनैस्तेनतुजायते । अन्नसंघातशैथिल्यंग्रीवाजानुकटीसुखम् । भुक्तोपविशतस्तुन्दंशयानस्यतु पुष्टता । आयुश्चंक्रममाणस्यमृत्युर्धावातिधावतः ॥

अर्थ-भोजनानंतर धीरे धीरे सौपैर (सौकदम) चलना चाहिये, इससे अन्न-समूह शिथिल होता है और ग्रीवा (नाड) जानु और कमर इनको सुख होताहै । जो मनुष्य भोजन करतेही बैठ जाता है उसकी थौंद छिटक पडती है । सोनेसे मेद बढकर पुष्टता होतीहै और धीरे धीरे डोलनेसे आयु बढती है । तथा भोजनकरके दौडनेसे उसके साथ मृत्यु दौडती है ।

शयनक्रम ।

श्वासानष्टौसमुत्तानस्तान्द्विः पार्श्वेतुदक्षिणे ।
ततस्तुद्विगुणान्वामेपश्चात्सुप्याद्यथासुखम् ॥

अर्थ-भोजनानंतर सौ कदम डोलकर आठश्वासपर्यंत चित्त लेट जावे, फिर सोल-हश्वास दहनी करवट सोवे फिर ३२ श्वास निकले इतनी देरतक बाँई करवट सोवे पीछे अपनी इच्छानुसार चाहिये जिधरकी करवटसे सोवे ।

वामपार्श्वशयनका कारण ।

वामदिशायामनलोनाभेरूर्ध्वोस्तिजंतूनाम् ।
तस्मात्तुवामपार्श्वेशयीतभुक्तप्रपाकार्थम् ॥

अर्थ-बांई तरफ नाभीके ऊपर अग्निस्थान है, इसीसे भोजन करेहुए मनुष्यको अन्नके परिपाकार्थ बांई करवट शयन करनाचाहिये ।

खट्वादिके गुण ।

त्रिदोषशमनीखट्वातूलीवातकफापहा । भूशय्याबृंहणीवृष्या काष्ठपट्टीतुवातला । मतान्तर । भूशय्यावातलातीवरूक्षा पित्तास्रनाशिनी ॥

अर्थ-खाट (चारपाई) त्रिदोषको शमन करतीहै, और रूई वातकफको नाश करती है । पृथ्वीमें शयन करना स्थूलता और वृष्यताको करे है. लकडीकी पट्टीपै

(मैज कौच) आदिपर सोना वादी करे है। किसीके मतसे पृथ्वीमें शयन बादीकरें, और अतीव रूक्ष तथा रक्तपित्तको नाश करे है।

श्रेष्ठ शय्याके गुण।

सुशय्याशयनंहृद्यंपुष्टिनिद्राधृतिप्रदम्।
श्रमानिलहरंवृष्यंविपरीतमतोऽन्यथा॥

अर्थ-सुंदर सेजपर शयन करना प्रियकारक तथा पुष्टि, निद्रा, और धैर्यको करे है। तथा श्रम और वायु इनका नाश करे तथा स्त्रीविषयमें बँधेज करे इससे विपरीत अर्थात् दुष्टशय्या होय तो इससे विपरीत गुण करे अर्थात् अप्रिय तथा कृश, अनिद्रा, और धैर्यच्युति, तथा श्रम और वायुको प्रगट करे।

पादसंवाहन।

संवाहनंमांसरक्तत्वक्प्रसादकरंपरम्।
प्रीतिनिद्राकरंवृष्यंकफवातश्रमापहम्॥

अर्थ-पैरोंका दबाना मांस, रक्त, और त्वचा इनको स्वच्छ करे, तथा प्रीति, निद्रा, इनको उत्पन्न करे और कफ, वायु, श्रम इनका नाश करे है।

शयनोत्तर पवन खाना निषेध।

प्रवातंरौक्ष्यवैवर्ण्यस्तम्भहृद्दाहपित्तनुत्।
स्वेदमूर्च्छापिपासाघ्नमप्रवातमतोऽन्यथा॥

अर्थ-निद्रा लेकर हवा खाना रूक्ष है, तथा विवर्णता, स्तंभ, इनको करेहै। और दाह, पित्त, पसीने, मूर्च्छा, प्यास, इनको नाश करे तथा हवा न खानेसे उक्त-गुण विपरीत होतेहैं।

हवा खानेका काल।

सुखंप्रवातंसेवेतग्रीष्मेशरदिचान्तरा।
निर्वातमायुषेसेव्यमारोग्यायचसर्वथा॥

अर्थ-गरमीकी ऋतुमें तथा शरदृऋतुमें सुखपूर्वक हवा खाना चाहिये। परंतु आयु और आरोग्यकेलिये निर्वात स्थानही सेव्यहै। निर्वात कहनेसे अत्यंत पवनका निषेधहै, क्योंकि हवादार मकानमें रहना इसमें सबकी संमतिहै।

पूर्वदिशाकी पवन।

पूर्वोनिलोगुरुःसोष्णस्निग्धःपित्तास्रदूषकः। विदाहीवातलः श्रांतिकफशोषवतांहितः। स्वादुःपटुरभिष्यन्दीत्वग्दोषा र्शोसुखकृमीन्। सन्निपातज्वरंश्वासमामवातंचकोपयेत्॥

अर्थ-पूर्वकी वायु भारी, गरम, स्निग्ध और पित्त तथा रक्तको कुपित करनेवाली, दाहक, वातकर ऐसाहै । तथा श्रमी, कफवाला, और शोषी इनको हितकारीहै । स्वादु, खारी, पुष्टिकारक, त्वचाके दोष, ववासीर, दांतोंमें कीडा, सन्निपात, ज्वर, श्वास, तथा आमवात इनको कुपित करताहै ।

दक्षिणपवनके गुण ।

दक्षिणःपवनःस्वादुःपित्तरक्तहरोलघुः ।
वीर्येणशीतलोबल्यश्चक्षुष्योनतुवातलः ॥

अर्थ-दक्षिणकी पवन स्वादु, रक्तपित्तका नाशक, वीर्य करके शीतल, बलकारक, नेत्रोंको हितकारी और अवातलहै । अर्थात् बादी नहीं करे इसीसे बहुतसे मनुष्य प्रातःकाल इसका सेवन करतेहैं ।

पश्चिमपवनके गुण ।

पश्चिमःपवनस्तीक्ष्णःशोषणोबलहृल्लघुः ।
मेदपित्तकफध्वंसीप्रभंजनविवर्द्धनः ॥

अर्थ-पश्चिमकी पवन तीक्ष्ण, और शोषण, (अर्थात् सर्व वस्तुओंको सुखानेवाली) बलहरणकर्त्ता और हलकीहै । तथा मेद, पित्त और कफनाशक, तथा वातबढानेवालीहै ।

उत्तरपवनके गुण ।

उत्तरोमारुतःशीतःस्निग्धोदोषप्रकोपकृत् ।
क्लेदनःप्रकृतिस्थानां बलदो मधुरोमृदुः ॥

अर्थ-उत्तरकी पवन शीतल, स्निग्ध, और दोषोंको कुपित करताहै । वातप्रकृतिवालोंको ग्लानिकारक और बलकारक, मधुर तथा नम्रहै ।

आग्नेयादि विदिशाकी पवनके गुण ।

आग्नेयोदाहकृद्रूक्षोनैर्ऋतोनचदाहकृत् ।
वायव्यस्तुभवेत्तिक्तऐशानःकटुकःस्मृतः ॥

अर्थ-अग्निकोणकी पवन दाहकर्त्ता और रूक्षहै, नैर्ऋतकी दाह नहीं करे वायव्यकी पवन कटुहै । और ईशानकी हवा चरपरी है ।

अनेक दिशाकी संयुक्तपवनके गुण ।

विष्वग्वायुरनायुष्यःप्राणिनांबहुरोगकृत् ।
अतस्तंनैवसेवेतसेवितःस्यान्नशर्मणे ॥

अर्थ-अनेक दिशाकी पवन मिलीहुई आयुष्यनाशक, तथा प्राणियोंके अनेक रोग करनेवालीहै इसीसे ऐसी पवन कभी नहीं सेवन करनी । यदि सेवन करे तो सुख नहीं हो किंतु दुःख हो ।

पंखेकी पवनके गुण ।

व्यजनस्यानिलोदाहस्वेदमूर्च्छाश्रमापहः । तालवृन्तभवो वातस्त्रिदोषशमनोमतः । वंशव्यजनजस्तूष्णोरक्तपित्तप्रकोपनः । चामरोवस्त्रसंभूतोमायूरोवेत्रजस्तथा । एतेदोषजिता वाताःस्निग्धाहृद्याःसुपूजिताः ॥

अर्थ-पंखेकी पवन दाह, पसीने, मूर्च्छा, और श्रम, इनका नाशकहै । ताडके पंखेकी पवन त्रिदोषनाशक जानना । बाँससे बना पंखा गरम और रक्तपित्तको कुपित करनेवाला जानना, तथा चमर, कपडेका पंखा, मोरपंखकी पंखी, वा मोरछल, और बेंतका पंखा, इनकी पवन त्रिदोषनाशक, स्निग्ध, प्रिय और उत्तम जानना इसी-प्रकार हाथीदांत आदिकी पंखियोंके गुण विचार लेने ।

दिनमें सोनानिषेध ।

दिवास्वापंनकुर्वीतयतोसौस्यात्कफावहः ।
ग्रीष्मवर्ज्येषुकालेषुदिवास्वापोनिषिध्यते ॥

अर्थ-दिनमें नहीं सोना चाहिये, क्योंकि दिनमें सोना कफ करताहै, परंतु ग्रीष्म-ऋतुको त्यागकर अन्य ऋतुमें दिनका सोना निषेधहै । गरमियोंमे तो अवश्य मध्याह्नमें सोवे ।

दिनमें सोनेकी आज्ञा ।

उचितोहिदिवास्वापोनित्यंयेषांशरीरिणाम् । वातादयःप्रकुप्यन्तितेषामस्वपतांदिवा । व्यायामप्रमदाध्ववाहनरतान्क्लांतानतीसारिणः शूलश्वासवतस्तथापरिगतान्हिक्कामरुत्पीडितान् । क्षीणान्क्षीणकफाञ्छिशून्मदहतान्वृद्धांस्तथाजीर्णिनोरात्रौजागरितान्नरान्निरशनान्कामंदिवास्वापयेत् ॥

अर्थ-जिनके दिनमें न सोनेसे वातादिक दोष कुपित होवेहों उन प्राणियोंको दिनमें सोना उचित है इसजगे [वातादयः] इस पदमें जो आदि शब्द है वो पित्त-का बोधक है कफका नहीं है ।

"दंडकसरत, स्त्रीसंग, और मार्ग चलनेसे जो थकित हैं, तथा सवारीमें बैठनेवाले ग्लानि, अतिसारी, शूलवाला, श्वास, हिचकी, वात, क्षीण और क्षीणकफवाला इतने रोगियोंको तथा बालक, मादक पदार्थ भक्षण करनेवाला, वृद्ध, अजीर्णरोगी, रात्रिमें जगाहुआ और जिसने उपवास कराहो इतने रोगियोंको दिनमें यथेच्छ सुलाना चाहिये" ।

स्वाधीननिद्राके गुण ।

दिवावायदिवारात्रौनिद्रासात्मीकृतातुयैः ।
नतेषांस्वपतांदोषोजाग्रतांचोपजायते ॥

अर्थ-दिनमें या रात्रिमें जिन मनुष्योंने निद्रा अपने आधीन कर रक्खी है, उनको दिनमें सोना न सोना तथा रात्रिमें जागना न जागना दोषकारी नहीं होता ।

भोजनोत्तर निद्राके गुण ।

भोजनानन्तरंनिद्रावातंहरतिपित्तकृत् । कफंकरोतिवपुषःपुष्टिंसौख्यंतनोतिहि । शयनंपित्तनाशायवातनाशायमर्दनम् । वमनंकफनाशायज्वरनाशायलंघनम् । आसीनघूर्णितंयत्तु नाभिष्यंदिनरूक्षणम् ॥

अर्थ-भोजनके पश्चात् शयन करना वातहरण करे, और पित्तको बढावे, कफ करे, देहको पुष्ट करे, और सुख करे । जैसे किसीने लिखा है कि-पित्त-नाशके अर्थ निद्रा, वातनाशनार्थ तैल आदिका मर्दन, कफके दूर करनेको वमन और ज्वर नाशनार्थ लंघन करना चाहिये । यदि बैठे बैठे निद्रा लेवे तो वह पुष्टि और रूक्षताको नहीं करे ।

भोजनोत्तर अन्य वस्तु वर्जित ।

शयनंचासनंचातिनभजेन्नद्रवाधिकम् । नाग्न्यातपौनप्लवनं नयानंनापिवाहनम् । व्यायामंचव्यवायंचधावनंयानमेवच । युद्धंगीतंचपाठंचमुहूर्त्तंभुक्त्वास्त्यजेत् ॥

अर्थ-अत्यंत निद्रा, अति भोजन, अत्यंत पतले पदार्थोंका भक्षण, अग्नि, धूपखाना, जलमें तैरना, मार्ग चलना, सवारीपर बैठना, व्यायाम करना, स्त्रीगमन, दौडना, चलना, युद्ध, (कुश्ती) करना, गान करना, और पढना ये भोजनकरके दो घडीपर्यंत न करे ।

अग्न्यादि तापनेके निषेधमें प्रमाण ।

अग्न्यातपप्लुवनयाननिषेवणैश्चव्यायाममैथुनविधावनयुद्धगीतैः । एभिश्चतत्क्षणकृतैर्विषमाशनाच्चह्यन्नंनपाकमुपयात्यपिजागराच्च ॥

अर्थ-अग्निसेवन, धूपमें बैठना, उछलना, कूदना, सवारी, दंडकसरत, मैथुन, दौडना, कुश्ती, तथा गाना, ये भोजन करनेपर तुरंतही करनेसे तथा विषमाशन और जागरण इनके करनेसे अन्न परिपाक नहीं होता ।

अजीर्णमें भोजनका विधिनिषेध ।

प्रातराशेत्वजीर्णेपिसायमाशोनदुष्यति ।
सायमाशेह्यजीर्णेचप्रातर्भुक्तंविषोपमम् ॥

अर्थ-प्रातःकालमें भोजन करा अन्न यदि न पचाहोय तथापि सायंकालमें भोजन करे तो कुछ दोष नहीं है । परंतु सायंकालका भोजन न परिपक्व भयाहो और प्रातःकाल भोजन करे तो वह विषके समान जानना ।

भवेद्यदिप्रातरजीर्णशङ्कातदाभयांनागरसैन्धवाभ्याम् ।
विचूर्णितांशीतजलेनभुक्त्वाभजेत्ततोऽन्नंमितमन्नकाले ॥

अर्थ-यदि प्रातःकाल अजीर्णकी शंका होवे तो छोटी हरड, सोंठ और सैंधानिमक इनका चूर्ण शीतलजलसे लेय और भोजनके समय परिमाणका भोजन करे ।

प्राग्भुक्तेत्वनलेमन्देद्विरह्नोनसमाहरेत् ।
पूर्वभुक्तेविदग्धेऽन्नेभुंजानोहंतिपावकम्

अर्थ-रात्रिका भोजन न पचाहोय तो दिनमें दोवार भोजन न करे, और सायंकालके अजीर्णमें दूसरे दिन भोजन करनेसे मंदाग्नि होती है ।

तथाच अन्य कारण ।

अत्यम्बुपानाद्विषमाशनाच्चसंधारणात्स्वप्नविपर्ययाच्च ।
कालेऽपिसात्म्यंलघुचापिभुक्तमन्नंनपाकंभजतेनरस्य ॥

अर्थ-अत्यंत जल पीनेसे, भोजनके ऊपर भोजन करनेसे मलमूत्र आदि वेगोंको धारण करनेसे निद्राकी विपरीततासे अर्थात् निद्राके समय जागना और जागनेके समय सोनेसे इन उक्त कारणोंकरके समयपर मनवांछित और हलकाभी भोजन कराहुआ

अन्न अच्छेप्रकार नहीं पचता । इसप्रकार दैहिक कारण कहकर अब मानसिक कारणोंको कहते हैं ।

ईर्ष्याभयक्रोधपरिप्लुतेनलुब्धेनरुग्दैन्यनिपीडितेन ।
विद्वेषयुक्तेनचसेव्यमानमन्नंनसम्यक्परिपाकमेति ॥

अर्थ-ईर्ष्या, भय, क्रोध, इनकरके युक्त पुरुषोंके तथा लोभी, रोगी, दीनता करके पीडित और द्वेषयुक्त चित्त जिसका ऐसे पुरुषोंके सेवन कराहुआ अन्न भलेप्रकार परिपाक नहीं होता ।

अध्यशनके लक्षण ।

अजीर्णेभुज्यतेयत्तुतदध्यशनमुच्यते ।

अर्थ-अजीर्णमें फिर दूसरे भोजन करनेको अध्यशन कहते हैं ।

दिनमें स्त्रीगमननिषेध ।

आयुःक्षयभयाद्विद्वान्नाह्निसेवेतकामिनीम् ।
अवशोयदिसेवेततदाग्रीष्मवसन्तयोः ।
आस्यावर्णकफस्थौल्यसौकुमार्यसुखप्रदा ॥

अर्थ-विद्वान् पुरुषोंको आयुक्षयके भयसे दिनमें स्त्रीसेवन नहीं करना चाहिये । यदि इन्द्रियोंके वश होकर करेभी तो ग्रीष्मऋतु और वसंतऋतुमें करे । तथा बैठना, वर्ण, कफ, स्थूलता, सुकुमारता और सुख इनको देय है ।

मार्गसेवन ।

अध्वावर्णकफस्थौल्यसौकुमार्यविनाशनः । यत्तुचङ्क्रमणं नातिदेहपीडाकरंभवेत् । तदायुर्बलमेधाग्निप्रदमिन्द्रियबोधनम् ॥

अर्थ-मार्ग चलना कफ, स्थूलता, सुकुमारता, इनका नाश करे है । और बागोंमें डोलना फिरना देहको पीडाकारी नहीं है । किंतु आयुष्य, बल, बुद्धि, अग्नि इनको बढाता है । और इन्द्रियोंको चैतन्य करे है ।

उष्णीष (पगडी) के गुण ।

उष्णीषंकांतिकृत्केश्यंरजोवातकफापहम् ।
लघुतच्छस्यतेयस्माद्गुरुपित्ताक्षिरोगकृत् ॥

अर्थ-पगडीका धारण करना कांति करे, बालोंको हित, धूल, वायु, कफ, इनको

नाश करे परंतु पगडी हलकी हो, यदि भारी होवे तो पित्त और नेत्ररोग करती है। परंतु दक्षिणी ब्राह्मणोंने कदाचित् यह श्लोक न सुना होगा।

उपानह (जोडा) धारण।

उपानद्धारणंनेत्र्यमायुष्यंपादरोगहृत्।
सुखप्रचारमोजस्यंवृष्यंचपरिकीर्तितम्॥

अर्थ-पैरोंमें जोडा अथवा मौजा पहरना नेत्रोंको हित है, आयु बढे, तथा पैरोंके रोग नष्ट हों और सुखपूर्वक फिरना होताहै, ओज बढे और वृष्य है। परंतु जाडोंके दिनोंमें तो अवश्य मोजा पहनकर फिर जोडा धारण करने चाहिये। जोडा पहननेमें अपनी अपनी रुचि है कोई देशी, कोई पंजाबी और कोई अंगरेजी जोडा (बूट) पसंद करता है।

जोडा नपहननेके अवगुण।

पादाभ्यामनुपानद्भ्यांसदाचङ्क्रमणंनृणाम्।
अनारोग्यमनायुष्यमिन्द्रियघ्नमदृष्टिदम्॥

अर्थ-सदैव विना पैरोंमें जोडा पहनने डोलनेसे रोग करे,: अनायुष्य करे और इन्द्रियोंको नष्ट करे तथा नेत्रकी ज्योति मंद करे है।

छत्रधारणगुण।

छत्रस्यधारणंवर्षातपवातरजोपहम्।
हिमघ्नंहितमक्ष्णोश्चमाङ्गल्यमपिकीर्तितम्॥

अर्थ-डोलतेसमय मस्तकपर छत्रीका लगाना, वर्षा, धूप, हवा, शीत, और धूलीको नाश करे। और नेत्रोंको हितकारक तथा मांगल्यकारक जाननी। राजे महाराजेके योग्य छत्रधारणका निर्णय बृहत्संहिताके ७२ अध्यायमें लिखाहै।

दण्डधारण।

सत्वोत्साहबलस्थैर्यधैर्यवीर्यविवर्द्धनम्।
अवष्टम्भकरंचापिभयघ्नंदण्डधारणम्॥

अर्थ-बाहर फिरनेके समय हाथमें लकडी रखनी चाहिये, इसके रखनेसे सत्व, उत्साह, बल, स्थिरता, धैर्य, वीर्य, इनको बढावे। तथा आश्रय देवे और भयको दूर करे है।

शिबिकारोहण ।

ऊर्ध्वाच्छादनसंयुक्ताशिबिकासर्ववल्लभा ।
तस्यामारोहणंनृणांत्रिदोषशमनंमतम् ॥

अर्थ–जिसके ऊपर पडदा पडाहो ऐसी पिनस या पालकीमें बैठना सबको प्रिय है । यह त्रिदोषको दूर करती है ।

नौकायान ।

वातश्लेष्मगदार्त्तानामहिताश्रमकृत्तरी ॥

अर्थ–नावमें बैठकर दर्यावकी शैर करना वातकफवाले रोगियोंकी अहित है । क्योंकि इनको श्रम करे है ।

हस्तियान ।

पित्तानिलकरोहस्तीलक्ष्म्यायुःपुष्टिवर्धनः ॥

अर्थ–हाथीकी सवारी वातपित्त करे है । और लक्ष्मी, आयुष्य, तथा पुष्टि इनको बढावे है ।

अश्वयान ।

घोटकारोहणंवातपित्ताग्निश्रमकृन्मतम् ।
मेदोवर्णकफघ्नंचहितंतद्बलिनांवरम् ॥

अर्थ–घोडेकी सवारी वातपित्त, अग्नि, और श्रमको करे है तथा मेद, वर्ण और कफ इनका नाश करे । परंतु घोडेपर चढना बलीपुरुषोंको कहा है । और बलीपुरुषोंकोही हितकारक जानना ।

धूप और छायाके गुण ।

आतपःस्वेदमूर्च्छास्रपित्ततृष्णाक्लमश्रमान् ।
दाहंविवर्णतांकुर्यादेतांश्छायाव्यपोहति ॥

अर्थ–धूप, पसीने, मूर्च्छा, रक्तपित्त तृषा, ग्लानि, श्रम और दाहको करती है । तथा वर्णको पलट देती है और छाया इन सब विकारोंको नाश करती है ।

वर्षाके गुण ।

वृष्टिर्वृष्याहिमाबल्यानिद्रालस्यविधायिनी ।
भयावहामोहकरीकुवृष्टिःकफवातला ॥

अर्थ–मेघोंकी वृष्टि–वृष्य, शीतल, बलकारी, निद्रा और आलस्य इनको देती है । तथा अतिवृष्टि भय, मोह और कफ वातको करे है । कोई यह गुण कुहरके कहता है ।

अग्निगुण ।

अग्निर्वातकफस्तंभशीतवेपथुनाशनः ।
आमाभिष्यन्दशमनोरक्तपित्तप्रकोपनः ॥

अर्थ-अग्नि-वायु, कफ और अंगके जिकड जानेको, शीत, तथा शरदीके योगसे कंप, आम और अभिष्यन्द (नेत्ररोग) इनका नाशक है । तथा रक्तपित्तको कुपित करनेवाला है ।

धूम (धुँए) के गुण ।

सद्यःश्लेष्मकरोधूमोनेत्रयोरहितोभृशम् ।
शिरोगौरवकृच्चापिवातंपित्तंचकोपयेत् ॥

अर्थ-धूआ सद्यः कफकारी है और नेत्रोंको अत्यंत अहित है मस्तकको भारी करनेवाला तथा वात पित्तको कुपित करनेवाला ऐसा है ।

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारेबृहन्निघंटुरत्नाकरे दिनचर्यावर्णनंनाम सप्तविंशतितमस्तरंगः ॥ २७ ॥

अव सदाचार कहनेके अर्थ इन्द्रियोपक्रमणीय अध्यायको चरकसे लिखते हैं ।

अथात इन्द्रियोपक्रमणीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अर्थ--अव इन्द्रियोपक्रमणीय अध्यायकी व्याख्या करेंगे ।

इहखलुपञ्चेन्द्रियाणि, पञ्चेन्द्रियद्रव्याणि, पञ्चेन्द्रियाधिष्ठानानि, पञ्चेन्द्रियार्थाः, पञ्चेन्द्रियबुद्धयोभवन्तीत्युक्तमिन्द्रियाधिकारे । अतीन्द्रियं पुनः मनः सत्त्वसंज्ञकञ्चेत्याहुरेके तदर्थात्मसम्पत्तदायत्तंचेष्टम् ॥

अर्थ-इस आयुर्वेदशास्त्रमें पांच इन्द्री, पांच इन्द्रियोंकी द्रव्य, पांच इन्द्रियोंके अधिष्ठान, पांच इन्द्रियोंके अर्थ और पांचही इन्द्रियोंकी बुद्धि होती है यह इन्द्रियाधिकारमें कहा है । और कोई आचार्य मनको इन्द्रियोंसे अतिरिक्त सत्वसंज्ञक कहते हैं । और उसी मनके अर्थ आत्मसम्पत् है तथा उसीमनकेअधीन संपूर्ण देहकी चेष्टा कही है ।

चेष्टा और सत्व ।

चेष्टाप्रत्ययभूतमिन्द्रियाणाम् । स्वार्थेन्द्रियार्थसङ्कल्पव्यभिचाराणाश्चानेकमेकस्मिन्पुरुषेसत्वम् ॥

अर्थ-इन्द्रियोंके प्रत्ययभूत (अर्थात् इन्द्रियोंको प्रतीतभूत) को चेष्टा कहते हैं। तथा स्वार्थ (अपना प्रयोजन) इन्द्रियार्थ (इन्द्रियोंका विषय) संकल्प और व्यभिचार ये एकपुरुषमें अनेक सत्व होते हैं।

रजस्तमःसत्वगुणयोगाच्चनचानेकत्वंनानेकंह्येककालमनेकेषु प्रवर्त्तते। तस्माच्चानेककालासर्वेन्द्रियप्रवृत्तिः। यद्गुणंचाभीक्ष्णंपुरुषमनुवर्त्ततेसत्वंतत्सत्वमेवोपदिशंतिऋषयोबाहुल्यानुशयात्॥

अर्थ-रजस्तमःसत्वगुणयोगसेही सत्वको अनेकत्व है। परंतु अनेकत्व और अनेक सत्व एक कालमेंही अनेक वस्तुओंमें प्रवृत्त नहीं होता है। इसीसे अनेक काल इन्द्रियोंकी प्रवृत्ति है। जिस गुणका सत्व वारंवार पुरुषमें वर्त्ते उसकी बाहुल्यतासे ऋषीश्वर उस पुरुषमें तद्गुणसत्व कहते हैं।

मनःपुरस्सराणीन्द्रियाण्यर्थग्रहणसमर्थानिभवंति॥

अर्थ-मनहै अग्रगामी जिन्होंमें ऐसी इन्द्री अर्थको ग्रहण करनेको समर्थ होती हैं। अर्थात् प्रथम जिसवस्तुको मन ग्रहण करता है, उसीको पीछे इन्द्रीगण ग्रहण करे हैं।

पंचइन्द्री।

तत्रचक्षुःश्रोत्रंघ्राणंरसनंस्पर्शनमितिपंचेन्द्रियाणि।

अर्थ- तहां नेत्र, कान, नासिका, जीभ, और त्वचा ये पांच इन्द्री हैं।

पंचेन्द्रियद्रव्याणिखंवायुर्ज्योतिरापोभूरिति।

अर्थ-आकाश, पवन, अग्नि, जल, और पृथ्वी ये पांच इन्द्रियोंकी द्रव्य हैं।

पचेन्द्रियाधिष्ठानान्याक्षिणीकर्णौनासिकेजिह्वात्वक्चेति॥

अर्थ-ये पांच इन्द्रियोंके रहनेके अधिष्ठान है। दोनों नेत्र, दोनों कान, दोनों नासिकाके रंध्र, जीभ और त्वचा।

पञ्चेन्द्रियार्थाःशब्दस्पर्शरूपरसगन्धाः। पञ्चेन्द्रियबुद्धयश्चक्षुर्बुद्ध्यादिकास्ताः॥

अर्थ-शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, ये पांच इन्द्रियोंके अर्थ अर्थात् विषय हैं। और पांचही इन्द्रियोंकी बुद्धि हैं। वह चक्षुबुद्धि, कर्णबुद्धि, और नासिका बुद्धि आदि जननी।

पुनरिन्द्रियेन्द्रियार्थस्वत्वात्मसन्निकर्षजाः क्षणिकानिश्चयात्मिकाश्चेत्येतत्पञ्चपञ्चकम्॥

अर्थ-वोही बुद्धि, इन्द्रिय, इन्द्रियार्थ और सत्व इनके आत्मसन्निकर्षसे पैदा होती है ।

मनोमनोर्थौबुद्धिरात्माचेत्यध्यात्मद्रव्यगुणसंग्रहः ।
शुभाशुभवृत्तिनिवृत्तिहेतुश्चद्रव्याश्रितंकर्मयदुच्यतेक्रियेति ॥

अर्थ-मनोरथ, बुद्धि, आत्मा यह अध्यात्मद्रव्य गुणसंग्रहवाला मन शुभाशुभ कर्ममें प्रवृत्तिनिवृत्तिका हेतु है । जिस द्रव्यके आश्रित जो कर्म है उसीको क्रिया कहते हैं ।

तत्रानुमानगम्यानांपञ्चमहाभूतविकारसमुदायात्मकानामपि सतामिन्द्रियाणां तेजश्चक्षुषीश्रोत्रेखंघ्राणेक्षितिरापोरसनेस्प-र्शनेऽनिलोविशेषेणोपदिश्यते ॥

अर्थ-तहां अनुमानगम्य पंचमहाभूतविकार समुदायात्मक इंद्रियोंका नेत्रमें तेज कानोंमें आकाश, नाकमें पृथ्वी, जिह्वामें जल, और त्वचामें पवनका वास है ।

तत्रयद्यदात्मकमिन्द्रियंविशेषात्तदात्मकमेवार्थमनुधावति तत्स्वभावाद्विभुत्वाच्च ॥

अर्थ-तत्स्वभाव और उस तत्वके प्रबल होनेसे जो इन्द्री जिस तत्वात्मकहै वो विशेषकरके तदात्मक तत्वार्थको ग्रहण करती है ।

तदर्थातियोगायोगामिथ्यायोगात्समनस्कमिन्द्रियम् ।
विकृतिमापद्यमानंयथास्वबुद्ध्युपघातायसम्पद्यते ॥

अर्थ-वो इन्द्रियोंके अर्थ अतियोग, अयोग और मिथ्यायोगसे मनसहित इन्द्रियोंको विकृतित्वको प्राप्त होकर अपनी अपनी बुद्धिके उपघातके अर्थ होते हैं ।

समयोगायोगात्पुनः प्रकृतिमापद्यमानः
यथास्वंबुद्धिमाप्याययाति ॥

अर्थ-फिर वही इन्द्रियोंके अर्थ समान योग और अयोगद्वारा प्रकृतिको प्राप्त हो उसीप्रकार अपनी बुद्धियोंको वढाते हैं ।

मनसस्तुचिन्त्यमर्थः । तत्रमनसोबुद्धेश्चतएवसमानातिही-नमिथ्यायोगाः प्रकृतिविकृतिहेतवोभवन्ति ॥

अर्थ-मनकरके जिसका चिंतवन कराजाय उस वस्तुको अर्थ कहते हैं तहां मन और बुद्धिके अर्थ समान, अतिहीन और मिथ्यायोग प्रकृति और विकृतिके हेतु के अर्थ होतेहैं ।

तत्रेन्द्रियाणांसमनस्कानामनुपतप्तानामनुपतापायप्रकृति-
भावेप्रयतितव्यमेभिर्हेतुभिः ॥

अर्थ—तहां पीडारहित मनसहित इंद्रियोंको पीडाके बचानेको इन हेतुओंकरके प्रकृतिभावमें लानेका प्रयत्न करना चाहिये ।

तद्यथा साम्येन्द्रियार्थसंयोगेनबुद्ध्यासम्यगवेक्ष्यावेक्ष्यकर्मणां
सम्यक्प्रतिपादनेनदेशकालात्मगुणविपरीतोपसेवनेनचेति ॥

अर्थ—वो प्रकृतिभावमें समनस्क इन्द्रियोंको लानेका यह उपाय है कि, साम्य और इन्द्रियार्थ संयोगकरके अपनी बुद्धिसे भलेप्रकार देखदेख कर और कर्मोंको भली भाँति करनेसे, तथा देश, काल, और आत्मगुण इनके विपरीत औषधान्नविहारादिकोंके सेवन करनेकरके प्रकृतिभावमें लाना चाहिये ।

तस्मादात्महितंचिकीर्षतासर्वेणसर्वंसर्वदास्मृतिमास्थायस-
द्वृत्तमनुष्ठेयम् । तद्ध्यनुष्ठानंयुगपत्सम्पादयत्यर्थद्वयमारो-
ग्यमिन्द्रियविजयश्चेति । तत्सद्वृत्तमखिलेनोपदेक्ष्यामः ॥

अर्थ—इसीसे आत्महितेच्छू सबको संपूर्ण और सदैव बुद्धिका आश्रय लेकर सत्पुरुषोंके आचरणका अनुष्ठान करना चाहिये । यह अनुष्ठान आरोग्य और इन्द्रियोंका विजय इन दोनों अर्थोंका एकही साथ संपादन करता है । उस संपूर्ण सद्वृत्तको कहते हैं ।

सदाचार ।

तद्यथा । देवगोब्राह्मणगुरुवृद्धसिद्धाचार्यानर्चयेत् । अग्निम-
नुचरेत् । औषधीःप्रशस्ताधारयेत् । द्वौकालावुपस्पृशेत् ।
मलायतनेष्वभीक्ष्णंपादयोश्चवैमल्यमादध्यात् ॥

अर्थ—देव, गौ, ब्राह्मण, गुरु, वृद्ध, सिद्ध इन्होंका अर्चन करना चाहिये । अग्निहोत्र करे, दिव्य औषधोंको धारण करे, दोनों कालमें अर्थात् सायंकाल और प्रातःकालकी संध्या करनी चाहिये । जिनमें मल होवे ऐसे नाक, मुख, गुदा, आदिको और पैरोंको सदैव उज्ज्वल रखने चाहिये ।

त्रिपक्षास्यकेशश्मश्रुलोमनखान्संहारयेत् । नित्यमनुपहत-
वासाःसुमनःसुगन्धिःस्यात् । साधुवेषःप्रसाधितकेशोमूर्द्धश्रो
त्रपादतैलनित्योधूमपः स्मितपूर्वाभिभाषीसुमुखः ॥

अर्थ-वोही बुद्धि, इन्द्रिय, इन्द्रियार्थ और सत्व इनके आत्मसन्निकर्षसे पैदा होती है ।

मनोमनोर्थौबुद्धिरात्माचेत्यध्यात्मद्रव्यगुणसंग्रहः ।
शुभाशुभवृत्तिनिवृत्तिहेतुश्चद्रव्याश्रितंकर्मयदुच्यतेक्रियेति ॥

अर्थ-मनोरथ, बुद्धि, आत्मा यह अध्यात्मद्रव्य गुणसंग्रहवाला मन शुभाशुभ कर्ममें प्रवृत्तिनिवृत्तिका हेतु है । जिस द्रव्यके आश्रित जो कर्म है उसीको क्रिया कहते हैं ।

तत्रानुमानगम्यानांपञ्चमहाभूतविकारसमुदायात्मकानामपि सतामिन्द्रियाणां तेजश्चक्षुषीश्रोत्रेखंघ्राणेक्षितिरापोरसनेस्प-र्शनेऽनिलोविशेषेणोपदिश्यते ॥

अर्थ-तहां अनुमानगम्य पंचमहाभूतविकार समुदायात्मक इंद्रियोंका नेत्रमें तेज कानोंमें आकाश, नाकमें पृथ्वी, जिह्वामें जल, और त्वचामें पवनका वास है ।

तत्रयद्यदात्मकमिन्द्रियंविशेषात्तदात्मकमेवार्थमनुधावति तत्स्वभावाद्विभुत्वाच्च ॥

अर्थ-तत्स्वभाव और उस तत्वके प्रबल होनेसे जो इन्द्री जिस तत्वात्मकहै वो विशेषकरके तदात्मक तत्वार्थको ग्रहण करती है ।

तदर्थातियोगायोगमिथ्यायोगात्समनस्कमिन्द्रियम् ।
विकृतिमापद्यमानंयथास्वबुद्ध्युपघातायसम्पद्यते ॥

अर्थ-वो इन्द्रियोंके अर्थ अतियोग, अयोग और मिथ्यायोगसे मनसहित इन्द्रियोंको विकृतित्वको प्राप्त होकर अपनी अपनी बुद्धिके उपघातके अर्थ होते हैं ।

समयोगायोगात्पुनः प्रकृतिमापद्यमानः
यथास्वंबुद्धिमाप्याययति ॥

अर्थ-फिर वही इन्द्रियोंके अर्थ समान योग और अयोगद्वारा प्रकृतिको प्राप्त हो उसीप्रकार अपनी बुद्धियोंको बढाते हैं ।

मनसस्तुचिन्त्यमर्थः । तत्रमनसोबुद्धेश्चतएवसमानातिही-नमिथ्यायोगाः प्रकृतिविकृतिहेतवोभवन्ति ॥

अर्थ-मनकरके जिसका चिंतवन कराजाय उस वस्तुको अर्थ कहते हैं तहां मन और बुद्धिके अर्थ समान, अतिहीन और मिथ्यायोग प्रकृति और विकृतिके हेतु के अर्थ होतेहैं ।

तत्रेन्द्रियाणांसमनस्कानामनुपतप्तानामनुपतापायप्रकृति-
भावेप्रयतितव्यमेभिर्हेतुभिः ॥

अर्थ—तहां पीडारहित मनसहित इंद्रियोंको पीडाके बचानेको इन हेतुओंकरके प्रकृतिभावमें लानेका प्रयत्न करना चाहिये ।

तद्यथा साम्येन्द्रियार्थसंयोगेनबुद्ध्यासम्यगवेक्ष्यावेक्ष्यकर्मणां
सम्यक्प्रतिपादनेनदेशकालात्मगुणविपरीतोपसेवनेनचेति ॥

अर्थ—वो प्रकृतिभावमें समनस्क इन्द्रियोंको लानेका यह उपाय है कि, साम्य और इन्द्रियार्थ संयोगकरके अपनी बुद्धिसे भलेप्रकार देखदेख कर और कर्मोंको भली भाँति करनेसे, तथा देश, काल, और आत्मगुण इनके विपरीत औषधान्नविहारादिकोंके सेवन करनेकरके प्रकृतिभावमें लाना चाहिये ।

तस्मादात्महितंचिकीर्षतासर्वेणसर्वंसर्वदास्मृतिमास्थायस-
द्वृत्तमनुष्ठेयम् । तद्ध्यनुष्ठानंयुगपत्सम्पादयत्यर्थद्वयमारो-
ग्यमिन्द्रियविजयञ्चेति । तत्सद्वृत्तमखिलेनोपदेक्ष्यामः ॥

अर्थ—इसीसे आत्महितेच्छू सबको संपूर्ण और सदैव बुद्धिका आश्रय लेकर सत्पुरुषोंके आचरणका अनुष्ठान करना चाहिये । यह अनुष्ठान आरोग्य और इन्द्रियोंका विजय इन दोनों अर्थोंका एकही साथ संपादन करता है । उस संपूर्ण सद्वृत्तको कहते हैं ।

सदाचार ।

तद्यथा । देवगोब्राह्मणगुरुवृद्धसिद्धाचार्यानर्चयेत् । अग्निम-
नुचरेत् । औषधीःप्रशस्ताधारयेत् । द्वौकालावुपस्पृशेत् ।
मलायतनेष्वभीक्ष्णंपादयोश्चवैमल्यमादध्यात् ॥

अर्थ—देव, गौ, ब्राह्मण, गुरु, वृद्ध, सिद्ध इन्होंका अर्चन करना चाहिये । अग्निहोत्र करे, दिव्य औषधोंको धारण करे, दोनों कालमें अर्थात् सायंकाल और प्रातःकालकी संध्या करनी चाहिये । जिनमें मल होवे ऐसे नाक, मुख, गुदा, आदिको और पैरोंको सदैव उज्ज्वल रखने चाहिये ।

त्रिपक्षास्यकेशश्मश्रुलोमनखान्संहारयेत् । नित्यमनुपहत-
वासाःसुमनःसुगन्धिःस्यात् । साधुवेषःप्रसाधितकेशोमूर्द्धश्रो
त्रपादतैलनित्योधूमपः स्मितपूर्वाभिभाषीसुमुखः ॥

अर्थ-पांचवेंदिन क्षौरकर्म अर्थात् बाल, मूच्छों, डाढी, रोम और नखोंको कटाकर सुधारता रहे । सदैव विन फटा वस्त्र, प्रसन्नचित्त और सुगंधका लगानेवाला साधुवेश, कंगेसे बालोंको सम्हारना, मस्तक, कान और पैर, इनमें तैल नित्य डाले और लगाता रहे । धूम्रपान (हुक्केका पीना) तथा सुंदर मुखसे मंदमुसकानके साथ प्रथम बोलनेवाला इस मनुष्यको होना चाहिये ।

दुर्गेष्वभ्युपपत्ता होता यष्टा दाता चतुष्पथानांनमस्कर्त्ता बलीनामुपहर्ताऽतिथीनांपूजकः पितॄणांपिण्डदः कालेहित मितमधुरार्थवादी ॥

अर्थ-किलोंका रक्षा करता, हवन करता, यजन करता, दाता, और चौराहेओंको नमस्कारका करनेवाला, बलिदानका देनेवाला, और अतिथियोंका पूजक, पितृयोंको पिंड देनेवाला, तथा बोलनेके समय हित भरा अनुमानका, मीठा और अर्थयुक्त बचन बोले ।

वश्यात्मा धर्मात्मा हेतावीर्ष्यः फलेनेर्षुः निश्चिन्तोनिर्भीकोधीमान् ह्रीमान् महोत्साहः दक्षः क्षमावान् धार्मिकः आस्तिकः विनयबुद्धिः विद्याभिजनवयोवृद्धसिद्धाचार्याणामुपासिता ॥

अर्थ-आत्माको वशीभूत करनेवाला, धर्मात्मा, और हेतुपर ईर्ष्या करनेवाला, (अर्थात् अमुक मनुष्य कौनकारणसे धनाढ्य हुआ वही यत्न मैंभी करूंगा) और फलपर ईर्षाका त्यागनेवाला (अर्थात् पराई द्रव्यादिकी इच्छाका त्यागनेवाला) चिंतारहित, भयरहित, बुद्धिमान्, लज्जावान् महोत्साही, चतुर, क्षमावान्, धार्मिक, आस्तिक, विनय, बुद्धि, विद्या, अभिजन और अवस्था इनकरके वृद्ध ऐसे पुरुषोंकी तथा सिद्ध और आचार्योंकी उपासना करनेवाला होना चाहिये ।

छत्रीदण्डीमौनीसोपानत्कोयुगमात्रदृक्विचरेत् । मङ्गलाचारशीलः कुचेलास्थिकण्टकामेध्यकेशतुषोत्करभस्मकपालस्नानबलिभूमीनांपरिहर्त्ताप्राक्छ्रमाद्व्यायामवर्जीस्यात् ॥

अर्थ-छत्री लकडीको ले मौनहो, पैरोंमें जूती जोडे पहन, मार्गको प्रथम देखकर चले, मंगलाचारका करनेवाला, पुराने और मलिन वस्त्र, हड्डी, कांटे, खोवरे, अमेध्य (मलमूत्रादि) बाल, तुष, उत्कर, (धानआदिके तिनके) राख, कपाल, स्नानकी

पृथ्वी, और बलिदानकी पृथ्वीका परित्याग करनेवाला और श्रमके प्रथमही दंडकसरतका त्यागनेवाला होना चाहिये ।

सर्वप्राणिषुबन्धुभूतःस्यात् । क्रुद्धानामनुनेता । भीतानामाश्वासयिता । दीनानामभ्युपपत्ता । सत्यसंधः । सामप्रधानः । परपरुषवचनसहिष्णुः । अमर्षघ्नः । प्रशमगुणदर्शी । रागद्वेषहेतूनां हन्ता ॥

अर्थ—सर्व प्राणियोंमें बांधवकीसी प्रीति करनेवाला । क्रोधियोंको शांत करनेवाला । भयभीतोंको आश्वासन कहिये धीरज देनेवाला । दीनोंका रक्षक । सत्यसंध । सामधान (अर्थात् जो कार्य करे उसको एक राहके साथकरे) औरोंके खोटे वचनोंको सहनकरनेवाला, क्रोधको जीतनेवाला, प्रशमगुण (शांतिकोही गुणका देखनेवाला) तथा रागद्वेष जिनसे उत्पन्न हो उनहेतुओंको जीतनेवाला होना चाहिये ।

नानृतंब्रूयात् । नान्यस्वमाददीत । नान्यस्त्रियमभिलषेत् । नान्याश्रियंनवैरंरोचयेत् । नकुर्यात्पापं । नपापेऽपिपापीस्यात् । नान्यदोषान्ब्रूयात् । नान्यरहस्यमागमयेत् । नाधार्मिकैर्ननरैन्द्राद्विष्टैःसहासीत ॥

अर्थ—झूठ न बोले, दूसरेका धन न हरणकरे, तथा अन्यस्त्रीकी इच्छा न करे, दूसरेकी श्री और वैरसे रुचि न करे, पाप न करे, पापियोंके साथ आप पापी न हो, दूसरेके दोषोंको न कहे, तथा दूसरेकी रहस्यवार्ताको प्रकाशित न करे, अधर्मि, और राजद्रोहिके साथ न बैठे ।

नोन्मत्तैर्नपतितैर्नभ्रूणहन्तृभिर्नक्षुद्रैर्नदुष्टैर्नदुष्टयानान्यारोहेत् । नजातुसमंकठिनमासनमध्यासीत । नानास्तीर्णमनुपहितमविशालमसमं वा शयनंप्रपद्येत । नगिरिविषममस्तकेष्वनुचरेत् ॥

अर्थ—उन्मत्त, पतित, भ्रूणहत्यारा, क्षुद्र और दुष्टोंके साथ नहीं रहना तथा दुष्ट घोडा हाथी आदि सवारियोंपर न बैठे तथा घोटुओंके वरावर कठोर आसनपर न बैठे। तथा विनाविछि विना बिछौनेके छोटी और ऊंची नीची शय्यापर न सोवे । पर्वतके विषमस्थल इनके ऊपर न डोले ।

नद्रुममारोहेन्नजलोग्रवेगमवगाहेत् । कूलच्छायांनोपासीत । नाग्न्युत्पातमभितश्चरेत् । नोच्चैर्हसेत् । नशब्दवन्तंमारुतं मुञ्चेत् । नासंवृतमुखोजृम्भांक्षवथुंहास्यंवाप्रवर्त्तयेत् ॥

अर्थ-वृक्षके ऊपर न चढे । अत्यंत उग्रवेगवाली नदीमें स्नान न करे । (किंतु जहां जलका वेगहो वहां पर उसमें धसे भी नहीं) किनारेके वृक्षके नीचे न बैठे । जहांअग्नि लगरहीहो वहांपर न जावे । उच्चशब्दसे न हँसे शब्दवान् पवन अर्थात् अत्यंत शब्दके साथ अधोवायु नहीं छोडनी । विना मुखढके, जंभाई, छींक, हास्य आदि न करे ।

ननासिकांकुष्णीयात् । नदन्तान्विघट्टयेत् । ननखानङ्गांश्च वावादयेत् । नास्थीन्यभिहन्यात् । नभूमिंविलिखेत् । न-छिंद्यात्तृणम् । नलोष्टंमृद्नीयात् । नविगुणसङ्गश्चेष्टेत । ज्यो-तींष्यग्निश्चामेध्यमशस्तञ्चनाभिवीक्षेत । नहुंकुर्याच्छवम् ॥

अर्थ-हरदफे नासिकाको न कुरेदे । दांतोंको न चवायाकरे, नख और अपने अंगोंको न बजायाकरे,अपनी हड्डियोंमें प्रहार न करे, हाथसे या पैरसे पृथ्वीको न लिखाकरे,तिनके न तोडाकरे,मट्टीके डेलेको न तोडाकरे,निर्बुद्धियोंके साथ न रहाकरे,ज्योति वाले पदार्थ (सूर्य चंद्र बिजलीआदि) और अग्नि अपवित्र और बुरीवस्तु [वमन, राध, रुधिर आदिको] न देखे । और मुरदेको देखकर हुंकार न करे । अर्थात् इसप्रकार मरतेई रहते हैं इसप्रकार तिरस्कार न करे; क्योंकि इसीप्रकार आपकोभी मरनाहै ।

नचैत्यध्वजगुरुपूज्याशस्तच्छायामाक्रामेत् । नक्षपास्वमर-सदनचैत्यचत्वरचतुष्पथोपवनश्मशानायतनान्यासेवेत । नै-कशून्यगृहंनचाटवीमनुप्रविशेत् । नपापवृत्तान्स्त्रीभृत्या-न्भजेत् ॥

अर्थ-चैत्य (बौद्धोंका मंदिर अथवा गामके बाहर देवताकी भावना करके स्थापित वृक्ष) मंदिरकी ध्वजा, गुरु, पूज्य, और अशस्त वस्तु (मलमूत्रादि) इनकी और छायाको उल्लंघन न करे । रात्रिमें देवमंदिर, चैत्य, चौराहा, वगीचा, श्मशान (जहां मुरदे जलतेहों वा गढतेहों) इन स्थानोंमें नहीं रहना चाहिये सूने घरमें अकेला न रहे । तथा वनमेंभी अकेला न जावे । पापकरता स्त्री और भृत्य (नौकर) को न रक्खे ।

नोत्तमैर्विरुध्येत । नावरानुपासीत । नजिह्मंरोचयेत् । नानार्यमाश्रयेत् । नभयमुत्पादयेत् । नसाहसातिस्वप्नजागरस्नानपानाशनान्यासेवेत । नोर्ध्वजानुश्चिरंतिष्ठेत् । नव्यालानुपसर्पेत् । नदंष्ट्रिणः। नविषाणिनः। पुरोवातातपावश्यायातिप्रवाताञ्जह्यात् ॥

अर्थ—उत्तम पुरुषोंसे विरोध न करे । ओछे पुरुषोंकी उपासना न करे । कपट करनेको प्रसन्न न करे। अनार्य पुरुष (जो वेदमार्ग त्यागकर अन्यमार्गका आश्रयलेने वाले हैं) उनका आश्रित न हो। अत्यंत साहस, अतिस्वप्न,अत्यंत जागना, अति स्नान, अति पान और अत्यंत भोजन न करे।घोंटुओंके बल बहुत देरपर्यंत न खडारहे । साँप विच्छु आदिके पास न जावे । डाढोंवाले (कुत्ता, सिंह, व्याघ्र, वृक आदि) और सींगवाले (गौ भैंस आदि) इनके भी पास न जावे । सन्मुखकी पवन, धूप, तुषार और अत्यंत पवन त्यागदेवे ।

कलिंनारभेत् । नानिभृतोऽग्निमुपासीत । नोच्छिष्टोनाधः कृत्वाप्रतापयेत् । नाविगतक्लमोनानाप्लुतवदनोननग्नमुपस्पृशेत् । नस्नानशाटचास्पृशेदुत्तमाङ्गम् ।नकेशाग्राण्यभिहन्यात् ॥

अर्थ—कलह न करे । जो अपने वशीभूत न हो ऐसी अग्निका सेवन न करे। उच्छिष्ट मुखसे तथा अपने नीचे रखकर अग्निसे न तापे । जबतक विगतक्लम और मुखको न धोयाहो तथा नग्नहोकर स्नान न करे । स्नानकी धोतीसे मस्तक न पोंछे बालोंके अग्रभागोंको न तोडे ।

नोपस्पृशेत्तएववाससीविधृयात् । नास्पृष्ट्वारत्नाज्यपूज्यमङ्गलसुमनसोऽभिनिष्क्रामेत् ।नपूज्यमङ्गलान्यपसव्यंगच्छेत् । नेतराण्यनुदक्षिणम् ॥

अर्थ—अन्यके स्पर्शकरेहुए वस्त्रको [भोजनके समय] न धारण करे । रत्न, घृत, पूज्य, मंगलीक वस्तु, और पुष्प इनके स्पर्शकरे विना घरके बाहर न जावे । पूज्य, मंगलीक पदार्थोंको अपसव्यहोकर अर्थात् वाम देकर न जावे । और अमंगलीक पदार्थोंको दहना देकर न जावे ।

नारत्नपाणिर्नास्नातोनोपहतवासानाजपित्वानाहुत्वादेवता-भ्योनानिरूप्यपितृभ्योनादत्वागुरुभ्योनातिथिभ्योनोपाश्रि-तेभ्योनापुण्यगन्धोनामालीनाप्रक्षालितपाणिपादवदनोना-शुद्धमुखोनोदङ्मुखोनविमनाभक्ताशिष्टाशुचिक्षुधितपरिच रोनापात्रीष्वमेध्यासुनादेशेनाकालेनाकीर्णेनादत्वाग्रमग्नये नाप्रोक्षितंप्रोक्षणोदकैर्नमन्त्रैरनभिमन्त्रितंनकुत्सयन्नकुत्सि-तं नप्रतिकूलोपहितमन्नमाददीत ॥

अर्थ–विना रत्नपाणि अर्थात् सुवर्ण आदि रत्नकी अंगूठी, छल्ला, आदिके धारण विना, विना स्नान करे, फटे वस्त्रोंसे, विना गायत्रीके जप करे। विना हवन करे, विना देवताओंको निवेदन करे। विना पित्रेश्वरोंके दिये, गुरु, अतिथि, उपाश्रित (जो अपने आश्रित हैं) इनको विना दिये, दुर्गंधयुक्त, विना माला धारण करे। विना हाथ पैर मुखकी शुद्धिके, और उत्तरमुख अप्रसन्नचित्तके, विना भातके तथा दुष्ट, अपवित्र, और जिसके भृत्यवर्ग क्षुधितहों विना पात्रोंके तथा अपवित्र पात्रोंमें, विना देशकालके (अर्थात् श्मशानआदि देश और प्रातःकालआदिसमयमें) विना प्रस्फुट स्थानके विना प्रथम अग्निमें आहुति दिये, विना प्रोक्षणके मंत्रोंसे प्रोक्षित करे, विना मंत्रोंसे अभिमंत्रित करे, न निंदा करता हुआ तथा निंदित और अपने प्रति-कूल (वैरी) के लाए हुये इत्यादि गुणविशिष्ट अन्नको नहीं भोजनकरना चाहिये।

नपर्युषितमन्यत्रमांसहारितशुष्कशाकफलभक्ष्येभ्यः । नाशे-षभुक्स्यादन्यत्रदधिमधुलवणसक्तुसर्पिर्भ्यः । ननक्तंदधिभु-ञ्जीत । नसक्तूननेकानश्नीयात् । ननिशिनभुक्त्वानवहून्न-द्विर्नोदकान्तरितान्नछित्त्वाद्विजैर्भक्षयेत् ॥

अर्थ–मांस, हरित और शुष्क शाक, फल, और भक्ष्य (लड्डू, पेडे, आदि) इनके विना और वस्तु बासी नहीं खानी चाहिये। दही, सहत, नोन, सत्तु, और घृतके सिवाय और किसी वस्तुको निःशेषकरके न खावे। रात्रिमें दही न खावे। अकेला सत्तु न खाय। तथा रात्रिमें भोजन करके, वहुतसा तथा दोवार सत्तु नहीं खाना चाहिये। तथा जलके विनाभी न खाय तथा दांतोंसे चवायकर सत्तु भोजन न करे।

नानृजुःक्षुयान्नाद्यान्नशयीत । नवेगितोऽन्यकार्यःस्यात् । न वाय्वग्निसलिलसोमार्कद्विजगुरुप्रतिमुखंनिष्ठीविकावातवर्चों मूत्राण्युत्सृजेत् । नपन्थानमवमूत्रयेत् । नजनवतिनान्नकाले ॥

अर्थ–टेढा होकर छीकना, भोजन, और शयन न करे, जिस समय मल, मूत्र, भूख, प्यास आदि लग रहेहों उससमय अन्य कार्यको न करे। पवन, अग्नि, जल, चंद्रमा, सूर्य, ब्राह्मण और गुरु इनके सन्मुख थूकना, अधो वायु छोडना, मलमूत्र-का परित्याग इत्यादि कर्म न करे। रस्तेमें न मूते। जहां बहुत मनुष्य बैठे हों और अन्न अर्थात् भोजनके समय मूत्र न करे। भोजनके थोडी देर प्रथमही मूत्रादिसे नि-श्चितहोलेवे।

नजप्यहोमाध्ययनबलिमङ्गलक्रियासुश्लेष्मसिंघाणकंमुञ्चेत्। नस्त्रियमवजानीत। नातिविश्रंभयेत् । नगुह्यमनुश्रावयेत् । नाधिकुर्यात् । नरजस्वलांनातुरांनामेध्यांनाशस्तांनानिष्टरू-पाचारोपचारांनादक्षिणांनाकामांनान्यकामांनान्यास्त्रियंनान्य-योनिंनायोनौनचैत्यचत्वरचतुष्पथपवनश्मशानायतनसलि-लौषधिद्विजगुरुसुरालयेषुनसंध्ययोर्नातिननिषिद्धतिथिषुना-शुचिर्नजग्धभेषजोनाप्रणीतसंकल्पोनानुपस्थितप्रहर्षोनाभु-क्तवान्नात्याशितोनविषमस्थोनमूत्रोच्चारपीडितोनश्रमव्या-यामोपवासक्लमाभिहतोनारहसिव्यवायंगच्छेत् ॥

अर्थ–जप, होम, अध्ययन (पढना) बलिदान और मंगल क्रिया इनमें कफ, तथा देहका मैल न गेरे। स्त्रीका तिरस्कार न करे। न अत्यंत स्त्रीका विश्वास करे। तथा इसके आगे गुह्य (छिपी) वार्ता न कहे। न इसको अनुचित कर्मका अधिकार देवे। तथा रजस्वला, रोगिणी, अपवित्रा, अप्रशस्ता, कुरूप, आचार और उपचार गहने कपडे आदिको धारण न करनेवाली, अचतुरा, तथा जिसका कामदेव न जागा हो। और जो अन्य पुरुषकी इच्छा करती हो, तथा दूसरेकी स्त्री, तथा अन्य योनि (बकरी कुत्ते आदिकी) तथा अयोनि (गुदाभंजनआदि) और चैत्य, आंगन, चौराहा, अत्यंत पवन लगती हो, श्मशान, यज्ञशाला जलके, समीप, औषधिस्थान, ब्राह्मण, गुरु इनके समीप, देवस्थान तथा प्रातःकाल और सायंकालकी संध्-

तथा अत्यंत मैथुन और निषिद्ध तिथियोंमें अपवित्रतामें विना औषध खानेके तथा विना कामोद्दीपन हुए विना हर्षके विना भोजन और अत्यंत पेट भरेमें तथा विषम-स्थित होकर (अर्थात् टेढा वा नीचे सोकर) तथा मूत्रमलकी बाधामें परिश्रम दंड-कसरत, उपवास और ग्लानियुक्त इत्यादि कारणोंसे युक्त और सबके देखते पुरुषको स्त्रीगमन नहीं करना चाहिये।

नसतोनगुरून्परिवदेत् । नाशुचिरभिचारकर्मचैत्यपूज्यपूजाध्ययनमभिनिवर्त्तयेत् । नविद्युत्स्वनार्त्तवीषुनाभ्युदितासुदिक्षुनाग्निसंप्लवेनभूमिकल्पनमहोत्सवेनोल्कापातेनमहाग्रहोपगमनेननष्टचन्द्रायांतिथौनसंधयोर्नमुखाद्गुरोनावपतितंनातिमात्रंनतांतंनाविस्वरंनानवस्थितपदंनातिद्रुतंनाविलम्बितंनातिक्लीवंनात्युच्चैर्नातिनीचैःस्वरैरध्ययनमभ्यसेत् ॥

अर्थ-गुरु और सत्पुरुषोंसे विवाद न करें । अपवित्रतासे अभिचारकर्म, यज्ञशाला, पूज्योंकी पूजा तथा पढना इत्यादि कर्म न करे । बिजलीके चमकनेमें, आर्तववाली और अभ्युदित दिशा जिस समय होवे, तथा अग्निके लगनेमें । भूचाल, महोत्सव (विवाहादि) उलकापात, महाग्रह (पूछातारेआदि) के उपगमनमें, अमावास्या, संध्या इनमें विना गुरुमुखके, अत्यंत लंबेस्वरसे, दुष्टस्वरसे, अयथार्थ पदोच्चारणसे, बहुतजल्दी, बहुतधीरे, अत्यंत कायरतासे, अत्यंत उच्चस्वर, अत्यंत नीचेस्वरसे विद्यानहीं पढनी चाहिये । कोई कहता है कि, स्वयं और गुरुके मुखसे विनानिकले पढना निषेध है।

नातिसमयंजह्यात् । ननियमंभिन्द्यात् । ननक्तंनादेशेचरेत् । नसंध्यास्वभ्यवहाराध्ययनस्त्रीस्वप्नसेवीस्यात् । नबालवृद्धलुब्धमूर्खक्लिष्टक्लीवैःसहसख्यंकुर्यात् । नमद्यद्यूतवेश्याप्रसङ्गरुचिःस्यात् । नगुह्यंविवृणुयात् । नकञ्चिदवजानीयात् ॥

अर्थ-समयको व्यर्थ न व्यतीत करे । जो पढने लिखने या भोजनादिका नियम कर रक्खाहो उसको न तोडे । रात्रिमें और जहां दुष्टस्थलहै उसजगे न डोले । संध्याके समय भोजन, पढना, पढाना, स्त्रीसंग और निद्रा ये कर्म त्यागदेवे । बालक,

वृद्ध, लोभी, मूर्ख, दुःखित और हिजडा इनके साथ मित्रता न करे । मद्य, जूआ और वेश्याप्रसंग इनकी इच्छा कभी न करे। जो छिपाने योग्य वार्त्ता है उसको किसी के आगे न कहे । और किसीकी अवज्ञा न करे ।

नाहंमानीस्यात् । नादक्षोनादक्षिणोनासूयको नदाक्षिणान्परिवदेत् । नगवांदण्डमुद्यच्छेत् । नवृद्धान्नगुरून्नगणान्ननृपान्वाधिक्षिपेत् । नचातिब्रूयात् । नबान्धवानुरक्तकृच्छ्राद्द्वितीयगुह्यज्ञान्बहिःकुर्यात् ॥

अर्थ-अहंकारी न होवे, मूर्ख न बने, किसीसे टेढा न रहे, किसीकी निंदा न करे, जो चतुर मनुष्य हैं उनकी निंदा न करे, गौकेऊपर लकडी न उठावे, वृद्ध, गुरु, बहुतसे मनुष्य, और राजा इनका तिरस्कार न करे, बहुत न बोले, तथा बांधव, स्नेही, दुखिया और अद्वितीय, गुह्यज्ञ (अर्थात् जो गुप्तबातको वही जानता हो) इनको बाहर न करे ।

नाधीरोनात्युच्छ्रितसत्वःस्यात् । नाभृतभृत्योनाविश्रब्धस्वजनोनेकसुखी । नदुःखशीलाचारोपचारी । नसर्वविश्रंभी । नसर्वाभिशङ्की । नसर्वकालविचारी । नकार्यकालमतिपातयेत् । नापरीक्षितमभिनिविशेत् । नेन्द्रियवशगःस्यात् ॥

अर्थ-धैर्यरहित नहीं होना । सबसे उच्च न बने । भृत्योंका भरणपोषण करता रहे । स्वजनोंमें अविश्वास न करे । अन्य दुःखितोंमें आप अकेला सुखी न बने । दुःखदायक आचार और अपचारोंको सेवन न करे, सबका विश्वासभी न करे । सबकी शंकाभी न करे । प्रत्येक समयमें विचारवान् न हो । कार्य करनेके समयको व्यर्थ न खोवे । विना परीक्षा करे किसी नोकर चाकरको न राखे । जिह्वा शिश्नेन्द्री आदिके वशीभूत न होवे ।

नचञ्चलंमनोभ्रामयेत् । नबुद्धीन्द्रियाणामतिभारमादध्यात् । नचातिदीर्घसूत्रीस्यात् । नक्रोधहर्षावनुविदध्यात् । नशोकमनुवशेत् । नासिद्धावौत्सुक्यंगच्छेत् । नासिद्धौदैन्यम् । प्रकृतिमभीक्ष्णंस्मरेत् ॥

तथा अत्यंत मैथुन और निषिद्ध तिथियोंमें अपवित्रतामें विना औषध खानेके तथा विना कामोद्दीपन हुए विना हर्षके विना भोजन और अत्यंत पेट भरेमें तथा विषम-स्थित होकर (अर्थात् टेढा वा नीचे सोकर) तथा मूत्रमलकी बाधामें परिश्रम दंड-कसरत, उपवास और ग्लानियुक्त इत्यादि कारणोंसे युक्त और सबके देखते पुरुषको स्त्रीगमन नहीं करना चाहिये ।

नसतोनगुरून्परिवदेत् । नाशुचिरभिचारकर्मचैत्यपूज्यपूजाध्ययनमभिनिवर्त्तयेत् । नविद्युत्स्वनार्त्तवीषुनाभ्युदितासुदिक्षुनाग्निसंप्लुवेनभूमिकल्पेनमहोत्सवेनोल्कापातेनमहाग्रहोपगमनेननष्टचन्द्रायांतिथौनसंधयोर्नमुखाद्गुरोनावपतितंनातिमात्रंनतांतंनाविस्वरंनानवस्थितपदंनातिद्रुतंनाविलंम्बितंनातिक्लीवंनात्युच्चैर्नातिनीचैःस्वरैरध्ययनमभ्यसेत् ॥

अर्थ-गुरु और सत्पुरुषोंसे विवाद न करे । अपवित्रतासे अभिचारकर्म, यज्ञशाला, पूज्योंकी पूजा तथा पढना इत्यादि कर्म न करे । विजलीके चमकनेमें, आर्तववाली और अभ्युदित दिशा जिस समय होवे, तथा अग्निके लगनेमें । भूचाल, महोत्सव (विवाहादि) उलकापात, महाग्रह (पूछातारेआदि) के उपगमनमें, अमावास्या, संध्या इनमें विना गुरुमुखके, अत्यंत लंबेस्वरसे, दुष्टस्वरसे, अयथार्थ पदोंच्चारणसे, बहुतजल्दी, बहुतधीरे, अत्यंत कायरतासे, अत्यंत उच्चस्वर, अत्यंत नीचेस्वरसे विद्यानहीं पढनी चाहिये । कोई कहता है कि, स्वयं और गुरुके मुखसे विनानिकले पढना निषेध है ।

नातिसमयंजह्यात् । ननियमंभिन्द्यात् । ननक्तंनादेशेचरेत् । नसंध्यास्वभ्यवहाराध्ययनस्त्रीस्वप्नसेवीस्यात् । नबालवृद्धलुब्धमूर्खक्लिष्टक्लीवैःसहसख्यंकुर्यात् । नमद्यद्यूतवेश्याप्रसङ्गरुचिःस्यात् । नगुह्यंविवृणुयात् । नकञ्चिदवजानीयात् ॥

अर्थ-समयको व्यर्थ न व्यतीत करे । जो पढने लिखने या भोजनादिका नियम कर रक्खाहो उसको न तोडे । रात्रिमें और जहां दुष्टस्थलहै उसजगे न डोले । संध्याके समय भोजन, पढना, पढाना, स्त्रीसंग और निद्रा ये कर्म त्यागदेवे । बालक,

वृद्ध, लोभी, मूर्ख, दुःखित और हिजडा इनके साथ मित्रता न करे । मद्य, जूआ और वेश्याप्रसंग इनकी इच्छा कभी न करे। जो छिपाने योग्य वार्त्ता है उसको किसी के आगे न कहे । और किसीकी अवज्ञा न करे ।

नाहंमानीस्यात् । नादक्षोनादक्षिणोनासूयको नदाक्षिणान्परिवदेत् । नगवांदण्डमुद्यच्छेत् । नवृद्धान्नगुरून्नगणान्ननृपान्वाधिक्षिपेत् । नचातिब्रूयात् । नबान्धवानुरक्तकृच्छ्राद्वितीयगुह्यज्ञान्बहिःकुर्यात् ॥

अर्थ—अहंकारी न होवे, मूर्ख न बने, किसीसे टेढा न रहे, किसीकी निंदा न करे, जो चतुर मनुष्य हैं उनकी निंदा न करे, गौकेऊपर लकडी न उठावे, वृद्ध, गुरु, बहुतसे मनुष्य, और राजा इनका तिरस्कार न करे, बहुत न बोले, तथा बांधव, स्नेही, दुखिया और अद्वितीय, गुह्यज्ञ (अर्थात् जो गुप्तबातको वही जानता हो) इनको बाहर न करे ।

नाधीरोनात्युच्छ्रितसत्वःस्यात् । नाभृतभृत्योनाविश्रब्धस्वजनोनेकसुखी । नदुःखशीलाचारोपचारी । नसर्वविश्रंभी । नसर्वाभिशङ्की । नसर्वकालविचारी । नकार्यकालमतिपातयेत् । नापरीक्षितमभिनिविशेत् । नेन्द्रियवशगःस्यात् ॥

अर्थ—धैर्यरहित नहीं होना । सबसे उच्च न बने । भृत्योंका भरणपोषण करता रहे । स्वजनोंमें अविश्वास न करे । अन्य दुःखितोंमें आप अकेला सुखी न बने । दुःखदायक आचार और अपचारोंको सेवन न करे, सबका विश्वासभी न करे । सबकी शंकाभी न करे । प्रत्येक समयमें विचारवान् न हो । कार्य करनेके समयको व्यर्थ न खोवे । विना परीक्षा करे किसी नोकर चाकरको न राखे । जिह्वा शिश्नेन्द्री आदिके वशीभूत न होवे ।

नचञ्चलंमनोभ्रामयेत् । नबुद्धीन्द्रियाणामतिभारमादध्यात् । नचातिदीर्घसूत्रीस्यात् । नक्रोधहर्षावनुविदध्यात् । नशोकमनुवशेत् । नासिद्धावौत्सुक्यंगच्छेत् । नासिद्धौदैन्यम् । प्रकृतिमभीक्ष्णंस्मरेत् ॥

अर्थ-चंचल मनको भ्रमावे नहीं। बुद्धीन्द्रिय (नेत्र, नाक, कान, आदि) को अति श्रम न देवे। अत्यंत दीर्घसूत्री न हो। क्रोध और हर्षका बहुत ध्यान न करे अर्थात् बहुत न करे। शोकके वशीभूत न हो। कार्य सिद्धहोनेपर बहुत फूल न माने। और असिद्धहोनेपर दीनताभी ग्रहण न करे। और अपने स्वभावको सदैव स्मरण करता रहै। अर्थात् स्वभावको न पलेटे।

हेतुप्रभावनिश्चितःस्यात्। हेत्वारम्भनित्यश्च। नकृतमित्याश्वसेत्। नवीर्यंजह्यात्। नापवादमनुस्मरेत्। नाशुचिरुत्तमाज्याक्षततिलकुशसर्षपैरग्निजुहुयात्। आत्मानमाशीर्भिराशमानः॥

अर्थ-हेतु करके प्रभाव निश्चित हो। हेतुका आरंभ करता रहे। हमने करलिया ऐसा विश्वास न करे। पराक्रम त्याग न करे, अपवाद (निंदा) का स्मरण न करे। अपवित्रतासे हवन न करे। तथा उत्तम घृत, अक्षत, तिल, कुश और सरसों करके अग्नि हवन करे। आपको आशीर्वादोंकी इच्छा करता रहे।

अग्निर्मेनापगच्छेच्छरीरात्। वायुर्मेप्राणानादधातु। विष्णुर्मेबलमादधातु। इन्द्रोमेवीर्यंशिवामांप्रविशन्त्वापः। आपोहिष्ठेत्यपःस्पृशेत्। द्विःपरिमृज्यौष्ठौपादौचाभ्युक्ष्यमूर्द्धनिखानिचोपस्पृशेत्। अद्भिरात्मानंहृदयंशिरश्चब्रह्मचर्यज्ञानदानमैत्रीकारुण्यहर्षोपेक्षाप्रशमपरश्चस्यादिति॥

अर्थ-अग्नि मेरे शरीरसे मतजाओ। पवन मेरे प्राणोंको पोषण करो। विष्णुभगवान् मेरे बलकी रक्षा करो। इन्द्र मेरे वीर्यकी रक्षा करो। जल मेरेमें प्रवेश करो। "आपोहिष्ठामयोभुवः" इत्यादि नव मंत्रोंकरके जलका स्पर्श अर्थात् मार्जन न करे [आर आचमनके मंत्रसे आचमम करे] दोवार होठोंको पोंछै। पैरोंको प्रोक्षण करे। मस्तक और देहके छिद्र (नेत्र, नासिका, आदि) का स्पर्श करे। जलकरके आतमा और हृदयका स्पर्श करे। ब्रह्मचर्य, ज्ञान, दान, मित्रता, करुणा, आनंद, और शांतिपर अर्थात् इनका सेवन नित्य करे।

सुखार्थाःसर्वभूतानांमताःसर्वाःप्रवृत्तयः।
सुखंचनविनाधर्मात्तस्माद्धर्मपरोभवेत्॥

अर्थ-संपूर्ण प्राणिमात्रोंके सुखके अर्थ कर्म है, सो सुख धर्मके विना नहींहो, अत एव इस मनुष्यको धर्मपर अर्थात् धर्मात्मा होना चाहिये ।

मैत्रींसद्भिरसद्भिश्चकुर्यात्सत्सुतुसर्वथा ।
संसर्गसाधुभिःकुर्यादसत्सङ्गन्तुवर्जयेत् ॥

अर्थ-साधु अथवा दुष्ट सबसे मित्रता करे, तिनमेंभी साधुजनोंसे सर्वथा करनी चाहिये । तथा संसर्ग साधुमहात्माओंकेसाथ करे असंगति त्यागदेवे ।

अपकारपरेऽपिस्यादुपकारपरःपुमान् ।
आत्मवत्सकलान्पश्येद्वैरिणोदूरतोवसेत् ॥

अर्थ-कोई अपनेसाथ बुराईकरे परंतु आप उसके साथ उपकारही करता रहे । तथा संपूर्ण प्राणियोंको आत्माके समान जाने अर्थात् जैसे किसीप्रकारका आपको दुःख बुरा लगताहै उसीप्रकार दूसरेको जाने । परंतु वैरीसे दूर रहनाही अच्छाहै ।

नकंचिदात्मनःशत्रुंनात्मानंकस्यचिद्रिपुम् । प्रकाशयेन्नाप-
मानंनचनिस्नेहतांप्रभोः । नात्मानमुदकेपश्येन्ननग्नःप्रविशे
ज्जलम् । तथानाज्ञातगांभीर्यंनहिंस्रप्राणिसेवनम् ॥

अर्थ-आपका शत्रु किसीको न करे अथवा आप किसीका शत्रु न बने । तथा अपना और दूसरेका अपमानको तथा निस्नेह (अप्रीति) कोभी प्रकाशित न करे । अपने प्रतिबिंबको जलमें न देखे । तथा नग्नहो जलमें न धसे । उसीप्रकार जबतक किसी नदी नाला तालाब आदि जलाशयकी थाह मालूम न हो तबतक सहसा उसमें न धसे । क्योंकि जीव जंतु और डूबनेका भय रहताहै । तथा हिंसक जीव (सिंह, व्याघ्र, बाज, बिल्ली) आदिको न पाले ।

भुंजीतमधुरप्रायंस्निग्धंकालेहितंमितम् । नरात्रौदधिभुंजीत
नचानिर्लवणंतथा । नामुद्गयूषंनाक्षौद्रंनचाप्यघृतशर्करम् ॥

अर्थ-भोजनके समय हितपदार्थ और अनुमानका मधुरप्राय भोजन करे । रात्रिको दही न खावे तथा विनानोनका विनामूंग भात, सहत, घी और शक्करके भोजन न करे ।

जनस्याशयमालक्ष्ययोयथापरितुष्यति । तंतथैवानुवर्तेत पराराधनपंडितः । सत्यंब्रूयात्प्रियंब्रूयान्नब्रूयात्सत्यमप्रियम् । सत्यन्तुनानृतंब्रूयादेषधर्मःसनातनः ॥

अर्थ-लोकोंका अंतःकरण जानकर जो जिसप्रकार संतुष्ट होवे उसके साथ उसी प्रकार वर्त्ताव करे क्योंकि दूसरेको प्रसन्न करताही पंडित कहाताहै । सत्य और प्रिय बोले परंतु अप्रिय सत्यभी न बोले तथा झूंठमिला सत्य न बोले यह सनातन धर्महै ।

दृष्टिपूतंन्यसेत्पादंवस्त्रपूतांपिबेज्जलम् ।
सत्यपूतांवदेद्वाचंमनःपूतंसमाचरेत् ॥

अर्थ-दृष्टिसे पवित्र अर्थात् प्रथम मार्गको अच्छीरीतिसे देखकर पैर रखना चाहिये । वस्त्रसे छाना जल पीवे । सत्यकरके पवित्र वाणी बोले और मनसे पूत अर्थात् विचारकर आचरण करना चाहिये ।

वृद्धार्कोहोमधूमश्चबालास्त्रीपल्वलोदकम् । आयुष्यवर्द्धनंतद्व द्रात्रौचक्षीरभोजनम् । संमार्जनीरजोनैवदेहेदध्यात्कदाचन । ननखेनतृणांछिन्द्यान्नोच्छिष्टोब्राह्मणंस्पृशेत् ॥

अर्थ-सायंकालका सूर्य, होमका धूआं, सोलह वर्षकी स्त्री, तलैयाका जल और रात्रिमें दुग्ध पीना ये आयुको बढातेहैं । बुहारी (झाड़ू) की रज देहके ऊपर कभी नहीं लेनी चाहिये । और नखोंसे तिनका नहीं तोडना, जूठे मुखसे ब्राह्मणको स्पर्श न करे ।

नोपरक्तंनचोद्यन्तंनास्तंयातंदिवाकरम् । सर्वथानासमीक्षेतन- जलेप्रातिविंबितम् । नेक्षेतसततंसूक्ष्मदीप्तामेध्याप्रियाणिच । पौरंदरंधनुर्नैवदर्शयेत्कमपिक्वचित ॥

अर्थ-ग्रहण, ऊगतेहुएको और अस्तहोते सूर्यको न देखे । जलमें अपने प्रतिबिंबको कदाचित् न देखे । तथा अत्यंत बारीक वस्तु, अत्यंत प्रकाशवान्, अपवित्र और अप्रिय वस्तु इनको न देखे । इन्द्रके धनुषको (जो प्रायः वर्षाऋतुमें होता है) किसीको न दिखावे न आप देखे ।

नेच्छेद्बलवतायुद्धंनभारंशिरसावहेत् । गात्रंनताडयेत्केशान्

हस्तेनधुनुयान्नच । नगच्छेत्पूज्ययोर्मध्येदंपत्योरन्तरेणच । रिपोरन्नंनभुंजीतगणिकान्नमपिक्वचित् । प्रतिभूर्नभवेत्क्वापि नचसाक्षीवृथाभवेत् ॥

अर्थ-बलिष्ठ पुरुषकेसाथ युद्ध (कुश्ती आदि) न करे । बोझेको मस्तक पर धरके न चले । हाथोंसे अंगोंको न बजावे । और बालोंको हाथसे न फटकारे । पूज्य (गुरु माता पिता आदि) के बीचमें होकर न निकले । स्त्री पुरुषके बीचमें होकर न जाय । शत्रु, और वेश्याका अन्न न खाय । किसीकी जामिनी न देय उसीप्रकार झूँठी गवाहीभी न देय ।

स्थगंनधारयेज्जातुद्यूतंदूरात्परित्यजेत् । विश्वासंनाचरेत्स्त्रीणांताःस्वतंत्राश्चनाचरेत् । रक्षणीयाःसदायत्नाद्यौवनेतुविशेषतः । नभिन्नेशयनेसुप्यान्नानेकविवरेऽपिच । नैकोदेवालयेनैवरात्रौतरुतलेपिच ॥

अर्थ- कपटको धारण न करे अर्थात् कपटी न होय । जूआ खेलना दूरसेही त्याग देवे । स्त्रियोंका विश्वास न करे । और स्त्रियोंको स्वतंत्र न करे यत्नपूर्वक सदैव इनकी रक्षा करे । परंतु जवानीमें स्त्रीकी विशेष करके रक्षा करनी चाहिये । स्त्रीसे पृथक् दूसरी शय्यापर न सोवे । बहुतस्त्रियोंमें तथा बिलकेपास भी न सोवे । देवालयमें अकेला न सोवे । तथा रात्रिमें वृक्षके नीचे न सोवे ।

आचार्यःसर्वचेष्टासुलोकएवहिधीमतः ।
अनुकुर्यात्तमेवातोलौकिकेऽर्थेपरीक्षकः ॥

अर्थ-बुद्धिमान् पुरुषको संपूर्ण व्यापारोंमें लोकही आचार्यहैं । अतएव उस लौकिक अर्थमें परीक्षक होकर फिरकरे अर्थात् जैसा लोकमें व्यवहार हो उसी प्रकार आपको वर्तना चाहिये ।

हिंसास्तेयान्यथाकामंपैशून्यंपरुषानृते । संभिन्नालापव्यापादमभिध्यादृग्विपर्ययम् । पापंकर्मेतिदशधाकायवाङ्मानसैस्त्यजेत् ॥

अर्थ-हिंसा, चोरी, और अन्याई (परस्त्रीगमनादि) ये तीन देहके पाप हैं । चुगली, कठोर बोलना, असत्य बोलना और अनर्थ बोलना ये चार वाणीके पाप

हैं । प्राणियोंके मारनेका चिंतवन, परगुणको न सहना और नास्तिकता ये तीन मानसिक पाप हैं ऐसे सब कायिक वाचिक और मानसिक दशप्रकारके पापोंको त्याग देय ।

आत्मवत्सततंपश्येदपिकीटंपिपीलिकाम् ।
अवृत्तिव्याधिशोकार्त्तानुवर्तेतशक्तितः ॥

अर्थ-कीडी और चैंटीकोभी आत्माके तुल्य देखे (फिर साधु असाधुको क्या देखना) जिनकी वृत्ति नहीं है और रोगी तथा शोकार्त्त हैं । उनको यथाशक्ति जो आपसे बने सो देय परंतु हृष्ट पुष्ट वैरागियोंको न देय ।

एवंदिनानिगमयेत्सदाचारपरः सदा । ततोरात्रिप्रयुक्तानि कुर्यात्कर्माणिमानवः । इत्याचारंसमासेनभाषितंयःसमाचरेत् । सविन्दत्यायुरारोग्यंप्रीतिंधर्मंधनंयशः ॥

अर्थ-इसप्रकार सदैव सदाचारयुक्त हो दिनोंको व्यतीतकरे । तदनंतर रात्रिमें करने योग्य कर्मोंको करे । यह मैंने संक्षेपसे सदाचार वर्णन करा है । जो मनुष्य इसको आचरण करेगा वह आयु, आरोग्यता,प्रीति, धर्म, धन और यशको प्राप्त होवेगा ।

इति श्रीआयुर्वेदोद्धारे बृहन्निघंटुरत्नाकरे सदाचारवर्णनं नाम अष्टाविंशतितमस्तरंगः॥२८॥

अथातो रात्रिचर्याध्यायं व्याख्यास्यामः ।

अर्थ-अब रात्रिचर्याध्यायकी व्याख्या करेंगे ।

तत्रादौ संध्याकालीननियमाः ।

एतानिपञ्चकर्माणिसंध्यायांवर्जयेद्बुधः ।
आहारंमैथुनंनिद्रांसंपाठंगतिमध्वनि ॥

अर्थ-अब रात्रिचर्याको कहतेहैं । तहां प्रथम संध्याकालके नियमोंको कहते हैं । जैसे कि, भोजन, मैथुन, निद्रा, पढना और मार्ग चलना ये पांच कर्मोंको बुद्धिमान् पुरुष सायंकाल (प्रदोषसमय) में त्याग देय ।

पंचकर्मविवर्जनमें हेतु ।

भोजनाज्जायतेव्याधिर्मैथुनाद्गर्भवैकृतिः ।
निद्रायांनिःस्वतापाठादायुर्हानिर्गतेर्भयम् ॥

अर्थ-अब इनके फल कहतेहैं। सायंकालमें भोजन करनेसे रोग होताहै। मैथुन करनेसें बालक वृक्कुतरूपवाला होवे। निद्रालेनेसे द्ररिद्रता। पढनेसे आयुकी हानि और सायंकाकालमें मार्ग चलनेसे भय होताहै। अतएव इन पांचो कर्मोंको न करे।

चांदनीके गुण।

ज्योत्स्नाशीतास्मरानन्दप्रदातृट्पित्तदाहहृत्।

अर्थ-चांदनी शीतल, कामदेवके आनंदको देनेवाली तथा प्यास, पित्त और दाहको हरण करेहै।

हिम (कोहल) गुण।

ततोहीनगुणःकुर्यादवस्यायोनिलंकफम्।

अर्थ-चांदनीसे हीनगुण कुहलमेंहैं, तथा वादी और कफको बढाता है।

अंधकारके गुण।

तमोभयावहंमोहादिङ्मोहजनकंभवेत्।
पित्तहृत्कफकृत्कामवर्धनंक्लमकृच्चतत्॥

अर्थ-अंधकार भयदाता, मोह और दिशाओंका भ्रम उत्पन्न करताहै। पित्तको हरे, कफको करे, कामदेवको वढावे, और क्लमको करे है।

रात्रिभोजनविधि।

रात्रौचभोजनंकुर्यात्प्रथमप्रहरान्तरे।
किंचिदूनंसमश्नीयाद्दुर्जरंतत्रवर्जयेत्॥

अर्थ-रात्रिके प्रथम प्रहरमें भोजन (व्यालू) करे। परंतु कुछ न्यून भोजन करें अर्थात् जितनी भूख हो उससे थोडा खाय, और दुर्जर अर्थात् कठिनतासे जो पचता है उसको रात्रिमें कदाचित् न खाय।

स्वापविधिः।

शुचिदेशंविविक्तंतुगोमयेनोपलेपयेत्। वैदिकैर्गारुडैर्मंत्रैरभिमंत्र्यस्वपेत्ततः। माङ्गल्यंपूर्णकुंभंचशिरःस्थानेनिधापयेत्॥

अर्थ-एकांतमें पवित्र स्थानको गोवरसे लीप (उसजगे शय्या विछाय) गरुडसूक्तके मंत्रोंसे शय्याको अभिमंत्रित करके अर्थात् रक्षावंधन करके फिर गृहस्थी शयन करे और शयनके समय मंगलीक वस्तु (सरसों, पुष्पादिकों) को और जलके पात्रको सिरहाने धरके सोवे।

उपानहौवेणुदण्डमम्बुपात्रंतथैवच । ताम्बूलादीनिरम्याणि समीपेस्थापयेद्गृही । प्राच्यांवादक्षिणायांवाशिरः कृत्वास्वपेद्गृही । नार्द्रवासाश्चनग्नश्चशून्येभ्यक्तश्चखेऽशुचिः।पुस्तकादिदर्शनेनशर्वरीप्रथमभागं नीत्वास्वपेत् ॥

अर्थ–तथा जूतीका जोडा, बांसकी, लकडी, जलका पात्र, और बीडी आदि रमणीक वस्तुओंको गृहस्थी सोतेसमय अपनेपास धरके सोवे । पूर्वकीतरफ या दक्षिणकीतरफ सिरहाना करके सोवे । परंतु गीले कपडोंसे, तथा नग्न होकर शून्यघरमें, तैलादि लगायकर, अतिउच्च स्थान और अपवित्रतासे नहीं सोना चाहिये । रात्रिका प्रथमभाग पुस्तकादि देखनेकरके व्यतीत कर फिर सोवे ।

पूर्वरात्रेव्यतीतेतुसुगच्छेद्रतिमन्दिरम् ।
पादौप्रक्षालयेत्पूर्वंपश्चाच्छय्यांसमाविशेत् ॥

अर्थ–जब प्रहरभर रात्रि व्यतीत होजावे तब केलिघरमें (अर्थात् स्त्रीकेपास) जाना चाहिये । तहां जायकर प्रथम पैरोंको धोय और पोछकर फिर शय्यापर बैठे।

शय्याके लक्षण ।

चतुरशीतिपर्वाणिदैर्घ्येणपरिकल्पयेत् । षष्ट्यंगुलानिविस्तारंमंचकंहस्तसंमितम् । एवंशय्याविधातव्यासर्वेषांशयनोचिता । मानाधिक्येदरिद्रःस्यान्मानहीनेसुखक्षयः ॥

अर्थ–अत्र शय्याके लक्षण कहते हैं । कि, चौरासी पर्व (अंगुल) लंबा और ६० अंगुल चौडा और एक हाथ ऊंचा ऐसा पलंग होना चाहिये । यह सर्व जातिके मनुष्योंको उचित है । यदि इस मानसे अधिक लंबी चौडी और ऊंची बनावे तो दरिद्री होय और इस मानसे न्यून अर्थात् कम करनेसे सुखका क्षय होता है । अतएव यथा मानही शय्या बनानी चाहिये ।

नविशालांनवाभग्नांनासमांमलिनांनच ।
नचजंतुमयींशय्यामधितिष्ठेदनास्तृताम् ॥

अर्थ–जो बहुत बडी और बहुत छोटी हो, टूटी हो, ऊंची नीची हो, मलिन (मैली) हो, तथा जिसमें खटमल आदि जीव हों और जिसपर बिछैया न बिछाहो ऐसी शय्यापर न सोवे ।

पर्य्यङ्कके लक्षण ।

आयामः सप्ततालःस्याच्चतुस्तालंतुविस्तृतम् ।
द्वितालमुन्नतंज्ञेयमेतत्पर्यङ्कलक्षणम् ॥

अर्थ–अब पर्यंक (पलंग) के लक्षण कहतेहैं । सात ताल लंबा चार ताल चौडा और दो ताल ऊंचा ऐसा पलंग उत्तम कहाहै । परंतु यह एक मनुष्यके सोनेके वास्ते है (अंगूठेसे लेकर बीचकी ऊंगली फैलानेसे जितना बीच होता है उस मानको ताल कहते हैं जैसे आगे लिखतेहैं ।

तालादिकोंका प्रमाण ।

अङ्गुष्ठादिकनिष्ठान्तंभवेन्मानचतुष्टयम् ।
प्रादेशस्तालगोकर्णवितस्तिस्तुयथाक्रमम् ॥

अर्थ–अँगूठेसे लेकर कनिष्ठिकापर्यंत क्रमसे चार मान होते हैं जैसे प्रादेश, ताल, गोकर्ण और वितस्ति अँगूठे और तर्जनीका प्रादेश, अँगूठा मध्यमाका ताल, एवं अँगूठा अनामिकासे गोकर्ण और अँगूठा तथा कनिष्ठिकासे वितस्ति अर्थात् बिलायद् (बालिस्त) होता है ।

व्यवायविधिगुण ।

शरीरेजायतेनित्यंदेहिनांसुरतस्पृहा ।
अव्यवायान्मेहमेदोवृद्धिःशिथिलतातनोः ॥

अर्थ–देहधारियोंके देहमें नित्य मैथुन करनेकी इच्छा होती है । मैथुनइच्छा रोकनेसे इस प्राणीके प्रमेहरोग, मेदवृद्धि और देहमें शिथिलता होतीहै ।

प्रशस्तस्त्रीविचार ।

बालेतिगीयतेनारीयावद्वर्षाणिषोडश । ततस्तुतरुणीज्ञेया द्वात्रिंशद्वत्सरावधि । तदूर्ध्वमधिरूढास्यात्पंचाशद्वत्सराव-धि । वृद्धातत्परतोज्ञेयासुरतोत्सववर्जिता ॥

अर्थ–सोलह वर्षपर्यंत स्त्रीकी बाला संज्ञा है । तदनंतर ३२ वर्षकी अवस्यातक तरुणी संज्ञा है । फिर बत्तीसके उपरान्त ५० वर्षकी अवस्थातक स्त्रीकीअधिरूढा (प्रौढा) संज्ञा है । पचास वर्षकी अवस्थासे उपरांत स्त्री वृद्धा कहाती है । यह मैथुन करनेमें वर्जित कही है ।

स्त्रीजाति ।

दैवीक्षप्सरसोयक्षकान्ताराक्षसकामिनी ।
कृत्यामितिजगुर्नारीर्युक्तांतैरेवलक्षणैः ॥

अर्थ-स्त्री दैवी, अप्सरा, यक्षिणी, राक्षसी और कृत्या इनके लक्षण होनेसे वही कहाती है । अर्थात् देवताओंके लक्षण मिलनेसे देवी, अप्सराके लक्षणोंसे अप्सरा, यक्षके लक्षणोंसे याक्षिणी, राक्षसकेसे राक्षसी, उसी प्रकार कृत्याके लक्षणकरके स्त्रीको कृत्या कहतेहैं । इनके लक्षण नीचेके संस्कृत श्लोकोंसे जानलेना ।

पुरुषजाति ।

देवगन्धर्वयक्षाणांयेराक्षसपिशाचयोः ।
लक्षणैःसंयुतास्तेस्युर्नरास्तैरेवनामभिः ॥

अर्थ-जो देव, गंधर्व, यक्ष, राक्षस और पिशाचोंके लक्षणोंसे लक्षित हैं वे मनुष्य उसी २ नाम करके कहातेहैं । जैसे देवताके लक्षणसे देवमनुष्य, गंधर्वसे गंधर्व मनुष्य, यक्षके लक्षणोंसे यक्ष मनुष्य,राक्षसके लक्षणसे राक्षस मनुष्य, और पिशाचके लक्षणसे पिशाच मनुष्य कहलाताहै । इनके लक्षण नीचेके श्लोकोंसे जानो ।

---

१ चन्द्रमुखीमृगनयनामदनधनुर्भ्रूः शशाङ्कशिशिराया । समशिखरसदृशदशना मुखपरिलीनमधुपालिः १ पुंस्कोकिलमधुरोक्तिर्बिंबोष्ठीकम्बुकण्ठकृतशोभा । कोमलमृणालबाहूरक्तोत्पलसदृशकरचरणा २ श्रीफलसमवक्षोजामध्येक्षीणागभीरनाभिश्च । त्रिभुवनजयरेखाइवयस्यास्त्रिवलीलताभाति ३ पृथुतरनितंबविंबाहरिणीस्मरसममन्दिरोद्देशा । कामतरोरङ्कुरइवयस्यारोमावलीविभात्युदरे ४ रम्भोरुर्हंसगतिः कनकरुचिर्नीलनीरजाभाया । सुरभक्तापतिमुक्तालज्जालुःसुरभिरतनीरा ५ सितवसनकुसुमानिरतालव्याहारातिकृष्णवनकचरी । सुचिरकलितपतिरमणादेवीसापद्मिनीश्यामा ६ गीतनृत्यप्रियाक्केकावाणीचित्राम्बरैषिणी । सुगन्धवक्रेभगतिःसुन्दरीमधुरप्रिया ७ मधुगन्धरतद्रावाकोष्णाङ्गीकठिनस्तनी । गौराश्यामशरीरावासुविशालकटीतटा ८ अजालघुस्मरावासावाह्यसम्भोगरागिणी । नारीयाचित्रिणीचिह्नासाप्सराजातिरुच्यते ९ स्थूलाङ्गीचातितन्वीगौरीश्यामापिदीर्घकरचरणा । वडवापृथुमदनगृहारक्ताम्बररागिणीकुटिला १० विपुलकुचापृथुजघनासोष्णाङ्गीक्षारगंधरतसलिला । याशंखिनीसमानाहंसरवायक्षिणीसास्यात् ११ दीर्घास्यदन्तनासास्थूलोष्ठीस्थूलहस्तचरणाच । कपिलकचागतलज्जावारणकुम्भभवक्षोजा १२ करिमदगन्धरतजलारोमशजंघाकषायकटुरसना । स्थूलपृथुःस्मरगेहाशीतोष्णाङ्गीपरुषवचना १३ अरुणाङ्गीश्यामावापतिवर्गद्वेषिणीकुटिलचित्ता । याहस्तिनीसमानासाज्ञेयाराक्षसीनारी १४ कलहप्रियातिदीर्घाखर्वावाश्यामपीतहरितावा । लम्बोष्ठीलघुनासालम्बाशिथिलस्तनाविभागाच १५ शुष्ककटिःपृथुजठराविगन्धकायाचकरभिकायोनिः । यद्यस्मराशिवोक्तिःसाज्ञेयाकर्मठाकृत्या १६ अन्योन्यलक्षणैर्युक्तांनारींसंकीर्णकांविदुः । यानिजैरेवसंयुक्ताचिह्नैस्तांकेवलांविदुः १७

२ दातासत्यवचःशूरो ज्ञानीसत्वरतःशुचिःसुवर्णकान्तिःश्यामोवामहाकायोघनध्वनिः १ आजानुल-

परस्त्रीगमननिषेध ।

लङ्केश्वरोजनकजाहरणेनवालीदारापहारकतयाप्यथकीच-
काख्यः । पाञ्चालिकाग्रहणतोनिधनंजगामतच्चेतसापिप-
रदाररतिंनकांक्षेत् ॥

अर्थ—जानकीके हरणसे रावण, दारा (रुमा सुग्रीवकी स्त्री) के हरणसे वाली और द्रौपदीके हरणसे कीचक मारागया अतएव सत्पुरुष परस्त्रीसे रमण करनेकी इच्छा मनकरकेभी न करे ।

उर्वशीसुरतचिन्तयाययौसंक्षयंकिलपुरूरवानृपः ।
रक्षणायनिजजीवितस्यतत्संभजेत्परवधूंनकामतः ॥

अर्थ—देखो पुरूरवा राजा उर्वशी अप्सराकी रमणचिंताकरके मरगया अतएव सत्पुरुष अपने निज जीवनके अर्थ पराई स्त्रीका संग इच्छासेभी न करे ।

आयुःक्षतिर्विकलतात्युपहास्यताचनिन्दार्थहानिलघुताःकुग-
तिःपरत्र । स्यादेवयद्यपिरतेरपराङ्गनायाः प्राहुस्तथाप्यनघ
मित्यपिकारणेन ॥

वितौबाहूकम्बुग्रीवोवलीचतुर्दंष्ट्रः । भाग्यविधिःपृथुवक्षोलघुमधुराक्षरश्चपद्माक्षः २ मलयजगन्धशरीरः कामंक्रोधंनिषेवतेस्थाने । मृगलिंगःसुरपुरुषोभक्तोविप्रेषुविज्ञेयः ३ सत्वरजोभ्यांयुक्तःश्यामोवाचंपकाभोवा । रूपस्वीशुचिर्वशोमधुराम्लरुचिर्वदान्यश्च ४ संगीतरक्तःप्रमदासुसक्तोदुःखासहोदुन्दुभिधीरघोषः । मध्यप्रमाणोम्बुजगन्धिकायोगन्धर्वजातिःकथितोजलिङ्गः ५ पृथुजठरललाटःपीनकण्ठोवलीयान्विपुलनिबिडकायोरोमशःकुड्मलाक्षः । अचलमतिरमर्षीसिंहघोषोधनाढ्योनवघृतसमगन्धःकान्तरक्तान्तनेत्रः ६ दीनेषुदाताम्लरसालभोजीरजस्तमोभ्यांजनितानुषङ्गः। यत्किञ्चिदाश्यामतनुःप्रदिष्टः सयक्षजातिर्वृषलिङ्गलिङ्गः ७ कृष्णोरुणोवाविकृतास्यदंष्ट्रः प्रचंडकायोवलवान्पलाशी । उग्रस्वरःकोपनिधिः सुरापस्तमोमयोवारणदानगन्धिः ८ विडालाक्षःसुरान्द्वेष्टिनित्यमूर्ध्वशिरोरुहः । रक्षोजातिर्नरोज्ञेयोहयलिङ्गाभमेहनः ९ आसवरतिर्वहुभुक्कट्वम्लाशीचकर्मठःपिशुनः । स्थूलःकृशोतिदीर्घःखर्वोवाकृष्णपीतोवा १० अतितामसोऽजगन्धिःकाकरवोहस्वकूर्चकःपापः । भीरुःकुधीःपिशाचोरासभलिङ्गस्तुविज्ञेयः ११ परस्परगुणान्कांश्चिद्योविभर्तिसमिश्रकः । यःस्वैरेवगुणैर्युक्तःसस्वरूपोनिगद्यते ॥ १२ ॥

हरिणीछागीवडवाकरिणीकरभीतिपंचधानार्यः । मृगकुक्कुटवृषतुरगरासभसंज्ञानराःपञ्च १ ऋतुलोकपालपंक्तिर्द्वादशभुवनाङ्गुलोन्मितैर्गुह्यैः । अनुपूर्वतस्तुउक्ताहरिणीहरिणादयोज्ञेयाः २ दैवींचतुर्थयामेदिनरात्र्योरप्सरोगणंप्रथमे । यक्षींतृतीययामेद्वितीयकेराक्षसींरमयेत् ३ निखिलेष्वपिवाकृत्यानोवाकृत्यासदाभवेद्रम्या । करभीचिहाकृत्याखरःपिशाचस्तयोर्युक्तः ॥४ ॥

आसनेलालयेद्बालांतरुणींशयनेतथा । उत्थितेप्यतिरूढांचलालनंत्रिविधंस्मृतम् १ नारंभतरतंतावद्यावन्नोत्कंठिताप्रिया । अन्यथानसुखोत्पत्तिरितिकामानुशासनम् २ पद्मजासनलयेनपद्मिनींनागरेणरमयेतचित्रिणीम् । वेणुदारितपदेनशंखिनीं स्कंधपादयुगलेनहस्तिनीम् ३ स्वजातिरतिसुखार्थीचित्रिणीमग्रयजातिंदिनरजन्योर्हस्तिनींचद्वितीये । रमयतिचतृतीयेशंखिनीभार्द्रभावंरमयातिरमणीयांपद्मिनींतुर्य५

अर्थ-परस्त्रीगमनसे क्या क्या अनर्थ होते हैं सो दिखाते हैं अयुकी क्षीणता, वि
लता, संसारमें हँसी, निंदा, धनकी हानि, तुच्छता, मरनेपर दुर्गति ये होते हैं । अत
एव परस्त्रीसंग सर्वथा त्याज्य है ।

ऋतुपरत्वस्त्रीविचार ।

निदाघशरदोर्बालाहिताविषयिणोमता । तरुणीशीतसमये
प्रौढावर्षावसन्तयोः । नित्यंवासेव्यमानाहिबालावर्द्धयतेव
लम् । तरुणीह्रासयेच्छक्तिंप्रौढाद्रावयतेजराम् ॥

अर्थ-गरमीकी ऋतु और शरद्ऋतुमें बालास्त्रीसे विषय करना अच्छा है । तरु
णी स्त्री शीतकालमें हित और प्रौढा वर्षा तथा वसंतऋतुमें हित कही है । नित्य
सेवन करनेसे बालास्त्री बलको बढातीहै । तरुणी स्त्रीसे नित्य विषय करनेसे देहश
क्ति क्षीण होती है । और प्रौढा स्त्री वृद्धावस्था करे है अतएव इस पुरुषको बाल
स्त्रीकाही सेवन हितकारी है ।

सद्यःप्राणदायक षट्पदार्थ ।

सद्योमांसंनवंचान्नंबालास्त्रीक्षीरभोजनम् ।
घृतमुष्णोदकस्नानंसद्यः प्राणकराणिषट् ॥

अर्थ-ताजा मांस, नवीन अन्न, बाला स्त्री, दूधका भोजन, घी और गरम जलसे
स्नान, ये छः वस्तु तत्काल प्राणदायक हैं । अर्थात् इन छः वस्तुओंका सेवन इस
प्राणीको नित्य करना चाहिये ।

सद्यःप्राणनाशक षट्पदार्थ ।

पूतिमांसंस्त्रियोवृद्धाबालार्कस्तरुणंदधि ।
प्रभातेमैथुनंनिद्रासद्यः प्राणहराणिषट् ॥

अर्थ-सडामांस, बुड्ढी स्त्री, बालार्क (कन्याराशिका सूर्य) ताजा दही प्रातः
काल मैथुन करना और निद्रा लेना ये छः वस्तु तत्क्षण प्राण हरण करते हैं । अत-
एव इन छः वस्तुओंको शुभेच्छु पुरुष सेवन न करे ।

तरुणस्त्रीकी प्रशंसा ।

वृद्धोपितरुणींगत्वातरुणत्वमवाप्नुयात् । वयोधिकांस्त्रियंग-
त्वातरुणः स्थविरायते । आयुष्मन्तोमन्दजरावपुर्वर्णबला-
न्विताः । स्थिरोपाचितमांसाश्चभवंतिस्त्रीषुसंयताः ॥

अर्थ-वृद्ध पुरुषभी तरुण स्त्रीसे गमन करे तो तरुणत्वको प्राप्त होवे । और वृद्ध

वृद्धासे कदाचित् रमण न करे जो पुरुष तरुण स्त्रीसे भोगकरते हैं वो अयुष्यवान्, अल्प वृद्ध देह वर्ण बलयुक्त तथा स्थिर और हृष्टपुष्ट होते हैं ।

स्त्रीसेवनमें काल ।

सेवेतकामतःकामंबलाद्वाजीकृतोहिमे । प्रकामन्तुनिषेवेत मैथुनंशिशिरागमे । त्र्यहाद्वसन्तशरदोःपक्षाद्वृष्टिनिदाघयोः ॥

अर्थ—हेमंतऋतुमें पुरुष वाजीकरणकी विधिसे यथेष्ट स्त्रीसे रमण करे । और शिशिरऋतुमें जब इच्छाहोतभी रमण करे और वसंतऋतु और शरदऋतुमें तीनतीन दिनके अंतरसे स्त्रीगमन करे और वर्षाऋतु तथा गरमीकी ऋतुमें पक्षपक्षअर्थात्पंद्रह पंद्रह दिनके अंतरसे स्त्रीगमन करना चाहिये।

देशपरत्व स्त्रियोंकी प्रकृति ।

रूक्षाङ्गीबहुभोजनाचलमतिर्गीतप्रियावातला । शैलाम्भो- निधिपार्श्वदेशवनिताप्रायोभवेदीदृशी । वर्षायांकुसुमागमे चबहुशःसेव्यापरंप्रीतिदा ॥

अर्थ—रूखे अंगकी, बहुत भोजन करनेवाली, चपल बुद्धि, गानप्रिय और वातप्र- कृति, ऐसी पर्वत, समुद्रके समीप रहनेवाली स्त्रियां होती हैं । इनको वर्षा और वसंत ऋतुमें प्रायः सेवन करे ये इसऋतुमें आनंदकी दाता हैं ।

गुर्वाहारसुगंधमाल्यवसनास्निग्धाङ्गरागादिभिः ।व्यक्तग्रन्थि- रहर्निशंचसकलेगात्रेवहंत्युष्णताम् । अम्भोजप्रसवारुणोत्तम कराशीतालयप्रेयसी । सौराष्ट्राङ्गकलिङ्गसिन्धुयुवतिः कामं भवेत्पित्तला । हेमन्तेशिशिरेनरैरनुदिनंसेव्यायथाकांक्षया ॥

अर्थ—अत्यंत भोजन करे, सुगंधित माला, वस्त्रोंको धारण करनेवाली, अंगराग (आदिशब्दसे बीडी चबानां, माँग भरना, भूषण धारण करने करके) सुशोभित, जिसके देहमें ग्रन्थि हो और संपूर्ण देहमें उष्णताको धारण करनेवाली जिसके स्खलित होनेमें कमलकीसी गंध आवे लाल हस्तकमल जिसके और शीतल स्थान जिसको प्रिय ऐसी सौराष्ट्रदेश, अंगदेश, कलिंगदेश और सिंधकश्मीरदेशकी पित्तप्रकृतिवाली स्त्रिया होती हैं । इनको हेमंत और शिशिरऋतुमें यथेच्छ सेवन करे ।

ज्ञेयाकोकिलकाकलीमृदुरवानन्दैपिणीशीतला । शिरीषकोमलतनुः स्निग्धाननाश्लेष्मला । वङ्गश्रीहटक

पतरुणीसुस्निग्धकेशीभवेत् । गंतव्याशरादिप्रदिष्टमदनाग्रीष्मेऽपिपुंभिर्वरैः ॥

अर्थ-कोकिलके समान मिष्टवचनकी बोलनेवाली, आनंदकी इच्छा जिसके और शीतल तथा निद्रालु और शिरीषपुष्पके सदृश नम्रदेहवाली, स्निग्धमुखी और कफप्रकृति ऐसी वंग (वंगाला) श्रीहट (सिलहट) और कामरूपदेशकी स्त्री होतीहैं । इनके बालभी सटकारे कारे होते हैं । इसी कारण मनुष्यको शरदृऋतु और ग्रीष्मऋतुमें इनकेसाथ कामक्रीडा करनी चाहिये ।

ऋतुपरत्वस्त्रीगमनमें सुश्रुतका प्रमाण ।

त्रिभिस्त्रिभिरहोरात्रैःसमयात्प्रमदांनरः ।
सर्वैष्वृतुषुघर्मेतुपक्षात्पक्षाद्व्रजेद्बुधः ॥

अर्थ-सुश्रुतमें लिखा है कि, संपूर्ण ऋतुओंमें इस मनुष्यको तीनतीन दिनके अंतरसे मैथुन करना और गरमीकी ऋतुमें पंद्रह पंद्रह दिनके अंतरसे रमण करना चाहिये ।

ऋतुपरत्व कामस्थान ।

शीतेरात्रौदिवाग्रीष्मेवसन्तेतुदिवानिशि ।
वर्षासुवारिदध्वानेशरत्सुसरासिस्मरः ॥

अर्थ-शीतकालमें रात्रिमें गमन करे, गरमियोंमें दिनमें और वसंतऋतुमें दिन रात्रि दोनोंसमय तथा वर्षाऋतुमें जिससमय मेघ गर्ज रहाहो अर्थात् वर्षताहो उससमय और शरदृतुमें सरोवरमें कामदेव वास करे है अतएव सरोवरमें या सरोवरके समीपस्थानमें कामक्रीडा करे ।

निषेधकाल ।

नोपेयात्पुरुषोनारींसन्ध्ययोर्नचपर्वसु[1] ।
गोसर्गेचार्धरात्रेचतथामध्यंदिनेपिच ॥

अर्थ-अब वर्जित समय कहतेहैं । दोनों समयकी संन्ध्या पर्व, जिससमय गौ छोडी जातीहै, अर्धरात्रि तथा मध्याह्नके समय इस पुरुषको स्त्रीसे रमण नहीं करना चाहिये ।

स्त्रीसेवनविधि ।

विहारंभार्ययाकुर्याद्देशेतिशयमावृते ।
रम्येश्राव्याङ्गनागानेसुगन्धेमुखमारुते ॥

---

१ चतुर्दश्यष्टमीचैव अमावास्याचपूर्णिमा । पर्वाण्येतानिराजेन्द्र रविसंक्रान्तिरेवचेति ।

अर्थ—इस पुरुषको अपनी स्त्रीकेसाथ विहार करना चाहिये । जो देश प्रायः सर्व जनोंको प्रकाशित न हो अर्थात् एकांत हो और रमणीक जिसमें स्त्री गान कर रही हो सुगंधित और सुखदायक पवन आय रही हो ऐसी जगे संभोग करे ।

संभोगके अयोग्यस्थान ।

देशेगुरुजनासन्नेविवृतेतित्रपाकरे । श्रूयमाणव्यथाहेतुवचने चरमेन्नच ॥ वह्निब्राह्मणपूज्यवर्गनिकटेनद्याचदेवालये दुर्गादौचचतुष्पथेपरगृहेऽरण्येश्मशानेपिवा । संक्रांतौशशिसंक्षयेथशरदिग्रीष्मेज्वरात्तौव्रते । संध्यायांचपरिश्रमेषुसुरतंकुर्यान्नविद्वान्क्वचित् ॥

अर्थ—गुरुजनके समीप अर्थात् जहां मातापिता आदिकी समीपता हो खुलाहुआ, और लज्जाकारक, तथा जहां किसीप्रकारका दुःख और दुःखित शब्द सुनाई देता हो वहां कदाचित् रमण न करे अग्नि, ब्राह्मण, पूज्य इनके समीप, नदीके किनारे, देवालयमें, कोट (किले) आदिमें, चौराहेमें, पराये घरमें घोरवनमें, श्मशानमें, दिनमें, संक्रांतिमें, अमावस, अत्यंत शरदी और गरमीमें, ज्वरमें, व्रतमें संध्या (प्रातःकालकी और सायंकालकी) में इसी प्रकार परिश्रम करके इनमें विद्वान् पुरुषको कदाचित् स्त्रीसेवन नहीं करना चाहिये ।

विहितप्रदेशः ।

विस्तीर्णेसजलेसुधाधवलितेचित्रादिनालङ्कृते । रम्यप्रोन्नत चत्वरेऽगरुमहाधूपादिपुष्पान्विते । सङ्गीताङ्गविराजितेस्वभवनेदीपप्रभाभासुरे । निःशङ्कंसुरतंयथाभिलषितंकुर्यात्समंकान्तया ॥

---

१ मार्जारीहिमवालुकापिशुनकं गोशीर्षकंशिलिपनं वह्नेःप्रीतिकरं तथाम्बुपिशितास्यात्कौशिकौजांगिकम् । कल्कंभागविवर्धितंगुडसितासंमूर्च्छितंसर्षपायुक्तं मन्मथवर्त्तिरित्यभिहितास्याद्भोगिनांसदा १ सुरदारुमरुवमस्तकलाक्षागुरुशालचूर्णकर्पूरम् । नृपवासदेहगेहयोग्यामनोहरादीपवर्तिरियम् २

अथांगवासः—चूर्णंकुष्ठमुरानागकेशराणांघृतान्वितम् । मधुपीतंकरोत्यङ्गसौरभंसततंनृणाम् ॥ प्रातः कुष्ठस्ययच्चूर्णंलिहन्मधुघृतान्वितम् । काठिन्यंसौरभंतस्यदेहस्याच्चिरजीविता ॥

अथधूपाः- शशिनखगिरिमदमांसीजलभागोमलयलोभयोर्भागौ । मिलितैर्गुडपरिमृदितैर्वस्त्रगृहादीनि धूपयेच्चतुरः ॥

अर्थ-लंबाव और चौडावयुक्त, सजल, सफेदीसे पूतरहाहो, चित्रनसे अलंकृत, अथवा तसबीरोंसे शोभित गानके अंग (बाजे नृत्य आदिसे) विराजित दीपकके प्रकाशसे प्रकाशित, अथवा झाड फानूससे प्रकाशित, रमणीक और ऊंचाहै आंगन वा छत्त जिसकी, अगरआदि धूनीसे धूपित तथा पुष्पबिछ रहे हों ऐसे परम रमणीक अपने घरमें अपनी प्यारीकेसाथ निःशंक यथेष्ट रमण करे ।

संभोगसमयमें वेष ।

स्नातश्चन्दनलिप्ताङ्गःसुगंधःसुमनोन्वितः ।भुक्तवृष्यः सुवसनःसुवेषःसमलङ्कृतः । ताम्बूलवदनःपत्न्यामनुरक्तोऽधिकस्मरः । पुत्रार्थीपुरुषोनारीमुपेयाच्छयनेशुभे ॥

अर्थ-अब संभोग करनेके समय कैसा पुरुष होय यह कहतेहैं । स्नानकर चन्दन लगाया, सुगंधित अतर आदि लगाया रक्खाहो, प्रसन्नचित्त, वीर्यके बढानेवाली औषध भक्षण कर, सुंदर वस्त्र और सुंदर वेष तथा भूषण और पुष्पादिहारोंसे सजकर, बीडा चबाय, अपनी प्राणप्यारीमें अनुरागयुक्त, कामोद्दीपन होरहाहो, ऐसा पुरुष पुत्रकी इच्छा करके शुभ शय्यापर अपनी स्त्रीकेपास जावे ।

अयोग्य पुरुष ।

अत्याशितोऽधृतिःक्षुद्वान्सव्यथाङ्गःपिपासितः ।
वालोवृद्धोन्यरोगार्त्तस्त्यजेद्रोगीचमैथुनम् ॥

अर्थ-अब अयोग्य पुरुष कहतेहैं । जिसने अत्यंत भोजन कराहो, धैर्यरहित भूखा देहमेंपीडा होरहीहो, प्यासा हो, बालक, बुड्ढा, गरमी सुजाक आदिसे पीडित और रोगी ऐसे पुरुषको मैथुन कदापि नहीं करना, यदि पुरुषकी इच्छाभी हो तो स्त्रीको नहीं करदेना चाहिये ।

वर्जितमैथुनपुरुष ।

क्षुधितःक्षुब्धचित्तश्चमध्याह्नेतृषितोऽबलः । स्थितश्चहानिंशुक्रस्य वायोःकोपंचाविन्दति । व्याधितस्यरुजाप्लीहामूर्च्छामृत्युश्चजायते ॥

अर्थ-भूखा, क्षोभितचित्तवाला, मध्याह्नमें, प्यासा, बलहीन और स्थित इनको मैथुन नहीं करना, यदि करेतो शुक्रकी हानि, वायुकोप होय और रोगी करेतो उसकी पीडा अधिक हो, तापतिल्ली, मूर्च्छा, और मृत्यु होवे ।

योग्य स्त्री ।

भार्यांरूपगुणोपेतांतुल्यशीलकुलोद्भवाम् । अभिकामोऽ-

भिकामांतुहृष्टोहृष्टामलंकृताम् । सेवेतप्रमदांयुक्त्यावाजी-
करणबृंहितः ॥

अर्थ—रूप और गुणयुक्त समान स्वभाव और कुलमें प्रगट दोनोंके रमणकी इच्छा हो, और पुरुष आप प्रसन्न हो एवं प्रसन्नचित्तवाली स्त्री तथा शृंगार कर रक्खा हो और वाजीकरणकारक औषधी सेवन कर पुरुष अपनी भार्याको युक्तिकेसाथ सेवन करे ।

अनुरक्तस्त्रीके लक्षण ।

स्नेहंमनोभवकृतंकथयन्तिभावा नाभीभुजस्तनविभूषणदर्श-
नानि । वस्त्राभिसंयमनकेशविमोक्षणानि भ्रूक्षेपकंपितक-
टाक्षनिरीक्षणानि ॥

अर्थ—अब अनुरक्त स्त्री अर्थात् जो अपनेको चाहती हो उसके लक्षण कहते हैं । कामदेवके करेहुए भाव स्नेह (प्रीति) को प्रगटकरते हैं । उन भावोंको कहते हैं जैसे नाभी, भुजा, स्तन और भूषणोंको दिखाना, वस्त्रोंका संयमन अर्थात् घूंघट आदि अथवा वस्त्रोंको सुधारना, बालोंका छोडना, भौंहके मरोडने करके कंपितकटाक्षोंसे देखना ये अनुरागवती स्त्रीके लक्षण हैं ।

उच्चैःष्ठीवनमुत्कटप्रहसितंशय्यासनोत्सर्पणं । गात्रास्फोट-
नजृंभणानिसुलभद्रव्याल्पसंप्रार्थना । बालालिङ्गनचुंबना-
न्यभिमुखेसख्याःसमालोकनं दृक्पातश्चपराङ्मुखेगुणकथा
कर्णस्यकंडूयनम् ॥

अर्थ—ऊंचेसे खकारकर थूकना, अत्यंत हँसना, सेजसे और बिछैयेसे हटकर समीप आना अंगोंको बजाना, जँभाई लेना, सुलभ और थोडी द्रव्यकी याचना करना, पुरुषको देख अपने बालकको आलिंगन करना और उसका चुंबन करना, अपनी बराबरकी सहेलीके साम्हने देखना, जब पुरुषकी दृष्टि न होय तब दृष्टिका चलाना और परोक्ष (पिछाडी) बडाई करना, तथा कानका खुजलाना ।

इमांचविद्यादनुरक्तचेष्टांप्रियाणिवक्तिस्वधनंददाति । विलो-
क्यसंहृष्यतिवीतरोषाप्रमार्ष्टिदोषान्गुणकीर्तनेन । तन्मित्र-
पूजातदरिद्विषत्वंकृतस्मृतिः प्रोषितदौर्मनस्यम् । स्तनौष्ठदा-
नान्युपगूहनंचस्वेदोऽथचुम्बाप्रथमाभियोगः ॥

अर्थ-प्रियवचनोंका बोलना, अपने पाससे धन देना, यदि क्रोधमेंभी बैठी हो तो देखतेही क्रोधको छोड प्रसन्न होजावे और उसके गुणकीर्त्तन करके दोषोंको दूरकर-दे, तथा अपने प्यारेके जो मित्रगणहैं उनका सत्कार करना, और जो उसके वैरीहैं उनसे द्रोह करना, तथा जो अपने प्यारेने कुछ सत्कार कराहो उसको याद रखना, उसके परदेशमें रहनेसे अप्रसन्न रहना तथा स्तनका स्पर्श और ओष्ठोंका चुंबन तथा आलिंगन करना पसीनोंका आना तथा पुरुषका चुंबन करना ये संपूर्ण लक्षण अनुरक्तस्त्रीके प्रथम समागममें होते हैं ।

विरक्तस्त्रीके लक्षण ।

विरक्तचेष्टाभ्रुकुटीमुखत्वंपराङ्मुखत्वंकृतविस्मृतिश्च । असं-भ्रमोदुष्परितोषताचतद्विष्टमैत्रीपरुषंचवाक्यम् । स्पृष्ट्वाथ-वालोक्यधुनोतिगात्रंकरोतिगर्वंनरुणद्धियातम् । चुंबाविरा-मेवदनंप्रमार्ष्टिपश्चात्समुत्तिष्ठत्तिपूर्वसुप्ता ॥

अर्थ-विरक्त किसी चेष्टाकरे, भौंह चढायेई रहे, कभी सन्मुख न देखे, करे हुए उपकारको न माने, पतिका निरादर करे, किसीप्रकार संतुष्टही नहो, अपने पतिके द्वेषियोंसे प्रीति करना, कठोरवचन बोलना स्पर्श करनेसे तथा देखकर पीटनलगे, गर्वकरे, तथा जातेहुएको रोके नहीं, चुंबन करतेही शीघ्र मुखको पोंछ डाले, पतिसे प्रथम सोवे और पतिके जगनेके पीछे उठे ये विरक्त अर्थात् जिसकी प्रीति नहींहो उसकी चेष्टा हैं ।

स्त्रीणां नाशहेतुः ।

पितृसदननिवासःसङ्गतिःपुंश्चलीभिः प्रवसनमपिपत्युर्वार्ध-कंसेर्ष्यताच । वसतिरथचपुंभिर्दुष्टशीलैस्त्ववश्यंक्षतिरपि निजवृत्तेर्योषितांनाशहेतुः ॥

अर्थ-स्त्री इनकारणोंसे बिगडती है । जैसे पिताके घरमें रहना, दुष्ट स्त्रियोंके पास बैठना उठना, पतिके परदेशमें रहनेसे, पतिके वुड्ढे होनेसे और ईर्ष्या करनेसे तथा खोटे पुरुषोंमें रहनेसे और निजवृत्तिके नष्ट हेनेसे स्त्री व्यभि-चारिणी होतीहै ।

दुष्टस्त्रियोंकी दूती ।

भिक्षुणिकाप्रव्रजितादासीधात्रीकुमारिका रजिकामालाका-

रीदुष्टाङ्गनासखीनापितीदूत्यः । कुलजनविनाशहेतुर्दूत्योय-स्मादतः प्रयत्नेनाताभ्यःस्त्रियोभिरक्ष्यावंशयशोमानवृद्ध्यर्थम् ॥

अर्थ–दुष्टस्त्रियोंकी दूती कहतेहैं । भीख मांगनेवाली, बैरागीन, दासी, धाय, बालिका, धोबन, मालिन, खोटीस्त्री, सहेली और नाइन ये दूती हैं । अर्थात् खोटी स्त्री पुरुष इनको द्वारा बातचीत करते हैं । ये कुलजनविनाशकी हेतुहैं । अतएव अच्छे पुरुष इनदुष्टदूतियोंसे अपने घरकी स्त्रियोंकी रक्षा करें ।

स्त्रियोंके संकेत ।

रात्रीविहारजागररोगव्यपदेशपरगृहेक्षणिकाः ।
व्यसनोत्सवाश्वसङ्केतहेतवस्तेषुरक्ष्याश्च ॥

अर्थ–रात्रिमें घरसे निकल बाहर डोलना, रातमें जागना (जैसे रजगेमें स्त्री इकठ्ठी होती हैं) रोगका मिषकरके पडी रहना, पराये घरमें बहुतसा उठना बैठना, देवदर्शनका मिषकरना, व्यसन (रोगको उत्पन्न करता हेतुको लेकर दुःख सेवन करना) और विवाहादिक उत्सवोंमें जाना ये दुष्टस्त्रीके परपुरुषोंसे मिलनेके संकेत हेतु हैं अतएव चतुर पुरुष इन संकेतोंसे स्त्रीकी रक्षा करे ।

त्याज्य स्त्री ।

रजस्वलामकामांचमलिनामप्रियान्तथा । वर्णवृद्धांवयोवृद्धांतथाव्याधिप्रपीडिताम् । हीनाङ्गींगर्भिणींद्वेष्यांयोनिरोगसमन्विताम् । सगोत्रांगुरुपत्नींचतथाप्रव्राजितामपि । नाभिगच्छेत्पुमान्नारींभूरिवैगुण्यशंकया ॥

अर्थ–रजस्वला, अकामा, मलिन, अप्रिय, वर्णवृद्ध (अर्थात् शूद्रको वैश्यकी, वैश्यको क्षत्रीकी, क्षत्रीको ब्राह्मणकी) स्त्री, अवस्थामें वडी, रोगसे पीडित, हीन अंगकी, गर्भिणी, वैरीकी स्त्री, योनिरोग (गरमीआदि रोग) वाली, एकही गोत्रकी, गुरुकी पत्नी, संन्यासिन अर्थात् बैरागिन इन स्त्रियोंमें अनेक अवगुणकी शंकाकरके पुरुष गमन न करे । कोई द्वेष्याकी जगे वेश्या कहता है ।

दुःसाध्या स्त्री ।

भर्तृस्नेहवतीदृढैकवनिताप्रेम्णाविहीनाभृशं सेर्ष्याभूरिसुतात्रपाभरयुतागुर्वादिभीतिस्थिता । प्रायेणार्थवतीतथापरजनालापेविरक्तासदा निर्लोभाव्यभिचारकर्मणिबुधैर्दुःखेनसाध्यास्मृता ॥

अर्थ–पतिमें अत्यंत प्रेम रखतीहो, दृढ एकपुरुषमें आसक्त और निरंतर प्रेमहीना, ईर्षायुक्त, बहुत संतानवाली, अत्यंत लज्जावाली, गुरु (ससुर, सास जेठ) आदिकी भय करतीहो, प्रायः धनकी कांक्षा रखतीहो, तथा परपुरुषसे वार्तालाप करनेमें सदैव विरक्तहो और निर्लोभहो ऐसी स्त्रियां व्यभिचारकर्ममें चतुरोंकरके दुःसाध्य कही हैं अर्थात् इतनी स्त्री दुष्टपुरुषोंको प्राप्त नहीं हो सकती ।

गर्भिणीसप्तमान्मासादुपरिष्टाद्विशेषतः ।
निषिद्धात्वष्टमेमासेमैथुनंनसमाचरेत् ॥

अर्थ–सातवे महिनेसे गर्भिणी स्त्रीसे मैथुन करनेका निषेध है परंतु अष्टम महिनेमें तो सर्वथा मैथुन करना निषिद्ध है ।

रजस्वलागमननिषेध ।

रजस्वलांगतवतोनरस्यासंयतात्मनः ।
दृष्टयायुस्तेजसांहानिरधर्मश्चततोभवेत् ॥

अर्थ–रजस्वला स्त्रीसे गमन करनेसे मनुष्यकी दृष्टि, आयु, तेज, इनकी हानि होतीहै । और धर्मशास्त्रके मतसे अधर्म होताहै, अतएव इस पुरुषको रजस्वला स्त्री सर्वथा त्याज्यहै ।

लिंगिनींगुरुपत्नींचसगोत्रामथपर्वसु।वृद्धांचसंध्ययोश्चापिगच्छतोजीवितक्षयः । गर्भिण्यांगर्भपीडास्याद्व्याधितायांवलक्षयः । हीनांगींमलिनांद्वेष्यांक्षामांवंध्यामसंवृते । देशेऽभिगच्छतो रेतःक्षीणंम्लानंमनोभवेत् ॥

अर्थ–वैरागिन, गुरुपत्नी, गोत्रकी स्त्री और पर्वमें तथा वृद्धास्त्रीसे और दोनोंसंध्याओंमें गमन करनेसे जीवन नष्ट होताहै । गर्भिणीसे गमन करनेसे गर्भको पीडा होतीहै । रोगवाली स्त्रीके साथ गमनसे बल क्षीण होताहै । हीनअंगवाली, मलिन, शत्रुकी स्त्री, दुर्बल स्त्री, वंध्या स्त्रीसे और प्रकाशित स्थानमें स्त्री गमन करनेसे वीर्यकी क्षीणता और मनकी मलिनता होतीहै ।

स्त्रीणांवैराग्यहेतुमाह ।

कार्पण्यादतिमानरोगविरहोद्योगादपारुष्यतो मालिन्यादसमानतादिभयतःशोकाद्दारिद्र्यादपि । भर्तॄणांतनुतादिभिश्चव-

---

१ स्त्रीवशीकरणम्–नाभिहृत्कंठदेशेषुददन्श्वासंशनैःशनैः । कामंसंसाधयेत्कामीगायत्रींसप्तधापठेत् । अथ कामगायत्री ॐमनोभवायविद्महे पुष्पबाणायधीमहि । तन्नःकामःप्रचोदयात् । व्याजेनचुंबनादीनामुच्छ्वासंपाययेत्प्रियाम् । तेनसानश्रमायातिनतुतस्याःस्वयंपिबेदिति ।

पुषःकाठिण्यतःशङ्कनाद्दोषाणांचवृथाप्रयांतिवनितावैराग्य-
मुच्चैःसदा ॥

अर्थ-अत्यंत कृपणता (लोभी) अति मानसे, रोगी होनेसे, विरहसे, उद्योगादि पुरुषार्थ रहित होनेसे, मलिनतासे, असमानतासे, मूर्खताआदिसे, भयसे, शोकसे, दरिद्रतासे, पतिका देह अत्यंत पतला होनेसे, तथा देहके अति कठोर होनेसे, अत्यंत शंका करनेसे, व्यर्थ दोष लगाना इन कारणोंसे स्त्रियोंके मनमें पुरुषसे वैराग्य उत्पन्न होताहै।

विरक्त स्त्रीके लक्षण।

नाभिपश्यतिभर्त्तारंनोत्तरंसंप्रतीच्छति । वियोगेसुखमाप्नोति
संयोगेचातिसीदति । शय्यामुपगताशेतवदनंमार्ष्टिचुम्बने ।
तन्मित्रैर्द्वेष्टिमानंचविरक्तानाभिवांछति ॥

अर्थ-विरक्त स्त्रीके यह लक्षणहैं कि, पतिके सन्मुख न देखना, पतिकी बातका उत्तर न देना, जब पति कहीं चलाजाय तब प्रसन्न रहै, और मिलनेसे दुःखी होय प्रथम तो शय्यापर जाय नहीं और जायभी तो सोय रहे, यदि पति चुंबन करे तो तत्काल कपोलको पोंछ डाले । और पतिके मित्रोंसे द्वेष करे तथा पतिके सत्कार करनेको प्रसन्न नहीं रहे ।

प्रीतिरुच्यते ।

नैसर्गिकीविषयजासमाचाभ्यासिकीतथा ।
चतुर्विधेतिविद्वद्भिर्दंपत्योःप्रीतिरुच्यते ॥

अर्थ-स्त्रीपुरुषोंकी चार प्रकारकी प्रीति होतीहै । जैसे नैसर्गिकी, विषयजा, समा और अभ्यासकी अब इनके पृथक् पृथक् लक्षण लिखतेहैं ।

नैसर्गिकी प्रीति ।

अभ्यासविषयासाध्यादंपत्योःसहजातुया ।
सान्द्रानिगडभूताचप्रीतिर्नैसर्गिकीमता ॥

अर्थ-अभ्यास विषयमें साध्य और विवाह होतेही जो प्रीति घोर बेडीके समान आपसमें होजावे अर्थात् छुडानेसे जो न छुटे उसको नैसर्गिक प्रीति कहतेहैं ।

विषयजा और समप्रीतिके लक्षण ।

मालाचन्दनभोज्याद्यैर्विषयैर्वर्द्धितातुया ।
प्रीतिर्विषयजाप्रोक्तासमयोगेसमास्मृता ॥

अर्थ-जो माला, चंदन, भोज्य (मिठाई) आदिके देनेलेनेसे बढै उसको विषयजा प्रीति कहतेहैं । और समान योगोंकर बढीहो उस प्रीतिको समा कहतेहैं ।

अभ्यासकी प्रीति ।

आखेटदेवपूजादिकेलीसङ्गीतकर्मसु ।
अभ्यासयोगाद्यावृद्धिंयातिसाभ्यासिकीमता ॥

अर्थ-सिकार, देवपूजन आदि और मैथुनक्रीडा, गाना, बजाना आदिकर्मोंमें अभ्याससयोगसे जो प्रीति बढतीहै उस प्रीतिको अभ्यासिकी कहतेहैं ।

योनिस्वरूपमाह ।

योनिरभ्यंतरेकापिपद्मकिंजल्ककोमला । कापिस्याद्गुटिकाकीर्णाकाचिद्वलिचयाकुला । गोजिह्वाभाखरस्पर्शाकाचिदभ्यन्तरेभवेत् । पूर्वपूर्वतरातासुश्रेष्ठाज्ञेयाविचक्षणैः ॥

अर्थ-योनि भीतरसे किसीकी कमलपरागसमान कोमल होतीहै । किसीकी योनि गुटकाके आकार संकीर्ण होती है । किसीकी अनेकवली (आंटे) युक्त होती है । किसीकी योनि भीतरसे गौके जीभके समान खरदरी होती है इनमें पूर्व पूर्व योनि श्रेष्ठ है । और उत्तरोत्तर निंदित है ।

कामांकुश ।

योनिमध्येस्तिनाड्यैकाकामांकुशसमाहिसा ।
लिंगेनक्षोभितासैवमदवारिविमुंचति ॥

अर्थ-योनिके बीच एक कामांकुशा नाडी है, यदि उस नाडीको लिंगद्वारा तांडित करीजावे तो वह स्त्री मदवारिको छोडती है । अर्थात् स्त्रीस्खलित होतीहै ।

मन्मथछत्र ।

कामातपत्रात्सृजतिसस्पंदइतिकीर्त्यते । वरांगरन्ध्रादूर्ध्वंतुनासिकाभंयदस्तितत् । मन्मथच्छत्रमित्याहुराढ्यंमदाशिराचयैः ॥

अर्थ-अब कहते हैं कि, वह स्त्री मदवारिको कहांसे छोडती तहां मदवारिको कामातपत्र अर्थात् कामदेवके छत्रसे प्रगटकरेहैं । उसको सस्पंद कहते हैं । वह वरांगछिद्रके । ऊपर नासिकाके आकारहै । उसको मन्मथछत्र कहते हैं यह मन्मथछत्र अनेक मदशिराओंसे परिपूर्ण है ।

सुखसाध्या स्त्री ।

मार्गादिश्रांतदेहाचिरविरहवतीमासमात्रप्रसूता । गर्भालस्याचनव्यज्वरयुततनुकात्यक्तमानाप्रसन्ना । स्नातापुष्पावसानेनवरतिसमयेमेघकालेवसन्ते । प्रायःसंपन्नरागामृगशिशुनयनास्वल्पसाध्यारतेस्यात् ॥

अर्थ-इतनी स्त्री सुखसाध्यहैं, अर्थात् सहज प्राप्त होसकतीहैं । जैसे कि, जो मार्ग चलनेसे थकगईहो, बहुतदिनकी विरहवती, महिने भरकी प्रसूता होचुकी हो, गर्भवती, आलसवती, नवीन ज्वरवाली, जिसने मान त्यागदियाहो और प्रसन्न तथा रजोदर्शकी समाप्तिमें स्नान करचुकीहो, और नवीन रतिसमयमें वर्षाके समय, वसंतकालमें और जो सम्यक् अनुरागवतीहो, ऐसी स्त्री रतिसमयमें अल्पसाध्य होती है । अर्थात् सहज प्राप्त होसकती है ।

शुक्रवेगरोकनेका फल ।

उच्चारितेमूत्रितेचरेतसश्चाविधारणे । उत्तानेचभवेच्छीघ्रंशुक्राश्मर्याश्चसंभवः । सर्वमेतत्त्यजेत्तस्माद्यतोलोकद्वयाहितम् । शुक्रंतूपस्थितंमोहान्नसंधार्यंकदाचन ॥

अर्थ-मल,मूत्र,वीर्य, इनके वेगको रोकनेसे तथा चित्त लेटनेसे इस प्राणीके शुक्राश्मरी अर्थात् वीर्यकी पथरी होजातीहै, अतएव ये संपूर्ण मलमूत्रादिका धारण करना लोकद्वयमें अहित है इसीसे त्याज्यहै और शुक्रके उपस्थित वेगको तो सर्वथा त्यागनाही हितकारीहै ।

भर्तुःपादौनमस्कृत्यशय्यांनम्राननाऽऽपतेत् ॥

अर्थ-जब स्त्री शयनकरनेको जाय तब प्रथम भर्त्ताके चरणमें प्रणामकर प्रसन्न मुख सेजपर स्थितहो ।

वातपित्त कुपितहोनेमें मैथुनवर्जित ।

प्रत्यूषस्यार्धरात्रेचवातपित्तेप्रकुप्यतः । तिर्यग्योनावयोनौ वादुष्टयोनौतथैवच । उपदंशस्तथावायोःकोपःशुक्रसुखक्षयः ॥

अर्थ-प्रत्यूष और अर्धरात्रिके समय वातपित्त कुपित होते हैं, अतएव ये दोनों समय त्याज्यहैं । तिरछी योनि, और अयोनि (बकरी, कुतियाआदिकी) तथा दुष्टयोनि (गरमी आदिसे दूषित) इनमें गमन करनेसे उपदंशरोग, फिरंगवायु, अथवा वादी और क्षीणवीर्य ये रोग होतेहैं ।

मैथुनानंतरं कर्म ।

ऋतौतुमैथुनेस्नायाद्गर्भसंभूतिशङ्कया । अनृतौतदभावाच्च शौचंनिर्मूत्रवच्चरेत् । एवंयथायोगंशुद्धःसन्स्वशय्यायां यथासुखंप्रबोधपर्यंतंस्वपेत् ॥

अर्थ-ऋतुकालमें तो स्त्रीको मैथुनकरके गर्भशंकाके कारण स्नान करना और अनृतु अर्थात् अन्य समय मैथुनकरनेसे गर्भ न रहनेके कारण स्नान न करना तोभी

तीनवार मृत्तिकाजलसे शुद्धि करनी चाहिये । इसप्रकार शुद्धहोकर अपनी शय्यापर यथा सुखपूर्वक प्रातःकाल जगनेके समयपर्यंत सोना चाहिये ।

मैथुनान्तमें हितवस्तु ।

स्नानंसशर्करंक्षीरंभक्ष्यमैक्षवसंस्कृतम् ।
वातोमांसरसःस्वप्नोऽव्यवायान्तेहिताअमी ॥

अर्थ-स्नानकरना, मिश्रीमिला दूध पीना, खांडके पदार्थ (लड्डू, पेडा, बरफी, मलाई आदि) पवन, मांसरस और शयनकरना ये मैथुनान्तमें हितकारक हैं इसीसे इनका सेवन इस मनुष्यको करना चाहिये ।

दूध पीनेमें प्रमाण।

सद्योबलहरानारीसद्योबलकरंपयः ।
स्त्रियंगच्छेत्पयःपीत्वातांचत्यक्त्वापुनःपिबेत् ॥

अर्थ-स्त्री, पुरुषके बलको तत्काल हरण करतीहै, और दूध इस प्राणीके सद्यही बल करेहै । अतएव यह पुरुष स्त्रीकेपास दूध पीकर जाय और जब मैथुनकर चुके तब फिर दूध पीवे जिससे फिर बल आयजावे ।

अतिमैथुनकरनेकेदोष ।

शूलकासज्वरश्वासकार्श्यपांड्वामयक्षयाः ।
अतिव्यवायाज्जायंतेरोगाश्चाक्षेपकादयः ॥

अर्थ-अतिमैथुन करनेसे शूलरोग, खांसी, ज्वर, श्वास, कृशता, पांडुरोग, क्षई, और वातके आक्षेपकादि रोग होतेहैं । इसीसे मनुष्यको उचितहै कि, अतिमैथुन न करे ।

रात्रिमें जागनेके दोष ।

रात्रौजागरणंरूक्षंकफदोषविषार्त्तिजित् ॥

अर्थ-रात्रिका जागना रूक्षता करेहै और कफके दोष तथा विषकी पीडाको दूर करेहै ।

निद्राके गुण ।

निद्रातुसेविताकालेधातुसात्म्यमतन्द्रितम् ।
पुष्टिवर्णबलोत्साहान्वह्निदीप्तिंकरोतिच ॥

अर्थ-समयपर निद्रा सेवन करनेसे वह निद्रा धातुसाम्य, तन्द्राहीन, पुष्टि, वर्ण, बल, उत्साह और जठराग्निकी दीप्तता करेहै । अतएव निद्राके समय निद्रा अवश्य लेना । अन्यसमय नहीं ।

निद्राके पूर्व भक्षणीयद्रव्य ।

योलेढिशयनसमयेमधुमिश्रंबीजपूरदलचूर्णम् ।
सचपीडाकरवातप्रसरानिरोधात्सुखंस्वापिति ॥

अर्थ–जो मनुष्य शयनकरतेसमय बिजौरेके पत्तेके चूर्णको शहतमें मिलायकर चाटताहै, वह पीडाकर वादीके प्रसरानिरोधसे सुखपूर्वक सोताहै ।

प्रातःकाले जलपानम् ।

सवितुरुदयकालेप्रसृतीःसलिलस्ययःपिवेदष्टौ । रोगजरा-
परिमुक्तोजीवेद्वत्सरशतंसाग्रम् । अस्यजलपानस्योपक्रम-
कालोरात्रेश्चतुर्थप्रहरप्रवेशोयथाः ॥

अर्थ–सूर्यके उदयसमय जो मनुष्य उठकर आठपसै अथवा आठचुल्लू जल पीताहै । वह रोग और वृद्धावस्थारहितहो सौवर्षसेभी अधिक जीवे । इस जलके पीनेका समय रात्रिके चतुर्थ प्रहरप्रवेशमें जानना । जैसेलिखाहै ।

पिबातिपर्य्युषितंजलमन्वहंतिमिरिणोचरमेप्रहरेयदा ॥

अर्थ–जो तिमिरवान् मनुष्य नित्यप्रति रात्रिके चतुर्थप्रहरमें पर्युषित जल पीताहै ।

तथाच तन्त्रान्तरे ।

अम्भसःप्रसृतीरष्टौरवावनुदितेपिबेत् । वातपित्तकफाञ्जि-
त्वाजीवेद्वर्षशतंसुखी । सलिलस्यात्रपर्युषितग्रहणंभोजवच-
नानुरोधात् ॥

अर्थ–उसीप्रकार अन्य ग्रंथान्तरमें लिखाहै कि, आठप्रसृती जल सूर्यउदयके पूर्व पीवे तो वात, पित्त और कफको जीतकर सुखपूर्वक सौवर्ष जीवे यहां भोजवचनके अनुरोधसे गरम जलका ग्रहणहै ।

उषःपानगुणाः ।

अर्शःशोथग्रहण्योज्वरजठरजराकोष्ठमेदोविकारा मूत्राघा-
तास्रपित्तश्रवणगलशिरःश्रोणिमूलाक्षिरोगाः । येचान्येवा
तपित्तक्षतजकफकृताव्याधयः संतिजन्तोस्तांस्तानभ्यासयो-
गादपहरतिपयःपीतमन्तेनिशायाः ॥

अर्थ–ववासीर, सूजन, संग्रहणी, ज्वर, उदर, कोठेके रोग, मेदके विकार, मूत्राघात, रक्तपित्त, कानके, गलेके, शिरके, कमरकी जडके विकार, नेत्ररोग और जो

१ पाठान्तरं अम्भसश्चुलकान्यष्टौ रवावनुदितेपिबेदिति ।

वात, पित्त, क्षतज और कफकृत विकार प्राणीकेहैं वो सब रात्रिके अन्तमें जल पीनेके अभ्यास योग करके नष्ट होतेहैं ।

नासिकाद्वारा जलपान ।

विगतघनानिशीथेप्रातरुत्थायानित्यं पिबतिखलुनरोयोनासिकारन्ध्रवारि । सभवतिमतिपूर्णश्चक्षुषाताक्ष्यतुल्यो वलिपलितविहीनःसर्वरोगैर्विमुक्तः ॥

अर्थ-जिसदिन बादल न होय उसदिन रात्रिके व्यतीत होनेपर प्रातःकाल उठकर नित्य जो मनुष्य नासिकाके छिद्रद्वारा जलको पीताहै, वह मतिपूर्ण (बुद्धिवान्) और गरुडके समान दूरपर्यंत देखनेवाला, वलीपलितरहित और सर्वरोगोंकरके हीन होताहै । निशीथशब्दकरके इसजगे रात्रिके अंधकारका ग्रहणहै ।

इसका प्रमाण ।

पातव्यंनासयानीरंप्रसृतित्रयमात्रकम् ॥ व्यङ्गवलीपलितघ्नंपीनसवैस्वर्यकासशोथहरम् । रजनीक्षयेम्बुनस्यंरसायनंदृष्टिसंजननम् ॥

अर्थ-इसमें ग्रन्थांतरका प्रमाण देतेहैं कि, तीन पससे जल इस मनुष्यको नासिकाद्वारा पीना चाहिये । यह व्यंग, वलीपलित, पीनस, स्वरभंग, खांसी और सूजन इनको हरण करैहै, रात्रि व्यतीत होनेपर जलकी नासलेना रसायनहै और दृष्टिको बढावैहै ।

उषः पानकरना वर्जित ।

स्नेहपीतेक्षतेशुद्धावाध्मानेस्तिमितोदरे ।
हिक्कायांकफवातोत्थेव्याधौतद्वारिवारयेत् ॥

अर्थ--जिसने स्नेह (तैलघृतादि) पान कराहो, घाववाला, अफरावाला आर्द्रमनुष्य, उदररोगी, हिचकीवाला, कफवातके रोगमें, प्रातःकालमें नासिकाद्वारा पानीपीना वर्जित कहाहै ।

इतिरात्रिचर्यावर्णननामैकोनत्रिंशत्तमस्तरंगः ॥ २९ ॥

इति श्रीमाथुरकृष्णलालात्मजदत्तरामपाठकानिर्मितबृहन्निघंटुरत्नाकरान्तर्गतश्चर्याचन्द्रोदयनामको ग्रन्थः समाप्तः ।

इति चर्य्याचन्द्रोदयः परिपूर्णः ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-खेमराज श्रीकृष्णदास,
" श्रीवेङ्कटेश्वर " (स्टीम्) यन्त्रालय-बंबई.